कृष्णदास संस्कृत सीरीज
३९

श्रीवर-कृत

# जैन-राजतरङ्गिणी

( तरंग ३ तथा ४ )

( आलोचनात्मक भूमिका, ऐतिहासिक, भौगोलिक, सांस्कृतिक अध्ययन तथा हिन्दी अनुवाद सहित )

लेखक

डॉ॰ रघुनाथ सिंह

एम. ए., एल. एल बी , पी–एच. डी., डी. लिट्,
एफ. आर. ए. एस., ( लन्दन )

खण्ड २



कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

१९७७

प्रकाशक : कृष्णदास अकादमी, वाराणसी
मुद्रक : वर्द्धमान मुद्रणालय, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, वि० सं० २०३४
मूल्य : रु० १५०-००


पो० बा० नं० ११८
चौक, ( चित्रा सिनेमा बिल्डिंग ), वाराणसी-२२१००१ ( भारत )

अपरं च प्राप्तिस्थानम्
चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस
के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
पो० बा० ८, वाराणसी-२२१००१ ( भारत )
फोन : ६३१४५

KRISHNADAS SANSKRIT SERIES
39



# JAINA-RAJATARANGIṆI

of

## SRIVARA

( Taranga III & IV )

( Translation with critical Introduction, historical. cultural and geographical notes in Hindi )

By

**Dr. Raghunath Singh**

M. A., LL. B., Ph D., D. Litt.
F. R. A. S. ( London )

## Part II




KRISHNADAS ACADEMY
VARANASI-221001

Orintal Publishers & Distributors

Post Box No. 118

Chowk, ( Chitra Cinema Building ), Varanasi–221001 ( INDIA )

First Edition

1977

Price Rs 150–00

Also can be had of

Chowkhamba Sanskrit Series Offiice

Oriental Publishers & Book-Sellers

Post Box No 8

K. 37/99, Gopal Mandir Lane, Varanasi–221001 ( India )

PHONE : 63145

सर्वविधैहिकभोगासक्तिरहितानां,
दीनजनपरित्राणपरायणानां,
परमोदारचेतसाम्
अस्मत्पितृचरणानाम्
श्रीबटुकनाथसिंह महानुभावानां
स्मृतिहेतोरिदं
पुस्तकप्रसूनम्

# संकेत-सूची

| | |
|---|---|
| अ० | अध्याय |
| अक० | अकबर नामा |
| अग्नि० | अग्निपुराण |
| अथ० | अथर्व वेद |
| अनु० | अनुशासन पर्व |
| अमर० | अमरकोश |
| अयोध्या० | अयोध्या काण्ड रामायण वा० |
| अरण्य० | अरण्य काण्ड रामायण वा० |
| अर्थ० | अर्थशास्त्र कौटिल्य |
| अल्बेरुनी० | अल्बेरूनीज इण्डिया |
| आ० | आदि पर्व |
| आ०पु० | आदिपुराण |
| आई०-ई० | इण्डियन एपिग्राफिक |
| आइन० | आइने अकबरी जरेट |
| आजम० | वाकयाते कश्मीर |
| आप० ध० | आपस्तम्ब धर्मसूत्र |
| आश्व० | आश्वमेधिक पर्व |
| ई० आई० | इपिग्राफिका इण्डिका |
| इण्ड०एण्टी० | इण्डियन एण्टीक्वेरी |
| उ० | : उर्दू अनुवाद पीरहसन |
| उत्तर० | उत्तरकाण्ड वा० |
| उत्तर मी० | उत्तरमीमांसा |
| उद्योग० | उद्योग पर्व |
| ऋ० | ऋग्वेद |
| ऋतु० | ऋतु संहार |
| क० | कलकत्ता संस्करण राज० |
| कम्प्रि० | कम्प्रिहेन्सिव हिस्ट्री |
| कर्ण० | कर्ण पर्व |
| कलि० | कलिगताब्द |
| कल्ह० | कल्हण राजतरंगिणी लेख |
| कश्मीर० | जी० डा० एम० सूफी |
| का० | कादम्बरी |

| | |
|---|---|
| काम० | कामन्दक |
| का०सू० | : कामसूत्र |
| काव्य० | काव्य रचना |
| कि० | किष्किन्धा काण्ड रामायण वा० |
| कु० | कुमार सम्भव |
| कू० | : कूर्म पुराण |
| कैम्ब्रिज० | कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया |
| ख० | खण्ड |
| गी० | : गीत गोविन्द |
| गीता० | : भगवद् गीता |
| जै० सि० | जैनसिद्धान्त कोश |
| जैन० | श्रीवर राज० लेखक |
| जोन० | जोनराज राज० लेखक |
| तबकात० | तबकाते अकबरी |
| ता० रशीदी | मिर्जा हैदर दुघलात कृत |
| ता० हसन | तारीखे पीरहसन कश्मीर |
| तीर्थ० | तीर्थ संग्रह साहेबराम |
| त्रि० सार | त्रिलोक सार |
| दत्त० | जोगेशचन्द्र दत्त अनु० राज० |
| दुर्गा० | : दुर्गाप्रसाद रा० |
| द्र० | द्रष्टव्य |
| द्रो० | द्रोण पर्व |
| नाट्य० | नाट्यशास्त्र |
| नारद० | : नारद स्मृति |
| निज्जर० | : पंजाब अण्डर सुल्तान |
| नृसिं० | नृसिंह पुराण |
| नै० | नैषध |
| परम० | डा० आ० के०, हिस्ट्री आफ मुस्लिम रूल इन इण्डिया |
| परा० | परासर माधवीय |
| पाण्डु० | पाण्डुलिपी |
| पीर० | : पीर गुलाम हसन ता० कश्मीर |

पु० : पुराण
प्रा० : प्रायश्चित सार
फिरिश्ता : मुहम्मद कासिम : ब्रिग्स
फो० : फोलियो
ब० : बम्बई संस्करण : राज०
ब० शा० : बहारिस्तान शाही
बाल० : बालकाण्ड रामायण : बाल्मीकि
बा०-रा० : बाल्मीकि रामायण
ब्रह्म० : ब्रह्म वैवर्त पुराण
ब्रह्मा० : ब्रह्माण्ड पुराण
बृहद्० : बृहद् संहिता
भविष्य० : भविष्य पुराण
भा० : भागवत पुराण
भीष्म० : भीष्म पर्व
भृति० : भृति हरिगतक त्रयम्
म० : महाभारत
मत्स्य० : मत्स्यपुराण
मनु० : मनुस्मृति
म्हा० : महावंश
मा० : मातंग लीली
मार्क० : मार्कण्डेय पुराण
माहा० : माहात्म्य
माल० : मालवकाग्नि मित्र
मुद्रा : मुद्रा राक्षस
मूर० : मूरक्राफ्ट : ट्रैवेल्स इन हिमालयन प्रोविन्सेज आदि
मेघ० : मेघदूत
मोहबुल० . मोहबुल हसन, कश्मीर अण्डर सुल्तान्स
मौ० : मौसल पर्व
म्युनिख० : म्युनिख पाण्डुलिपि : तारीखे कश्मीर
याज्ञ० : याज्ञवल्क्य स्मृति
योगवा० : योगवासिष्ठ रामायण
रघु० : रघुवंश
रशीदी० : तारीखे रशीदी
रा० स० : राजतरंगिणी संग्रह : लेखक
ला० : वैली आफ कश्मीर : लारेन्स
लिंग० : लिंग पुराण
लोक० : लोकप्रकाश क्षेमेन्द्र : कश्मीर स०
लौ० : लौकिक या सप्तर्षि वर्ष
वन० : वन पर्व
वाइन० : जी० टी० वाइन्स : ट्रैवेल्स
वाज० : वाजसनेयी संहिता
वायु० : वायुपुराण
विक्र० : विक्रमांक देवचरित
विलसन : हिन्दू हिस्ट्री आॅफ कश्मीर
विष्णु० : विष्णुपुराण
विष्णुधर्मो० : विष्णु धर्मोत्तर पुराण
वैंकट० : क्रोनोलोजी आॅफ कश्मीर : वेंकटाचालन
शक्ति० : शक्ति संगमतन्त्र
शा० : शान्तिपर्व
शिशु० : शिशुपाल वध
शुक० : शुक राजतरंगिणी : लेखक
श्रीकण्ठ० : श्रीकण्ठ चरित
समय० : समयमातृका : क्षेमेन्द्र
सभा० : सभा पर्व
सर्वा० : सर्वावतार
वै० : वैशेषिक दर्शन
श० : शकुन्तला नाटक
स्कन्द० : स्कन्द पुराण
स्तीन : क्रोनिकल्स आॅफ किंग्स आॅफ कश्मीर
हर० : हरचरित चिन्तामणि
हसन० : हसन बिन अली कश्मीरी
ह०व० : हरिवंश पुराण
है० मल्लिक : हैदरमल्लिक चादुरा

नोट—१ : १ : १४७ जहाँ पुस्तक का नाम नहीं है, उसे श्रीवर राजतरंगिणी समझना चाहिए।
२ : १०१ ,, ,, ,, तरंग दो
३ : ३९ ,, ,, ,, तरंग तीन
४ : ११२ ,, ,, ,, तरंग चार
राजतरंगिणी जहाँ केवल रा० संकेत है उसे कल्हण कृत राजतरंगिणी समझना चाहिए।

# विषय-सूची

# पश्चिमोऽयं प्रणामः

राजतरंगिणी प्रणयन की कथा शेष हुई, और कथा शेष हुई मेरी सहधर्मिणी की। जैसे वह जीवित थी, केवल इस कार्य का समापन देखने के लिए। ज्योंही सातों खण्ड प्रकाशित हुए, वह भी प्रस्थान कर गयी परलोक को।

राजतरंगिणी की लहरों में डूबता-उतराता, भारत के पुस्तकालयों में चक्कर लगाता, काश्मीर भूमि के कोनो-कोनो में भटकता, अपने पास जो कुछ था, व्यय हो गया। किसी दिशा से आर्थिक या किसी प्रकार की सहायता नहीं मिली। किसी विद्या मन्दिर से प्रोत्साहन नहीं मिला। किसी ने पूछा नहीं। क्या कर रहा हूँ? कैसे कर रहा हूँ? करने से क्या लाभ होगा? किसी सदयहृदय ने कुछ जानने की जिज्ञासा न की।

पैतृक सम्पत्ति की व्यवस्था मेरी स्त्री करती थी। इस काल में वही मेरी सहायक थी। संरक्षक थी। अन्नपूर्णा थी। मैं घर बैठ गया। लेखनी, कागज, मसीपात्र एवं पुस्तकें मेरी साथी थीं। इस लम्बे आठ वर्ष के काल में मेरी अपढ़ पत्नी ने एक दिन भी शिकायत न की। मैं क्यों निठल्लू की तरह बैठा हूँ। घर पर भार बना हूँ। कुछ काम धाम नहीं करता। इतने कठिन परिश्रम के पश्चात भी पुस्तकों से आर्थिक लाभ होना तो दूर रहा, पुस्तकें छप जाय, यही बहुत बड़ी बात थी। लोगों ने मेरा परिश्रम बेकार समझा। मैंने भी समझा। बेकारी में बैठकर, कुछ बेकार कार्य करना बुरा नहीं है।

एक बात का मुझे पश्चाताप है। मैं अपने जीवन में पत्नी को किसी प्रकार का सुख नहीं दे सका। वैभव नहीं दे सका। उसी पर आश्रित हो गया। इस काल में अपने छप्पन वर्ष के सक्रिय निष्कलंक राजनीतिक जीवन का कुछ लाभ न उठा सका। तिकड़म कर, किसी राज पद पर बैठ न सका। अपनी स्थिति अच्छी न बना सका। विरोधी दल में होने के कारण लोगों ने समझा। मेरा भी कुछ होगा। मैं संसद या विधान सभा में जाऊँगा। किसी ने मुझे पूछा नहीं। मैं भी आत्म सम्मान, स्वाभिमान न खोकर राजनीतिक पद गौरव को नमस्कार करना ही अच्छा समझा।

मैं अकेला हो गया। निःसन्तान होने के कारण कोई भी सहारा नहीं था। दैनिक समस्यायें, घर-गृहस्थी की समस्यायें, कृषि तथा शहर के मकानों की समस्यायें, विकराल रूप में सामने आने लगी जिसके कारण निश्चिन्त बैठा पढ़ता रहा, लेखनी घिसता रहा, वह सहारा टूट गया। आधुनिक आयु विज्ञान इस सहारे को बना न रख सका। प्रगति शील विज्ञान उसे बचा न सका।

जिसका उदय है। उसका अस्त है। जिसका जन्म है। उसकी मृत्यु है। जिसका आदि है। उसका अन्त है। वह अमर वाणी अमर होकर रही। जीव अकेला आता है। अकेला जाता है। अकेला रहता है। तथापि समाज अपने बन्धनों से उसे दुकेला बनाता है। प्रकृति बन्धन को छिन्न कर पुनः उसे अकेला बना देती है। मैं भी अकेला हो गया। केवल मृत्यु साथ देने वाली है। उसके आसरे बैठा हूँ।

उसे मृत्यु का आभास हो गया था। शल्य चिकित्सा के पश्चात् भी मृत्यु के आगमन की गति तीव्र होने लगी। वह द्वार पर आ गयी। देख रहा था। जो अभी बोल रही है। वह कल न बोलेगी। जो आज जीवित था। वह कल न रहेगी। जो आज गति शील है। उसकी गति कल बन्द हो जायगी। जिसकी अथक परिश्रम से सेवा सुश्रुषा कर रहा हूँ, उसे कुछ ही समय पश्चात अग्नि को अर्पित करूँगा। वह भस्म की ढेर मात्र रह जायगी। गंगा की धारा में भस्म भी बह जायगी बाते मन में आते ही, मन उद्विग्न हो गया।

बोली बन्द हो गयी। उर्ध्व स्वास चलने लगी। पाद तल से शीत की दिशा उर्ध्व गामी हो गयी। पुतलियाँ कभी कभी चलती। मैंने झुककर उन पुतलियो में देखा। कुछ समय तक पुतलियों को आखो के एक कोने से दूसरे कोने तक चलते देखा। एक पुतली का चलना बन्द हो गया। मैंने उसके शरीर पर हाथ फेरा। वह चाह कर भी बोल न सकी। केवल नेत्र आर्द्र हो गये। मैं विचलित हुआ। समर्थ मानव कितना असमर्थ हो जाता है। मैं भी अपने मृत्यु काल में इसी प्रकार असमर्थ हो जाऊँगा। भाव आते ही भय मिश्रित चिंता घेरने लगी।

शरीर की निस्सारता का अद्भुत प्रदर्शन देखते हुए, अस्पताल में एकत्रित सम्बन्धियो शुभचिन्तको स्वस्थ खडे मानवो की ओर देखा। वे भी असमर्थ थे। कुछ कर नही पा रहे थे। ज्ञान, विज्ञान दोनो ही व्यथा शेष देख रहे थे। जीवित काल के सन्तोष प्रद शास्त्र वचन स्मरण करते थे। क्या मरणासन्न इसी प्रकार उन्हे स्मरण करता है?

इस जगत में मिलते-जुलते, हँसते-विहँसते, घूमते-घामते, अपने अस्तित्व पर, मृतक के सम्मुख लोग क्यो गर्व करते है, यह एक विचित्र विडम्बना है।

वैराग्य, योग, दर्शन कर्मकाण्ड इस प्रश्न का उत्तर देने में सफल नही हो सके है। मृत्यु के पश्चात क्या होता है? दार्शनिको की कल्पना, योगियो की योग दृष्टि, वहाँ तक क्या जाती है? कोई मरकर लौटा नही। काया त्याग कर गयी आत्मा आकर, कुछ बता न सकी। मृत्यु काल से जन्म ग्रहण करने के मध्य आत्मा या सूक्ष्म शरीर कहाँ रहता है? क्या करता है? क्रिया कलाप क्या होता है? यह कडी लुप्त रहती है।

पूर्व जन्म की घटना बताने वाले शिशु या बालक या बालिकायें, इस लुप्त कडी पर, कुछ प्रकाश नही डालती। योग वासिष्ठकार ने अनेक प्रकार की कल्पनाएँ की है। अनुमान किया है। तर्क किया है। किन्तु वसिष्ठ भी मरकर प्रत्यक्ष कुछ कह नही सके। जो कुछ कहा अपने जीवन में कहा। अदृश्य की, परलोक की कल्पना कर कहा। तर्क भी तर्क से ही कटता है। अनेक धर्मो, सम्प्रदायो, मत, मतान्तरो एवं दर्शनों का इसीलिये उदय हुआ है।

अस्पताल में वह मृत्यु नही चाहती थी। बन्धन के नीचे मृत्यु नही चाहती थी। यह बात मृत्यु के पूर्व उसने लोगों से कहा था। प्रात चार बजे से उर्ध्व स्वासा चली। डाक्टरो ने लोगो से कहा। घण्टा, दो घण्टा में मृत्यु हो जायगी। परन्तु वह सायंकाल साढे चार बजे तक उसी स्थिति मे पडी रही। लोगो को ख्याल आया। वह घर पर मरना चाहती थी। लोग उसे घर लाये। घर आते ही दस मिनट पश्चात प्राण पखेरू पाँच बजकर दस मिनट पर १४ जून सन् १९७७ ई० को उड गये।

ऊँची चिता की प्रज्वलित ज्वाला मणिकर्णिका घाटपर उसकी काया का रूप लोप करती ऊँची होती गयी। अकस्मात लोगो ने देखा। वह ज्वाला में गंगाभिमुख बैठ गयी। पुन ज्वाला में लिपटने लगी।

मै खडा था। वह जल रही थी। श्मशान वैराग्य हुआ। शरीर से क्या लाभ? जिसके साथ इक्कावन वर्षो तक रहा साथ क्यों न चला जाऊँ? श्मशान में धधकती चिता के समीप किंचित मात्र मृत्यु भय नही लगा। बल्कि उत्साह बढ रहा था, रहस्य समझ रहा था। नारियाँ कैसे, किस भावावेश में, किन परिस्थितियों में उत्साह से सती होती थी। इस प्रकार मेरी पत्नी लीलावती देवी की कथा मृत्यु काल से पाँच घण्टो के अन्दर शेष हो गयी। हम दस बजे रात्रि श्मशान से लौट आये।

यह पुस्तक मैंने अपने पिता को समर्पित किया है। पिताजी शुद्ध कृषक थे। कभी जीवन में गरम या ऊनी कपडा नही पहनते। खद्दर की धोती और मिरजयी से जीवन व्यतीत कर दिया। जीवन पर्यन्त

किसी विवाद में नहीं पड़े। पहनने-खाने का शौक नहीं था। जो मिला खा लिया। नहीं मिला चुप होकर बैठे रहे। एक पैसे की सुरती में उनका एक मास व्यतीत हो जाता था। किसी को न तो कष्ट दिया और न उन्हें कष्ट मिला। मिथ्या भाषण एवं पाखण्ड से उन्हें चिढ़ थी। उनके यहाँ से कोई शायद ही विमुख होकर लौटा था। किसी से किसी प्रकार की न तो उन्होंने आशा की और न किसी को व्यर्थ की आशा दी।

उनसे कभी एक पैसा मैंने न लिया और न उन्हें कभी कुछ दिया। कभी मेरे विषय में उन्होंने जिज्ञासा नहीं की। मैं क्या लिखता, पढ़ता या करता हूँ। उनकी दृष्टि इस विषय में उदासीन नहीं निरपेक्ष थी। विदेह तुल्य थे। भगवान ने जीवन दिया था, शरीर दिया था। उसका वे जैसे निष्काम भाव से पालन कर रहे थे। उनकी मृत्यु के समय बहुत पूछा। उनकी क्या इच्छा थी। वे कुछ इच्छा प्रकट नहीं किये। उन्हें आजन्म किसी प्रकार की कामना नहीं हुयी।

वे कभी पूजा-पाठ, दर्शन एवं तीर्थ यात्राओं में न विश्वास किये और न कहीं गये। मनुष्य शरीर पाया था। शरीर उनका नहीं था। वह शरीर के नहीं थे। वे उस प्राण का, शरीर का, भगवत् प्रदत्त थाती का, जैसे पालन कर रहे थे। संसार के राग-द्वेष, भोग वासना से अलग आदर्श सच्चरित्र जीवन, एक परिश्रमी कृषक की तरह बिता दिये। उनका शुद्ध, निर्मल एक पत्नीव्रत, अमिथ्या भाषण, आज भी उनके ग्राम के लिये आदर्श है। उन्हें यह पुस्तक समर्पित करते गौरव का बोध करता हूँ।

काशी विश्वविद्यालय के सर्व श्री डॉ लल्लनजी गोपाल के, संस्कृत एवं डॉ० जी. डी. भटनागर के फारसी ज्ञान का लाभ उठाता रहा हूँ। पुस्तक प्रणयन में गत आठ वर्षो से श्री पशुपति प्रसाद द्विवेदी हमारे सहायक रहे हैं। उनके ज्ञान रुचि से लाभान्वित हुआ हूँ। संस्कृत विश्व-विद्यालय के पुस्तकाध्यक्ष श्री डॉ०-लक्ष्मीनारायण तिवारी तथा उप पुस्तकाध्यक्ष श्री अच्युत नाथ झा तथा वहाँ के सर्व श्री जामवन्त मिश्र एवं झारखण्डे सिंह (भक्त राज) का आभारी हूँ। उनके कारण मुझे सरस्वती भवन में सरस्वती के दर्शन की सर्वदा सुविधा मिलती रही है। काशी हिन्दू विश्व-विद्यालय के पुस्तकाध्यक्ष श्री हरिदेव शर्मा तथा उपपुस्तका-ध्यक्ष श्री शिवनाथ राघव जी ने एक आदर्श पुस्तकाध्यक्ष रूप मे पढ़ने की सुविधा के साथ, अलभ्य पुस्तकों को भी मुझे सुलभ कराया है। उक्त उदार सरल हृदय मान्य सज्जनों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ।

चौखम्भा संस्कृत सीरीज के श्री विठ्ठल दास एवं हिन्दी प्रचारक संस्थान के श्री कृष्णचन्द्र बेरी का आभारी हूँ, जिनके कारण सातों खण्ड प्रकाश में आ सके हैं। श्री महादेव चतुर्वेदी ने कल्हाण तथा शेष तरंगिणियों का प्रूफ चौखम्बा के श्री प्रेम नारायण शर्मा ने देखा है। प्रूफ ले जाने तथा लाने में सर्व श्री अकवाल नारायण सिंह, माधव प्रसाद शर्मा, एवं कृष्ण मुरारी सिंह बिना संकोच कार्य किये हैं। वे धन्यवाद के पात्र हैं। हिन्दी की भूमिका तथा उपसंहार की मूल पाण्डुलिपी श्री डॉ० देवराज यादव प्राध्यापक उत्तर रेलवे आदर्श विद्यालय इण्टर कालेज ने देखी है। उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करता हूँ।

महावीर तथा वर्द्धमान प्रेस काशी में सातों खण्ड मुद्रित हुए है। जिस आत्मीयता तथा उत्साह के साथ सर्वश्री बाबूलाल फागुल्ल तथा उनके पुत्र महावीर, राजकुमार एवं आनन्द ने कार्य किया है, उससे मुझे क्षण मात्र के लिये प्रतिभास नहीं हुआ कि वे व्यवसाय बुद्धि से कार्य कर रहे थे। सर्वदा यही अनुभव करता रहा जैसे वे मेरे परिवार के है। उन्होंने उसे अपना ही कार्य समझा। उनके उत्थान की कामना करते हुए, इस कार्य को कराने वाली प्रेरक शक्ति को पश्चिमोऽयं प्रणामः।

—रघुनाथ सिंह

डी० ५५/१९७ औरंगाबाद

वाराणसी

३०–७–७७

अथ

श्रीवरपण्डितकृता

# जैनराजतरंगिणी

## तृतीयस्तरंगः

## तृतीय तरंग

मंगलाचरण[1] :

शिवायास्तु नमस्तस्मै त्रैलोक्यैकमहीभुजे ।
अशेषक्लेशनिर्मुक्तनित्यैश्वर्यदशाजुषे ॥ १ ॥

१. त्रैलोक्य[2] के एक महीभुज[3], उस शिव को नमस्कार है, जो अशेष[4] क्लेश से निर्मुक्त तथा नित्य ऐश्वर्य से युक्त है।

---

पाद-टिप्पणी :

१. ( १ ) मंगलाचरण : नमस्कारात्मक है। ग्रन्थ का मध्यगत मंगलाचरण है। मंगल प्रवण है।

( २ ) त्रैलोक्य : स्वर्ग, मर्त्य एवं पाताल लोक।

( ३ ) महीभुज : राजा = स्वामी। विष्णु का विशेषण है।

( ४ ) अशेष : अशेषता का अर्थ होगा—शेषरहित, पूर्णता, समग्रता। जिसमें कुछ बाकी नहीं बचता। 'अशेषशेमुषीमोषं भाष मश्नामि केवलम्' उद्भट। रामचन्द्रिका में महाकवि केशव लिखते हैं—

विषमय यह गोदावरी अमृत को फल देति।
केशव जीवनहार को दुःख अशेष हरि लेत ॥

× × ×

मिस रोम राजि देखत सुवेष।
विधि गनत मनो गुनगन अशेष ॥ गुमान ॥

( ५ ) क्लेश : पतंजलि कृत योगसूत्र साधन पादसूत्र ३ में क्लेश की परिभाषा दी गयी है।

'अविद्यास्मिता राग द्वेषाभिनिवेशाः क्लेशाः। (३)

१. अविद्या, २. अस्मिता, ३. राग, ४. द्वेष एवं ५. अभिनिवेश पाँच क्लेश हैं।

सांख्य में ही उन्हें क्रम से तमस ( अविद्या ), मोह ( अस्मिता ), महामोह ( राग ), तामिस्र ( द्वेष ), अन्ध तामिस्र ( अभिनिवेष ) कहा गया है ( सा०का० ४८ )। साधनपाद सूत्र १२ में क्लेश मूल के विषय में चर्चा की गयी है। क्लेश जिसका मूल है, ऐसे कर्मों की वासना दृष्टादृष्ट जन्मों में भोगने योग्य होती है। क्लेशों से कर्म की वासनायें उत्पन्न होती हैं। उनसे जन्य वृक्ष उत्पन्न होता है। उस वृक्ष में जाति, आयु और योग तीन फल लगते हैं। उनमें सुख एवं दुःख स्वाद होता है। धर्म समाधि से क्लेश तथा शुक्ल, कृष्ण एवं मिश्रित अर्थात पुण्य, पाप एवं पाप-पुण्य मिश्रित कर्मों से

भूतं यद् राज्यवृत्तान्तं वर्तमानं करोत्यलम् ।
स्वाग्योग्यप्रकारेण वन्द्यो योगीश्वरः कविः ॥ २ ॥

२. भूतकालीन जिस राज्य वृत्तान्त को अपनी वाणी की योग्यता से वर्तमान करता है, वह योगीश्वर कवि[1] वन्दनीय है ।

रचना का उद्देश्य

प्रतिग्रहानुग्रहाप्ता भुक्ता यन्नृपजीविका ।
तद्वृत्तं स्वस्य निष्कृत्यै वक्ष्ये श्रीवरपण्डितः ॥ ३ ॥

३ जिस नृपति की जीविका का भोग किया, तथा प्रतिग्रह एव अनुग्रह प्राप्त किया, मैं श्रीवर पण्डित, अपने को ऋणमुक्त होने के लिये, उसका वृत्त वर्णन करूँगा ।

---

निवृत्ति हो जाती है—'तन क्लेश कर्म निवृत्ति' ( कैवल्यपाद सूत्र ३० )। जिनके कारण दु ख होता है वही क्लेश है । ईश्वर की व्याख्या (समाधि-पाद सूत्र २४ में) की है—

'क्लेश कर्म विपाकाशयैरपरामृष्ट पुरुषविशेष ईश्वरा ।' क्लेश, कर्म, विपाक एव आसय के सम्बन्धो से रहित पुरुषविशेष ईश्वर है ।

श्रीवर ने अशेप-क्लेश शिव के विशेपण रूप में प्रयोग किया है ।

कर्मों के फल का नाम विपाक है । कर्मों के सस्कारों का नाम आशय है ।

बौद्ध मान्यता के अनुमार क्लेश दस है—१ लोभ, २ द्वेप, ३ मोह, ४ मान, ५ दृष्टि, ६ चिकित्सा, ७ स्यिति, ८ उद्धव्य, ९ अह्रीक, १० अनुताप ।

जैन मान्यता है—असद्वेद्यो दया पादित शरीर मानस दु ख सन्तापात क्लिश्यन्त इति क्लिश्य माना । असाता वदनीय के उदय से जो दु खी है, व क्लिश्य-मान कहे जाते है ( स० सि० ७ ११ ३३९ १० )। असद्वेद्योदयापादित शरीर मानस दु ख सन्तापात् क्लिश्यन्त इति क्लिश्यमाना '—असाता-वदनीय कम के उदय से जो शरीर और मानस, दु ख से सन्तापित है, व क्लिश्यमान कहे जाते है ( रा० वा० ७ ११ ७ ५३८ २७ )।

पाद-टिप्पणी

२ ( १ ) कवि सर्वज्ञ = ब्रह्मा । आदिकवि वाल्मीकि है । महर्पि व्यास कवि वेधा है । कालिदास महाकवि है । बाणभट्ट रस समाहित कवि है । कवि असुरो के गुरु शुक्राचाय की उपाधि है । कवि कर्म काव्य-रचना है । कवि के तीन वर्गी-करण है—१ सारस्वत–पूवजन्म का सस्कार या सरस्वती की कृपा, २ अभ्यासी–अपने जीवन में जो अभ्यास के कारण कवि बन जाता है, ३ औपदेशिक–मन्त्र, तन्त्रादि के प्रभाव से जो कवि बनता है । महाकवि केशवदास ने–१ उत्तम २ मध्यम तथा ३ अधम में कवि का वर्गीकरण किया है ।

उत्तम मध्यम अधम कवि, उत्तम हरि रसलीन ।
मध्यम मानत मानुपनि, दोपनि अधम प्रवीन ॥
( कविप्रिया ४ २ )

राजशेखर ने आठ वर्गीकरण किया है–१ रचना-कवि, २ शब्द-कवि, ३ अर्थ-कवि, ४ अलकार-कवि, ५ उक्ति-कवि, ६ रस-कवि, ७ मार्ग-कवि, ८ शास्त्राथ कवि ( का०मी० अ० ५ )।

अपारे काव्यससारे कविरेक प्रजापति ।
यथास्मै रोचते विश्व तथेद परिवत्तते ॥

पाद-टिप्पणी

३ ( १ ) उद्देश्य : बोध, कीर्ति तथा प्रयोजन है—आनन्दवर्धन कवि ने उसे बोध, कीर्ति तथा प्रीति-काव्य का प्रयाजन माना है ।

**स्वदृग्दृष्टस्मृतक्ष्माभृद्विपद्विभववैकृतैः ।**
**सेयं कस्य न वैराग्यं सूते राजतरङ्गिणी ॥ ४ ॥**

४. अपने आखों से देखे तथा स्मरण किये, राजाओं के विपत्ति, वैभव, आदि विकृतियों के कारण, यह राजतरंगिणी[1] किसमें वैराग्य नहीं पैदा करेगी ?

**राज्यवृत्तानुरोधेन न काव्यगुणचर्चया ।**
**सन्तः श्रृण्वन्तु मद्वाचः स्वधिया योजयन्त्वपि ॥ ५ ॥**

५. काव्यगुण चर्चा के कारण नहीं, अपितु राज्यवृत्तान्त[1] के अनुरोध से, सज्जन लोग मेरी वाणी को सुनें और अपनी बुद्धि से जोड़ें।

**कायस्थोक्तिवदेवेयं कृता स्मृत्यै भविष्यताम् ।**
**दृष्ट्वेमां ललितं काव्यं कुर्वन्त्वन्येऽत्र पण्डिताः ॥ ६ ॥**

६. कायस्थों की उक्ति के समान, भावी जनों की स्मृति के लिये, यह रचना की है। उसे देखकर, अन्य पण्डित उस पर, ललित काव्य[1] रचना करें।

---

पाद-टिप्पणी :

४. ( १ ) राजतरंगिणी : श्रीवर पुस्तक का शीर्षक राजतरंगिणी देता है।

पाद-टिप्पणी :

५. (१) राजवृतान्त = इतिहास । उक्त श्लोक से प्रकट होता है। श्रीवर का उद्देश्य राज्य-इतिहास लिखना था, न कि काव्य-रचना। प्रसंगवश यदि काव्य के तत्व आ गये हैं, तो वे उत्कर्षाधायक हैं।

पाद-टिप्पणी :

६. ( १ ) काव्य : दण्डी शब्द को काव्य मानते हैं—'शरीरं तावदिष्टार्थ व्यवच्छिन्ना पदावलिः' (काव्यादर्श)। किन्तु काव्यालंकार में भामह–'शब्दार्थो सहितौ काव्यम्'—अर्थात शब्द एवं अर्थ सहित काव्य होता है। आनन्दवर्धन ने—'शब्दार्थयो साहित्येन काव्यम्' परिभाषा किया है। वामन ने—'सहृदयाह्लादि शब्दार्थमयत्वमेव काव्यक्षलक्षणम्' लिखा है। मम्मट ने काव्य की परिभाषा किया है—'तद् दोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृती पुनः क्वापि'। सर्वत्र सालंकारौ, क्वचित् स्फुटालंकार विरहेपि न काव्यत्व हानिः।'

रसगंगाधर में रमणीय अर्थ के प्रतिपादक को काव्य कहा है। इसके अन्तर्गत शब्दालंकार भी माना गया है। साहित्यदर्पणकार विश्वनाथ ने रसात्मक वाक्य को काव्य माना है। काव्यप्रकाश में काव्य के लक्षण—१. ध्वनि, २. गुणभूत, ३. व्यंग तथा ४. चित्र लिखा गया है। महाकाव्य तथा खण्डवद्ध काव्य का वर्गीकरण किया गया है। सर्गवद्ध महाकाव्य है। उसमें नायक—देवता, राजा, धीरोदात्त गुणसम्पन्न होना चाहिए। शांत, शृंगार एवं वीर रस की प्रधानता आवश्यक है। मध्य में करुणा तथा हास्यरस का भी मिश्रण अपेक्षित है। कम-से-कम आठ सर्ग होना चाहिए। इस दृष्टि से श्रीवरकृत राजतरंगिणी सर्गवद्ध काव्य है। उसका नायक राजा या सुल्तान है। इसमें प्रायः सभी रसों का समावेश हो गया है। द्र० : २ : २१५ ।

हस्सनशाह[1] (सन १४७२–१४८४ ई०)

ततः श्रीहस्सनो राजा व्यसनोज्झितवासनः ।
शेकन्धरपुरीं त्यक्त्वा पित्र्यां प्राशस्त्यसुन्दरम् ।
अगमज्जैननगरम पितामहविनिर्मितम् ॥ ७ ॥

७ तत्पश्चात राजा श्री हस्सन पिता की सिकन्दरपुरी[2] त्यागकर, प्रशस्तिपूर्ण एव सुन्दर पितामह द्वारा निर्मित, जैननगर[3] (नवशहर) गया ।

सिंहासनोपविष्टः स निर्मलाम्बरभूषणः ।
बभौ कुवलयानन्दी शशीवोदयपर्वते ॥ ८ ॥

८ निर्मल वस्त्र द्वारा भूषित, पृथ्वीमण्डल को आनन्दित करनेवाला, सिहासन[1] पर बैठा हुआ, वह चन्द्रमा के समान शोभित हुआ ।

---

पाद-टिप्पणी

७ ( १ ) हुस्सन तवक्काते अकबरी के दोनो पाण्डुलिपियो मे शीपक गलत दिया गया है । एक मे सुल्तान 'हुसेन' नाम तथा दूसर में नाम छोड दिया गया है ( ४४८ = ६७५ ) ।

समसामयिक घटनाएँ—सन् १४७५ ई० में वर-नेट तथा तवक्सवरी का युद्ध तथा राजा एडवड चतुथ ने पुनर्राज्य प्राप्त किया । मुहम्मद बुगरा ने सिन्ध पर आक्रमण किया । सन् १४७३ ई० में हुसेनशाह जौनपुर दिल्ली पर पहुँचा परन्तु पराजित होकर पलायन किया । सन् १४७४ ई० में जौनपुर के हुसेन ने पुन दिल्ली पर आक्रमण किया परन्तु पराजित होकर लौट गया । बगाल में इस समय शमशुद्दीन युसुफशाह सूबेदार था । उदय मवाड में राज्यच्युत हुआ और रायमल्ल राजा बना । मुहम्मद बुगरा ने द्वारका मन्दिर नष्ट किया । सन् १४७४ ई० में पुतगालियो ने केपडीवड द्वीप का पता लगाया । वहलोल लोदी ने जौनपुर राज्य पर विजय प्राप्त किया । सन १४७५ ई० में बर्मा से २२ भिक्षुओं का शिष्टमण्डल श्रीलका गया । सन् १४७६ ई० म जौनपुर के हुसेनशाह ने पुन दिल्ली पर आक्रमण किया परन्तु शिखेरा में पराजित होकर इटावा लौट गया । मुहम्मद तृतीय बहमनी ने तिल-गाना पर आक्रमण किया । श्रीलका में भुवनेकबाहु चतुर्थ की मृत्यु हो गयी और पराक्रमबाहु सप्तम राजा हुआ । सन् १४७८ ई० मे जौनपुर में पुन युद्ध हुआ । जौनपुर विजय कर, उसे दिल्ली सल्तनत में मिलाया गया ।

( २ ) सेकन्दरपुरी श्रीनगर । द्र० जैन० २ : ५, ४२, ३ ७ २०० ।

( ३ ) जैननगर नवशहर । द्र० जोन० रा० ८६९, जैन : रा० १ ५ ४, १ ७ १९४, ३९८, २९७, १९९, ३२०, ४ १२० ।

फिरिश्ता लिखता है—सुल्तान ने अपनी राज-धानी नौशेहरा ( नौशहर ) में स्थापित किया ( ४७७ ) ।

पीर हसन लिखता है—सुल्तान हसनशाह ने बाप की वफात के बाद मलिक अहमद यतू की कोशिश से बहराम खाँ की मरजी के बरखिलाफ नौशहर के शाही महलात में हिजरी ८८० = विक्रमी १५३२ में तख्तशाही पर जलूश किया ।

पाद-टिप्पणी

८ श्रीवर ने राज्यग्रहण काल सप्तर्षि वर्ष ४५४८ वैशाख श्रीपचमी, श्रीदत्त कलि गताब्द ४५७३ = शक १३९४ = सप्तर्षि ४५४८ = सन् १४७२ ई० तथा राज्यकाल १२ वर्ष, ५ दिन देते

मल्लेकोऽथाह्लदायुक्तो विधाय तिलकं स्वयम् ।
सौवर्णकुसुमैः पूजामकरोन्नवभूपतेः ॥ ९ ॥

९. मल्लेक तथा आयुक्त[1] अहमद ने तिलक[2] (टीका) करके स्वयं स्वर्ण कुसुमों से नवीन राजा की पूजा की ।

---

हैं । पीर हसन विक्रमी १५३२ = हिजरी ८८० तथा राज्यकाल १२ वर्ष; मोहिबुल हसन ने राज्यग्रहण काल १४७२ ई० तथा तारीख रशीदी में रोजर्स ने सन् १४८६ ई० = ८९१ हिजरी दिया है। फिरिश्ता सन् १४७३ ई० = ८७८ हिजरी देता है । तबक्काते अकबरी में समय नहीं दिया गया है । कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया में सन् १४७२ ई० = हिजरी ८७६ दिया गया है। राजतरंगिणी संग्रह में १२ वर्ष राज्यकाल दिया गया है। द्र० : २ : ६; ४ : ६ ।

(१) सिंहासनारोहण : श्लोक श्लिष्ट है। निर्मल वस्त्र का भूषण राजा तथा निर्मल आकाश का भूषण चन्द्रमा सुशोभित होकर पृथ्वी को आनन्दित करता है। समासभेद के कारण श्लोक का दो अर्थ निकलता है। नीलाम्बर (वस्त्र) से भूषित पृथ्वीमण्डल को आनन्दित करनेवाला वह राजा सिंहासन पर बैठा हुआ, उसी प्रकार सुशोभित हुआ, जैसे उदय पर्वत पर चन्द्रमा ।

तबक्काते अकबरी में सिंहासनारोहण के विषय में उल्लेख है—वह अपने पिता के मृत्यु के १६ दिन पश्चात अहमद आमू के प्रयत्न से सिंहासनारूढ़ हुआ (४४८ = ६७५) ।

पाद-टिप्पणी :

९. (१) आयुक्त : फारसी में नाम अहमद येतू दिया गया है । पीर हसन : १८९ । अहमद येतू की कब्र छछल में है। बहारिस्तान शाही : पाण्डु० ५८ बी० में नाम मलिक अहमद येतू तथा तारीख हसन (पाण्डु० : २ : १०७ ए०) में मलिक अहमद यतू दिया गया है । निजामुद्दीन ने अहमद असवद दिया है। असवद का अर्थ फारसी में काला या शक्तिमान है (गौहरे आलम पाण्डु० : १३५ बी०)। यह भी लिखा मिलता है कि उसे कुतबुद्दौला का खिताब सुल्तान हसनशाह ने दिया था। तबक्काते अकबरी में अहमद असवद नाम दिया गया है (४४८)। फिरिश्ता ने नाम अहमद अहू दिया है। (४७७) तबक्काते अकबरी में 'अहमद अबू' 'अहमद अवलंवसद' तथा 'मुहम्मद अलू' नाम दिया गया है। फिरिश्ता के लीथो संस्करण में 'अहमद असवद' नाम दिया गया है। कर्नल ब्रिग्गस ने 'अहमद अहू' (४ : ४७७), रोजर्स तथा केम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया में नाम अहमद असवद दिया गया है ( जे० ए० एस० बी० ५४ : १०७; केम्ब्रिज हिस्ट्री २८६) ।

(२) तिलक : हिन्दू राजाओं के समान काश्मीर के मुसलिम राजाओं का अभिषेक मुसलिम तथा हिन्दू दोनों प्रथा के अनुसार होता था। इस अवसर पर हवन तथा तिलक किया जाता था ।

देवदर्शन, पूजा, विवाह, प्रस्थान, शुभ आगमन राज्याभिषेक के समय ललाट पर तिलक लगाने की प्राचीन प्रथा है। राज्यतिलक शब्द अभिषेक के समय तिलक लगाने की परम्परा दक्षिण-पूर्व एशिया के बौद्ध देशों तथा भारतीय राज्यों में प्रचलित थी। नेपाल, थाईलैण्ड जहाँ राजतन्त्र है, वहाँ राज्याभिषेक के समय पुरोहित तिलक लगाता है। तिलक लगाते ही राज्य का अधिकारी राजा मान लिया जाता था। चन्दन, केसर, कस्तूरी तथा कर्पूर मिश्रित तिलक लगाया जाता है। मुसलमान होने पर भी कश्मीर की पुरानी परम्परा के अनुसार सुल्तानों का अभिषेक तथा तिलक किया जाता था। तिलक सौभाग्य का प्रतीक एवं चिह्न है। सौभाग्यवती महिलायें अनिवार्य रूप से तिलक या बिन्दी लगाती हैं ।

रौप्यासनसमुद्रान्तः कृत्वा छत्रपिधानकम् ।
एकशेषतयेव श्रीररक्षद् वशभूषणम् ॥ १० ॥

१० लक्ष्मी ने रजतमय आसन[1] से आवृत एवं छत्र का आवरण करके, एकमात्र शेष के कारण ही, मानो उस वंशभूषण की रक्षा की ।

चित्रं नवनृपस्यास्य मुखचन्द्रावलोकनात् ।
नागराननपद्मानां विकासः समपद्यत ॥ ११ ॥

११ आश्चर्य है, इस नवीन नृपति के मुखचन्द्र के अवलोकन से नागरिकों के मुखकमल ।सित हो गये ।

अभिषेकक्रियारब्धहोमधूममिषाद् भुवः ।
हर्षेणैवोद्गतो राज्ञो मुखोच्छ्वास इवाबभौ ॥ १२ ॥

१२. राजा के अभिषेक[1] के अवसर पर, किये जानेवाले होम धूम के व्याज से, मानो हर्ष उद्गत पृथ्वी का मुखोच्छ्वास ही शोभित हो रहा था ।

वाद्यमानोद्यतातोद्यतोद्यत्प्रतिरवच्छलात् ।
सुप्रसन्नाः सुदेवस्य प्रोचुः पूर्णाशिषो दिशः ॥ १३ ॥

१३ बजाये जाते आतोद्य[1] से निकलती प्रतिध्वनि के व्याज से (मानो) प्रसन्न दिशायें ामी को पूर्णाशीष प्रदान कर रही थी ।

---

टिप्पणी

१० (१) आसन रजत आसन अर्थात रजत ासन था । राज्यसिंहासन सुवर्ण निर्मित था । । पर अभिषेक होता था ( जैन० २ ६ ) । न आसन दैनिक कार्य में सुल्तान के बैठने के ( प्रयोग होता था । भारतीय मुसलिम सुल्तानों बादशाहों का सिंहासन गोलाकार और घेरदार कोर होता था । यह चौकोर अठपहली अथवा हली भी होता था । उस पर चढने के लिए नुख घेरा नही रहता था । शेष चारो ओर एक ट से दो फीट का घेरा सतह से उठा रहता था । पन या सिंहासन पायों पर रहता था । पृष्ठभाग आसन से लगा एक दण्ड होता था । वह दण्ड का आधार होता था । मन्दिरो में देवताओं के ाासन छत्र सहित इसी प्रकार से बनते है । इस ार के आसन के कारण राजा चारों ओर रजत कठघरे से घिरा था । ऊपर छत्र से रक्षित था ।

पाद-टिप्पणी

१२ ( १ ) अभिषेक होम । मुसलिम होने पर भी हिन्दू रीति से भी अभिषेक किया जाता था । द्रष्टव्य पाद टिप्पणी : जैन० २ ८ ।

पाद-टिप्पणी

पाठ 'सुदेवस्य' बम्बई ।

१३ ( १ ) आतोद्य आघात द्वारा बजाने वाले बाजों से तात्पर्य है । जैसे झांझ, मजीरा आदि । द्रष्टव्य ४ ११ । चार प्रकार के वाद्य—१ तत, २ आनद्ध, ३ सुषिर, ४ घन हैं ।

चतुर्विधमिदं वाद्यं वादित्रातोद्य नामकम् ।
( अमर० १ ७ ५ )

× × ×

ततं चैवावनद्धं च घनं सुषिरमेव च ।
चतुर्विधं तु विज्ञेयमातोद्यं लक्षणान्वितम् ॥
( नाट्य-शास्त्र )

ध्वजमाला बभुर्दीर्घस्फुरद्रक्तपटाञ्चलाः ।
ज्वाला इव प्रतापाग्नेर्निर्गता नवभूपतेः ।। १४ ।।

१४. दीर्घ एवं स्फुरित होते, रक्तपट[1] के अंचलोंवाली ध्वज[2] मालायें, नवीन राजा को निकली हुई, प्रतापाग्नि की ज्वाला सदृश शोभित हो रही थी।

छायाकुसुमकार्यास्ता बभुः श्वेताः प्रविस्तृताः ।
चिरात् तरुणराजाप्त्या हर्षहासा इव श्रियः ।। १५ ।।

१५. अत्यन्त विस्तृत एवं श्वेत वे (ध्वज मालायें) वहुत दिनों पर तरुण राजा की प्राप्ति से श्री[1] के हर्ष-हास सदृश शोभित हो रही थीं।

कौशेयकोज्ज्वलाः सर्वे सेवका नवभूपतेः ।
स्फुरद्भाग्यतरङ्गस्य तरङ्गा इव तेऽरुचन् ।। १६ ।।

१६. नवीन राजा के कौशेय[1] वस्त्र से समुज्वल, सब सेवक स्फुरित होते, भाग्य तरंग सदृश, शोभित हो रहे थे।

---

पाद-टिप्पणी :

१४. (१) रक्तपट : श्रीवर के वर्णन से प्रकट होता है कि लाल झण्डियाँ लगायी गयी थीं। आज-कल भी समारोह के समय ध्वजा तथा डोरियों में लगाकर ध्वजमालायें तोरण की तरह लगाई जाती हैं। मुसलिम सुल्तान कश्मीर की इस प्राचीन परम्परा का पालन करते थे। ध्वजपट को झण्डा कहते हैं ( रघु० : १२ : ८५ )। पताकावाहक को ध्वजिन कहते थे।

( २ ) ध्वज : पताका का दण्ड। सपताक तथा निष्पताक दो प्रकार के ध्वज होते हैं। ध्वजा परिमाण-भेद से आठ प्रकार के होते हैं—(१) जया, (२) विजया, (३) भीमा, (४) चपला, (५) वैजयंतिका, (६) दीर्घा, (७) विशारदा तथा (८) लोला। जया ध्वजा का परिमाण पाँच हाँथ होता था। इस प्रकार प्रत्येक एक-एक हाथ दूसरे से बड़ी होती जाती है। ध्वजा पर पताका या राजचिह्न लगाया जाता था। ध्वजा पर लगे चिह्न के साथ समारोह में चलने की प्रथा थी। ध्वजा-पताका का एक साथ प्रयोग रूढ़ हो गया है।

पाद-टिप्पणी :

१५. ( १ ) श्री : समृद्धि, राजसत्ता, ऐश्वर्य, शोभा सौन्दर्य, गौरव, महिमा, धर्म, अर्थ एवं काम की समष्टि, विष्णु की पत्नि लक्ष्मी आदि अर्थ होता है।

पाद-टिप्पणी :

१६. ( १ ) कौशेय : सिल्क = रेशमी वस्त्र। ( पंच० : १ : ९४; मनु० : ५ : १२०; कु० : ७ : ९; ऋतु० : ५ : ९; मृच्छ० : ५ : ३ )। आज भी राजाओं, जमीन्दारों तथा अमीरों के यहाँ विवाह, यज्ञोपवीत तथा उत्सवों पर भृत्यों को वस्त्र देने की रीति है। राज्यों तथा जमीन्दरी विलय के पश्चात् यह रीति का निर्वाह कतिपय कुलीनों के घरों में सीमित हो गया है।

कार्पासकपरीधानं यत्र यत्राभवत् पुरा ।
तत्र तत्रास्त तद्राज्ये कौशेयकव्ययो महान् ॥ १७ ॥

१७ पहले जहाँ-जहाँ पर कार्पासक[1] परिधान (सूती वस्त्र) होता था, वहाँ-वहाँ उसके राज्य मे कौशेय (रेशम) का महान व्यय होने लगा।

राज्यलाभे वसन्ताभे सूर्यस्येव महीपतेः ।
प्रत्यापहारकाः सर्वे दुष्टमेघा लयं ययुः ॥ १८ ॥

१८ वसन्तकाल मे सूर्य के प्रताप को नष्ट करनेवाले दुष्ट मेघ, जिस प्रकार नष्ट हो जाते हैं, उसी प्रकार राज्यलाभ होने पर, राजा के प्रतापहारी सब लोग विनष्ट हो गये।

रविः प्रदीप्तः कुरुते प्रकाशं
विभाति चास्मिन् सति सूर्यकान्तः ।
तस्मात् समुत्थः स च पावकोऽर्च्य-
स्तमोपहः किं न करोति कार्यम् ॥ १९ ॥

१९ प्रदीप सूर्य प्रकाश करता है, और इसकी उपस्थिति मे सूर्यकान्त[1] मणि सुशोभित होता है, और उसमे समुत्थित, अर्चनीय, अन्धकार नाशक, पावक क्या कार्य नही करता ?

आसन् पितृपितृव्याद्या यत्कृते विफलश्रमाः ।
पौत्रेण हेलया प्राप्तं तद्राज्य गतकण्टकम् ॥ २० ॥

२० जिसके लिये पिता एव पितृव्य आदि का श्रम विफल हो गया था, पौत्र ने कण्टक-रहित, उस राज्य को अनायास ही प्राप्त कर लिया।

पितुः पितामहस्यापि पितृव्यस्य च सपदः ।
भाग्यभाज नृपं प्रापुः सर्वाः सिन्धुमिवापगाः ॥ २१ ॥

२१ जिस प्रकार सभी नदियाँ सिन्धु[1] को प्राप्त करती हैं, उसी प्रकार पिता, पितामह तथा पितृव्य की सम्पत्तियाँ, भाग्यवान उस नृप को प्राप्त थी।

---

पाद-टिप्पणी

१७ (१) कर्पासक कपास अर्थात रूई या सूती वस्त्र (मनु० ३८ ३२६, १२ ६४)। इसका एक अर्थ कपास या रूई के सूत से बना वस्त्र होता है (याज्ञ० २ १७९)। कार्पास शब्द हिन्दी में प्रचलित है—

व्यापी है जिसमें विभा वलय मे नीलाभ होते हैं,
शित मेघखण्ड जिसमें कार्पास के पुज श्वेत प्रभा से।

पाद-टिप्पणी •

१९ (१) सूर्यकान्त मणि सूर्य मणि = तपन मणि = रविकान्त = सूर्याश्मा। एक प्रकार का स्फटिक या बिल्लौरी पत्थर। सूर्य के सम्मुख रखने से गरमी या उष्मा या आंच निकलती है (श० २ ७)। हिन्दी का पद है—

चन्द्र कान्ति अमृत उपजावै।
सूर्य कान्ति में अग्नि प्रजावै॥

पाद-टिप्पणी

२१ (१) सिन्धु = समुद्र श्रीवर ने गीता के निम्नलिखित श्लोक का भाव उक्त श्लोक में निहित किया है

आपूर्यमाण मचल प्रतिष्ठं,

षड्दर्शनपरिचयं सोऽग्रहीन्मत्सरोज्झितः ।
षड् दर्शनक्रिया यस्मिन्नैकमत्यमिवाययुः ॥ २२ ॥

२२. मत्सर त्यागकर, उसने षड्दर्शन[1] का अध्ययन किया, जिसमें कि छहों दर्शनों की क्रियायें एक मत सदृश हो गयी थीं।

भूपतेरह्लदायुक्तो नियुक्तः सर्वकर्मसु ।
साचिव्यं पुत्रसंयुक्तः पुण्योद्युक्तः सदाकरोत् ॥ २३ ॥

२३. राजा के सब कार्यों पर आयुक्त अहमद[1] नियुक्त हुआ, और पुण्योदत, वह पुत्र सहित, सदा सचिव का कार्य करता रहा।

अथ प्रथममेवाह्लदायुक्तं मल्लिकं नृपः ।
सग्रामग्रामनाग्रामप्रमेयस्वामिनं व्यधात् ॥ २४ ॥

२४. राजा ने पहले ही आयुक्त[1] मल्लेक अहमद को ग्राम संग्राम[2] एवं नाग्राम[3] का स्वामी बना दिया।

---

समुद्र मापः प्रविशन्ति यद्वत्
तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे
स शान्ति माप्नोति न काम कामी। (२ : ७०)

इसका दूसरा अर्थ भी होता है। सिन्धु को यदि महानद सिन्धु मान लें तो काश्मीर की सब नदियों का जल समुद्र में सीधा न प्रवेश कर प्रथम सिन्धु महानद में प्रवेश करता है। सिन्धु महानद उस जल को सिन्धु अर्थात् समुद्र में पहुँचाता है।

पाद-टिप्पणी :

२२. ( १ ) षड्दर्शन : आस्तिक दर्शन—(१) सांख्य, (२) योग, (३) न्याय, (४) वैशेपिक, (५) मीमांसा और (६) वेदान्त तथा नास्तिक दर्शन—(१) चार्वाक, (२) अर्हत, (३) माध्यमिक, (४) योगाचार, (५) सौत्रांतिक तथा (६) वैभापिक माने जाते हैं। एक मत से पड्दर्शन—(१) बौद्ध, (२) नैयायिक, (३) सांख्य, (४) जैन, (५) वैशेपिक तथा (६) जैमिनीय है। वैदिक अर्थात् आस्तिक दर्शन में कुछ विद्वान केवल चार दर्शन मानते हैं—(१) वैशेपिक, (२) सांख्य, (३) योग एवं (४) मीमांसा। इस मत के आचार्य वैशेपिक दर्शन के अन्तर्गत न्याय तथा मीमांसा में उत्तर ( ज्ञान = वेदान्त ) तथा पूर्व (कर्म) मीमांसा मानते हैं। एक मत के अनुसार मीमांसा में, कुछ आचार्यों के अनुसार उत्तर एवं पूर्व मीमांसा के मध्य में मध्य या दैवी मीमांसा मानते हैं।

दर्शन शब्द साभिप्राय है। चैतन्य शक्ति दर्पण की स्वच्छत्व शक्ति के समान है। बिना प्रतिबिम्ब दर्पण पापाणवत् है, उसी प्रकार बिना ज्ञेयाकार के चैतन्य जड़ है। यदि दर्पण मलिन हो तो, उसमें किसी वस्तु का दर्शन नहीं होता, उसी प्रकार बिना निर्मलता प्राप्त हुये, चैतन्य किंवा आत्मा का दर्शन नहीं होता ( द्र० : ४ : ५०२ )।

पाद-टिप्पणी :

२३. ( १ ) अहमद : बहारिस्तान शाही, (पाण्डु० : ५८ बी०), तारीख हसन (पाण्डु० : १०७ ए० ) से मालूम होता है कि सुल्तान ने उसे वजीर बना दिया था। फिरिश्ता के अनुसार अहम अह्द प्रधान मन्त्री बन गया ( ४७७ )। प्रधान मन्त्री और वजीर का पद समकक्ष है। पीर हसन लिखता है—सुल्तान ने मलिक मुहम्मद यतू को जो छछ-वल में मदफ़ून है मसनद वज़ारत पर बैठाया (१८९)।

पाद-टिप्पणी :

२४. ( १ ) आयुक्त : द्रष्टव्य : टिप्पणी : जोन० : २ : १७३, १८९।

पुत्रोऽस्य नौरुजायुक्तो द्वारपालादिकार्यभाक् ।
इक्षिकामभजद्राष्ट्रं सग्रामविभवोर्जितः ॥ २५ ॥

२५ इस (मल्लेक अहमद) का पुत्र आयुक्त नौरुज[1], जो कि द्वारपाल[2] आदि का कार्य करता था, सग्राम के विभव से समुन्नत होकर, इक्षिका[3] राष्ट्र प्राप्त किया।

पानलीलान्तरे तत्रप्रसादामृतवर्षिणा ।
येन दारिद्र्यदावाग्निः केषां न क्षपितः क्षणात् ॥ २६ ॥

२६ जिसने पान-लीला के अवसर पर, क्रिपामृत की वर्षा कर, क्षण भर म, किन लोगो के दारिद्रय-दावाग्नि को नष्ट नही किया ?

बहिर्देशस्थिते राज्ञि बाल्ये यः सेवकोऽभवत् ।
स ताजिभट्टो मल्लेकमतः प्रापान्तरङ्गताम् ॥ २७ ॥

२७ बाहर देश मे राजा के स्थित रहने पर, बाल्यकाल म जो सेवक था, (राजा का) वह मल्लेक[1] ताजभट्ट अन्तरग[2] हो गया।

निग्रहानुग्रहव्यग्रः समग्रे राज्यविग्रहे ।
दत्तदूत्याधिकारेण राज्ञो जिह्वेव सोऽभवत् ॥ २८ ॥

२८ समग्र राज्य विग्रह[1] मे निग्रह[2] एव अनुग्रह[3] करने मे वह दूत का अधिकार प्राप्त कर राजा की जिह्वा सदृश हो गया था।

---

( २ ) सग्राम श्रीदत्त ने सग्राम को नामवाचक शब्द नही माना है। श्री कण्ठ कौल ने उसे नामवाचक माना है। तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—सुल्तान ने अहमद आँसू को मलिक अहमद की उपाधि देकर, शासन प्रबन्ध उसके ऊपर छोड दिया ( ४४८ = ६७६ )।

( २ ) नाग्राम नागाम की जागीर अहमद को दी गयी।

पाद टिप्पणी

२५ ( १ ) नौरुज नौरुज को सुल्तान ने 'बहादुर मल्लिक की उपाधि से विभूषित किया। फारसी शब्द है। ईरानियों के फवरदीन मास का प्रथम दिन है।

( २ ) द्वारपाल पर्शियन इतिहासकारों के अनुसार यह पद अमीरेदर या हाजिबेदर था ( तवक्कात अकबरी ४४८ एव फिरिश्ता ४७७ = ६७६ )। टर्की में इस पद का कापीची बशी कहते है ( द्र० ३ १८८, ३४६, ३६६ )।

( ३ ) इक्षिका द्रष्टव्य टिप्पणी जैन० २ ११ एच परगना है। नाग्राम या नागाम परगना के उत्तर है।

पाद-टिप्पणी

२७ ( १ ) मल्लेक = मल्लिक। श्रीदत्त ने 'मरल' अनुवाद किया है।

हाजी अर्थात हैदरशाह के समय काश्मीर के बाहर किये हुये अभियानो में हसनशाह की ताजभट्ट ने सहायता किया था। ताजभट्ट को रानी का भी विश्वास प्राप्त था।

( २ ) अन्तरग अन्तरग मत्री = अन्तरग मित्र = घनिष्ठ मित्र = विश्वस्त या विश्वासपात्र तथा निजी सचिव अर्थ अभिप्रेत हैं।

पाद टिप्पणी

२८ ( १ ) विग्रह = युद्ध नीति के ६ गुणों

नृपतेर्यदि मत्सरात् सहाया
रचयन्ति प्रबला मिथो विरोधम् ।
कुपिता इव धातवः शरीरं
क्षपयन्ति प्रसभं महर्द्धि राज्यम् ॥ ३६२ ॥

३६२ राजा के प्रबल सहायक, यदि मात्सर्यवश परस्पर विरोध करते हैं, तो हठात् समृद्ध राज्य को उसी प्रकार नष्ट कर देते हैं, जिस प्रकार कुपित धातु[1] शरीर को।

ये सर्वकण्टकास्तीक्ष्णाः परेषां छिद्रकारिणः ।
करभाणामिवैतेषां ते तेऽप्यासन्नतिप्रियाः ॥ ३६३ ॥

३६३ जो सब कण्टक, तीक्ष्ण एवं दूसरों के छिद्रकारी थे, वे ( कण्टकप्रिय ) ऊटों[1] के समान उन लोगों को अति प्रिय हो गये।

पैशुनोपायनाद् भेदं नयद्भिः प्रतिवासरम् ।
चाक्रिकैः कृतसञ्चारैर्वैरं प्रौढिमनीयत ॥ ३६४ ॥

३६४ पैशुनोपायन ( चुगुलखोरी ) द्वारा प्रतिदिन भेद उत्पन्न करनेवाले संचरणशील, षड्यन्त्रकारियों ने वैर को अत्यधिक बढ़ा दिया।

उक्तं यन्नैव केनापि स्वबुद्धया परिकल्पितम् ।
तेषां तद्भृत्यपैशुन्यं हृद्यं काव्यमिवाभवत् ॥ ३६५ ॥

३६५ जिसको किसी ने नहीं कहा, अपनी बुद्धि से परिकल्पित, उनके भृत्यों का पैशुन्य, उन लोगों के लिये, काव्य के समान आल्हादक हो गया।

---

जैन० २ ३० ३० राज० ६ ८। मुसलिम काल में तहसीलदार थे।

पाद टिप्पणी :

३६२ ( १ ) धातु धातु की उपमा श्रीवर ने श्लोक १ : ७ ६६, ११० तथा १८५ में दिया है। आयुर्वेद के अनुसार धातुयें ७ हैं—(१) रस, (२) रक्त, (३) मांस, (४) मेद, (५) अस्थि, (६) मज्जा और (७) शुक्र। खाद्य एवं पेय पदार्थ का परिष्कृत रस बनता है। उसका स्थान हृदय है। धमनियों द्वारा समस्त शरीर में पहुँचता है। रक्त से मांस बनता है। मांस से मेद, मेद से अस्थि, अस्थि से मज्जा और मज्जा से शुक्र बनता है। वात, पित्त एवं कफ की संज्ञा धातु से दी गयी है। पंचभूत (आकाश वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी) तथा पंच पदार्थ (शब्द, स्पर्श, रूप रस, गंध) तन्मात्राओं को भी धातु कहते हैं।

मंख अपने कोश में धातु के विषय में लिखता है—

श्लेष्मादिरस्थिरक्तादि महाभूतानि तद्गुणाः ॥२६५॥
इन्द्रियाण्यश्मविकृतिः शब्द यानिश्च धातवः ॥२६६॥

पाद टिप्पणी

३६३ ( १ ) ऊँट करभ का अनुवाद ऊँट किया है। करभ हाथी के बच्चा को भी कहते हैं श्रीदत्त ने हाथी अनुवाद किया है परन्तु कांटा अर्थात्

हितं प्राणपणेनापि प्रभोः संपादयन्नयम् ।
महेश्वरवदेतस्मिन्नाभवद् भक्तिखण्डितः ॥ ३६ ॥

३६. प्राणपण से भी प्राणी के हितकर नीति सम्पादित करते हुए, शिव[1] के समान उसमें उसकी भक्ति खण्डित नहीं हुई।

मठाग्रहारसदननिर्माणातिथिपूजनैः ।
नृपोपचारैः साफल्यमनैषीत् सर्वसम्पदः ॥ ३७ ॥

३७. मठ, अग्रहार, सदन निर्माण, अतिथि पूजन एवं नृप सेवन द्वारा (इसने) समस्त सम्पत्तियों को सफल बना दिया।

कमलममलं दृष्ट्वा श्रीमत्स्वकोशविभूषितं
मथयितुमथ प्राप्तो यावन्मदान्मदवारणः ।
प्रकृतिमलिनस्तावन्मग्नः सपङ्कसरोवरे
श्रवणचपलो बद्धो याति क्षयं मधुपैः सह ॥ ३८ ॥

३८. श्रीमान् स्वकोष भूपित निर्मल कमल को देखकर (उसे) मद से नष्ट करने के लिये मतवाला हाथी[1] जल तक पहुँचता है, तब तक पंकिल सरोवर में मग्न प्रकृति[2] में मलिन श्रवण चपल[3] वह (हाथी) बाँध लिया जाता है, और मधुपों के साथ क्षय को प्राप्त होता है।

अत्रान्तरे स बहामखानः पिशुनमोहितः ।
देशान्तरोद्यमं त्यक्त्वा युद्धायागान्मदोद्धतः ॥ ३९ ॥

३९. इसी बीच पिशुन[1] व्यामोहित, मदोद्धत बहराम खाँ देशान्तर[2] का उद्यम त्यागकर, युद्ध के लिये गया।

---

पाद-टिप्पणी :

३६. (१) शिव : श्रीवर जैनुल आबदीन को भगवान का अवतार मानता था। हस्सन शाह को भी उसने शिव के समान माना है।

पाद-टिप्पणी :

३८. (१) हाथी : इसका यह भी भावार्थ होगा—सब प्रकार से पूर्ण एवं सम्पन्न राजा को नष्ट करने के विचार में आया कोई दुष्ट राजा भी हाथी की तरह बाँध लिया जाता है, और अपने सहचरों के साथ नाश को प्राप्त होता है।

(२) प्रकृति मलिन : स्वभाव से मलिन।

(३) श्रवण चपल : सुनकर काम करनेवाला, कान का कच्चा व्यक्ति।

पाद-टिप्पणी :

३९. ( १ ) पिशुन : तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'उस समय कुछ षड्यन्त्रकारियों ने बहराम खाँ के पास जाकर उसे युद्ध की ओर प्रेरित किया', (४४८ = ६७६)।

फिरिश्ता लिखता है—कुछ असन्तुष्ट लोग जो नवीन प्रशासन नापसन्द करते थे और राज्य परिवर्तन के कारण कुछ लाभ उठाना चाहते थे, बहराम खाँ को काश्मीर बुलाने के लिये राजी किया और कहा

त्वद्बलान्तरमेष्यामो वयं तव रणक्षणे ।
इति लेखैर्धृताशं तमकुर्वन् राजपूरुषाः ॥ ४० ॥

४०. तुम्हारे रक्षा के अवसर पर, हमलोग तुम्हारी सेना मे आ जायेंगे, इस लेख द्वारा राजपुरुषो[१] ने उसे आशान्वित किया ।

कर्णाभ्यन्तरतः शैलानुल्लङ्घ्य कटकोत्कटः ।
क्रमराज्यपुरं प्राप्तः क्रमराज्यजिहीर्षया ॥ ४१ ॥

४१ उत्कट सैन्यबल वह कर्ण[१] के अन्दर से, पर्वतो को पारकर, क्रमराज्य[२] को जीतने की इच्छा से, क्रमराज्यपुर पहुँचा ।

---

कि वह बडी आसानी से राज्य सिंहासन प्राप्त करने में सफल हो जायगा (४७७) ।

( २ ) देशान्तर दिगन्तर = काश्मीर से बाहर । द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी १ ७ ७७, १३९, १ ३ ११३, १ ५ ७६, १ ७ १७३ ।

पाद-टिप्पणी

'त्वद्' पाठ–बम्बई ।

४० (१) राजपुरुष तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'कुछ अमीरो ने उसे पत्र लिखकर बुलवाया' (४४८ = ६७६) ।

पीर हसन लिखता है—'बाज फसादी लोग बहराम खाँ के पास गये और उसे जग के लिये आमादा किया । चुनाचे बाज उमरा ने उसे लिखकर बुलवाया' (१८९) ।

पाद-टिप्पणी

४१. (१) कर्ण कर्ण का तात्पर्य यहाँ स्पष्ट नही होता है । श्रीदत्त ने अनुवाद किया है कि 'कर्ण के भीतर से वह आया ।' यहाँ स्थानवाचक माना गया है (पृष्ठ २१०) । श्रीकण्ठ कौल ने भी उसे नामवाचक शब्द माना है । फारसी इतिहासकारों द्वारा वर्णित 'किर्मर' अथवा 'कर्मा' प्रतीत होता है । श्रीवर ने संस्कृतकरण कर उसे कर्ण बनाया है । यह भी सम्भावना हो सकती है कि कर्ण कोई विशेष स्थान या मार्ग का नाम था । अनुसन्धान अपेक्षित है । यह स्थान क्रमराज की सीमा, उसके समीप होना चाहिये, जहाँ बाहर से क्रमराज्य पहुँचा जा सकता है । फारसी इतिहासकारो ने 'किर्मा' और 'किर्मार' नाम दिया है । तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—बहराम खा 'कर्मा' की विलायत से लौट कर पर्वतों के मार्ग से किमराज ( कमराज ) की विलायत में पहुँचा ( ४४८ = ६७७ ) ।

(२) क्रमराज फिरिश्ता लिखता है—बहराम खा कुरमर के मार्ग से भारत से गुजरज ( क्रमराज्य-कामराज ) बिना किसी प्रकार के प्रतिरोध के आ गया ( ४७७ ) ।

पीर हसन लिखता है—बहराम खा जब कमराज की हद्द में पहुँचा तो फौरन अलम मुखालफत बुलन्द किया ।

तवक्काते अकबरी की एक पाण्डुलिपि में करमराज के लिये 'करमा' तथा दूसरे में 'करहा' तथा लियो संस्करण में 'करह' लिखा गया है । 'करमार' शब्द लियो संस्करण फिरिश्ता में लिखा गया है । कर्नल ब्रिगस ने 'कुरमार' ( ४ ४७७ ) तथा रोजर्स ने 'कमराज' शुद्ध नाम दिया है ( जे० ए० एस० बी० ५४ १०८ ) । केम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया में लिखा गया है—'कमराज' के दक्षिण 'कम' के पहाड़ियो में शरण लिया ।

तावन्मन्त्रियुतो राजा स्थितोऽवन्तिपुरान्तरे ।
तत्प्रत्यावृत्तिवार्तां तां श्रुत्वा तूर्णं न्यवर्तत ॥ ४२ ॥

४२. तब तक मन्त्रियों सहित राजा अवन्तिपुर[1] में स्थित रहा, और उसके प्रतिगमन की वार्ता सुनकर, शीघ्र लौट आया।

राजा सुय्यपुरं प्राप्तः पितृव्यागमविह्वलः ।
आनीय सचिवान् सर्वान् सभान्तरिदमब्रवीत् ॥ ४३ ॥

४३. पितृव्य आगमन से विह्वल, राजा सुय्यपुर (सोपुर) पहुँचा, सब सचिवों को लाकर सभा मध्य यह कहा—

पितुः क्रमागतं राज्यं पुत्रस्येत्युचितं मम ।
कोऽयं पितृव्यो ज्येष्ठोऽपि कनिष्ठो निर्मितोद्यमः ॥ ४४ ॥

४४. 'पिता का क्रमागत राज्य, मुझ पुत्र के लिये ही, राज्य के लिये उचित है। ज्येष्ठ होने पर भी, राज्यप्राप्ति प्रयत्नशील, यह कनिष्ट पितृव्य कौन होता है ?

अथवा वीरभोग्यायां भुवि कोऽयं नयो द्वयोः ।
युद्धेन विजयी यः स्याद् राज्यभाक् सोऽस्तु मण्डले ॥ ४५ ॥

४५. 'पृथ्वी के वीरभोग्या होने पर दोनों में यह कौन-सी नीति है ? युद्ध द्वारा जो विजयी हो वह मण्डल में राज्याधिकारी हो।'

श्रुत्वेति नृपतेर्वाक्यं प्रत्यूचुर्मन्त्रिनायकाः ।
ये तेऽप्यादमखानाद्यास्त्वदर्थं विधिना हताः ॥ ४६ ॥

४६. इस प्रकार राजा का वाक्य सुनकर, प्रमुख मन्त्रियों ने उत्तर दिया—'आदम खाँ आदि को तुम्हारे लिये ही विधाता ने हत कर दिया।'

---

पाद-टिप्पणी :

४२. ( १ ) अवन्तीपुर : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—सुल्तान उस समय सैर के लिए दीनापुर गया हुआ था। वह समाचार सुनकर वह अपने चाचा से युद्ध करने के लिए ( सुय्यपुर ) सोपोर पहुँचा ( ४४८ = ६७७ )।

फिरिश्ता लिखता है—सुल्तान जो दीपालपुर की ओर आ गया था अपने चाचा पर आक्रमण करने के लिये सीवपूर (सोपोर = सुय्यपुर) बढ़ा (४७८)।

तवक्काते अकबरी तथा फिरिश्ता दोनों का स्रोत इस घटना के सम्बन्ध में एक ही है। अन्तर केवल इतना है कि अवन्तीपुर के स्थान पर तवक्काते अकबरी दीनापुर तथा फिरिश्ता ने दीपालपुर लिखा है।

पीर हसन लिखता है—सुल्तान इन दिनों वीना नगर की सैर को गया हुआ था। ज्योंही यह खबर सुनी बे-अख्तियार अपने चचा का मुकाबला करने के लिये सोपुर पहुँचा ( १८९ )।

पाद-टिप्पणी :

४३. 'सुय्य' पाठ—बम्बई।

पाद-टिप्पणी :

४५. ( १ ) वीरभोग्या : श्रीवर ने 'वीरभोग्या वसुन्धरा' भाव को उक्त श्लोक में प्रकट किया है ( द्र० : २ : १८७ )।

कोऽयमल्पबलस्ते स्याद् योद्धा स्थानपरिच्युतः ।
किं त्वद्यावसरो नास्ति समित्युभयवेतनाः ॥ ४७ ॥

४७ 'अल्प सेनावाला, स्थान से परिच्युत, यह तुमसे क्या युद्ध कर सकता है ? किन्तु आज अवसर नही है। युद्ध मे उभय दोनो (पक्षो द्वारा) वेतन ग्रहण करनेवाले—

अमुमेव मिलन्त्येते यदि किं क्रियते पुनः ।
तद्धृत्वा कोशसामग्रीमितो गत्वा बहिस्ततः ॥ ४८ ॥

४८ 'यदि, इसी (पक्ष) मे मिल जाते हैं, तो क्या किया जायगा ? इसलिये कोश सामग्री लेकर, यहाँ से बाहर[१] जाकर, तत्पश्चात—

देशमाक्रम्य नः कार्यं सिद्धयत्येवाचिराद् विभो ।
श्रुत्वेति मल्लिकः प्राह भूप तत्र सभान्तरे ॥ ४९ ॥

४९ 'देश पर आक्रमण करके, हे ! प्रभो !! शीघ्र ही हमलोगो का कार्य सिद्ध होगा।' यह सुनकर, वहाँ सभा मे मल्लिक ने राजा से कहा—

तिष्ठत्वत्र भवांस्तावन्मौनं मन्त्रिसभान्वितः ।
स्वकीयादमखानीयान् जेतुं त विसृजामहे ॥ ५० ॥

५० 'मन्त्रि सभा सहित आप तब तक यहाँ चुप स्थित[१] रहे, अपने मे (आये) आदम खाँ के ही लोगो को, उसे जीतने के लिये भेज रहे हैं।

ते चेज्जिता वयं यामः पुनः सर्वबलान्विताः ।
कोऽयं तत्सम्भ्रमः कस्य सहायः किं करोत्यसौ ॥ ५१ ॥

५१ 'यदि वे जीत लिये गये, तो हम लोग समस्त सेना के साथ चलेंगे। उससे यह भय कैसा ? उसका कौन सहायक है ? और वह क्या करेगा ?'

---

पाद-टिप्पणी

४८. ( १ ) बाहर : फिरिश्ता लिखता है कि सुल्तान के कुछ दरबारियो ने सुझाव दिया कि काश्मीर से बाहर हिन्दुस्तान पर पहले आक्रमण किया जाय ( ४७८ )।

तवक्काते अकबरी में भी उल्लेख है—'कुछ लोगों ने सुल्तान को इस बात के लिये राजी कर लिया कि वह हिन्दुस्तान चला जाय किन्तु मलिक अहमद आसू ने उसे युद्ध के लिये प्रेरित कर, हिन्दुस्तान न जाने दिया ( ४४८ = ६७७ )।

पाद-टिप्पणी

५०. ( १ ) स्थित : फिरिश्ता लिखता है—मलिक अहमद ने सलाह दिया तब तक चुप रहना चाहिये जब तक कि उसके चाचा की फौज उसे छोड़ न दे ( ४७८ )।

**श्रुत्वेत्यादिमतं तेषां विविधं निश्चयोज्झितः ।**
**मल्लेकाह्मदमन्त्रेण कर्तव्ये प्रत्यपद्यत ॥ ५२ ॥**

५२. इस प्रकार उनके विविध मत को सुनकर, वह कुछ निश्चय नहीं कर सका, अतः मल्लेक अहमद की सलाह से कर्तव्य[1] निश्चित किया ।

**पितुः पितामहस्याथ सैन्यं वृत्वा निजान्तिके ।**
**पैतृव्यान् सेवकान्स्वांश्च दत्त्वा तत्तद्बलान्वितान् ॥ ५३ ॥**

५३. पिता (हैदरशाह) एवं पितामह (जैनुल आबदीन) के सैन्य को अपने पास रखकर, पितृव्य एवं अपने सेवको को उसकी सेना के साथ करके—

**सफिर्यडामरांस्ताजिभट्टादीन् व्यसृजन्नृपः ।**
**योद्धुं वहामखानाय मावरीदेशवासिने ॥ ५४ ॥**

५४. फिर्य डामर सहित ताज[1] भट्टादि को राजा ने मावरी[2] देशवासी बहराम खाँन को युद्ध[3] के लिये भेजा ।

**अथ स्वल्पबलानेतान् जेष्यामीति त्वराकुलः ।**
**तावद् वहामखानः स प्राप डुलपुरान्तरम् ॥ ५५ ॥**

५५. थोड़े वल वाले इन सवों को जीत लूँगा, इस प्रकार शीघ्रता से आकुल होकर, वह वहराम खाँन डुलपुर[1] पहुँचा ।

---

पाद-टिप्पणी :

'ज्झिन' पाठ–वम्बई ।

५२. ( १ ) कर्तव्य : तवक्काते अकवरी में उल्लेख है कि सुल्तान ने मलिक अहमद के सलाह को पसन्द किया ( ४४८ ) ।

पाद-टिप्पणी :

५४. ( १ ) ताजभट्ट : तवक्काते अकवरी में नाम 'ताज वेहता' दिया गया है (४४८ = ६७७) । फिरिश्ता नाम ताजभट्ट देकर, लिखता है—एक वड़ी सेना के साथ ताजभट्ट ने वहराम खाँ का सामना किया जवकि खाँ समझ रहा था कि काश्मीरी उसकी तरफ से युद्ध करेंगे ( ४७८ ) ।

तवक्काते अकवरी के एक पाण्डुलिपि में 'मलिक ताजभत' तथा लीथो संस्करण में मलिक 'ताजलेव' नाम दिया गया है ।

फिरिश्ता ने केवल 'मलिक ताज' लिखा है । कर्नल व्रिग्गस ने 'मलिक ताजभुट' ( ४ : ४७८ ) । रोजर्स तथा कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया में हसन के सेनापति का नाम नहीं दिया गया है ।

( २ ) मावरी : स्थान का अन्वेषण अपेक्षित है । मवुर (माहुरी) एक नदी है । मच्छीपुर परगना में वहती है । सम्भव है कि इसी अंचल की ओर जोनराज का संकेत है । मवऊर नहर भारत से उत्तर-पश्चिम सीमा पार पड़ता है परन्तु उससे यहाँ तात्पर्य नहीं प्रतीत होता । इसका इस प्रसंग में केवल उल्लेख मिलता है ।

( ३ ) युद्ध : तवक्काते अकवरी में उल्लेख है—'सुल्तान ने ताज वेहता को एक भारी सेना देकर वहराम खाँ से युद्ध करने के लिए भेजा ( ४४८ = ६७७ ) ।'

पाद-टिप्पणी :

५५. 'डुल' पाठ–वम्बई ।

( १ ) डुलपुर : तूलापुर = डूलीपुर = शालुरा

अनागतैः कृताश्वासैरपि राजमहत्तमैः ।
स्वात्मानं वञ्चितं मेने तन्निराशो नृपात्मजः ॥ ५६ ॥

५६. आश्वासन[1] देकर, न आनेवाले, राजपुरुषो से अपने को ठगा हुआ माना और उनसे निराश हो गया।

तद्दिने राज्यलक्ष्मीः सा पितृव्यभ्रातृपुत्रयोः ।
द्वयोरासीत् समारूढा कोट्योः संदेहधीरिव ॥ ५७ ॥

५७ उस दिन वह राज्यलक्ष्मी पितृव्य एव भ्रातृपुत्र मे उसी प्रकार थी, जिस प्रकार सन्दिग्ध बुद्धि दो विकल्पो मे।

चौरा इवान्धकारौघे द्वैराज्योपप्लवप्रियाः ।
तुतुषुश्चक्रवाडाद्यास्तंश्रुत्वा क्रमराज्यजाः ॥ ५८ ॥

५८ द्वैराज्योपद्रव[1] प्रेमी, क्रमराज्य के चक्रवाड आदि, यह सुनकर, उसी प्रकार तुष्ट हुये, जैसे अन्धकार पुन्ज मे चोर।

अथ जैनगिरिं यावदाययौ तद्रणाकुलः ।
दूतस्तावत् समागत्य भूपतेरिदमब्रवीत् ॥ ५९ ॥

५९ उससे युद्ध करने के लिये आकुल हो, जब तक जैनगिरि[1] तक आया, तब तक भूपति के दूत ने आकर यह कहा—

---

से दो मील दक्षिण-पूर्व एक गाँव सोपोर सडक पर है। उत्तर परगना का सबसे दक्षिणी गाँव है। दगेरबारी स्रोतस्विनी के वाम तट पर स्थित है। गाँव में मसजिद है। धान की खेती होती है।

फिरिश्ता ने नाम 'लूलपूर' दिया है (४७८)। तबकाते अकबरी में 'लूलू' गाँव नाम दिया गया है (४४९)।

पीर हसन लिखता है—दूसरी तरफ से ताजीभट्ट भी एक बड़ी भारी वजा के साथ मौजा तूलापूर में बहराम खाँ से लडने के लिए पहुँच गया (१८९)।

तबकाते अकबरी के एक पाण्डुलिपि में नाम 'लोलो' तथा दूसरे में 'लोलवी' दिया गया है। फिरिश्ता के लीथो सस्करण में नाम 'तूलापुर' दिया गया है। कर्नल ब्रिगस ने 'लोलोपुर' (४ ४७८) दिया है। रोजर्स तथा कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया में स्थान का नाम नही दिया गया है।

पाद-टिप्पणी

५६ (१) आश्वासन तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'बहराम खाँ को यह आशा थी कि सुलतान के सैनिक उससे मिल जायँगे किन्तु अन्त में कार्य इसके विरुद्ध हुआ (४४८-४४९ = ६७८)'।

फिरिश्ता लिखता है—'काश्मीरी सेना उसकी सहायता करेगी इस आशा से घोर निराशा हुई (४७८)।'

पाद-टिप्पणी

'चक्रवाड्' पाठ—बम्बई।

५८ (१) द्वैराज द्रष्टव्य पाद टिप्पणी १ ३ ८६।

पाद-टिप्पणी

५९ (१) जैनगिर द्रष्टव्य पादटिप्पणी जोन राज० . श्लोक ८७२। सोपार (सुय्यपुर) में

देव वहामखानः सतनयो नयविच्युतः ।
युयुत्सुः समरे वद्धः करीव मदनिर्भरः ॥ ६० ॥

६०. 'हे ! देव !! मदभरे करी के समान, नीतिच्युत एवं युद्धेच्छुक वहराम खांन पुत्र[1] सहित बांध ( वन्दी कर ) लिया गया ।

पतिते तद्रणोद्याने त्वद्‌वलोद्धतमानसे ।
तत्यजेऽनुचरैः खानः पौषे पर्णैरिव द्रुमः ॥ ६१ ॥

६१. 'उस रणोद्यान में, तुम्हारे उद्धत मनवाले सैनिकों के पहुँचने पर, पौष में पेड़ों को जिस प्रकार पक्षी त्याग देते हैं, उसी प्रकार अनुचरों ने खाँन को त्याग दिया ।

ततः संजरमेराद्या गर्जन्तः सैन्यनायकाः ।
दुष्टमेघा इवायाताश्चक्रुस्तच्छरवर्षणम् ॥ ६२ ॥

६२. 'तत्पश्चात् दुष्ट मेघ सदृश गरजते हुये, संजयमेर[1] आदि सैन्यनायक आकर, उसपर वाणवर्षा करने लगे ।

---

समीप था । जैनागिर एक नहर भी है । यह जैनागिर तहसील सोपोर को सिंचन करती है ।

तवक्काते अकवरी में उल्लेख है—'वहराम खाँ पराजित हो गया और जैनगिर ग्राम में आया' ( ४५० = ६७८ ) । 'काफ' को पुरानी फारसी में 'गाफ' के समान लिखा जाता था । इसलिए पाण्डुलिपि के 'जैनगिर' को 'जैनकिर' पढ़ लिया गया है । तवक्काते के लीथो संस्करण में 'रतनकर' लिखा गया है । फिरिश्ता के लीथो संस्करण में 'मरहनापुर' लिखा मिलता है । कर्नल ब्रिग्गस ने 'जैनपूर' लिखा है ( ४ : ४७८ ) । रोजर्स तथा कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया से इस विषय पर प्रकाश नहीं पड़ता । द्र० : ३ ७७; ८५, ९४ ।

पाद-टिप्पणी :

६०. ( १ ) पुत्र : तवक्काते अकवरी में वहराम खां के पुत्र का नाम युसुफ खां दिया गया है । युसुफ खां का पिता वहराम खां की हत्या कर दी गयी, उसके पश्चात तक भी युसुफ कारागार में जीवित रहा । हसनशाह ने अपने वसीयतनामा में लिखा था कि युसुफ खां विन वहराम खां, जो वन्दी है वह मेरे पश्चात सुल्तान वनाया जाय क्योंकि उसका पुत्र अल्पवयस्क था, अत: अपने पुत्र मुहम्मद खां को वलीअहद करने का आदेश दिया था ( ४५१ = ६८२ ) ।

पाद-टिप्पणी :

६१. ( १ ) पौप : काश्मीर में शीतकाल के प्रारम्भिक काल पौप मास में पतझड़ हो जाता है । काश्मीर मण्डल ठूठे पल्लवहीन वृक्षों का समूह लगता है । भारत में पतझड़ चैत्र मास में ग्रीष्म आगमन के पूर्व होता है । भारतीय मानसून की वर्षा काश्मीर उपत्यका में नहीं होती । मानसून कश्मीर में प्रवेश करने के पूर्व अपनी नमी खो देता है । शीतऋतु में फारस के खाड़ी से हवा आती है । उस समय वर्षा तथा हिमपात होता है ।

पाद-टिप्पणी :

६२. ( १ ) संजयमेर : सुल्तान हैदरशाह के वधकारी कार्यों का संजयमेर प्रमुख साधन था । उसने सुल्तान के आदेश पर राजधानी में मण्डप मध्य सुल्तान के सम्मुख वैठे कोवेध हस्सन आदि की उसके साथियों के साथ हत्या कर दिया था । द्रष्टव्य : जैन० २ : ७८ ।

धन्यास्ते श्लाघ्यमरणाः स्मरणाः स्वामिनः पुरः ।
स्मृत्वामितप्रसादानां जीव यत् तृणवज्जहुः ॥ ६३ ॥

६३ 'स्मरणीय एवं प्रशंसनीय मृत्यु प्राप्त करनेवाले, वे लोग धन्य है, जो स्वामी के समक्ष अमित अनुग्रहो का स्मरण कर, तृणवत् प्राण त्याग कर दिये ।

तच्छुद्धये ऋणमवेक्ष्य मितप्रसादं
प्राप्ते क्षणे जहति ये निजजीवरत्नम् ।
शस्त्राणि पुष्पनिकरानिव संविदन्तो
धन्यास्त एव कतिचित् प्रभुसेवकेभ्यः ॥ ६४ ॥

६४ 'परिमित प्रसाद को ऋण मानकर, उसकी शुद्धि हेतु, जो लोग समय आने पर, शस्त्रो को पुष्प पुञ्ज सदृश मानते हुये, अपना प्राण रत्न त्याग कर देते है, वे कुछ प्रभु सेवक धन्य हैं ।

अथो देवस्य माहात्म्य यत्तस्यैव रणे भटाः ।
शिरालमार्गपाद्या ये तद्भृत्याः प्रलयं ययुः ॥ ६५ ॥

६५ 'उस देव का महत्व ही है, जो कि युद्ध मे उसके भृत्य शिराल[1], मार्गपति आदि भट नष्ट हो गये ।

इद चित्रतर यन्नः कटके कोऽपि नो मृतः ।
किंत्वस्मद्भटनिर्मुक्तशराग्रफलसधितात् ॥ ६६ ॥

६६ 'यह बहुत आश्चर्य है ! हमारे कटक मे कोई भी नही मरा, किन्तु हमारे भट द्वारा छोडे गये, बाण[1] के अग्रभाग से विद्ध—

निष्क्रष्टुं नाशकत् कोष्ठात् खड्गं खानो रणोद्यतः ।
तेनाफलायुधः खानो दीनस्त्वद्भटवेष्टितः ॥ ६७ ॥

६७ 'कोष्ट ( मियान ) से खड्ग को रणोद्धत खान निकालने मे भी समर्थ नही हो सका । इससे तुम्हारे भटो से घिरा हुआ, निष्फल आयुधवाला खान, दीन हो गया ।

---

पाद-टिप्पणी

६५ ( १ ) शिराल इसका पुन उल्लेख नही मिलता परिचय अज्ञात है । 'सिराज' नाम का शिराल अपभ्रंश प्रतीत होता है ।

पाद-टिप्पणी

'सधितात्' पाठ—बम्बई ।

६६ ( १ ) बाण पीर हसन लिखता है— निहायत शदीद लडाई वाका हुई । इत्फाक से बहराम के मुँह पर एक तीर लग गया । जिससे उसे शिकस्त नसीब हुई । शाही फौजों ने तावुब करके, उसे मय उसके बेटे को गिरफ्तार कर लिया (१८९) ।

चितानल इवासारैर्मिथ्योष्मा समपद्यत ।
यावत् समेत्य हन्तुं तं आरभन् कृपया द्रुतम् ॥ ६८ ॥

६८. 'वर्षा से चितानल के समान, उसका उष्मा ( तेज ) व्यर्थ हो गया. जब तक मिलकर उसे मारना प्रारम्भ किये, कृपापूर्वक शीघ्र ही—

तं फिर्यडामरस्तावदरक्षद् बाहुपञ्जरे ।
भूः पङ्किलातिवृष्टिरिव द्विजाग्रे निःसहायता ॥ ६९ ॥

६९. 'तब तक जल्दी से फिर्य डामर[1] ने बाहु पंजर में उसे रक्षित कर लिया। पंकिल भूमि अति वृष्टि सम्मुख ब्राह्मण निस्सहायता—

मृत्युभीतिरिति प्राभूत् किं किं तस्य न दुःखदम् ।
शीतवातभयोद्विग्नाः मग्नाः केदारकर्दमे ॥ ७० ॥

७०. 'मृत्यु भय, इस प्रकार उसके लिये, कौन-कौन सी चीजें दुःखद नहीं हुईं ? शीत, वात एवं भय से उद्विग्न, क्षेत्र कर्दम में लिपटे—

त्यक्त्वा तं तद्भटा नग्ना गर्ताटा इव तेऽचलन् ।
अर्जितां सर्वसामाग्रीं पामरैः परिलुण्ठिताम् ॥ ७१ ॥

७१. 'नग्न, उसके वे भट, उसे त्याग कर गर्ताट[1] सदृश चले गये। अर्जित सब सामग्री पामरों द्वारा लूटी[2] गयीं—

साक्रन्दं च सुतं पश्यन्नश्यद्धैर्यः स विव्यथे ।
दध्यौ च क्व च मे भ्राता क्व भृत्याः क्व गृहादिकम् ॥ ७२ ॥

७२. 'तथा क्रन्दन करते पुत्र को देखकर, उसका धैर्य नष्ट होने लगा और वह व्यथित हुआ। इस प्रकार उसने सोचा—'मेरा भाई, भृत्य, घर आदि कहाँ है ?

ससुतः शत्रुभिर्बद्धः कं पृच्छामि करोमि किम् ।
वरं मरणमेवास्तु मा मास्तु मम जीवनम् ॥ ७३ ॥

७३. 'पुत्र सहित शत्रुओं द्वारा बद्ध मैं किससे पूछूँ ? क्या करूँ ? मरना ही अच्छा है। मेरा जीना—न-हो—न-हो।

---

पाद-टिप्पणी :

६९. ( १ ) फिर्य डामर : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : १ : १ : ९४; २ : २८, ७२; ३ : ५४। पाद-टिप्पणी .

७१. ( १ ) गर्ताट : श्रीवर ने अच्छी उपमा दी है। युद्धकाल में वृष्टि हुई थी। खेतों में बिल बनाकर चूहे रहते हैं। पानी बरसने पर बिल में पानी आ जाता है। चूहे बिल से निकल कर, इधर-उधर भागने लगते हैं। वे कीचड़ में लिपट जाते हैं। उसी प्रकार बहराम खाँ के भृत्य तथा सैनिक पानी बरसने के कारण भीगे तथा प्राण रक्षा हेतु खेत के कीचड़ों में लिपटे, इधर-उधर भागने लगे। गर्तात का अर्थ चूहों के समान बिल में रहनेवाला होता है। द्र० : २ : २११।

फलितं वचनं मेऽद्य यदुक्तं जनकेन तत् ।
धिङ् मां चिन्तामणिं त्यक्त्वा येन काचमणिः श्रितः ॥ ७४ ॥

७४ 'पिता[1] ने जो कहा, वह वचन आज मेरे लिये फलित हुआ । मुझे धिक्कार है, जिसने चिन्तामणि[2] त्याग कर, कांचमणि को अपनाया ।

इत्यादि निन्दन् स्वात्मानं पश्चात्तापहताशयः ।
जीवन्मरणमापन्नः खानः सम्प्रति वर्तते ।
पौषे तरुरिवोन्नग्नः फलपत्रविवर्जितः ॥ ७५ ॥ कुलकम् ॥

७५. 'इस प्रकार अपनी निन्दा करता हुआ, पश्चात्ताप से दु खी मन, जीवित रहते, मरण को प्राप्त, खान इस समय—उसी प्रकार नग्न हो गया है जिस प्रकार पौष मास मे फल-पत्र-रहित, नग्न[1] तरु ।

राज्यं तव क्रमायातं दत्तं देवेन भुज्यताम् ।
फलितो धर्मविजयः सोऽद्य भाग्यैर्महीपते ॥ ७६ ॥

७६ 'हे राजन ! देव ( राजा-पिता ) के द्वारा दिए गये इस क्रमप्राप्त राज्य को आप भोगिये, भाग्य से यह धर्म विजय फलित हुआ ।

किमन्यत्तस्य कर्तव्यं यत्तत् तूर्णं समादिश ।
श्रुत्वेति नृपतिस्तुष्टो दत्त्वास्मै पारितोषिकम् ॥ ७७ ॥

७७ 'क्या करना है ? शीघ्र वह आदेश दीजिये ।' यह सुनकर राजा सन्तुष्ट हुआ और उसे पारितोषिक देकर—

---

पाद-टिप्पणी

७४ (१) पिता जैनुल आबदीन । द्रष्टव्य श्लोक १ ७ ९२ तथा १ ७ १७० । जैनुल आबदीन ने शाप दिया था—'वे मन्त्री तथा पुत्र नष्ट हो जाँय, जोकि राज्यलोभी तथा हत्या के लिए इच्छुक है ।'

( २ ) चिन्तामणि द्रष्टव्य 'काच-चिन्ता मणि' उपाख्यान योगवासिष्ठ निर्वाण प्रकरण पूर्वार्द्ध सर्ग ८८ तथा लेखक की योगवासिष्ठ कथा पृष्ठ ४७९ द्रष्टव्य हैं ।

कल्पित रत्न है । उसके विषय में कहावत है कि उससे अभिलषित वस्तुएँ प्राप्त होती हैं । जिसके पास होता है उसकी कामनायें पूर्ण होती हैं । इसे दार्शनिकों की मणि भी कहते हैं—काचमूल्येन विक्रीतो हन्त चिन्तामणिर्मया । शा० १ १२,– तदेव लब्धे हृदियेऽस्ति लब्धु चिन्ता न चिन्तामणिमंया चिन्तामणिमप्य नध्यम्—नै० ३ ८१; १ १४५ ।

रामचरित चिन्तामणि चारू ।
संत सुमन तिय सुभग सिंगारू ॥
( तुलसीदास )

पाद-टिप्पणी

आपन्न ' पाठ–बम्बई ।

७५ ( १ ) नग्न काश्मीर तथा उन स्थानो पर जहाँ तुषारपात नही होता, पतझड वसन्त अथवा चैत्र मास ( माघ ) मे होता है, पादप नंगे लगने लगते हैं परन्तु तुषारपात तथा शीत कटिबन्ध-प्रधान देशा में पौष मास में पतझड हो जाता है । श्वेत तुषार परिच्छादित वृक्ष भूमि नग्न काले दिखाई देते वृक्ष, उकठे सूख वृक्ष तुल्य दिखाई देते हैं ।

पाद-टिप्पणी

७७ 'यत्तत्तूर्णं' पाठ–बम्बई ।

जयवाद्यनिनादौघैः सर्वं बलमतोषयत् ।
अन्येद्युस्तद्भटा जैनगिर्यां कटकवेष्टितम् ॥ ७८ ॥

७८. विजय वाद्य के निनादों से समस्त सेना को प्रसन्न किया। दूसरे दिन उसके भट जैनगिर[1] में सेना से घिरे हुए—

बहामखानमानिन्युः ससुतं भूपतेः पुरः ।
संग्रामविजयोत्सिक्तं सत्कर्तुं स्वभटव्रजम् ॥ ७९ ॥

७९. पुत्र सहित, बहराम खाँ[1] को राजा के सामने ले आये। युद्ध-विजय से गर्वयुक्त अपने सेना समूह को सत्कार करने के लिए—

सहर्षो राजधानीं तामारुरोह नरेश्वरः ।
उच्चावचोक्तिमुखरपौरान्तगतं नतम् ॥ ८० ॥

८०. सहर्ष राजा उस राजप्रासाद पर आरोहण किया। उच्चावच (अच्छी-बुरी) बातें करते नागरिकों के बीच स्थित, नत—

भूमेः रन्ध्रमिवेक्षन्तं लज्जया च भयेन च ।
रणक्षणभटन्यस्तहस्तध्वस्तविभूषणम् ॥ ८१ ॥

८१. लज्जा एवं भय से मानो भू-छिद्र को देखते, युद्धकाल में भटों द्वारा हाथ रखने से नष्ट आभूषण वाले—

दयालुनीचदत्तात्मजीर्णवस्त्रवगुण्ठितम् ।
मुखलग्नेषुभेदोद्यद्रक्ताक्तधृतवेष्टनम् ॥ ८२ ॥

८२. दयालु निम्न जन द्वारा दिए गये, जीर्ण वस्त्र से अवगुण्ठित, मुख पर लगे वाण[1] के घाव से निकलते रुधिर-सिक्त वस्त्र को धारण किये--

---

पाद-टिप्पणी :

७८. (१) जैनगिर : द्र० : जोन० : ८७२, जैन० : ३ : ५९।

फिरिश्ता लिखता है—वैराम खाँ पराजित हो गया और जैनपुर भाग गया। दोनों पिता-पुत्र वन्दी बनाकर सुल्तान के सम्मुख लाये गये (४७८)।

पाद-टिप्पणी :

७९. (१) बहराम खाँ : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'लोलो (नोलापूर) ग्राम में घोर युद्ध हुआ और बहराम खाँ पराजित होकर जैनपुर नामक ग्राम में पहुँचा। शाही सेनाओं ने उसका पीछा कर उसे वन्दी बना लिया। उसके मुख पर एक वाण लगा था और उसकी चीजें तथा सामग्री नष्ट-भ्रष्ट हो गयीं और वह बड़ी शोचनीय दशा में सुल्तान के पास लाया गया (४४९ = ६७८)।

पाद-टिप्पणी :

८२. (१) वाण : आदम खाँ भी जम्मू के राजा की तरफ से लड़ता हुआ मुख पर वाण लगने से घायल होकर मर गया था। दैव की विचित्र गति

अलक्ष्मीवीक्षित दूरात् पितृव्यं क्षणमैक्षत ।
भाग्योर्जितस्य भूभर्तुरग्रे बद्धः समात्मजः ।
दीनात्मा ददृशे पौरैः स्थिराः कस्य विभूतयः ॥ ८३ ॥

८३ अति दरिद्र पितृव्य को दूर से ही ( राजा ) ने एक प्रवृद्ध भाग्यशाली, राजा के सम्मुख पुत्र सहित बँधे दीनात्मा, उसे पुरवासियो ने देखा। किसकी विभूतियाँ स्थिर रहती हैं ?

लोभाक्रान्तधियो विवेकमुचितं मुञ्चन्ति यन्मोहिता
भुक्ता या मनसापि दर्पकचितास्त्यक्तुं न शक्याः स्वयम् ।
सन्तापाय भवन्ति सन्ततमलं नीताः परैश्चेद् बला-
न्मा मा सन्तु भवेऽत्र हन्त चपला वेश्या इवैताः श्रियः ॥ ८४ ॥

८४ गर्वीले एव लोभाक्रान्त बुद्धिवाले लोग, जिससे मोहित होकर, उचित विवेक त्याग देते हैं, एकबार भोगी जाने पर भी मन से जिसका स्वय त्याग नही किया जा सकता, यदि बलात् अन्यो ( शत्रुओ ) द्वारा ग्रहण कर ली जाय, तो निरन्तर सन्तापप्रद होती हैं, इस प्रकार दु ख है, वेश्या सदृश चपल ये सम्पत्तियाँ ( श्री ) इस लोक मे न हो-न हो ।

उपेक्षितः पिता तादृगस्वास्थ्ये स्वार्थलिप्सया ।
ज्येष्ठोऽप्यादमखानः स बाधितोऽपाययुक्तिभिः ॥ ८५ ॥

८५ उस अस्वस्थावस्था मे भी, स्वार्थलिप्सा के कारण, उपेक्षित किया गया तथा ज्येष्ठ भी, वह पिता आदम खान, इसके द्वारा अपाय[1] उक्तियो से बाधित किया गया ।

दुराशयापरो भ्राता श्रियोऽसाध्या मयेक्षणात् ।
राज्यलोभाद् भ्रातृसुते तास्ता द्रोहधियः कृताः ॥ ८६ ॥

८६ दुराशय भ्राता ने राज्य-लोभ से भ्रातृ-पुत्र पर, तत्-तत् प्रकार से द्रोह बुद्धि की ।

अद्यैतेन फलं प्राप्तं तदधर्मविनिश्चयात् ।
दृष्ट्वा बद्धं तमानीत खानमित्यवदज्जनः ॥ ८७ ॥

८७ उसके अधर्म का विचार कर, 'आज इसने फल प्राप्त किया', बँधे खान को देखकर इस प्रकार लोगो ने कहा ।

---

है। जैनुल आबदीन के ज्येष्ठ पुत्र आदम खाँ तथा कनिष्ठ बहराम खाँ दोनों बाण से ही घायल हुए थे। मझला पुत्र हाजी खाँ काश्मीर का सुल्तान बना। वह भी पैर फिसलने के कारण गिर पडा और मर गया। तीनो ही पुत्रो की स्वाभाविक मृत्यु नही हुई थी।

पाद-टिप्पणी

८५ ( १ ) अपाय अनिष्टकर = हानिकर। सहारक करणापाय विभिन्न वर्णया—रघु० ८ · ४२, काय सनिहितापाय —हि० ४ . ६५ ।

**केऽप्यूचः स पितुः शापाद् विमूढः समपद्यत ।**
**तथाहि तं पिता जातु पितृद्वैधे रहोऽब्रवीत् ॥ ८८ ॥**

८८. कुछ लोग कहते थे—'यह पिता के शाप से विमूढ़ हो गया था, जैसा कि किसी समय पिता से विवाद होने पर पिता[1] ने उससे एकान्त में कहा—

**राज्यं त्वदग्रजाभ्यां मे नाशितं वैरतो मिथः ।**
**तत्राप्यनिष्टौ द्वावेव मम चिन्ताज्वरप्रदौ ॥ ८९ ॥**

८९. 'तुम्हारे दोनों ज्येष्ठ भाइयों ने पारस्परिक वैर से मेरा राज्य नष्ट कर दिया, उसमें भी दोनों ही मेरे लिए अनिष्ट एवं चिन्ता ज्वरप्रद है ।

**तदेतौ विनिवार्याहं युक्त्या देशसुखाशया ।**
**त्वामेव वर्धयिष्यामि त्वं मदेकाश्रयो भव ॥ ९० ॥**

९०. 'अतः मैं युक्तिपूर्वक इन दोनों को निवारित कर, देश के सुख की आशा से, तुम्हीं को वर्धित करूँगा, तुम केवल मेरे ही आश्रय में रहो ।'

**श्रुत्वेति प्राह तं नाहं जातुचेद् भ्रातरं त्यजे ।**
**यतो ज्येष्ठोऽस्ति मे द्विष्टो द्वयोः किं स करिष्यति ॥ ९१ ॥**

९१. यह सुनकर उससे (जैनुल आबदीन से) कहा—'मैं कभी भाई का त्याग नहीं करूँगा । क्योंकि मुझसे द्वेष रखने वाला, जो ज्येष्ठ है, वह हम ( दोनों ) का क्या करेगा ?'

**श्रुत्वेत्याहाग्रजं हन्तुं त्वयेच्छुस्त्वां स रक्षति ।**
**प्राप्तप्राघुणहस्तेन भुजङ्गमिव वेश्मगम् ॥ ९२ ॥**

९२. यह सुनकर उसने कहा—'आगत पहुने ( अतिथि ) के हाथ घर के साँप के समान अग्रज ( आदम खांन ) को मारने के लिए तुम्हें चाहनेवाला, वह तुम्हारी रक्षा कर रहा है ।

**सिद्धकार्यः सपुत्रः स बाधते यदि का गतिः ।**
**तच्छ्रुत्वा संस्कृतज्ञः स श्लोकेनेत्युत्तरं ददौ ॥ ९३ ॥**

९३. 'कार्य सफल होने पर, पुत्र सहित, वह यदि पीड़ित करेगा, तो कौन-सा उपाय रहेगा ?' यह सुनकर, संस्कृतज्ञ उसने श्लोक से इस प्रकार उत्तर दिया—

---

पाद-टिप्पणी :

८८. ( १ ) पिता-पुत्र-संवाद : श्रीवर ने उक्त श्लोक ८७ से ९६ की घटना श्लोक १ : ७ : ८८ से १ : ७ : ९७ में लिखी हैं । उसी संवाद की ओर संकेत करता है । एक ही घटना एवं विषय को दो विभिन्न परिस्थितियों में कविवर श्रीवर किस प्रकार रखता है, यह उसका कवि-सामर्थ्य प्रकट करता है ।

पाद-टिप्पणी :

९१. 'दिष्टो' पाठ—बम्बई ।

विद्यातीर्थे श्रुतपरिचिताः साधवः सत्यतीर्थे
गङ्गातीर्थे सकलमुनयो योगिनोऽध्यात्मतीर्थे ।
लज्जातीर्थे कुलयुवतयो दानतीर्थे वदान्या
धारातीर्थे धरणिपतयः किल्विषं क्षालयन्ति ॥ ९४ ॥

९४ 'विद्यातीर्थ पर शास्त्रज्ञ, सत्यतीर्थ पर साधुजन, गंगातीर्थ पर सब मुनिजन, अध्यात्म-तीर्थ पर योगी, लज्जातीर्थ पर कुल-युवतियाँ, दानतीर्थ पर वदान्य ( उदार ) एवं धारा[1]तीर्थ पर धरणीपति, पाप को प्रच्छालित करते हैं।'

तदाकर्ण्याब्रवीद् राजा सक्रोधं तं दुराशयम् ।
बहुधा युद्धदृष्टोऽसि नाहं यत्रास्मि तत्क्षमः ॥ ९५ ॥

९५ यह सुनकर, क्रोधपूर्वक राजा ने उस दुराशय से कहा—'बहुत बार युद्ध में तुम्हें देखा है, जहाँ कि मैं युद्ध के लिए समर्थ नहीं था—

वराकः खड्गधारार्थी तत्र त्वमसि दर्पितः ।
किं वच्म्युत्पाटने योग्ये नेत्रे पश्यामि दुर्धियः ॥ ९६ ॥

९६ तथा दीन एवं खगधारा चाह रहा था, वहाँ तुम बहुत घमण्डी थे। क्या कहूँ ? दुष्ट-बुद्धि तुम्हारे उत्पाटन के योग्य नेत्रों को देख रहा हूँ।

तदेक एव नष्टस्त्वं भवेः सानुशयोऽचिरात्
इत्युक्तमस्मिन् पित्रा यत् तदद्य फलितं वचः ।
तं वीक्ष्येति कथा लोकः स शोकोऽप्यकरोन्मिथः ॥ ९७ ॥

इति ब्रहाम खान पराजय ।

९७ 'अतः शीघ्र ही नष्ट एवं पश्चाताप युक्त होगे।' 'इस प्रकार इसके लिये पिता ने जो बात कही, वह बात आज फलित हुई।' यह कहकर, उसे देखकर, लोग परस्पर शोक प्रकट करने लगे।

यथोचितैर्दानमानैस्तोषयित्वा निजं बलम् ।
तस्मिन्नेव दिने राजा तुष्टो नगरमाययौ ॥ ९८ ॥

९८ यथोचित दान मान से अपने सैन्य को सन्तुष्ट कर, उसी दिन राजा प्रसन्न होकर, नगर चला गया।

---

पाद टिप्पणी

९४ ( १ ) धारा खगधारा = तलवार की धारा। किसी काटने वाले उपकरण की तेज धार को धारा कहते हैं—तर्जित परशुधारया मम— रघु० ११ ७८।

पाद टिप्पणी

९७ पाठ "तमीक्षेति" कलकत्ता, 'तमीक्ष्येति' बम्बई के स्थान "तं वीक्ष्य" रखा गया है।

**बद्धं रिपुं समादाय नौकारूढं सुतान्वितम् ।**
**श्रीजैननगरे राजावासे स्वे बन्धने व्यधात् ॥ ९९ ॥**

९९. पुत्र[1] सहित बँधे, शत्रु को नौकारूढ़ कर, ले आया और जैननगर में उसी के राजावास के अन्दर बन्धन[2] में रख दिया।

**जननी नृपतेः प्रीता दर्शनामृतहर्षणा ।**
**अमन्यत रणोत्तीर्णं पुनर्जातमिवात्मजम् ॥ १०० ॥**

१००. दर्शनामृत हर्षित, प्रीतियुक्त राजा की माता अपने पुत्र के रण से लौटने पर, उसका पुनर्जन्म माना।

**शङ्कितो यौनसंबन्धाद् भूपतिः कतिचिद्दिनैः ।**
**रुषावतारसीहादीन् कारागारान्तरे व्यधात् ॥ १०१ ॥**

१०१. यौन सम्बन्ध कारण शंकित, राजा ने थोड़े ही दिनों में क्रोध से अवतार सीह[1] आदि को कारागार में रख दिया।

**पापो मल्लिकजाजः स पञ्चगह्वरदेशजः ।**
**पुनश्चाटुकतन्त्रेण तत्तदायासकार्यभूत् ॥ १०२ ॥**

१०२. पञ्चगह्वर देशोत्पन्न वह पापी मल्लिक जाज पुनः चाटुकारिता से तत्-तत् प्रकार से कष्टप्रद हुआ।

---

पादटिप्पणी :

'राजावास' पाठ–बम्बई।

९९. ( १ ) पुत्र : बहराम खां के पुत्र का नाम नहीं दिया गया है। किन्तु उसका नाम युसुफ था। वह जिस समय बन्दीगृह से छूटा, उसी समय मार डाला गया था।

( २ ) बन्धन : तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'सुल्तान ने आज्ञा दिया कि पिता और पुत्र को बन्दी बना दिया जाय ( ४४९ = ६७८ )।'

पाद-टिप्पणी :

१०१. ( १ ) अवतार सीह : अवतार सिंह इसका उल्लेख पूर्व तथा पश्चात पुनः नहीं मिलता। इसके विषय में कुछ जानकारी श्रीवर नहीं देता। जोनराज ने एक अवतार भोल्ल का उल्लेख किया है। परन्तु दोनों के समयों में लगभग सवा सौ वर्षों का अन्तर है ( जोन० : श्लोक : २७७, ४१८ )। अवतार भोल्ल की कन्या लक्ष्मी थी। वह सुलतान शहाबुद्दीन की पत्नी थी।

पाद-टिप्पणी :

'जाजः' पाठ–बम्बई।

१०२. ( १ ) पञ्चगह्वर : वर्तमान पंजगव्वर उपत्यका तथा खसो का निवासस्थान है। राजानक रत्नकण्ठ ने स्वयं अपने हस्तलिपि से गह्वर को गरभारपुर माना है। पंजगव्वर स्थानं बुदिल क्षेत्र में है। (द्र० : ४ : २१२ तथा जोन० : श्लोक १३२)।

उत्कोचमुद्रादानादिप्रपञ्चाञ्चितवञ्चनः ।
सुसंचयकृता येन देशोऽशेषो विलुण्ठितः ॥ १०३ ॥

१०३ सञ्चय करनेवाले जिसने उत्कोच, ( घूस ) मुद्रा—दान आदि प्रपचो से सम्पूर्ण देश को लूट लिया।

अभिमन्युप्रतीहारः स्वतन्त्रो मन्त्रिमण्डले ।
स देवसरसि स्वाम्यमभजद् बलदर्पितः ॥ १०४ ॥

१०४ मन्त्रिमण्डल से स्वतन्त्र एव बलगर्वित, वह प्रतिहार अभिमन्यु[1] देवसर[2] का स्वामी बन गया।

लोत्रप्रतिग्रहक्षेत्रदत्तरुद्धिः पदे पदे ।
लुब्धः स निजमात्मानमनाशीर्भाजनं व्यधात् ॥ १०५ ॥

१०५ वह लोभी पद-पद पर लूट का सामान लेकर तथा क्षेत्रो मे रुकावट डाल कर, अपने को आक्रोप का भाजन बना लिया।

शङ्क्यो राजगृहासन्नः पितृव्यो बन्धनस्थितः ।
त्वय्यन्यत्र स्थिते कोऽपि नीत्वा द्वैराज्यमाचरेत् ॥ १०६ ॥

१०६ 'राजगृह के निकट बन्धन मे स्थित पितृव्य शकनीय है, तुम्हारे अन्यत्र रहने पर, कोई ( उसे ) लेकर द्वैराज[1] करने लगे।'

इत्यादि प्रेरितोऽनेन नेयबुद्धिर्नरेश्वरः ।
क्रुद्धो बहामखानाय नेत्रोत्पाटनमादिशत् ॥ १०७ ॥

१०७ इस प्रकार इसके द्वारा प्रेरित, चचल बुद्धि राजा का क्रुद्ध होकर, बहराम का नेत्रोत्पाटन[1] करने के लिए आदेश दिया।

---

पाद-टिप्पणी

१०३ 'देशा' पाठ—बम्बई।

पाद टिप्पणी

१०४ ( १ ) अभिमन्यु तवकाते अकबरी में नाम जैन बद्र (८४९ = ६७८), तारीख हसन मे जैन पदर, अन्य स्थान पर, ऐन बद्र उसे लिखा गया है।

( २ ) देवसरस द्रष्टव्य टिप्पणी जोनराज श्लोक ३३०। यह परगना दिवसर है। देवसरस का उल्लेख नीलमतपुराण ( १२८३ १४९५, २८४, १४९६ श्लोकों) में किया गया है। मराज में अनन्तनाग जिला है। विशाऊ नदी के दक्षिण तटवर्ती काश्मीर उपत्यका के दक्षिण-पश्चिम है। तहसील का केन्द्र कुलगाम है। धान की खेती इस क्षेत्र में अच्छी होती है।

पाद-टिप्पणी

१०५ 'ग्रह' पाठ—बम्बई।

पाद-टिप्पणी

'त्वय्यन्त्र' पाठ—बम्बई।

१०६ ( १ ) द्वैराज द्रष्टव्य टिप्पणी १ ३ ८६, ३ ५८, ४ ६२१।

पाद-टिप्पणी

१०७ ( १ ) नेत्रोत्पाटन मुसलिम शासन

तस्य तूलाचिते नेत्रद्वये तप्तां शलाकिकाम् ।
जैनराजानको लौहीं दृङ्नाशार्थमदापयत् ॥ १०८ ॥

१०८. जैन राजानक ने दृष्टि नाश करने के लिए, उसके रुई भरे दोनों नेत्रों में, तप्त लौह शलालिका[1] डलवा दिया ।

नैर्घृण्यमक्षिहर्तुर्यत् कृष्टाक्षस्य च या व्यथा ।
द्वयं न शक्यते वक्तुं यथार्थं मादृशां गिरा ॥ १०९ ॥

१०९. नेत्र हर्ता की निर्दयता और नेत्र निकाले जाने की व्यथा, उन दोनों का यथार्थ वर्णन, हमारे जैसे लोगों की वाणी नहीं कर सकती ।

दुर्नीतिमवदन् केचित् केचिदीश्वरजृम्भितम् ।
प्राक्कर्मपाकमपरे नीचसङ्गमथापरे ॥ ११० ॥

११०. कुछ लोगों ने इसे दुर्नीति, कुछ लोगों ने राजगर्व, अन्यों ने पूर्व कर्म का परिपाक, और दूसरों ने नीच का संगम कहा ।

केचिद्विभववैशस्यं कातरत्वमथापरे ।
तदन्धंकरणं श्रुत्वा कोऽप्यवाच्यगिरोऽब्रवीत् ॥ १११ ॥

१११. कुछ लोगों ने विभव का विनाशभाव, अन्य लोग कातरता तथा कोई उसे अन्धा किया जाना सुनकर, अनिर्वचनीय वाणी कहें ।

---

काल में विरोधियों का आँख फोड़ देना, आँख निकाल लेना, साधारण बात थी । दिल्ली के बादशाहों की भी आँखें उन्हें गद्दी से उतारकर, फोड़ी जाती थी । भारतेतर मुसलिम राष्ट्रों में भी यह क्रूर प्रथा प्रचलित थी । दिल्ली के मुगल बादशाह फर्रुखसियर की भी आँखें फोड़कर, उसे कारागार में डाल दिया गया था ।

पीर हसन लिखता है—'शाही हुक्म के मुताबिक उसकी आँखों में लोहे की गरम सलाइयाँ फेर दी गयीं' (१८९) । द्र० : ३ : १३२ ।

पाद-टिप्पणी :

१०८. (१) शलालिका = शलाका : सलाई : एक नोकदार शल्योपकरण ।

तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—कुछ समय उपरान्त बहराम खाँ की आँखों में सलाई फिरवा दी गयी ( ४४८ = ६७८ ) ।

फिरिश्ता लिखता है—'सुल्तान ने आज्ञा दी कि उसकी आँखें निकाल ली जायँ' ( ४७८ ) ।

शलाका का इसी अर्थ में पुरासाहित्य में उल्लेख मिलता है—अज्ञानान्धस्य लोकस्य ज्ञानाञ्जन शलाकया । चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै पाणिनये नमः । ॥ शिक्षा० ५८ ॥

पाद-टिप्पणी :

१०९. 'नैर्घृण्यम्' तथा 'हर्तुं' पाठ—बम्बई ।

पाद-टिप्पणी :

११०. 'दुर्नीति' पाठ—बम्बई ।

मानुष्यं मास्तु तच्चेत्स्याद् वरं प्राकृतवेश्मनि ।
राजगेहेऽस्तु मा जन्म कस्यापीति न कोऽवदत् ॥ ११२ ॥

११२ किसी का जन्म मनुष्य योनि मे न हो, यदि वह हो, तो साधारण घर मे होना अच्छा है, राजवंश मे न हो, इस प्रकार किस ने नही कहा ?

स्फूर्जद्भाग्यसमुद्भवन्नवनवप्रोल्लाससंपत्सुखः
प्रायो वेत्ति विभुर्विनोदकलया कालं विशालं क्षणम् ।
दौर्भाग्योदितदुर्गतेः स्मृतनिजप्राच्यप्रकर्षोन्नते-
स्तस्य प्राप्तमहाभयस्य स भवेत् स्वल्पोऽपि कल्पोपमः ॥ ११३ ॥

११३. भाग्योद्रेक के कारण उत्पन्न होते, नित नवीन-नवीन प्रोल्लास एवं सम्पत्ति सुख का अनुभव करनेवाला समर्थ व्यक्ति, विनोद-लीला मे लम्बे समय को ही क्षण मानता है। और दुर्भाग्य के कारण दुर्गति प्राप्त तथा अपने पुराने भाग्योत्कर्ष का स्मरण करनेवाले, महा भयग्रस्त व्यक्ति को, वह ( क्षणिक ) स्वल्प भी कल्प सदृश लगता है।

अपःशृङ्खलबद्धाङ्घ्रिः सोऽन्धस्तत्रैव बन्धने ।
स्मरन् विभवसामग्रीमनयच्छेपमायुषः ॥ ११४ ॥

११४. लोह शृंखला से बद्ध पद, वह अन्ध वही बन्धन मे, विभव सामग्री का स्मरण करने हेतु, शेष आयु व्यतीत किया।

नायं गीतैर्विना जातु वर्तते स्म गृहान्तरे ।
इत्येव तस्य सारावा झिल्ल्यो जागरणं व्यधुः ॥ ११५ ॥

११५ वह घर मे बिना गीतो के कभी नही रहता था, इसीलिए मानो शब्द करती झिल्लियाँ, उसका जागरण किये रहती थी।

योऽभूच्छय्यागृहे नित्यं सर्वाङ्गे सेवकैर्वृतः ।
अभूवन् केवलं तस्य भृत्याश्चटकमत्कुणाः ॥ ११६ ॥

११६ सेवागृह मे जिसका सर्वांग सेवको से सेवित रहता था, अब उसके भृत्य केवल चटक ( पक्षी ) एवं मत्कुण ( खटमल ) हो गये थे।

वितानावलयो यस्य बभूवुर्दुर्लभाःसुरैः ।
दृष्टास्त एव तद्गेहे लूतातन्तुविनिर्मिताः ॥ ११७ ॥

११७ दुर्लभ वस्त्रों मे जिसकी वितान पंक्ति बनी रहती थी, वे ही उसके रहने के स्थान पर, मकड़ो के जालो से विनिर्मित हुए देखे गये।

---

पाद-टिप्पणी :
११३. 'स्मृत' पाठ—बम्बई।

पाद-टिप्पणी :
११४. 'बन्धने' पाठ—बम्बई।

यद्वपुः कोमलं पट्टतूलशय्यामभूषयत् ।
तदा तत्तस्य भूपृष्ठेऽशयिष्टादृष्टविष्टरम् ॥ ११८ ॥

११८. जिसका कोमल शरीर पट्ट ( रेशम ) और रुई की शय्या को भूषित करता था, उस समय उसका शरीर बिना विस्तर के भू-पृष्ठ पर शयन करता था।

दीयतां दीयतां तस्य वाणी या त्यागिनः श्रुता ।
विपत्क्षणेन सैवाभूत् तत्तद्वस्तूपयाचने ॥ ११९ ॥

११९. उस त्यागी की 'प्रदान करो-प्रदान करो'—वह जो वाणी सुनी गयी थी, विपत्ति के समय वही वाणी; तत्-तत् वस्तुओं की याचना में सुनी गयी।

गतं स्वाम्यं हता भृत्याः प्राप्तः परिभवो नवः ।
बन्धनं शृङ्खलाबन्धैर्नेत्रोत्पाटनतो व्यथा ॥ १२० ॥

१२०. स्वामित्व नष्ट हुआ, भृत्य मारे गये, नया पराभव प्राप्त हुआ, शृंखलाबद्धों से बन्धन मिला, नेत्रोत्पाटन से व्यथा हुई।

इत्येवैकः स्मरन् दुःखं सोऽन्धो राजसुतश्चिरम् ।
नाज्ञासीत् स्वात्मनस्तुल्यमपरं प्राक्कथास्वपि ॥ १२१ ॥

१२१. इस प्रकार वह अन्धा राजपुत्र चिरकाल तक अपने दुःख को स्मरण करते हुए, पुरानी कथाओं में भी अपने समान किसी को नहीं माना।

कोशोज्ज्वलं कमलमेक्ष्य नवं समन्ता-
दस्मिन् रमेऽहमिति तुष्यति चञ्चरीकः ।
दोषानुषङ्गमधिगम्य निबद्धमूर्ति-
स्तत्रैव नाशमुपयाति विधौ विरुद्धे ॥ १२२ ॥

१२२. सब ओर से कोशोज्वल एवं नवीन कमलों को देखकर—'मैं इसमें क्रीडा करूँगा'—यह सोचकर, चंचरीक प्रसन्न होता है। दोष[1] अवगुण का संसर्ग प्राप्त होने पर, निबद्धमूर्ति वह विधाता के विरुद्ध होने पर उसी में नष्ट हो जाता है।

---

पाद-टिप्पणी :

१२२. ( १ ) दोष : दोष शब्द यहाँ श्लिष्ट है। इसका सामान्य अर्थ दोष-अवगुण तथा दूसरा अर्थ रात्रि होता है।

संस्कृत साहित्य में कमल के प्रति भ्रमरों का अति राग के कारण, उसमें बन्द होकर, मर जाना बहुत वर्णन किया गया है। कमल खिला रहता है। भ्रमर उसमें बैठ जाता है। सूर्यास्त के साथ कमल की पंखुड़ियाँ बन्द हो जाती हैं। कमल के मोह के कारण, भ्रमर पंखुड़ियों को काट कर, बाहर नहीं निकल पाता। हाथी आता है, वह कमल का मृणाल दण्ड उखाड़ लेता है। पुष्प सहित मृणाल-दण्ड खा जाता है। पुष्प में बैठा भ्रमर भी कमल के साथ ही अपनी लीला समाप्त कर देता है। भारतीय साहित्य में कवियों ने इस कथा को अनेक प्रकार से वर्णन किया है।

राजवासः स्वलीलार्थं निर्मितस्तेन यः स्वयम् ।
स एव बन्धनायाभूत् को वेत्ति भवितव्यताम् ॥ १२३ ॥

१२३. अपने लीला के लिये, उसने स्वय जिस राजवास को बनवाया था, वही उसके बन्धन के लिए हुआ। भवितव्यता को कौन जानता है ?

इत्थं वर्षत्रयं तावदनुभूतमहाव्यथः ।
अस्थिशेषतनुः क्लेशात् तस्मिन्नेव क्षयं ययौ ॥ १२४ ॥

१२४ इस प्रकार तीन वर्ष[1] तक महान् दु ख अनुभव कर, दु ख से अस्थि-पजर शेष मात्र शरीर, वह कष्टपूर्वक उसी मे विनष्ट हो गया ।

देशकालमनालोच्य वैरं यः कुरुतेऽरिभिः ।
स नश्यत्यचिरेणैव शौर्यश्रीमण्डितोऽपि सन् ॥ १२५ ॥

१२५ देश काल का विना विचार किये, जो शत्रुओ से वैर करता है, वह शौर्य-श्री से सम्पन्न होने पर भी, शीघ्र ही नष्ट हो जाता है ।

अभिमन्युप्रतीहारस्तत्तच्छौर्यमदोद्धतः ।
आयुक्तपक्षं प्रबलं नासहिष्ट स निष्ठुरः ॥ १२६ ॥

१२६ तत् तत् शौर्य मद से उद्धत एव निष्ठुर, वह प्रतीहार अभिमन्यु[1] प्रबल आयुक्त के पक्ष को सहन नही किया ।

---

पाद टिप्पणी

१२४ ( १ ) तीन वर्ष यह समय सन् १४७५ ई० होना चाहिए ।

पीर हसन लिखता है—उसकी आँखों में लोहे की गरम सलाइयाँ फेर दी गयी । जिससे तीन दिन के बाद उसकी वफात हो गयी (पीर हसन १८९)।

पुत्र सहित बहराम खाँ बन्दी था। केवल बहराम खाँ की मृत्यु हुई थी । पुत्र बच गया था ।

फिरिश्ता ने उल्लेख किया है कि तीन दिन पश्चात आँख फूटने के बहराम खाँ मर गया ( ४७८ ) । यह गलत है । कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया ( भाग ३, पृष्ठ २८५ ) तथा पीर हसन फिरिश्ता का अनुकरण करते लिखते हैं कि तीन दिन पश्चात मर गया । प्रमाण की तुला पर ठीक नही उतरता । तवक्काते अकबरी में स्पष्ट लिखा है—'वह तीन वर्ष तक बन्दी रह कर मृत्यु को प्राप्त हुआ ( ४४९ = ६७८ ) ।

तारीखे हसन ( पाण्डु० १०७ बी० ) में स्पष्ट उल्लेख है कि वह तीन वर्ष पश्चात बन्दी अवस्था में मर गया । श्रीवर का ही मत ठीक है कि बहराम खाँ तीन वर्ष पश्चात बन्दी अवस्था में मर गया ।

तवक्काते अकबरी में सहृशाल तथा फिरिश्ता के लीथो सस्करण में 'सहरोज', कर्नल ब्रिगस तथा कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया में तीन दिन, रोजर्स के मत के अनुसार 'वह तीन वर्ष जेल में रह कर मर गया ।' (जे० ए० एस० बी० ५४ १०८) ।

पाद-टिप्पणी

'मदो' पाठ—बम्बई । बम्बई एव कलकत्ता में 'अयुक्त' दिया गया है । प्रसग में आयुक्त रखना उचित है ।

१२६ ( १ ) अभिमन्यु तवक्काते अकबरी में

स्वातन्त्र्येण स्फुरत् प्राग्वत् स्फुरद्वाक्शरताडनम् ।
दर्पादायुक्तपक्षस्य सूचीवाक्षिगतोऽभवत् ॥ १२७ ॥

१२७. पहले के समान स्वतन्त्रतापूर्वक स्फुरित होता हुआ, और दर्प से वाक्शर का ताड़न करनेवाला, वह सूची की तरह आयुक्त पक्ष के आँखों में गड़ने लगा।

उपायान् कुर्वता तांस्तांच्छन्नकोपेन मन्त्रिणा ।
बन्द्धुं तं मल्लिकेनात्र नावाप्यवसरः क्वचित् ॥ १२८ ॥

१२८. उसे बाँध लेने के लिए तत्-तत् उपायों को करनेवाले प्रच्छन्न कोप मन्त्री मल्लिक ने यहाँ पर कोई अवसर नहीं पाया।

एकदा तद्गृहं गत्वाश्वस्तं श्रीविजयेश्वरे।
तद्धिया नृपती रानधान्यन्तस्तमबन्धयत् ॥ १२९ ॥

१२९. एक बार राजा उसकी बुद्धि से श्री विजयेश्वर उसके घर जाकर, अस्वस्थ उसे राजधानी के अन्दर बँधवा लिया।

अभिमन्युः स्वयं ख्यातः पाण्डवाद्याश्च तत्सुताः ।
शृगालवत्तदाभूवन् धिगिच्छां विविधां विधेः ॥ १३० ॥

१३०. अभिमन्यु ( प्रतीहार ) स्वयं प्रख्यात हुआ, किन्तु पाण्डवादि उसके पुत्र, उस समय शृगाल सदृश हो गये थे। विधाता की विविध इच्छा को धिक्कार है।

यस्याहवे मुखमवेक्ष्य महागजेन्द्रा
दूरं प्रयान्ति बलिनः सशिलीमुखौघाः ।
दर्पाद्विशेद्यदि न निर्मितकूटयन्त्रं
कस्तं निरोद्धुमलमुत्सहते मृगेन्द्रम् ॥ १३१ ॥

१३१. युद्ध में जिस बली के मुख को देखकर, शिलीमुख (भ्रमण = बाण) समूह सहित महागजेन्द्र[1] दूर भाग जाते हैं, यदि वह दर्पपूर्वक ( निर्मित ) कूटयन्त्र[2] में न प्रवेश करे, तो कौन उस मृगेन्द्र को पकड़ने का उत्साह करेगा ?

---

उल्लेख है—जैनबद्र ने जो सुल्तान जैनुल आबदीन का वजीर तथा मलिक अहमद आसू से युद्ध करने का साधन बना था, बहराम खाँ को अन्धा बनवाने का प्रयत्न किया ( ४४९ )।

पाद-टिप्पणी :

१२९. 'राज' पाठ—बम्बई।

जै. रा. ५

पाद-टिप्पणी :

१३१. (१) गजेन्द्र : भावार्थ है कि बली सिंह को देख कर, भ्रमर सहित बड़े-बड़े हाथी भाग जाते हैं, वह सिंह यदि गर्व के कारण जाल में न फँस जाय, तो उसे कौन पकड़ सकता है ? इसी प्रकार युद्ध में जिस राजा के सम्मुख बड़े-बड़े गज या वीर टिक नहीं

सपुत्रं हृतसर्वस्वं बद्ध्वा नौकान्तरे ततः ।
ताजिभट्टः समानीय कारागारान्तरेऽक्षिपत् ॥ १३२ ॥

१३२ ताजभट्ट ने सर्वस्व हरण कर, पुत्र सहित उसे नौका मे बांध कर वहाँ से लाकर, कारागार मे डाल दिया ।

यादृग् बहामखानाय कारयन्नृपतेरसौ ।
वर्षेणैकेन तादृक्षं नेत्रोत्पाटनमन्वभूत् ॥ १३३ ॥

१३३ इसने जिस प्रकार राजा को प्रेरित कर, बहराम खाँ का नेत्रोत्पाटन[1] कराया, एक ही वर्ष[2] मे स्वय नेत्रोत्पाटन का अनुभव किया ।

यादृग् बहामखानस्य व्यथाभूदतिदुःसहा ।
अविन्दत् तादृशीं सोऽपि वक्तुं नान्येन शक्यते ॥ १३४ ॥

१३४ बहराम को जैसी अति दु सह व्यथा हुई थी, उसने भी वैसी व्यथा का अनुभव किया, वह दूसरे द्वारा नही कही जा सकती ।

---

सकते थे । वाणो का चोट खाये, वाणो सहित भाग जाते थे, वही यदि स्वाभिमान के कारण, षड्यन्त्र में न फँस जाय, तो उसे कौन बन्दी कर सकता है ?

( २ ) कूटयन्त्र सिंह अथवा शेर को फँसाने के लिए दो प्रकार के उपाय प्रचलित थे और है । पहला तो साधारण यह है कि भूमि खोद दी जाती है । गहरा गड्ढा हो जाता है । ऊपर तृण आदि बिछा दिया जाता है, जिससे मालूम होता है कि समथर भूमि है । उस पर कोई पशु बाँध दिया जाता है । शेर शिकार समझ कर उस पर टूटता है । उसके वेग के कारण ऊपर का तृणादि द्वारा निर्मित छाजन टूट जाता है । सिंह गड्ढे में गिर कर फँस जाता है ।

दूसरा उपाय उसे कठघरे या पिजडे में फँसाने का अपनाया जाता है । चूहेदानी में जैसे चूहा रोटी का टुकडा देख कर, घुसता है और खटका के गिरने से चूहेदानी का द्वार बन्द हो जाता है । चूहा फँस जाता है । इसी प्रकार शेर को फँसाया जाता है । बडा भारी कटघरा बनाया जाता है । उसमें शिकार बाँध या रख दिया जाता है । शेर शिकार के लोभ में कटघरे में प्रवेश करता है । खटका छूट जाता है । कटघरा का द्वार बन्द हो जाता है । शेर फँस जाता है ।

पाद-टिप्पणी

१३३ ( १ ) नेत्रोत्पाटन आंख फोडना = आँख निकालना = अन्धा कर देना । तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'सुल्तान हसन ने उसे ( अभिमन्यु ) को बन्दी बना लिया और सयोग से जिस दिन बहराम खा को अन्धा बनाया गया था उसी दिन उसकी आँखों में सलाई फिरवाई गयी (४४९ = ६७९ ) ।

पीर हसन लिखता है—शाह ने जैन पडर को गिरफ्तार कर लिया और उसी सलाई, जिससे बहराम खा को अन्धा किया गया था, जैन पडर के आँखो में भी फेर दी गयी । वह भी तीन साल कैद में रह कर, वफात पाया' ( पीर हसन १८९ ) श्रीवर का अभिमन्यु प्रतीहार ही पर्शियन इतिहासकारों का जैन पदर है ।

रोजर्स लिखता है कि 'उसी सलाई से जैनवद्र अन्धा किया गया है, जिससे बहराम खाँ अन्धा किया

यस्मिन्नेव दिने यस्मिन् मासे विप्रियमातनोत् ।
तस्मिन्नेव दिने तस्मिन् मासे सोऽपि समासदत् ॥ १३५ ॥

१३५. जिस मास एवं जिस दिन[१] वह अप्रिय कार्य किया था, उसी मास, उसी दिन वह भी दुःख प्राप्त किया ।

सोऽपि वर्षद्वयं भुक्त्वा सपुत्रो नरकव्यथाम् ।
वहामखानवद्बद्धो व्यसनान्तर्व्यपद्यत ॥ १३६ ॥

१३६. यह भी पुत्र सहित दो वर्ष[१] तक, नरक-व्यथा भोग कर, वहराम खाँ की तरह बँधा हुआ दुःख में ही मर गया ।

अद्यैव मद्दृशौ धन्ये याभ्यां मत्कुलवैरिणः ।
सर्वस्वहरणं दृष्टं मरणं जैनभूपतेः ॥ १३७ ॥

१३७. 'आज ही मेरी आँखें धन्य हुईं, जिन्होंने मेरे कुल के वैरी जैन भूपति का सर्वस्व हरण एवं मरण देखा ।'

इत्यूचे निष्ठुरं यत्स दुष्टात्मा कृतलुण्ठनः ।
तदुक्तिफलमापासौ तयोर्नाशोऽभवत् फलम् ॥ १३८ ॥

१३८. इस प्रकार लुण्ठनकारी, उस दुष्ट आत्मा ( अभिमन्यु ) ने जो निष्ठुर बात कही थी, उस कहने का फल वह पाया और उन दोनों का फल नाश हुआ ।

---

गया था । हिदायत हुसेन ने एनवदर लिखा है । यद्यपि पूर्व पाठ में जैनवद्र मिलता है (६७८ : द्र० : ३ : १०६ ) ।

( २ ) एक वर्ष : यदि वहराम खाँ की मृत्यु सन् १४७५ ई० में मान ली जाय, तो यह समय सन् १४७६ ई० होगा ।

पाद-टिप्पणी :

१३५. ( १ ) दिन : आश्चर्य है, प्रत्यक्षदर्शी घटनाओं का होते हुये भी श्रीवर कल्हण एवं जोनराज के समान वर्ष, दिन, मास का उल्लेख नहीं करता । पता लगाना कठिन हो जाता है कि घटनाओं का समय क्या था ? कल्हण एवं जोनराज ने सपरिश्रम एवं अनुसन्धान के साथ इतिहास रचना की थी । श्रीवर ने अपने समय की घटनाओं का भी समय खोज कर, देने का कष्ट नहीं किया है ।

पाद-टिप्पणी :

१३६. ( १ ) दो वर्ष : यदि वहराम की मृत्यु सन् १४७५ ई० तथा अभिमन्यु का नेत्रोत्पाटन सन् १४७६ ई० मान लिया जाय, तो मृत्यु का समय १४७८ ई० निश्चित होता है ।

तवक्काते अकवरी में उल्लेख है कि तीन वर्ष उपरान्त वन्दीगृह में उसकी मृत्यु हो गयी ( ४४९-६७९ ) । किन्तु अन्य फारसी इतिहासकारों ने दो वर्ष पश्चात् ही मृत्यु की वात लिखता है (तारीख हसन पाण्डु० : १०७ बी० ) ।

पीर हसन तीन वर्ष लिखता है—तीन वर्ष पश्चात् मृत्यु हुई ।

पाद-टिप्पणी :

१३७. ( १ ) जैन भूपति = जैनुल आवदीन : श्रीवर ने जैन० : १ : १ : १२८ में वर्णित घटना की ओर संकेत किया है । अभिमन्यु प्रतिहार ने हाजी खां का समर्थन सुल्तान जैनुल आवदीन के विरोध में किया था ( द्रष्टव्य १ : ७ : २०२ ) ।

चिन्तितं जैनभूपेन सपन्न नैव यत्पुरा ।
हेलयास्याद्य पौत्रेण कृतमित्यवदज्जनः ॥ १३९ ॥

१३९ 'पहले जैन भूपति ने जिस कार्य को सोचा भी नही था, आज उसके पौत्र ने अनायास ही कर दिया—' ऐसा लोगो ने कहा ।

यत्कर्तुमिच्छति परापचयं मनुष्य-
स्तेनैव तस्य नियमेन भवेद्विनाशः ।
शृङ्गं बिभर्ति हरिणः पररन्ध्रबुद्ध्या
शार्ङ्गीकृतं तदिषुभिर्हरते तमेव ॥ १४० ॥

१४० मनुष्य जिसके द्वारा दूसरे का अपकर्ष करना चाहता है, उसी नियम से उसका भी विनाश होता है, हरिण दूसरे को दुःख देने के विचार से शृग धारण करता है, वही धनुष निर्माण किये जाने पर, बाणो द्वारा उसी का विनाश करता है ।

दृष्टो रम्यश्चिरमुपवने वंशवाटो जनैर्यो
नानावर्णैस्तृणगणगुणैर्भूषितो भूरिपत्रः ।
तत्रान्योन्याहननजननात् तादृगभ्युत्थितोऽग्नि-
र्येनैकान्तादुपवनगतं सर्वमेव प्रनष्टम् ॥ १४१ ॥

१४१ लोगो ने चिरकाल तक, उपवन मे रम्य वश वाट ( बाँस का बाग ) देखा, जो कि नाना वर्ण के तृणगण के गुणो से भूषित एव प्रचुर पत्रवाला था । उसी मे परस्पर सघर्ष से इस प्रकार की आग उठी, जिसके कारण एक ओर से, उपवनगत सब कुछ नष्ट हो गया ।

या कारकसभा रम्याभवन्मौलमहीभुजाम् ।
अचिरेणैव कालेन सर्वा स्वप्नोपमाभवत् ॥ १४२ ॥

१४२ मौल[१] राजाओ की जो सुरम्य कारक ( कार्यकारिणी ) सभा थी, वह सब थोडे ही समय मे स्वप्नोपम हो गयी ।

---

पाद-टिप्पणी

१४१ ( १ ) उक्त श्लोक तथा १ ७ २७२ श्लोक समान है । उनका अर्थ एव भाव भी समान है । उक्त श्लोक ३ १४० म केवल गण शब्द श्लोक १ ७ २७ में उससे अधिक है ।

पाद-टिप्पणी

१४२ ( १ ) मौल : पुराने राजाओं, बहुत दिनो से चली आती प्रथा, प्राचीन काल से पदारूढ आनुवशिक अर्थ है ( मनु० : ७ ५४ ) । इसका अर्थ पुराना या क्रमागत मन्त्री भी होता है ( रघु० १२ १२, १४ १०, १८ ३८, १९ ५७ ) । दूसरा अर्थ मुसलिम राजाओ में भी किया जा सकता है ।

क्रष्टुं मल्लिकजादोऽयमन्वजं खानमिच्छति ।
राज्यार्थमिति केनापि राज्ञोऽग्रे पैशुने कृते ॥ १४३ ॥

१४३. 'यह मल्लिकजाद राज्य हेतु अन्य ( बहराम खां ) पुत्र खान को पक्ष में करना चाहता है—' इस प्रकार किसी के द्वारा राजा के समक्ष पिशुनता किये जाने पर—

सर्वस्वहरणं कृत्वा कारायां बन्धुमादिशत् ।
श्रुतेन तेन तद्द्विष्टो न कः सौख्यं समासदत् ॥ १४४ ॥

१४४. सर्वस्व हरण कर, कारा में डालने का आदेश दिया, उसे सुनकर, कौन उसका द्वेषी सुखी नहीं हुआ ?

आक्षेपैरर्जिता यद्वत्तेन श्रीर्न्यायवर्जिता ।
तद्वदाक्षेपतस्तस्मान्नीता राजाधिकारिभिः ॥ १४५ ॥

१४५. जिस प्रकार अन्यायपूर्वक आक्षेपों[1] से सम्पत्ति अर्जित की थी, उसी प्रकार राजा के अधिकारियों ने आक्षेपपूर्वक उससे ले लिया ।

उत्कोचमुद्रादानादितत्तदायासकारणात् ।
स विपत्पतितो नाभूत् कस्यापि करुणावहः ॥ १४६ ॥

१४६. उत्कोच मुद्रा लेना आदि तत् तत् प्रकार से कष्ट देने के कारण, उसके विपत्ति में पड़ने पर भी, उस पर किसी को दया नहीं आयी ।

कदर्यहस्ते क्षणसौख्यनिष्ठं
विघत्यशुद्धं प्रसभं धनं यत् ।
कष्टेन निर्याति तदेव कृष्टं
गुर्नाभगे लिङ्गमिव प्रविष्टम् ॥ १४७ ॥

१४७. क्षणमात्र के लिये सुखकर अशुद्ध, जो धन कृपण के हाथ में चला जाता है, वही गुर्नी-भग में प्रविष्ट लिंग सदृश, खींचे जाने पर कष्ट से निकलता है ।

एकैकं संचितं वस्तु क्रष्टुं कष्टेन तत्करात् ।
नियुक्तैः पीडनं कृत्वा बिलान्तर्गतसर्पवत् ॥ १४८ ॥

१४८. नियुक्त लोगों ने पीड़ा देकर, बड़े कष्ट से ही उसके हाथ से एक-एक संचित वस्तु को उसी प्रकार निकाला, जैसे बिल में गया साँप ।

---

पाद-टिप्पणी :

१४५. ( १ ) आक्षेपों : अर्थ जबर्दस्ती, अथवा मारपीट कर सम्पत्ति प्राप्त करना है ।

पूर्णनापितमल्लेकजादाद्या हृतसंचयाः ।
बन्धनस्थाश्चिरं भूत्वा ते सर्वे प्रमयं ययुः ॥ १४९ ॥

१४९ जिनकी सम्पत्ति हर ली गयी थी, वे पूर्ण[1] नापित मल्लेकजादा[2] आदि चिरकाल तक, बन्धन मे रहकर, सब मर गये ।

तत्तद्राज्याहिताकाङ्क्षिकुले तस्य क्षयावधिः ।
शापः श्रीजैनभूपस्य प्रसारितभुजोऽभवत् ॥ १५० ॥

१५० उस जैन भूपति का वह विनाशकारी शाप, राज्य का अहित चाहनेवाले लोगो के कुल पर हाथ फैलाया ।

मन्त्रै राज्यविवर्धनं कुरुत भोः सत्यं ब्रुवे मन्त्रिणो
नाशं स्वामिनि कुर्वतां नहि सुखं स्याद्वः परत्रेह च ।
यैर्यैर्जैनमहीपतावपकृतं पुत्रैर्नु भृत्यैर्नु वा
तैर्लब्धं फलमीदृशं तदहिता मात्सर्यधीस्त्यज्यताम् ॥ १५१ ॥

१५१ हे मन्त्रियो ! सत्य कहता हूँ । अपने मन्त्रो[1] से राज्यवर्धन करो, स्वामी का नाश करनेवाले तुम लोगो को इस लोक मे अथवा उस लोक मे सुख नही हो सकता । जिन-जिन पुत्रो तथा भृत्यो ने जैन महीपति का अपकार किया था, उन लोगो ने इस प्रकार फल पाया, अत अहित कारी मात्सर्य बुद्धि त्याग दो ।

अन्येऽप्युच्चावचास्तस्य सेवका ये तदाभवन् ।
तदनिष्टकराः सर्वे तद्वत्तेऽपि प्रमिम्यिरे ॥ १५२ ॥

१५२ दूसरे भी उसके ऊँचे-नीचे, जो उस समय अनिष्टकारी सेवक थे, वे सब भी उसी प्रकार नष्ट हो गये ।

---

पाद-टिप्पणी :

१४९ ( १ ) पूर्ण नापित फारसी इतिहासकारों ने नाम पूनी तथा लूली दिया है । द्रष्टव्य पाद टिप्पणी जैन० २ ५२ ।

( २ ) मल्लेकजादा : यह भी षड्यन्त्र का आरोप लगाकर बन्दी बनाया गया और वन्दीगृह म ही मर गया । इसके विषय में विशेष ज्ञातव्य कुछ नही है ।

पाद-टिप्पणी

१५० 'राज्याहिता' पाठ—वम्बई रखना उचित है ।

पाद-टिप्पणी

पाठ—वम्बई । इस श्लोक मे 'पुत्रैर्न भृत्यैर्न' के स्थान पर 'पुत्रैर्नु, भृत्यैर्नु' अर्थ सगत है ।

१५१ ( १ ) मन्त्र अर्थ—मन्त्रणा, सलाह, तथा मन्त्र शक्ति है । द्रष्टव्य पाद टिप्पणी : रा० ४ ५०२ तथा रा० ४ ५९९, जोन० राज० १७७-२६०, ५१५, ५९१ ।

यावद्वसति वसन्तस्तावद्विलसन्ति संततं भृङ्गाः ।
तस्मिन्निष्टे नष्टे भ्रष्टच्छाया न चेष्टन्ते ॥ १५३ ॥

१५३. वसन्त जब तक रहता है, तब तक निरन्तर भ्रमर विलसित होते हैं, उस इष्ट के नष्ट हो जाने पर, आश्रय रहित, वे चेष्टा नहीं करते ।

पूर्वं जैननृपः सैदनासीरादीन् समागतान् ।
पैगम्बरान्वये जातान् पूज्यान् ज्ञात्वा महागुणान् ॥ १५४ ॥

१५४. पहले जैन नृप ने आये हुए सैद नासीर आदि को पैगम्बर के वंश[1] में उत्पन्न पूज्य एवं महागुणी जान कर—

प्रोच्चासनकरस्पर्शदर्शितातुलसत्कृतीन् ।
स्वसुतादानमानेन यांस्तान् राष्ट्राधिपान् व्यधात् ॥ १५५ ॥

१५५. उन्नतासन प्रदान कर तथा करस्पर्शादि से अतुल सत्कार किया और जिन्हें अपनी पुत्री प्रदान कर, सम्मानपूर्वक राष्ट्राधिप बना दिया ।

तेभ्यः सैदज्यमालादीन् राजा ज्ञात्वा तरङ्गितान् ।
प्रत्यमुञ्चत् तदा देशाद् तत्सञ्चयमवञ्चयन् ॥ १५६ ॥

१५६. राजा ने उनके प्रति सैद जमाल आदि को उपद्रवी जानकर, सम्पत्ति से वंचित कर, उस समय देश से निकाल दिया ।

स सैदनासिरो धन्यो गण्यो धुरि मनीषिणाम् ।
यो विचार्यायतिं राज्ञि सति देशान्तरं ययौ ॥ १५७ ॥

१५७. वह सैद नासीर मनीषियों में धन्य, गण्य एवं अग्रणी था, जो उत्तरकाल का विचार कर, राजा के रहते देशान्तर[1] चला गया ।

---

पाद-टिप्पणी :

१५३. 'वि' 'न' पाठ—बम्बई ।

पाद-टिप्पणी :

१५४. (१) पैगम्बर : शब्द फारसी है। अर्थ ईश्वरीय दूत या पयंबर होता है। यहाँ इसलाम धर्म के प्रवर्तक हजरत मुहम्मद साहब से तात्पर्य है।

(२) वंश : द्रष्टव्य पाद टिप्पणी : १ : ७ : ४७ । सैय्यद वंश की कन्या बोबा खातून सुल्तान जैनुल आबदीन की रानी थी। जैनुल आबदीनका पौत्र सुल्तान हसनशाह था।

सैय्यद नासिर के पुत्र मैय्या हस्सन को बहुरूप की जागीर दी गयी थी। सुल्तान जैनुल आबदीन के काल में सैय्यद पैगम्बरवंशीय होने की ख्याति के कारण काश्मीर में उनका आदर, सम्मान था। वे पूज्य माने जाते थे (द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी जैन० : २ : १९)।

पाद-टिप्पणी :

'धुरि' पाठ—बम्बई।

१५७. (१) देशान्तर : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : ३ : ३९ ।

सुतोपनयनाद् राज्ञः सुचिरं यैर्नृपायितम् ।
बहुरूपादिराष्ट्राधिपत्यनित्यसुखोज्ज्वलैः ॥ १५८ ॥

१५८ राजा के पुत्रो से विवाह के कारण बहुरूप[1] आदि राष्ट्राधिपत्य के नित्य सुख को भोगनेवाले जो चिरकाल तक नृपवत आचरण करते रहे।

इतस्ततो भ्रमन्तस्ते केचिद्दिल्लीपुरं ययुः ।
केचिद्विभवलोभेन पुनर्निष्कासिता अपि ।
नारमन्त बहिर्देशे माघे मधुकरा इव ॥ १५९ ॥

१५९ वे लोग इधर-उधर घूमते हुए, कुछ दिल्लीपुर[1] चले गये और कुछ लोग वैभव-लोभ के कारण, निष्काशित होने पर भी, भारत देश मे माघ के मधुकर के समान सुखी नही रह सके।

प्राप्ता ये परदेशजाः कणभुजो देशेऽत्र संपद्युता
गर्भोत्थादिव विस्मृतात्मचरिताः कुर्युः प्रजापीडनम् ।
ते तत्पापभरेण नष्टविभवा निष्कासिताः स्वामिना
गच्छन्ति ह्रदकृष्टमत्स्यतुलनां तज्जीवनाशाकुलाः ॥ १६० ॥

१६० कणभोगी[1] विदेशी, जो इस देश मे आये, सम्पत्ति युक्त हो गये, गर्भ से निकले हुए के समान आत्मचरित भूल गये और प्रजा पीडन करने लगे। इस पाप-भार से उनका वैभव नष्ट हो गया, स्वामी द्वारा निष्कासित कर दिये गये और सरोवर से निकाले गये मत्स्य के समान प्राण-नाश के भय से व्याकुल हो गये।

राजानकैष्ठक्कुरैश्च तैर्मार्गपतिभिः सह ।
निबद्धयौनसंबन्धकृतैक्यो मल्लिकोऽभवत् ॥ १६१ ॥

१६१ मल्लिक, उन राजानकों[1], ठक्कुरों[2] एव मार्गपतियों[3] के साथ यौन सम्बन्ध कर, एक हो गये।

---

पाद टिप्पणी

रूपादि पाठ—बम्बई।

१५८ (१) बहुरूप वीरू परगना द्र० २ १९, ४ ६१५।

पाद-टिप्पणी

१५९ (१) दिल्लीपुर इसका अर्थ वतमान दिल्ली है। योगिनीपुर नाम भी दिल्ली के लिये जोनराज ने प्रयोग किया है (श्लोक ३८४, ४४१)।

पाद-टिप्पणी

१६० (१) कणभोगी कण का अर्थ अनाज का दाना या चावल की खुद्दी होता है। विदेश से आनेवाले सैय्यद आदि गरीब थे। उन्हें भर पेट अच्छा अन्न भी नही मिलता था। वे अनाज के टूटे दानो तथा चावल के कण, जो अत्यन्त गरीबो का भोजन है, करते थे। किन्तु काश्मीर में आने पर उन्हे राजाश्रय एव सम्पत्ति प्राप्त हो गयी थी। वे जनता का शोपण करने लगे थे।

पाद-टिप्पणी

१६१ (१) राजानक द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० राज० १ १ ८८।

**सर्वतन्त्राधिकारेण राजतन्त्रमखण्डितम् ।**
**ताजिभट्टाय मल्लेको मुष्टिबद्धमिवाकरोत् ।। १६२ ।।**

१६२. मल्लिक ने ताजभट्ट के लिये सर्व तन्त्राधिकार[1] द्वारा राजतन्त्र को अखण्डित एवं मुष्टिबद्ध कर लिया ।

**पुत्रीकृतोऽयं सद्वंश्यो मदाज्ञास्मात् स्फुरत्यलम् ।**
**इति तस्याक्षमिष्टादौ मल्लेकः स्फूर्जितं न कम् ।। १६३ ।।**

१६३. पुत्रीकृत यह सद्वंशीय है, इसके कारण मेरी आज्ञा स्फुरित होती हैं, अतः मल्लेक ने उसके स्फूर्जित को क्षमा नहीं किया ।

**स्वसारं वीक्षते स्वल्पं मार्गेशोऽपि ज्यहांगिरः ।**
**स्वसारं सैदनिर्मुक्तिदत्तपत्राङ्कितां व्यधात् ।। १६४ ।।**

१६४. मार्गेश जहाँगीर ने अपनी बहन की प्रतिष्ठा में कमी देखकर, उसे सैयिदों से निर्मुक्ति-पत्र ( तलाकनामा ) दिलवा दिया ।

**तन्मार्गेशाग्रजां राजानुमतेन प्रसन्नधीः**
**अभ्यर्थ्य ताजिभट्टाय मल्लेकस्तामदापयत् ।। १६५ ।।**

१६५. राजा के अनुमोदन से निर्मल-बुद्धि मल्लेक ने प्रार्थना करके, मार्गेश[1] की उस बड़ी बहन को ताजभट्ट को दिला दिया ।

**ज्यहांगिरोऽपि मार्गेशः क्षितिपालानुरोधतः ।**
**स्वाग्रजार्पणमेतस्मै चक्षमे नयदक्षधीः ।। १६६ ।।**

१६६. क्षितिपाल के अनुरोध से नीति में चतुर-बुद्धि मार्गेश जहाँगीर भी अपनी बड़ी बहन को इसे समर्पित करने में समर्थ हुआ ।

---

( २ ) ठक्कुर : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : राज० : १ : १ : ४४ तथा जोन० : राज० : श्लोक ६८८ एवं ७१६ ।

( ३ ) मार्गपति : मार्ग : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : १ : १ : ८८ ।

पाद-टिप्पणी :

१६२. ( १ ) सर्वतन्त्राधिकार : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : राज० : १ : १ : ९४ तथा १ : ३ : ४१ । पीर हसन लिखता है कि ताजीभट्ट को मीरलश्कर नियुक्त किया गया ( पीर हसन : १९० ) ।



पाद-टिप्पणी :

१६३. 'मद्वंश्यः' 'मदाज्ञा' पाठ–बम्बई ।

पाद-टिप्पणी :

१६४. 'ज्यहाँगिर' पाठ–बम्बई ।

पाद-टिप्पणी :

'राजानुमतेन' पाठ–बम्बई ।

१६५. ( १ ) मार्गेश = जहाँगीर : जहाँगीर की बड़ी बहन की शादी ताजभट्ट से हुई थी ।

पाद-टिप्पणी :

१६६. 'ज्यहाँगिरः' पाठ–बम्बई ।

चञ्चरीका इवोद्यानं कुल्या इव महोदधिम् ।
भाग्यभाजं समायान्ति कलत्राणि च संपदः ॥ १६७ ॥

१६७ उद्यान मे चञ्चरीको के समान, महोदधि मे कुल्याओ[1] के समान, स्त्रिया एव सम्पत्तियाँ भाग्यशाली के पास जाती है।

तां मार्गेशकुलोद्यानकल्पवल्लीं फलप्रदाम् ।
तैः संपूर्णगुणैः पूर्णां भट्टो लक्ष्मीमिवासदत् ॥ १६८ ॥

१६८ मार्गेश के कुलोद्यान की कल्पवल्ली[1], जो कि फलप्रद एवं उन सम्पूर्ण गुणो से पूर्ण थी, भट्ट ने उसे लक्ष्मी के समान प्राप्त कर लिया।

सैदनिष्कासनं नैव संपन्नं जैनभूपतेः ।
हेलयैवास्य पौत्रेण कृतमित्यवदज्जनः ॥ १६९ ॥

१६९ 'जैन भूपति सैद निष्कासन को नही सम्पन्न कर पाया, इसके पौत्र ने अनायास ही कर दिया'—ऐसा लोगो ने कहा।

कृते निष्कण्टके देशे मल्लिकाह्मदसन्ततः ।
प्रतिष्ठारसिको राजा तत्सभा च तदाभवत् ॥ १७० ॥

१७० देश के निष्कटक कर दिये जाने पर, उस समय मल्लिक अहमद से प्रभावित राजा प्रतिष्ठा[1] के प्रति रसिक हो गया और उसकी सभा[2] भी वैसे ही हो गयी।

विवाहोत्सवसद्वेश्मनाट्ययात्रादिमङ्गलान् ।
नापराभग्रहीच्चिन्तां सौराज्यसुखितो जनः ॥ १७१ ॥

१७१ सौराज्य से सुखी लोगो मे विवाहोत्सव, सुन्दर, भवन, नाटक, यात्रा आदि मगल कार्यों के अतिरिक्त दूसरी चिन्ता नही होती थी।

---

पाद-टिप्पणी

१६७ ( १ ) कुल्या = नहर = सरिता।

पाद-टिप्पणी

१६८ ( १ ) कुलोद्यान = कल्पवल्ली कोटा रानी के सम्बन्ध में जोनराज ने इसी विशेषण का प्रयोग किया है। श्रीवर ने उसे यथावत अपने पद में अपना पद मानकर लिख दिया है। वास्तव में यह शब्दावली जोनराज की ही है। यहाँ जहाँगीर की ज्येष्ठ बहन से तात्पर्य है ( जोन० राज० : श्लोक १६९ )।

पाद-टिप्पणी

१७० ( १ ) प्रतिष्ठा प्रतिष्ठा का अर्थ यहाँ, गृह, मठ, शाला, भुवन आदि निर्माण किंवा स्थापना से लगाना चाहिए।

( २ ) सभा : सभा का अभिप्राय दरबार से है।

पञ्चाशद्वत्सरे राजा निर्ममे निर्ममेहितः ।
दिद्दामठे नदीप्रान्ते राजधानीं मनोहराम् ॥ १७२ ॥

१७२. राजा ने पचासवें[1] वर्ष कठोर अव्यव्यवसाय करके, दिद्दामठ[2] में नदी तटपर मनोरम राजधानी निर्मित की।

धन्याहमन्या किं शून्या इत्येवाम्बुनि बिम्बिता ।
स्फुरच्चतुष्किकाहस्तैर्नृत्यतीव दिवानिशम् ॥ १७३ ॥

१७३. 'मैं धन्य हूँ। शून्य अन्य क्या है ?' इसलिये मानो जल में प्रतिबिम्बित होकर, स्फुरित होते स्तम्भ रूप हाथों से नाच रही थी।

मद्वंश्येन कृता केनापीदृशीति दिदृक्षया ।
स्वर्णच्छत्रच्छलाद्यस्याः प्राप्तो व्योम्नो दिवाकरः ॥ १७४ ॥

१७४. 'किसी मेरे वंशज ने इसे बनवाया है'—यह देखने की इच्छा से, जिसके स्वर्ण छत्र के व्याज से, आकाश में मानों दिवाकर आ गये थे।

यत्कारुक्लृप्तकोणस्थदारुगारुडमूर्तिभिः ।
त्रस्ताश्चरन्तो नायान्ति पक्षिणस्तन्नभोऽध्वना ॥ १७५ ॥

१७५. जिसके शिल्पियों द्वारा निर्मित कोनों पर स्थापित, दारुमय गरुड़ मूर्तियों के कारण त्रस्त होकर, विचरण करती पक्षियाँ आकाश के उस मार्ग से नहीं जाती थीं।

गोल्खातोनाभिधा राज्ञी माता दिद्देव देवता ।
विशालां धर्मशालां साप्यकरोन्मद्रसाख्यया ॥ १७६ ॥

१७६. दिद्दा[1] के समान देवता गोल्खातून[2] नाम की रानी जो राजमाता थी, उसने भी मदरसा नाम से विशाल धर्मशाला का निर्माण कराया।

---

पाद-टिप्पणी :

१७२. ( १ ) पचास : सप्तर्षि अथवा लौकिक सम्वत् ४५५० = कलि० ४५७५ = सन् १४७४ ई० = शक १३९६ = सम्वत विक्रमी० १५३१।

( २ ) दिद्दामठ : श्रीनगर का दिदमर मुहल्ला ( द्र० : ३ : १८४, ४ : १२५ )।

पाद-टिप्पणी :

१७४. 'मद्वंश्येन' पाठ—बम्बई।

पाद-टिप्पणी :

१७५. 'कल्पृप्त' पाठ—बम्बई।

पाद-टिप्पणी :

१७६. (१) दिद्दा : काश्मीर की रानी तथा शासिका (सन् ९८०-९८१ से १००३ ई०) द्रष्टव्य : रा० : ६ : ३३२–३६८।

( २ ) गोल्खातून : गुलखातून। परशियन इतिहासकार भी यह स्वीकार करते हैं कि गुलखातून हिन्दू रीति-रिवाज मानती थी। वह काश्मीर की मुसलिम रानियों में बहुत ऊँचा स्थान रखती है। वह हैदरशाह की पत्नी तथा हसन की माता थी।

यत्प्रवेशे नृपस्तुष्टो मात्रा सह समागतः ।
पक्षमेकं व्यधाद् भूरिव्ययशालिमहोत्सवम् ॥ १७७ ॥

१७७ माता के साथ आकर, जहाँ पर प्रवेश करने से, राजा संतुष्ट हुआ और एक पक्ष तक बहुत *व्ययशाली महोत्सव* होता रहा ।

प्रतिष्ठामर्धनिष्पन्नां निर्लोठ्यानुचितां नृपः ।
नगरे पितृपुण्यार्थं खानगाहं विनिर्ममे ॥ १७८ ॥

१७८ राजा ने अर्ध निष्पन्न प्रतिष्ठा को निर्लुण्ठित कर, नगर मे पिता के पुण्य के लिये खानगाह[1] निर्मित किया ।

कुलोद्धरणनागस्य तटभूमौ महीपतिः ।
वह्निदग्धं नवं चक्रे राजवासं मनोरमम् ॥ १७९ ॥

१७९ राजा ने कुलोद्धरण नाग[1] के तटभूमि पर, वह्निदग्ध राजवास को नवीन एवं सुन्दर बनाया ।

विजयेशनदीप्रान्ते राजवेश्म नवीकृतम् ।
भाति भातिशयान्मध्यरत्नं हारावलेरिव ॥ १८० ॥

१८० विजयेश मे नदी तट पर, नवीन कृत, राजगृह अतिशय कान्ति के कारण, हारावली के मध्य रत्न के समान, शोभित हो रही थी ।

छत्रं यत्र स्फुरत्पत्रं वितस्ताम्बुनि बिम्बितम् ।
प्रेक्ष्य तुष्टैः सुरैर्मुक्तमिव सौवर्णपङ्कजम् ॥ १८१ ॥

१८१ जहाँ पर स्फुरित, पत्र से युक्त छत्र, वितस्ता जल मे प्रतिबिम्बित होता था, जिसे देखकर, सन्तुष्ट देवो ने मानो सुवर्ण कमल मुक्त किया था ।

भाति सुय्यपुरे राजधानी राजविनिर्मिता ।
पुरातनीं पराकीर्णां हसतीव सुधासिता ॥ १८२ ॥

१८२ राजा द्वारा निर्मित राजधानी सुय्यपुर मे शोभित हो रही थी, और सुधासित (सफेदी) होकर, मानो वह शत्रुपूरित पुरानी (राजधानी) का हास कर रही थी ।

---

पाद-टिप्पणी

१७७ 'मात्रा सह' पाठ–बम्बई ।

पाद-टिप्पणी

'निर्लोठ्य' पाठ–बम्बई ।

१७८ (१) खानकाह फारसी शब्द खानक्राह है । फकीरों तथा साधुओं के निवास का स्थान अर्थ होता है ।

पाद-टिप्पणी

१७९ (१) कुलोद्धरण नाग द्रष्टव्य १ : ६ : ३ ।

पाद-टिप्पणी

१८०. 'राजवेश्म' पाठ–बम्बई ।

राज्ञा कृतैरनेकाक्षे स्वोद्याने राजवेश्मभिः ।
यद्दर्शनादनेकाक्षो नूनं स्वमभिनिन्दति ॥ १८३ ॥

१८३. अनेकाक्ष[1] उद्यान में राजा ने राजगृहों को वनवाया था, जिसे देखने से इन्द्र अपने को ग्रहणीय मानते थे ।

प्रतिष्ठा विहिता राज्ञा नवा या निजमण्डले ।
अन्यास्ता वर्णिता नात्र ग्रन्थगौरवतो मया ॥ १८४ ॥

१८४. राजा ने अपने मण्डल में नवीन जो प्रतिष्ठायें की, यहाँ मैंने ग्रन्थ विस्तार के कारण वर्णन नहीं किया है ।

दिद्दामठेऽह्मदायुक्तः कृतातुलगृहावलिः ।
मसोदाहजिरोदारशिलाभित्तिविराजितम् ॥ १८५ ॥

१८५. दिद्दामठ[1] में अतुल गृहावलियों के निर्माता, आयुक्त अहमद ने मसोद ( मसजिद ) हुजिरा[2]—

खानगाहेति विख्यातं धर्मवासं विनिर्ममे ।
येन नानादिगायाततत्तत्पथिकशालिना ॥ १८६ ॥

१८६. खानगाह नामक प्रसिद्ध धर्मवास का निर्माण कराया, नाना दिशाओं से आये पथिकों से भरे, जिसके कारण—

दिद्दामठपुरं सर्वं ययौ नेत्राभिरामताम् ।
प्रवेशे नृपमानीय षष्टिलक्षकृतव्ययम् ॥ १८७ ॥

१८७. सम्पूर्ण दिद्दामठपुर[1] नयनाभिराम हो गया । प्रवेश के समय राजा को लाकर, साठ लाख व्यय पूर्वक—

---

पाद-टिप्पणी :

'नेकाक्षेः' पाठ—बम्बई ।

१८३. (१) अनेकाक्ष : काश्मीर का एक परगना अनेछ (अनन्तनाग) है। श्री दत्त ने 'अपने उद्यान' अनुवाद किया है। पृष्ठ : २२५ । सम्भव है, अनेकाक्ष (एक परगना) में यह उद्यान रहा हो। ध्वनि-साम्य के आधार पर मेरा यह मत है। अनन्तनाग को इस्लामाबाद भी कहते हैं अतएव वह अनेछ परगना है। अबुल फजल के परगनों की तालिका में 'इतेह' नाम दिया गया है।

पाद-टिप्पणी :

१८५. (१) दिद्दामठ : श्रीनगर का दिदमर मुहल्ला ।

(२) हुजिरा : मैं समझता हूँ कि यह 'हुजरा' शब्द का संस्कृतकरण है। मसजिद की उस कोठरी को कहते हैं, जहाँ एकान्त में बैठकर मुसलमान ईश्वर की आराधना करते हैं। आजकल धार्मिक साधना के प्रति उत्साह न रहने के कारण उसमें मसजिद की चटाई, बिछौना आदि सामान रखा जाता है।

पाद-टिप्पणी :

१८७. (१) दिद्दामठपुर : श्रीनगर का दिदमर मुहल्ला।

दत्त्वा सतिपुपग्रामं सत्रं यत्रावतारितम् ।
शाहाभिधास्य भार्यापि मठं सुकृतकर्मठम् ॥ १८८ ॥

१८८ सतिपुप[1] प्रदान कर, जहाँ पर सत्र चला दिया, शाहा[2] नाम की उसकी भार्या पुण्यशाली मठ का—

खेरीविषयमार्गान्तर्निर्ममे सप्रतिग्रहम् ।
तत्पुत्रो नौरुजायुक्तः कृत्वा धर्ममठं नवम् ॥ १८९ ॥

१८९ खेरी विषय मार्ग में प्रतिग्रह सहित निर्माण कराया। उसके पुत्र नौरुज आयुक्त ने नवीन धर्म मठ का निर्माण करके—

नगरात् क्षिप्तिकां यावच्छैलसेतुं नवं व्यधात् ।
तद्द्वीपे सति यो हन्ति सर्वेषां पुरवासिनाम् ॥ १९० ॥

१९० नगर से क्षिप्तिका[1] तक नवीन प्रस्तर सेतु का निर्माण कराया, सब ओर जलकीर्ण हो जाने पर वह समस्त पुरवासियों के—

स्तम्भनिर्मितदीर्घाश्मसेतुबन्धकुतूहलम् ।
भ्रातरावपि तौ धन्यावन्यौ रिंगकनूथकौ ॥ १९१ ॥

१९१ स्तम्भ निर्मित दीर्घ सेतुबन्ध का कौतूहल नष्ट करता था। रिंगक तथा नूथक नाम के दोनो भाई भी धन्य हैं—

व्यधातां क्रमराज्यान्तर्मठौ सौधमनोहरौ ।
ताजिभट्टोऽपि भूपालवाल्लभ्यविभवोर्जितः ॥ १९२ ॥

१९२ जिन्होंने क्रमराज्य[1] में सौधों से सुन्दर दो मठ बनवाये। राजा की प्रियपात्रता के वैभव से उर्जित ताजभट्ट ने भी—

---

पाद-टिप्पणी :

१८८ ( १ ) सतिपुप स्थान का निश्चित पता नही है। केवल यही उल्लेख मिलता है। अनुसन्धान अपेक्षित है।

( २ ) शाहा अहमद आयुक्त की स्त्री। किसी स्रोत से अभी तक और प्रकाश नही पड़ा सका है।

पाद टिप्पणी

१९० ( १ ) क्षिप्तिका श्रीनगर स्थित कुटकुल नहर ( द्र० १ : ३ : ८, ४ : १०७ )।

पाद-टिप्पणी

'रिंगक' पाठ—बम्बई।

१९१ ( १ ) रिंगक काश्मीर में नामो के अन्त में 'क' प्राय जोड देते हैं। यह शैली अब बदल रही है। परशियन इतिहासकारो ने नाम केवल रिंग लिखा है। वे प्राय अन्तिम अक्षर 'क' को छोड देते हैं।

करालविषये जैनपुरीमध्ये मठं व्यधात् ।
कुब्बदीनपुरीमध्ये चक्रेऽश्मरचनां नवाम् ॥ १९३ ॥

१९३. कराल[1] देश बीच कुद्दीनपुर[2] में जैनपुरी[3] के मध्य में एक नवीन मठ का निर्माण कराया। प्रस्तर रचना की—

इन्द्रोऽपीक्षेत तां सोऽपि भवेत् कर्मकुतूहली ।
एदराजानको राजवस्त्रशोभाधिकारभाक् ॥ १९४ ॥

१९४. जिसको कि इन्द्र भी यदि देखते, तो उन्हें भी ऐसा कर्म करने का कौतूहल हो जाता। राज वस्त्र शोभा का अधिकार एद राजानक ने—

खानगाहं स निर्वर्त्य बलाढ्यमठकान्तरे ।
नवः पितृविहारान्ते निजजन्मभुवोऽन्तरे ॥ १९५ ॥

१९५. बलाढ्य मठ[1] के अन्दर खानकाह[2] निर्मित कर अपनी जन्मभूमि में पितृ विहार[3] के निकट—

पाद-टिप्पणी :

१९३. (१) कराल : अदविन जिला। प्राचीन नाम अर्ववन है। रामव्यार नदी का दक्षिणी तटवर्ती अंचल है। विशोका नदी के अधोभागीय अंचल तक विस्तृत है (द्र० : ४ : ४५७)।

(२) कुद्दीनपुर = कुतुबुद्दीन पुर : इस समय यहाँ पर श्रीनगर को दो मुहल्ले लंगर हट्टा तथा पीरहाजी मुहम्मद स्थित है। सुल्तान कुतुबुद्दीन अपने नामांकित मुहल्ले में ही दफन किया गया था। वह कब्र पीरहाजी मुहम्मद के जियारत के समीप है। पाँचवें तथा छठे पुल के बीच है। राजकीय रक्षित स्थान है। द्रष्टव्य : पाद टिप्पणी : जोन० : राज० : श्लोक० ५२७ : जैन० : राज० : १ : ३ : ८० : १ : ४ : १४५, १९७; ३ : १९२।

(३) जैनपुरी : जैनपोर वन्न के पूर्व पादमूल में वर्ती गाँव है। गोनादित्य राजा द्वारा स्थापित अग्रहार वचिक का अपभ्रंश है। (द्र० : जोन० : श्लोक ८६४)।

पाद-टिप्पणी :

१९५ (१) बलाढ्य : श्रीनगर का वर्तमान बल्दीमर मुहल्ला।

(२) खानकाह : शुद्ध फारसी शब्द खानकाह है। साधुओं तथा फकीरों के निवास स्थान को खान-काह कहते हैं।

(३) पितृविहार : पिता द्वारा निर्मित खान काह। मकबरों के पास मसजिद तथा खानकाह निर्माण कराने की परिपाटी मध्यकाल में थी। कुलीनता तथा समृद्धि का परिचायक थी। सम्भव है पिता के मकबरा या मजार के पास उसने यह निर्माण कराया था। इससे यह भी प्रतीत होता है कि एद राजानक सम्पन्न कुटुम्ब का व्यक्ति थी। कुटुम्ब राजानक वंश था और कालान्तर में इस्लाम स्वीकार कर लिया था।

येन लोकार्तिहृच्चक्रे विहारः सुगृहोज्ज्वलः ।
मठाग्रहारमस्जेदाविहारगृहपंक्तिभिः ॥ १९६ ॥

१९६ लोगो की पीडा को हरनेवाला, सुन्दर गृहो से उज्वल नवीन विहार वनाया। मठ, अग्रहार, मसजिद, विहार एव गृह पक्तियो से युक्त—

त्रिंशद्विंशाः प्रतिष्ठास्ता मण्डले येन कारिताः ।
सर्वदर्शनसपन्नप्रतिपादितदक्षिणे ॥ १९७ ॥

१९७. तीस-वीस प्रतिष्ठायें मण्डल मे करायी थी। सर्व-दर्शनो (धर्म) से सम्पन्न जनो को दक्षिणा प्रदान कर—

प्रतिहार्यक्षणे येन कोटिरेका व्ययीकृता ।
स फिर्यडामरो जैननगरे सत्रसुन्दरम् ॥ १९८ ॥

१९८ जिमने द्वार प्रवेश[1] के अवसर पर, एक करोड व्यय किया, उस फिर्य डामर ने जैन-नगर[2] में सत्रो[3] से सुन्दर—

मसोदाहजिरोदारं खानगाहं विनिर्ममे ।
हयातखातोना राजवल्लभा विभवोज्ज्वला ॥ १९९ ॥

१९९ मसोद (मसजिद) हुजिरा नामक सुन्दर खानकाह का निर्माण कराया। सुन्दर वैभव युक्त राजबल्लभा हयात खातोना[1] (हयात खातून) ने—

---

पाद-टिप्पणी

'सत्र' पाठ–बम्बई।

१९८. (१) द्वार प्रवेश प्रचलित शब्द गृही प्रवेश है। एदराजानक पूर्व हिन्दू संस्कार के अनुसार गृही प्रवेश उत्सव सम्पन्न किया था।

(२) जैननगर : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० : १ : ५ : ४ आदि।

(३) सत्र वह स्थान जहाँ अनाथों तथा असहायों को भोजन बाँटा जाता है। सत्र का समानार्थक शब्द सदावर्त है। कौटिल्य के अनुसार मरुस्थल, संकर स्थान, दलदल, पर्वत, नदी, घाटी, ऊँची-नीची भूमि, नाव, गाय, शकट, व्यूह तथा रात्रि इनकी गणना सत्रो मे होती है।

पाद-टिप्पणी

१९९ (१) हयात खातून : हयात खातून सैय्यद हसन की कन्या थी। हयात नाम है। खातून विशेषण है। खातून का अर्थ शिष्ट महिला होता है। उसका विवाह सुल्तान के साथ हुआ था। सुल्तान उससे बहुत प्रेम करता था। हयात खातून से सुल्तान को पुत्र रत्न मुहम्मद हुआ था। मुहम्मद-शाह शाहमीर वश का ग्यारहवाँ सुल्तान हुआ था।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—सुल्तान को हयात खातून से एक पुत्र था, जो सैय्यिद वशज थी। (४५० = ६८०) पुत्र का नाम मुहम्मद खा था। वह वृद्धि हेतु ताजीभट्ट के सरक्षण में रख दिया गया था।

मृगवाटाभिधे स्थाने मठं दग्धं नवं व्यधात् ।
मोमारखातोना राजमहिषी स्वधनैर्नवम् ॥ २०० ॥

२००. मृगवाट[1] नामक स्थान पर जले हुये मठ का नव-निर्माण किया। मोमरा खातून[2] नाम की राजमहिषी ने अपने धन से—

राजधान्यन्तिके जैननगरे स्वमठं व्यधात् ।
जयरालाभिधा राजपुरीराजान्वयोदिता ॥ २०१ ॥

२०१. राजधानी के निकट जैननगर[1] में अपना नवीन मठ बनाया। राजपुरी राजा के वंश में उत्पन्न जयराला[2] (जयमाला) ने—

शेकन्धरपुरप्रान्ते खानगाहं नवं व्यधात् ।
श्रीजैननगरे यस्य मसोदाहजिरादयः ॥ २०२ ॥

२०२. सिकन्दरपुर के निकट नवीन खानकाह निर्मित कराया। जैननगर में पुण्य एवं कीर्ति से मनोहर मसोद (मसजिद) हुजिरा (हुजरा) आदि—

भान्ति प्रतिष्ठा यत्रैताः पुण्यकीर्तिमनोहराः ।
कर्मपत्यधिकारस्थो नापितः फेरठक्कुरः ॥ २०३ ॥

२०३. पुण्यकीर्ति से सुन्दर प्रतिष्ठायें शोभित होती हैं। कर्मपति के अधिकार पर स्थित नापित फेर ठक्कुर[1] ने—

---

पाद-टिप्पणी :

२००. (१) मृगवाट : स्थान का अनुसन्धान अपेक्षित है।

(२) खातोना = खातून : तुर्की शब्द है। सम्यस्त्री अथवा शिष्ट महिला अर्थ होता है।

पाद-टिप्पणी :

२०१. (१) जैननगर : द्र० १ : ५ : ४।

(२) जयराला = जयमाला : श्रीवर ने (जैन : २ : १४५) वर्णन किया है कि राजपुरी के राजा जयसिंह ने अपनी भगिनी का विवाह सुल्तान के साथ जिस समय वह राजपुत्र था, कर दिया था। वहाँ नाम नहीं दिया गया है। जयमाला का मुसलिम नाम नहीं दिया गया है। सन्देह हो सकता है कि विवाह होने पर भी उसने इस्लाम स्वीकार किया था या नहीं ? इस प्रकार का विवाह प्रचलित था। उसे फासिद विवाह कहते हैं। यह भी सम्भावना है कि जयमाला ने अपना नाम बदलकर इस्लाम ग्रहण विवाह के समय किया होगा। काश्मीर में अनेक सुल्तानों के रानियों के हिन्दू नाम मिलते हैं। उनके द्वारा खानकाह तथा मसजिद निर्माण कराना, इस बात की सम्भावना प्रकट करता है कि वह मुसलमान धर्म स्वीकार कर चुकी थी।

पाद-टिप्पणी :

२०२. 'नगरे', 'यस्य' पाठ—बम्बई।

पाद-टिप्पणी :

२०३. (१) फेर ठक्कुर : पूर्ण के समान वह भी नापित अर्थात् नाई था। उत्तर भारत में नापित लोग, अब भी ठाकुर कहे जाते हैं। 'नाऊ ठाकुर' ग्रामीण प्रचलित नाम उत्तर प्रदेश तथा बिहार में प्रचलित है।

विजयेशनदीपारे मठं चारुतरं व्यधात् ।
सय्यभाण्डपतिश्चक्रे विहारं विजयेश्वरे ॥ २०४ ॥

२०४. विजयेश्वर नदी के पार बहुत सुन्दर मठ बनवाया। सय्य भाण्डपति[1] ने भी विजयेश्वर मे विहार बनवाया—

यो धर्मसङ्घयुपकृद् बौद्धमार्ग इवाबभौ ।
प्रासादं लक्ष्ममेराद्या भ्रातरोऽस्य वणिग्वराः ॥ २०५ ॥

२०५ जो धर्म संघादि का उपकारी होने के कारण बौद्ध मार्ग सदृश शोभित हो रहा था। इसके भ्राता लक्ष्म[2] मेर आदि श्रेष्ठ, वणिको ने—

पाद टिप्पणी

२०४. ( १ ) भाण्डपति : भाण्डपति का अर्थ सौदागर भी होता है। इसका केवल यही उल्लेख मिलता है। वह बौद्ध था अतएव उसका राजपदाधिकारी उस समय होना कठिन था। माद्य देश ( लद्दाख ) का उल्लेख श्रीवर ने ( १ ४ ५० ) किया है। सम्भव है सय्य वही का निवासी या सौदागर या व्यापारी था। लददाख से ऊन, पश्मीना काश्मीर आता था। तिब्बत से भी ऊन एवं पश्मीनों का आयात होता था। लद्दाखी व्यापारी व्यापार करते थे। सय्य भी उसी प्रकार एक व्यापारी था। श्लोक २०४ में उसके भ्राता लक्ष्य को वणिक लिखा गया है। अतएव सय्य वणिक किंवा व्यापारी या सौदागर था।

श्रीदत्त ने भाण्डपति का अनुवाद न कर मूल सय्य भाण्डपति ही नाम दिया है (दत्त० पृष्ठ ३ भाग २ २२७)। भाण्डागाराधिकृत का अर्थ स्टोर या भण्डार या कोष का रक्षक पदाधिकारी किया गया है। भाण्डारिक का अर्थ कोष अथवा राजकीय भण्डार या स्टोर का पदाधिकारी है।

( २ ) सय्य : श्रीवर का यह वर्णन ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। भारत में उन दिनों बौद्ध धर्म तथा सघ का लोप हो गया था। केवल आसाम और बगाल के कुछ क्षेत्रो में बौद्ध थे। उसका पुनरुत्थान रूस पर जापान की विजय सन् १९०४-१९०५ ई० के पश्चात् बीसवीं शताब्दी के द्वितीय दशक से आरम्भ हुआ है। आज से पाँच शताब्दी पूर्व काश्मीर में बौद्ध थे। उनका सघ था। इससे प्रकट होता है कि नैपाल के समान काश्मीर से बौद्ध धर्म का लोप नही हो गया था। उसकी जड जनता में जमी थी। बौद्धो के त्रिरत्न बुद्ध, धर्म तथा संघ हैं। श्रीवर ने बुद्ध, सघ एवं धर्म त्रिरत्नों का उल्लेख किया है। इससे प्रकट होता है कि श्रीवर को बुद्ध धर्म का ज्ञान था। उस समय काश्मीर में बुद्ध धर्म का लोप नही हुआ था। एक ही कुल में बौद्ध तथा हिन्दू दोनों मतानुयायी रहते थे। परस्पर विवाह सम्बन्ध होता था। आज भी सिखों तथा हिन्दुओं में विवाह सम्बन्ध होता है।

पाद-टिप्पणी

पाठ—बम्बई।

२०५ ( १ ) बौद्ध सघ : श्रीवर का यह वर्णन ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। भारत में केवल आसाम तथा पूर्वीय बगाल के कुछ क्षेत्रो के अतिरिक्त उन दिनों बौद्ध धर्म का लोप हो गया था। आज से पाँच शताब्दी पूर्व बौद्धधर्म काश्मीर में प्रचलित था। यह महत्वपूर्ण सूचना श्रीवर देता है।

(२) लक्ष्म : यह श्लोक दो कारणो से महत्वपूर्ण है। सय्य भाण्डपति लक्ष्म का भाई था। एक भाई बौद्धधर्मानुयायी था तथा दूसरा हिन्दू। एक भाई ने सघ तथा दूसरे ने गणेश का मन्दिर निर्माण कराया

भीमस्वामिगणेशस्य व्यधुः शैलमयं नवम् ।
तद्गणेशालयं दृष्ट्वैवोन्नतं सुधया सितम् ॥ २०६ ॥

२०६. भीमस्वामी[1] ने गणेश का शैलमय नवीन प्रासाद बनवाया। उन्नत एवं सुधा से स्वेत, उस गणेशालय[2] को देखकर ही—

---

था। इससे प्रकट होता है एक ही घर में हिन्दू तथा बौद्धमतानुयायी हो सकते थे। जापान, चीन आदि में ईसाई धर्म के प्रचार के पश्चात् एक ही घर में एक व्यक्ति बौद्ध, दूसरा शिन्तो, तीसरा कन्फ्यूमस तथा चौथा ईसाई रूप में रहता है।

दूसरी महत्त्वपूर्ण बात 'मेर' शब्द है। हिन्दू लोग भी अपने नाम के साथ मुसलिम अल्ल लगाना आरम्भ कर दिये थे। कालान्तर में चलकर उनके वर्ग किंवा उपजाति का सूचक हो गया। बंगाल में 'खां' बंगालियों की उपजाति है। पूर्वी उत्तर प्रदेश तथा पश्चिमी बिहार में अनेक भूमिहारों की पदवी खा है। खान शब्द जातिसूचक न होकर पदसूचक है। काश्मीर में खजांची, सर्राफ, मुन्शी, बख्शी, आदि फारसी शब्द नामों की उपाधि के साथ प्रचलित हो गये थे। हिन्दुओं ने उन्हें स्वीकार कर लिया था। प्रारम्भ वे पेशे को प्रकट करते थे। कालान्तर में उपजाति एवं वर्ग के द्योतक हो गये। इस व्यक्ति का केवल यहीं उल्लेख मिलता है। बख्शी महिवाल भूमिहार ब्राह्मणों एक वर्ग है। कुछ अब उन्हे गोत्र मानने लगे हैं।

पाद-टिप्पणी :

२०६. ( १ ) भीमस्वामी : भीमस्वामी की पूजा अभी तक हरि पर्वत किंवा सारिका शैल के दक्षिण मूल के समीपवर्ती शैलखण्ड पर होती है। मैं यहाँ कई बार आ चुका हूँ। यह स्थान सम्राट अकबर द्वारा निर्मित सारिका दुर्ग बच्छ दरवाजा के समीप है। स्थान जियारत मकदूमशाह के समीप है। यहाँ तक सड़क चली आती है। भीमस्वामी गणेश का स्थान छाया हुआ है। मन्दिर के अन्तर्गत एक भीमकाय शैल-शिला सिन्दूर-मण्डित है। द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : रा० : ३ : ३५२ लेखक।

( २ ) गणेशालय : मुसलिम शरियत के अनुसार मुसलिम राज्य में नवीन मन्दिर निर्माण वर्जित है। पुराने देवस्थानों की मरम्मत हो सकती है। सुल्तान के परदादा सिकन्दर बुतशिकन तथा परपितृव्य अलीशाह के समय नवीन मन्दिर निर्माण कश्मीर में नहीं हो सकता था। परन्तु सुल्तान के दादा जैनुल आबदीन ने सहिष्णु नीति अपनायी थी। सुल्तान के पिता ने भी हिन्दुओं को पीड़ा पहुँचायी थी। हसनशाह के समय जैनुल आबदीन की नीति का अनुकरण किया गया। हिन्दुओं को कुछ स्वतंन्त्रता मिली थी।

भारत में भोपाल आदि मुसलिम रियासतों में सन् १९४७ ई० में आजादी मिलने तथा राज्यों के भारत में विलय के पूर्व मन्दिरों या देवस्थानों का निर्माण वर्जित था। भोपाल शहर के अन्दर पहला मन्दिर स्वर्गीय श्री युगल किशोर बिरला ने राज्य के भारत संघ में विलय के पश्चात् निर्माण कराया था।

गणेश के पर्यायवाची शब्द ( १ ) विनायक, ( २ ) विघ्नराज, ( ३ ) द्वैमातुर, ( ४ ) गणधिप, ( ५ ) एकदन्त, ( ६ ) हेरम्ब, (७) लम्बोदर तथा ( ८ ) गजानन हैं। और भी पर्यायवाची नाम विघ्नेश, परशुपाणि, गजास्य, आखुग, सूर्य कर्ण, मोरेश्वर, गणपति, चिंतामणि, गिरिजात्मज, बल्लालेश्वर, गजमुख। इनके अवतार की कल्पना की गयी है—कृतयुग में सिंहारूढ़ विनायक, त्रेता में मयूरारूढ़ मयूरेश्वर, द्वापर में गजानन तथा कलि में अश्वारूढ़ धूम्रकेतु हैं। गणेश को ओंकार रूप माना गया है। प्रणव का अर्थ ओंकार है। जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति तुरीया चारों अवस्थाओं का द्योतक ओंकार है। ओंकार लेखन एवं गजमूर्ति में भी साम्य है। देवताओं के

द्वेषान्म्लेच्छमुखं चित्रं भवत्येवासितं नतम् ।
अन्येऽप्युच्चावचा वेश्मप्रतिष्ठा विविधा व्यधुः ।
याभिः स्वर्गोपमं भाति मण्डलं वेश्ममण्डितम् ॥ २०७ ॥

२०७ आश्चर्य है, मानो द्वेष के कारण म्लेच्छो का मुख कृष्ण और विनत हो गया। अन्य भो छोटे-बडे विविध गृहो की प्रतिष्ठायें की, जिनसे वेश्म-मण्डित वह मण्डल स्वर्ग सदृश सुशोभित होता था।

देशेऽस्मिन् विभवो भवन् कति नते यैः सञ्चयार्थे वयः
संनीतं न ततो मृतैरुपहृताप्येकाकिनी काकिनी ।
सोऽहं लब्धपदः करोमि यदि नो धर्मं प्रतिष्ठादिभी
रिक्तोयाम्यमुतोऽचिरादिति मतिः पुण्यात्मनो जायते ॥ २०८ ॥

२०८ इस देश मे ऐसे कितने वैभवशाली हुये, जो सचय हेतु आयु व्यतीत किये और मरने पर पास मे लायी जाने पर भो एक काकनी[1] (कौडी) भी नही ले जा सके। अत यदि पद प्राप्त कर 'मैं प्रतिष्ठा आदि द्वारा धर्म नही करूँगा तो शीघ्र ही वहाँ से रिक्त चला जाऊँगा' ऐसी मति पुण्यात्मा जनो की उत्पन्न होती है।

कोपोदीपे नरेन्द्रस्य वेगादपि समुत्थिते ।
द्विपामधोगतिर्जाता न तु तद्वेश्मनां क्वचित् ॥ २०९ ॥

२०९. राजा के क्रोध रूपी उदीप (बाढ) समुत्थित होने पर भी शत्रुओ की अधोगति हुई, उनके वेश्मो[1] की कही नही।

योऽभूद् राजविरुद्धानां दण्डस्तद्गृहलोठनम् ।
तद्राज्ये प्रभविष्णूनां तद्विकल्पोऽगलद्ध्रुवः ॥ २१० ॥

२१० राजा के विरुद्ध प्रभावशाली जनो के घर लूटने का, जो दण्ड था, उसके राज्य मे वह निकल गया।

---

यज्ञ विनाश करनेवाले पाञ्चजन्य द्वारा उत्पन्न पाँच विनायकों में एक है ( वन० २२१ ११ )।

पाद-टिप्पणी

२०७ "चित्रम्" पाठ–बम्बई।

पाद-टिप्पणी

पाठ–बम्बई।

२०८ (१) काकनी काकणी = काकणिका = कौडी। सिक्का के रूप में प्रयुक्त होनेवाली कौडी है। यह पण की चौथाई होती थी। यह एक सिक्का भी होता था, जो बीस कौडी या चौथाई पण के बराबर होता था। वजन में यदि प्रयुक्त किया जायगा तो एक काकिणी का वजन चौथाई मासा के बराबर होगा।

पाद टिप्पणी

२०९ ( १ ) वेश्म = सुल्तान लोग नाखुश होने या राजद्रोह, षड्यन्त्र, अनुशासनहीनता पर अपराधियों की सम्पत्ति जब्त कर लेते थे। मकान जमींदोज कर दिया जाता था। किन्तु हसन सुल्तान के समय अपराधियो को दण्ड दिया जाता था। उनके निवास-स्थानो के नष्ट अथवा गिराने की प्रथा बन्द हो गयी थी।

किमन्यद्वेश्मनिर्माणव्यसने शाख्युपद्रवात् ।
जाता वनभुवः शून्या द्विषां वसतयो यथा ॥ २११ ॥

२११. और क्या कहें? गृह निर्माण के व्यसन में पेड़ों के काटने के कारण वन भूमि, उसी प्रकार शून्य हो गयी, जिस प्रकार शत्रुओं की बस्तियाँ।

श्रीतोरमाणदीनारान् निष्प्रचारानवेत्य च ।
द्विर्दीनारी नागमयी नवा तेन प्रवर्तिता ॥ २१२ ॥

२१२. तोरमान[1] के दीनारों का अभाव जानकर, उसने नाग[2] युक्त नवीन द्विन्दीनारी[3] प्रचलित किया।

पञ्चविंशतिको योऽभूत् पुराणस्ताम्रनिर्मितः ।
किञ्चिदूनीकृतश्चाभूद् द्रव्याप्राचुर्यलक्षणात् ॥ २१३ ॥

२१३. ताम्र निर्मित वह पुराना पचीस मूल्य[1] वाला दीनार द्रव्य (वस्तु-सामान) की कमी के कारण कुछ मूल्य कम हो गया।

---

पाद-टिप्पणी :

२१२. (१) तोरमान : राजतरंगिणी में दो तोरमाणों का उल्लेख मिलता है। प्रथम तोरमाण मिहिर कुल का पिता था। हूण था। द्वितीय तोरमाण काश्मीर के राजा तुंजीन का पुत्र था। उसका ज्येष्ठ भ्राता हिरण्य था। हिरण्य तथा तोरमाण दोनों युवराज थे। दोनों ने शासन किया था। तोरमाण ने ज्येष्ठ भ्राता के रहते हुए भ्रातृ हिरण्य के प्रचुर मुद्रा का निवारण कर, स्वनामांकित दीनार प्रचलित किया था। हिरण्य ने भ्राता को स्वनामांकित मुद्रा प्रचलित करने के कारण, कारागार में डाल दिया। उसकी गर्भवती रानी अंजना से दो पुत्र हुए थे। तोरमाण ने उसे एक कुलाल के घर अपनी स्त्री तथा पुत्रों को आश्रय लेने को कहा। कुलाली ने पुत्रों का वर्धन किया। तोरमान कालान्तर में कारागार से छूटा और कुछ समय पश्चात् दिवंगत हो गया। द्र० : पाद-टिप्पणी : रा० : ३ : १०३–१२४।

(२) नाग : कश्मीर में नागों (झरनों) का बहुत महत्व है। उनके दैनिक जीवन तथा अनेक प्रचलित-अप्रचलित गाथाओं का अंग है। कश्मीरी नागों में जीव मानते थे। मुसलिम-बहुल कश्मीर में आज भी धारणा है कि कश्मीर के नागों में जीव है। मुद्रा पर नाग टंकणित करना उक्त संस्कार का द्योतक है।

(३) द्विन्दीनारी : आज से ६० वर्ष पूर्व टकहवा अर्थात २ पैसे का एक सिक्का चलता था। इसी प्रकार दो दीनार का सिक्का था।

पाद-टिप्पणी :

२१३ : (१) मूल्य : पचीस मूल्य का अर्थ पचीस गण्डा लगाना चाहिए।

मुक्तामणिं नृपतिमौलिषु योग्यमूर्तिं
या वर्धयत्युपनतेन पयोधरेण ।
सा पावनी शुचिरुचिर्जननी सुमुख्या
संगच्छते न चिरकालमनेन साकम् ॥ २१४ ॥

२१४ नृपो के मस्तक पर स्थापन योग्य, रूपवाले, मुक्ता मणि[1] को प्राप्त पयोधर से, जो वर्धित करती है, वह पावनी शुचि सुमुखी जननी चिरकाल तक इसके साथ नही रहती थी ।

सा शुक्तिकास्य जननी जननीतचित्ता ।
साध्वीय तिष्ठति चिरं वरभुक्तिकामा ॥ २१५ ॥

२१५ तरल तरग राजा के कोप बडवाग्नि के विकृत होने पर, जो प्रतिबन्ध के लिये निरन्तर सिन्धु वेला सदृश थी ।

शैशवे स्वपयो दत्त्वा राजा संवर्धितो यया ।
गोल्खातोनास्य जननी साकस्मात् त्रिदिवं गता ॥ २१६ ॥

२१६ जिसने शैशवकाल मे अपना दूध देकर इस राजा को सम्बर्धित किया, वह इसकी माता गोल्खातोन[1] (गुल खातून) अकस्मात दिवगत हो गयी ।

---

पाद-टिप्पणी

२१४ ( १ ) मुक्ता मुक्ता अर्थात् मोती बन जाने पर मुक्ता निकार कर सीप फेंक दिया जाता है । मुक्ता उत्पन्न करनवाले सीप के समान माता जो ऐसे उन्नत व्यक्ति राजा को उत्पन्न की है, वह भी उसके साथ चिरकाल तक नही रहेगी ।

पाद-टिप्पणी।

२१५ उक्त श्लोक श्री कण्ठकौल ने मूल पाठ का न मानकर पाद-टिप्पणी में दिया है । यह श्लोक बम्बई सस्करण के २१५वें के पश्चात् मुद्रित है । बम्बई सस्करण में उसकी सख्या न देकर उसे कोष्ठ में रखा गया है । जिसका तात्पर्य है कि दुर्गाप्रसाद जी ने उसे मूल न मानकर प्रक्षिप्त श्लोक माना है ।

कलकत्ता सस्करण न उस श्लोक का तीन पंक्ति के श्लोक २१३, २१४ तथा २१५ का अन्तिम पंक्ति २१५ माना है । अतएव इसका अनुवाद कलकत्ता सस्करण के अनुसार एक ही श्लोक मानकर दिया गया है ।

बम्बई सस्करण में इस श्लोक के अन्त में 'इति वा पाठ' मुद्रित है । यहाँ उसे स्थान नही दिया गया है । कलकत्ता सस्करण में २१४वें श्लोक के पद के साथ 'इति का पाठ' दिया गया है । इस प्रकार बम्बई में श्लोक २१५ के प्रक्षिप्त श्लोक के पश्चात तथा कलकत्ता में २१४ के साथ ही मुद्रित है । कलकत्ता तथा बम्बई दोनो सस्करणो में यह श्लोक है अतएव यहाँ भी दिया गया है ।

पाद-टिप्पणी

२१६ ( १ ) गोलखातून शुद्ध फारसी शब्द गुलखातून है । हैदरशाह की रानी थी । उसका अर्थ पुष्प एव गुलाब का फूल होता है । खातून शब्द तुर्की है । अर्थ साम्य एव शिष्ट महिला है । गोल शब्द फारसी है । अथ–मूर्ख, मूढ तथा अनाडी होता है । जो राजमहिषी के नाम के साथ पद-मर्यादा

कोपौर्वविकृते राज्ञस्तरङ्गतरलात्मनः ।
सततं प्रतिबन्धाय सिन्धोर्वेलेव याभवत् ॥ २१७ ॥

२१७. कोप रूपी वड़वानल के विकृत होने पर, तरंगों से चंचल आत्मा इस राजा को रोकने के लिये, जो सिन्धु वेला (तट) के समान थी।

तां हिन्दुकसमाचारशतपत्ररविप्रभाम् ।
स्मृत्वा सरुदिताक्रन्द्रं शुशोच सकलो जनः ॥ २१८ ॥

२१८. हिन्दुओं के आचार रूपी कमल के लिये, रवि प्रभा सदृश, उसे स्मरण कर, सब लोग उस (गोलखातून) के लिये रुदन-क्रन्दनपूर्वक शोक किये।

तया वियुक्तस्तत्कालं राजा कृष्णाम्बराम्बरः ।
दिनश्रियेव पद्मोऽभूद् दुःखसंकुचिताननः ॥ २१९ ॥

२१९. उस समय उस (माता) से वियुक्त कृष्णाम्बर[1] धारी राजा का मुख दुःख से उसी प्रकार संकुचित हो गया जिस प्रकार दिन श्री[2] के बिना पद्म।

---

को देखते हुए, नहीं हो सकता। अतएव शब्द गुलखातून ही है। द्र० : ३ : १७५।

पाद-टिप्पणी :

२१७. 'को' पाठ–बम्बई।

पाद-टिप्पणी :

२१९. 'म्बराम्बर' पाठ–बम्बई।

( १ ) कृष्णाम्बर : हिन्दुओं में श्वेत वस्त्र तथा ईसाइयों में काला वस्त्र शोक का चिह्न माना जाता है। ईसाई लोग शोक प्रकट करने के लिए वाम हाथ में कोट या परिधान के ऊपर काली पट्टी बाँध लेते हैं। स्त्रियाँ काला वस्त्र धारण करती हैं। हमें स्मरण है कि ब्रिटेन के राजा पंचम जार्ज की मृत्यु के समय सरकारी सभी कर्मचारी बाहु पर कोट, कमीज या कुरता के ऊपर काली पट्टी लगा लिये थे। यह मातम का चिह्न माना जाता है। ईसाई जाति में मृत्यु का रूप काला माना गया है। पुरानी गाथाओं में जल्लाद काला वस्त्र धारण कर, प्राणदण्ड की सजा देते थे।

यूरोपीय राजवंश एवं कुलीन स्त्रियाँ शोक-सूचक आभूषण, रत्न, नीलम आदि धारण कर, शोकयुक्त सामाजिक कार्यों में भाग लेती थीं।

मुसलिम नियम के अनुसार काला वस्त्र धारण करना शोक का चिह्न नहीं है। यहूदियों में काला वस्त्र शोक का चिह्न माना गया है। यहूदी परम्परा एवं रीति-रिवाज कालान्तर में ईसाई एवं मुसलमान कुछ कम-ज्यादा मानने लगे थे। अतएव पुरातन बाइबिल में वर्णित आचार संहिता ईसाई तथा मुसलमान आंशिक रूप से स्वीकार करते हैं।

( २ ) दिनश्री : दिन की श्री प्रकाश है। प्रकाश लोप होने पर काला अन्धकार होता है। प्रकाश में कमल खिल उठता है। निर्मल पंखुड़ियाँ मुकुलित होती हैं। रात्रि आते ही पंखुड़ियाँ सिमट जाती हैं। उस समय कमल के बाहर की पंखुड़ियाँ जो श्यामल या आसमानी होती हैं, कमल की उज्ज्वलता पंखुड़ियों में बन्द कर कमल का आवरण रात्रि के समान बना दी जाती है।

**ग्राहयित्वांशुकं शुद्धं व्यतीते दिनसप्तके ।**
**सव्ययं मल्लिको राज्ञो व्यधाद् दुःखनिवारणम् ।। २२० ।।**

२२० सात दिन[1] बीतने पर मल्लिक ने शुद्ध वस्त्र ग्रहण कराकर व्ययपूर्वक (दानादि द्वारा) राजा का दु ख निवारण किया ।

**शाहाभदीनपुर्यन्तर्नौसेतुं विपुलं नवम् ।**
**तद्धनेनादिशत् कर्तुं तत्पुण्यद्धर्यै महीपतिः ।। २२१ ।।**

२२१. राजा ने उस (माता) के पुण्य समृद्धि के लिये, उसके धन द्वारा शाहाभदेनपुरी (शादीपुर) के अन्दर नवीन विशाल नवका (नाव) सेतु (पुल) बनाने का आदेश दिया ।

**अभूत् सैदान्वये जाता वल्लभा या महीपतेः ।**
**हयातखातोना राज्ञी प्रेमाश्वासविलासभूः ।। २२२ ।।**

२२२ सैद वश मे उत्पन्न प्रिय रानी हयात खातोना[1] जो कि राजा के प्रेमाश्वास की विलास-भूमि थी ।

**पदार्थान् घोपभूपादिपरिवारसमन्वितान् ।**
**अनन्यरसिको राजा तस्यै सर्वं समार्पयत् ।। २२३ ।।**

२२३ अनन्य रसिक राजा ने गृह, भूषणादि परिवार समन्वित पदार्थो को उसे समर्पित किया ।

**तयैकयैव राजेन्दुः स सुन्दरगुणश्रिया ।**
**अविन्दत् परमानन्दं मालत्येव मधुव्रतः ।। २२४ ।।**

२२४ मालती से, मधुव्रत (भ्रमर) सदृश, सुन्दर गुणश्री युक्त, उस अकेली से ही, वह राजेन्द्र परमानन्द प्राप्त किया ।

---

पाद-टिप्पणी

२२० (१) सात दिन सात दिन तक शोक मनाने का कोई धार्मिक प्रतिबन्ध नही है । यह लोकाचार है । शोककाल तीन दिन का होता है । उसे तीजा कहते है ।

पाद-टिप्पणी

२२२ (१) हयात खातून हयात शब्द अरबी है, अर्थ जीवन या जिन्दगी है । सुल्तान मुहम्मद-शाह शाहमीर वश के ११वें सुल्तान की माता थी । वह पिता हसनशाह की मृत्यु के पश्चात ८ वर्ष की अवस्था में सुल्तान बना था । सैय्यद हसन की कन्या हयात खातून थी ( तवक्काते अकबरी ४५० = ६८० ) । द्र० ३ १९८ ।

पीर हसन लिखता है—हसनशाह के हयात-खातून दुख्तर सैयिद हुसेन बिन सैयिद नासिर वैहकी से दो लड़के पैदा हुए, एक मुहम्मद खान और दूसरा हुसेन खान । मुहम्मद खान ने ताजीभट्ट के बीबी के दूध से परवरिश पायी और हुसेन खा मलिक महमद यैतू की गोद में पला ( १९० ) ।

विभवे सति भवति भवे कस्यचिदेवेप्सितो लाभः।
वर्षति मेघे कृषिकृत् कोऽपि मणिं मौक्तिकं लभते॥ २२५ ॥

२२५. संसार में वैभव होने पर भी किसी को ही, अभीप्सित लाभ होता है। मेघ की वर्षा पर, कोई (एक) कृषक मौक्तिक मणि प्राप्त करता है।

महाराज्यां महीभर्तुरस्यां राजसुतोऽजनि।
यस्य मह्मदखानाख्यामकरोन्मौसुलोचिताम्॥ २२६ ॥

२२६. इसी महारानी से राजा को एक राजपुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका मौसलो (मुसलिमो) चित नाम मह्मद[1] रखा।

ततः पूर्वाधिकप्रीते ताजिभट्टे स भूपतिः।
स्वसुतं रक्षणायादात् सिन्धुरिन्दुमिवेश्वरे॥ २२७ ॥

२२७. तत्पश्चात् रक्षा के लिये अपने पुत्र[1] को (उस) राजा ने पहले से अधिक प्रिय ताजी भट्ट को उसी प्रकार दिया, जैसे सागर ने शिव को शशि[2]।

चतुःपञ्चाशवर्षेऽथ वैशाखे नरनायकः।
पुत्रजन्मोत्सवानन्दमभजद् व्ययसुन्दरम्॥ २२८ ॥

२२८. वैशाख चौवनवें[1] वर्ष राजा सुन्दर व्यय करके पुत्र जन्मोत्सव का लाभ उठाया।

---

पाद-टिप्पणी :

२२६. (१) मह्मद : शाहमीर वंश का ११वां सुल्तान था। हसनशाह का ज्येष्ठ पुत्र था। यह काश्मीर का पाँच वार सुल्तान १४८४ ई० से सन् १५३० ई० के मध्य हुआ था।

पाद-टिप्पणी :

२२७. ( १ ) पुत्र = मुहम्मद खान : फिरिश्ता लिखता है कि मम्मद खां को सुल्तान ने मलिक ताजभट्ट के संरक्षकत्व में रख दिया ( ४७८ )।

तवक्काते अकवरी में नाम मुहम्मद दिया गया है—'सुल्तान ने उसका नाम मुहम्मद रखा और उसे मलिक यारी ( ताजभट्ट ) को शिक्षा हेतु सौंप दिया ( ४५०–६८० )।

सुल्तान के तीन पुत्र मुहम्मद, हुसेन तथा युसुफ थे।

पीरहसन लिखता है—हसन शाह के हयात खातून दुख्तर सैय्यद हुसेन विन सैय्यद नासिर वैहकी से दो लड़के पैदा हुए। एक मुहम्मद खां और दूसरा हुसेन खां। मुहम्मद खां ने मलिक ताजी वट की बीवी के दूध से परवरिश पाई और हसन खां मलिक अहमद यतू की गोद में पला ( १९० )।

( २ ) शशि : अमृतमन्थन द्वारा चौदह रत्नों में एक चन्द्रमा की उत्पत्ति सागर से हुई थी। शिव के भाल पर चन्द्रमा, जिसके कारण शिव का नाम चन्द्रमौलि पड़ा है। यदि सागर चन्द्रमा को न उत्पन्न करता तो किस प्रकार शिव को उसकी प्राप्ति होती ?

पाद-टिप्पणी :

२२८. (१) चौवनवां वर्ष : सप्तर्षि ४५५४ = सन् १४७८ ई० = विक्रमी संवत् १५३५ = शक संवत् १४००।

विदग्धचर्चरीपालनर्तकीनटगायनान् ।
उद्दिश्य त्यागरसिकैर्न कैर्वैश्रवणायितम् ॥ २२९ ॥

२२९. विदग्ध चर्चरीपालो[1], नर्तकी एव नट गायको के प्रति, त्यागरसिक किन लोगो ने कुबेर[2] की तरह आचरण[3] नही किया ।

पट्टकौशेयवस्त्राप्ती राज्ये श्रीजैनभूपतेः ।
सामन्तसचिवादीनामासीत् सत्कारसिद्धये ॥ २३० ॥

२३० जैन राजा के राज्य मे सत्कार सिद्धि के लिये सामन्त सचिव आदि को पट्ट[1] कौशेय वस्त्र की प्राप्ति होती थी ।

तद्राज्ये विभवोदारव्यये सा प्राकृतालयात् ।
उत्सवे चर्चरीपालनटाद्यैः प्रापि तैरपि ॥ २३१ ॥

२३१ उसके राज्य मे उदार वैभव व्यय वाले, उत्सव मे उन चर्चरीपाल, नट आदि लोगो ने भी वह ( कौशेय वस्त्रादि ) सामान्य लोगो के घर से प्राप्त किया ।

स्फीतराजश्रिया प्रीतो नृपतिर्नवयौवनः ।
आनीतगीतविन्द्वर्थः संगीतरसिकोऽभवत् ॥ २३२ ॥

२३२ प्रचुर राजश्री से प्रसन्न नवयुवक नृपति गीतवेत्ता वर्ग को लाकर, सगीतरसिक हो गया ।

---

पाद-टिप्पणी

२२९ ( १ ) चर्चरीपाल तालियाँ बजाकर समूह में गाने वाले के लिये सम्भवत इस शब्द का प्रयोग किया गया है। चर्चरीपाल का एक भेद भी है। चर्चरी गान वसत में गाया जाता है। इसे फाग या चाँचर कहते है। कबीरदास के 'चाँचर' गीत चौराहो पर गाने वाले लोक गीत है। चाँचर तथा 'चर्चरी' रूप का उल्लेख पालि महा व्याकरण में मिलता है। आजकल कव्वाली ताली बजा-बजाकर खुले आम बाजारो तथा उत्सवो पर गायी जाती है। तेरहवी शताब्दी से पूव लाक प्रचलित गीत है। जिनदत्त सूरि ने इस गीत का स्वीकार किया था। बारहवी शताब्दी में आगरा तथा उसके निकटवर्ती क्षेत्रो में चर्चरी गीत खूब गाया जाता था। कालिदास तथा श्रीहर्ष के नाटको में 'चर्चरी' का उल्लेख है। कुछ टीकाकारों ने इसे 'चाँचर' खेल लिखा है।

( २ ) कुबेर : विश्रवस ऋषि के पुत्र तथा रावण के विमातृ भ्राता थे। इनकी माता का नाम इलविला था। विश्वकर्मा से सुवर्ण लका का निर्माण कराया था। रावण ने लका मे कुबेर को निकाल दिया। इनकी तपस्या से प्रसन्न होकर ब्रह्मा ने इन्हें उत्तर दिशा का स्वामी बना दिया था। विश्व के धनेश्वर माने जाते है। यह एकाक्ष है। तीन पैर है। आठ दात है। देवता होने पर भी इनकी पूजा नही होती।

( ३ ) आचरण सब लोगो ने उत्सव करने वालो को प्रचुर धन दिया।

पाद-टिप्पणी

२३० ( १ ) पट्ट शिरोवेष्ठन, पगडी, रगीन साफा, रेशमी पगडी, डुपट्टा, से तात्पर्य है।

पाद टिप्पणी

२३२. ( १ ) सगीत : जैंनुल आबदीन के समान उसका दरबार सगीतज्ञो से भरा रहता था।

संगीतज्ञज्यहाङ्गेरमार्गेशाद्याः सुखोचिताः ।
तारका इव चन्द्राग्रे व्यरुचन्त सभासदः ॥ २३३ ॥

२३३. सुखोचित संगीतज्ञ जहाँगीर मार्गेश आदि सभासद्, चन्द्रमा के समक्ष तारकाओं के समान शोभित होते थे।

कृष्णचन्द्रावलीराजरूपाभिनयनैपुणात् ।
राज्ञे वरनटा नाटयात् तद्दर्शनकुतूहलम् ॥ २३४ ॥

२३४. श्रेष्ठ नटों ने कृष्ण, चन्द्रावली[1], राजरूप अभिनय करके राजा में उसे देखने का कौतूहल उत्पन्न कर दिया।

प्रलम्बकृतकश्मश्रुदन्तभ्रूविक्रियाञ्चलैः ।
तारानुसारितद्भावनाटयहास्यकथाक्रमैः ॥ २३५ ॥

२३५. लम्बे कृत्रिम दाढ़ी-मूँछ, दाँत, भ्रू की विकृतियों से एवं ताल के अनुसार उस भाव के नाट्य, हास्य, कथाक्रमों से—

अनेकमुख्यवाद्यैश्च प्राणिभाषानुकारकैः ।
भण्डिमापण्डितो भण्डो मूर्तो हास्यरसोऽभवत् ॥ २३६ ॥

२३६. अनेक प्रमुख वाद्यों तथा प्राणियों की भाषा का अनुकरण करने वालों से भण्डिमा ( भड़ैती ) में निपुण, भाँड़ मूर्तिमान हास्य रस हो गया था।

---

दूर दूर से संगीतज्ञ उसके यहाँ आते थे। सुल्तान सबका आदर सत्कार करता था। उसके दरबार में १२०० संगीतविद् थे (बहारिस्तान शाही : पाण्डु० : ५८ बी० तथा हैदर मल्लिक पाण्डु० : १२३ बी०)

पीर हसन लिखता है—'बारह सौ हिन्दुस्तान के गवैये मुलाजिम रखे हुए थे। रात-दिन रंग-रेलियों और चंग और रबाब के सुनने में मसरूफ रहता था' ( १९१ )।

संगीत—(१) स्वर (२) राग (३) ताल (४) नृत्य ( ५ ) भाव ( ६ ) कोक एवं ( ७ ) हस्त का समाहार मानते हैं। प्रायः विद्वान् ( १ ) गान ( २ ) वाद्य ( ३ ) नृत्य को संगीत की संज्ञा देते हैं। गीत एवं वाद्य को श्राव्य संगीत तथा नृत्य को दृश्य संगीत कहते हैं। संगीत के भेद मार्ग तथा देशी हैं। शिव के सम्मुख भरत मुनि ने संगीत विद्या का परिचय दिया था। उसके पथ प्रदर्शक ब्रह्मा थे। इस संगीत की संज्ञा मार्ग है। देशानुसार लोग जो गाते, बजाते एवं नाचते हैं, उसे देशी कहते हैं।

पाद-टिप्पणी :

२३४. ( १ ) चन्द्रावली : कृष्ण पर अनुरक्त चन्द्रभानु की कन्या। कृष्ण-चन्द्रावली आख्यान पर आधारित नाटक से तात्पर्य है। संस्कृत में एक नाटक है।

श्रीदत्त ने चन्द्रावली का अनुवाद चन्द्रमा की पंक्ति किया है। 'कृष्ण' पाठ मानकर दत्त ने अनुवाद किया है।

मल्लाहस्सननामापि　पितुरभ्यधिको　गुणी ।
प्रथमं　दशतन्त्रीकां　मोदवीणामकारयत् ॥ २३७ ॥

२३७ पिता से अधिक गुणी मल्ला ( मुल्ला ) हस्सन ( हसन ) भी पहले दश तन्त्रियो की मोद वीणा[1] बनाया ।

भाषाभिगीतसामग्रीं　पारसीगीतकौशलम् ।
तुम्बवीणाधरः　सोऽहं　नृपाज्ञप्तोऽप्यदर्शयम् ॥ २३८ ॥

२३८ राजा के आदेश पर, तुम्ब वीणाधारी मैंने भी पारसी गीत को कौशल पूर्वक भाषा गीत सामग्री प्रदर्शित किया ।

गाथागीतप्रियो राजा स्वयं संस्कृतपद्यवित् ।
नादशंसामयं श्लोकं रागालप्त्येममब्रवीत् ॥ २३९ ॥

२३९ गाथा गीत प्रिय संस्कृत[1] पद्यवेत्ता राजा ने स्वयं नाद प्रशंसा मय यह श्लोक राग पूर्वक कहा—

---

पाद-टिप्पणी

'तन्त्रिका' पाठ–बम्बई ।

२३७ ( १ ) मोदवीणा बारह तन्त्रियो की वीणा की संज्ञा मोदवीणा से मध्ययुग में दी जाती थी। वीणा में लोहे के तीन तथा पीतल के चार तार लगे रहते हैं । लोह तार को पक्का तथा पीतल तार को कच्चा कहते हैं । सातो तारों को कसने और ढीला करने के लिए सात खूँटियाँ लगी रहती है । भिन्न-भिन्न देवताओ के हाथो में भिन्न-भिन्न वीणाएँ रहती हैं । यथा–महादेव के हाथ म लम्बी, सरस्वती के हाथ में कच्छपी, नारद के हाथ मे महती, विश्वावसु के हाथों में बृहती, तुम्बरू के हाथ की वीणा को कलावती कहते हैं । वत्स व उदयन क हाथो में घोषवती वीणा दिखायी गयी है । वितन्त्री किन्नरी, विपंची, रंजनी, शारदी, रुद्र, नारदेश्वर आदि । सबकी आकृति बनावट एवं स्वर में थोडा अन्तर है ।

पाद-टिप्पणी :

२३८. ( १ ) तुम्ब वीणा -जिस वीणा में तुम्बा लगा रहता है उसे तुम्ब वीणा कहते हैं । कद्दू पर बनी वीणा तुम्ब वीणा कही जाती है । तुम्बी जितनी बड़ी होगी, ध्वनि उतनी ही मधुर तथा गम्भीर होगी ।

सभी वीणाओ में तुम्ब लगा नही होता था । आजकल तुम्ब वीणा ही प्रचलित है । तीते-कद्दू को सुखाकर, उसका ऊपरी भाग काट कर, वीणा बनायी जाती है । तुम्बी का कमण्डल भी बनता है ।

पाद-टिप्पणी

२३९ (१) संस्कृत सुल्तान अपने प्रपितामह जैनुल आबदीन के समान भाषाविद था । शाहमीर वंश में और काश्मीर में जैनुल आबदीन तथा सुल्तान हसन शाह ही दो सुल्तान ऐसे हुए हैं, जो स्वयं विद्वान्, लेखक तथा साहित्यिक हुए हैं । वह परशियन काश्मीरी तथा संस्कृत जानता था । वह संस्कृत में पद्य-रचना करता था । गीत बनाता तथा स्वयं गाता था ।

शुष्का येन समुल्लसन्ति तरवो वश्या भवेयुर्मृगा
पत्रे चावतरन्ति दैवतगणा जल्पन्त्यदृष्टा अपि ।
यो दुःखे च सुखे च मूर्खविदुषोर्वालस्य वृद्धस्य वा
प्रायः प्रीतिकरो ममास्तु सततं श्रीनादनामा रसः ॥ २४० ॥

२४०. 'जिससे तरु समुल्लसित होते है, मृग वश में हो जाते है, देवता गण, पत्र में उतरते हे, और अदृष्ट भी कह देते हैं, जो कि मूर्ख, विद्वान्, वालक या वृद्ध के दुःख-सुख में प्रीतिकर होता है, वह श्रीनाद[1] नामक रस[2] मेरे लिये प्रिय हो ।'

श्रव्यकण्ठे नृपो गीत्वा रागैकालप्तितो बहून् ।
रागान् समोच्चगीतांश्च साश्चर्यान्नस्तदाकरोत् ॥ २४१ ॥

२४१. उस समय राजा ने मधुर कण्ठ से राग के एक आलाप से बहुत से राग वाले सम[1] एवं ऊँचे गीत गाकर, हम लोगों को चकित कर दिया ।

पाद-टिप्पणी :

२४०. ( १ ) श्रीनाद : नाद विद्या का नाम संगीत शास्त्र है । 'नद्' धातु से नाद की व्युत्पत्ति हुई है । 'नदति इति नादः' नदन या आनन्द दायक ध्वनि नाद है । मधुर कर्णप्रिय ध्वनि का अभिप्राय नाद है । नाद संगीत का प्राण है । उससे रसात्मक अनुभूति होती है । संगीत से उत्पन्न शुद्ध आनन्द को ईश्वर का दूसरा रूप किंवा नाद ब्रह्म मानते हैं—ॐ नादब्रह्मणे । प्रणव रूप से साधनाकर मानव आनन्द तत्त्व की प्राप्ति करता है—'मद्भक्तत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ।' संगीत आचार्यों के अनुसार आकाशस्थ अग्नि एवं मरुत् के संयोग से नाद की उत्पत्ति होती है । संगीतदर्पण का मत है । आत्मा द्वारा प्रेरित होकर, चित्त देहज अग्नि पर आघात करता है । प्राण वायु का स्थित स्थान ब्रह्म ग्रन्थि है । अग्नि ब्रह्मग्रंथिगत प्राण को प्रेरित करता है । प्राण की गति ऊर्ध्व हो जाती है । नाभि स्थान में वह अति सूक्ष्म, हृदय में सूक्ष्म, कण्ठ प्रवेश स्थान में पुष्ट, शीर्ष स्थान में अपुष्ट एवं मुख में कृत्रिम नाद उत्पन्न करता है । संगीत दामोदर के मत से नाद तीन प्रकार का होता है । मुख से उत्पन्न प्राणिभव, वीणादि वाद्यों से उत्पन्न अप्राणिभव एवं वंशी से उत्पन्न नाद उभय संभव होता है । नाद ही गीत, स्वर रागादि का मूल कारण है । जगत् नादात्मक है । परज्योति या ब्रह्म स्वरूप है । नाद अनाहत एवं आहत होता है । अनाहत नाद केवल योगी श्रवण कर सकते हैं । नाद आकाश का गुण है । सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड नादमय है । दहराकाश में अनाहत नाद की अनुभूति होती है । आहत नाद अव्यक्त नाद का व्यक्त रूप है । परस्पर आघात से इस नाद की उत्पत्ति होती है ।

( २ ) रस : यहाँ नाद रस का अर्थ संगीत रस है । अलंकार शास्त्र के अनुसार काव्य में नवरसों की मान्यता है—(१) शृंगार, (२) हास्य, (३) करुण, (४) रौद्र, (५) वीर, (६) भयानक, (७) विभत्स, (८) अद्भुत् एवं (९) शान्त । कुछ विद्वान् शान्त को रस नहीं मानते । क्योंकि शान्त रस मन की भावशून्य अवस्था है । निर्वेद मन का कोई विकार नहीं है । कुछ विद्वान् नवों रसों में वात्सल्य रस को भी जोड़कर रस, की संख्या दस मानते हैं ।

पाद-टिप्पणी :

'समोच्च' पाठ—वम्बई ।

२४१. ( १ ) सम : संगीत में वह स्थान जहाँ

अथ गायनवृन्दं तत् प्रवेशय ममाग्रतः ।
गीताङ्गाधिपतेराज्ञामदान्मे नृपनायकः ॥ २४२ ॥

२४२ राजा ने—'गायक वृन्द को मेरे सम्मुख प्रविष्ट करो—' इस प्रकार मुझ गीताङ्गाधिपति को आदेश दिया ।

आनीय स्थापिताः सर्वे नामग्राहं निवेद्य च ।
ते ते वहावदेनाद्याः सवाद्या वृन्दनायकाः ॥ २४३ ॥

२४३ सववाद्य सहित वहावदीन आदि वृन्दनायको को स्थापित कर, नाम ग्रहण पूर्वक सबको निवेदित किया ।

निर्दोषकण्ठसञ्जातमञ्जुलध्वनिरञ्जकाः ।
अधीतगीतवद्वात्तमाचद्रवकमट्टकाः ॥ २४४ ॥

२४४ निर्दोष कण्ठ से, निर्गत ध्वनि से, रंजक एवं अभीत[1] गीत का गायन कर, लोगो को द्रवित करने वाले[1]—

शिक्षाकारादयः पञ्च स्वप्रपञ्चातिचञ्चलः ।
अमुञ्चन् पञ्चव्याजात् पञ्चेषुरससञ्चम् ॥ २४५ ॥

२४५ अपने प्रपंच मे अति चंचल पंच संख्यक शिक्षाकार आदि पंचम स्वर[1] के व्याज से पंच बाण संचय का प्रसार किये ।

---

गीत बजाने वालो का सिर या हाथ आप से आप हिल जाता है । यह स्थान ताल के अनुसार निश्चित होता है । ताल के अनुसार स्थान का निश्चय होता है । तिताले में दूसर ताल पर, चौताले में पहले ताल पर सम होता है । वाद्यो का आरम्भ एवं गीत तथा वाद्यो का अन्त सम पर होता है । गान एवं वाद्य के मध्य में भी सम-सम बराबर आता रहता है ।

पाद-टिप्पणी

२४२ तत पाठ–बम्बई ।

पाद-टिप्पणी

पाठ–बम्बई ।

२४४ ( १ ) अभीत बम्बई संस्करण में उक्त श्लोक संख्या २४५ है । 'शिक्षाकारादय '—श्लोक संख्या २४४ है । इस प्रकार एक श्लोक का इस संस्करण में व्यतिक्रम अर्थात उलटफेर हो गया है ।

पाद-टिप्पणी

२४५ ( १ ) पंचमस्वर स र ग म प द नी में यह पाँचवाँ स्वर 'प' है । स्वर कोकिल के अनुरूप माना गया है । स्वर का वर्ण–ब्राह्मण, रंग–श्याम, देवता–शिव, रूप–इन्द्रतुल्य एवं स्थान क्रौंच द्वीप है । इसकी मूर्च्छनाएँ—(१) यमली, (२) निर्मली तथा (३) कोमली हैं । भरतमुनि के अनुसार उच्चारण में वायु—(१) नाभि, (२) उरु, (३) हृदय, (४) कण, (५) मूर्धा स्थानों में स्पर्श करती है । संगीत दामोदर—(१) प्राण, (२) अपान, (३) समान, (४) उदान, (५) व्यान वायु एक साथ लगती है । अतएव स्वर का नाम पंचम है । भैरव राग का पुत्र है । एक मत है कि हिंडोल राग का पुत्र है । दूसरा मत है कि वसन्त एवं ललित राग के योग से बना है । तीसरा मत है कि हिंडोल, गान्धार एवं मनोहर के योग से बना है । गान का समय शरद-

संगीतज्ञं नृपं तं ते श्रुत्वैवं तत्समुत्सुकाः ।
गीते शब्दगुणाः पञ्चदशसङ्ख्या स्थितिं व्यधुः ॥ २४६ ॥

२४६. इस प्रकार, वे शब्द गुण संगीतज्ञ राजा को सुनकर, उसके प्रति समुत्सुक होकर, गीत[1] पन्द्रह की संख्या में स्थित हो गये ।

केदारगौडगान्धारदेशभङ्गालमालवाः ।
कर्णाटा गायना राज्ञो रागाश्चाप्यस्फुरन् पुरः ॥ २४७ ॥

२४७. राजा के समक्ष कर्णाट के गायकों ने केदार[1] गौड़,[2] गान्धार[3], देश[4], बंगाल[5] तथा मालव[6] राग स्फुरित किया ।

---

ऋतु प्रातःकाल है । इसकी छः रागनियाँ—(१) विभाषा, (२) भूपाली, (३) कर्णाटी, (४) वड-हंसिका (५) मालश्री एवं (६) पटमंजरी हैं । कल्लिनाथ के अनुसार रागनियाँ—(१) त्रिवेणी, (२) स्तम्भतिथि, (३) आभीरी, (४) ककुभ, (५) वरारी तथा (६) सौवीरी है । एक मत है कि यह ओडव जाति का राग है । (१) ऋषभ, (२) कोमल, (३) पंचम एवं (४) गान्धार स्वरों को इसमें वर्जित मानते हैं ।

पाद-टिप्पणी :

२४६. ( १ ) गीत : धातु एवं मात्रा युक्त वाक्य की संज्ञा गीत से की गयी है । वैदिक एवं लौकिक दो प्रकार के गीत होते हैं । वैदिक गीत साम है । सामवेद गीत पूर्ण है । मार्ग एवं देशी दो प्रकार के लौकिक गीत होते हैं । राग एवं रागनियाँ मार्ग के अन्तर्गत तथा दादरा, ठप्पा, गजल, कव्वाली, कजरी आदि देशी हैं । यन्त्र एवं गातृ दो गीत के भेद हैं । वाद्यों से गीतों के जो स्वर उदय होते हैं, उन्हें गातृ तथा मनुष्यों के कण्ठों से उद्भूत गीत कहते हैं ।

पाद-टिप्पणी :

२४७. ( १ ) केदार : मेघराज का चौथा पुत्र है । रात्रि के दूसरे प्रहर में गाया जाता है । प्राचीन केदार राग के आरोही स्वर है—

स म ग म प नि स ।

अवरोही स्वर है—

सं नि प म ग रे स ।

( २ ) गौड़ : यह राग अब प्रचलित नहीं है । हृदय कौतुक में उल्लेख मिलता है ।

( ३ ) गान्धार : श्रीराग का पुत्र है । गाने का समय तीसरा प्रहर तथा संध्या काल है । कान्हड़ा गौड़, केदार गौड़, नारायण गौड़, रीति गौड़ आदि अनेक भेद हैं । इस राग का गृह, अंश एवं न्यास स्वर गान्धार का था । इसके ऋषभ, निषाद, धैवत, अधिकतर रूप में प्रयुक्त होते थे । सात स्वरों में तीसरा स्वर 'ग' है । श्रुतियाँ रौद्री और क्रोधा हैं । जाति—वैश्य, रंग—सुवर्ण, देवता—सरस्वती, ऋषि—चन्द्रमा, छंद—त्रिष्टुभ, दिन—मंगल, ऋतु—स्थान, दोनों हाथ, आकृति—अग्नि, सन्तान—हिंडोला राग, अधिकार—शाल्मली द्वीप, रस—करुण, उत्पत्ति । वायु नाभि से उठकर, कण्ठ एवं शीर्ष में स्पर्श कर, अनेक गन्धों को ले जाने वाली वायु से होती है । स्वर बकरे की बोली से लिया गया है । शुद्ध एवं कोमल दो भेद होते है । एक दण्ड से पाँच दण्ड तक गाया जाता है । एक मत से भैरव तथा दूसरे मत से दीपक राग का पुत्र है । इसकी मूर्च्छनाएँ—(१) नन्दा, (२) विविशाला, (३) सुमुखी, (४) विचित्रा, (५) रोहिणी, (६) सुप एवं (७) अलापिनी है । अधिष्ठता—चित्र हैं ।

( ४ ) देश : प्रातःकाल एक दण्ड से पाँच दण्ड

मदनोद्दीपिता रात्रौ नव्यभाव्यदशोज्ज्वलाः ।
अशोभन्तानुगा राज्ञो लासिका दीपिका अपि ॥ २४८ ॥

२४८ रात्रि मे मदनोद्दीपित एव नवीन भावी, दशा से समुज्वल राजा की अनुगामिनी नर्तकिया एव दीपिकाए[1] शोभित हो रही थी।

रत्नमालादीपमालारूपमालाङ्किताभिधा ।
अकुर्वंल्लासिका लास्यं हावभावमनोहरम् ॥ २४९ ॥

२४९ रत्नमाला दीपमाला, रूपमाला, नाम्नी लासिकाएँ[1] हाव भावसे मनोहर नृत्य की।

---

दिन चढने तक गाया जाता है। यह राग परज, सोरठ एव सरस्वती के योग से बनता है। दीपक का पुत्र है। इसका आरोही स्वर—स रे म प नि स तथा अवराही स नि ध प म ग र स है।

( ५ ) बगाठ . द्रष्टव्य पादटिप्पणी : जैन० १ १ . २५। यह राग लुप्त हो गया है। पुण्डरीक विट्ठल अकबर के दरबार मे थे। उन्होने सद्राग चन्द्रोदय लिखा है।

( ६ ) मालव द्रष्टव्य पादटिप्पणी जैन० मालव गौड मेल का राग है। यह आधुनिक भैरव सा है। सत्रहवी शताब्दी के हृदय नारायण ने 'हृदय कौतुक' ग्रन्थ में इसका वर्णन किया है। वर्णन अस्पष्ट है। मालवराग के रूप का वर्णन मिलता है। माला, हरित वस्त्र एव कुण्डलधारी सगीत शाला म स्त्रियो के साथ बैठा चित्रित किया गया है।

इसकी रागनियाँ—(१) धनाश्री, (२) मालश्री, (३) रामकीरी, (४) सिधुडा, (५) आसावरी तथा (६) भैरवी है। कुछ विद्वान् इसे षाडव तथा कुछ सम्पूर्ण जाति का राग मानते है। षाडव मानने वाले इसमे मध्यम स्वर वर्जित मानते है। रात्रि में १६ से २० दण्ड तक गाया जाता है। मालव-गौड शकर राग है। इसमें पचम स्वर नही लगता। प्राचीन मालव का स्वर ग्राम म, ध, नि, स, रि, ग, म है। इस राग का उपयोग वीर रस में किया जाता है।

पाद-टिप्पणी

२४८ (१) दीपिका उक्त श्लोक में श्लिष्ट शब्दों का प्रयोग किया गया है। मदन का अर्थ काम तथा मदन काष्ठ दोनों होता है। दशोज्ज्वल में दशा का अर्थ बत्ती तथा दशा होगा। मदन काष्ठ से उद्भूत ज्योति उज्ज्वल होती है। नर्तकियों की भी दशा समुज्ज्वल थी। दीपिका का अर्थ दीयट या दीप स्तम्भ एव रागिनी होता है। दीपिका एक रागिनी का नाम है। हिडोल राग की पत्नी मानी जाती है। प्रदोष काल में गायी जाती है।

पाद-टिप्पणी

'रूप' पाठ–बम्बई।

२४९ (१) लासिका · नर्तकी, वेश्या, स्वेच्छाचारिणी अर्थ होता है। उपरूपक है। परन्तु यहाँ पर नर्तकी विशेषत लास्य नृत्य पारगत के लिये शब्द का प्रयोग किया गया है।

लास्य नृत्य में प्रेम के विकास की अनेक भाव भगिमाओ तथा अवयवों के सचालन से वह प्रवृत्ति परिलक्षित होती है, जिसमें नृत्य द्वारा नर्तकी के कोमल एव ललित भावो का उद्दीपन किंवा स्पन्दन प्रकट होता है। स्त्रियो के नृत्य को लास्य कहते है। शिव एव पार्वती ने प्रथम सयुक्त नृत्य किया था। शिव नृत्य की सज्ञा ताण्डव एव पार्वती का लास्य हुई। लास्य छुरित तथा यौवत होता है साहित्य दर्पणानुसार इसके दस अग—(१) गेयपद, (२) स्थित पाठ, (३) आसीन, (४) पुष्प गणिका, (५) प्रच्छेदक, (६) त्रिगूढ, (७) सैधवाख्य, (८) द्विगूढक, (९) उत्तमोत्तम एव (१०) युक्त प्रयुक्त होते है।

झम्पाकम्पाकुलाग्रप्रसरसरसताधारसर्वाङ्गहार-
प्रारब्धाशास्यलास्योत्तरतरललसद्भावभावानुभावा ।
उत्कण्ठाकारिकण्ठोद्गतसततततस्फीतगीतप्रपञ्चा
पात्रीयं रम्यगात्री लसति सतिलका कीदृशी रत्नमाला ।। २५० ।।

२५०. झम्पा, कम्पा से आकुल, अग्रसर होती, सरसता की धारा से सर्वांगों से मनोहारिणी, प्रारम्भ किये गये, अभिलषित नृत्य के अनन्तर तरल शोभायमान होते, हाव भाव एवं अनुभावसे पूर्ण, उत्कण्ठा उत्पन्न करने वाले, कण्ठसे निकले निरन्तर, प्रसृत प्रचुर गीत प्रपंचों वाली, तिलक एवं रत्नों की माला से युक्त सुरम्य शरीर वाली, यह पात्री कैसी भली लग रही है।

गुणिमदगुणदात्री प्रेक्षकानन्ददात्री
नवकरणविधात्री रूपलावण्यधात्री ।
कलितललितगात्री शुद्धसङ्गीतगात्री
गुणगणमणिपात्री रूपमालैव पात्री ।। २५१ ।।

२५१. गुणियों को मद तथा प्रेक्षकों को आनन्ददात्री, नवीन लयों[1] की विधात्री, रूप-लावण्य की धात्री, सुललित गात्री ( शरीर ), शुद्ध संगीत, गुणगण मणि पात्री, केवल रूपमाला पात्री थी।

---

पद-टिप्पणी :

२५०. (१) झम्पा : उछल-कूद। कंचन कुच के झुकि झंपत चन्द झलक्कत झाईं। ( अ० पृ० ३४९ )।

(२) कम्पा : हिलना, डुलना, कम्पन या थर-थराहट—कम्पन किंचित्प्रतिगृह्य मूर्ध्नः (रघु० : १३ : ४४) सिर हिला या मोड़कर।

( ३ ) हाव : परिभाषा की गयी है—ग्रीवा रेचक संयुक्तो भ्रूनेत्रादिविकासकृत्। भावादीषत् प्रकाशो यः स हाव इति कथ्यते। ( साह० द० १२७ ) पुरुषों की रत्यात्मक भावनाओं को उत्तेजित करता है। रंगरेली, मधुर भाषण—हावहारि हसितं वचनानां कौशलं दृशि विकारविशेषाः। ( शि० : १० : १३ )।

(४) भाव : नाना प्रकार के संवेगों एवं भावों को अपने इन्द्रियों किंवा अवयवों द्वारा प्रकट करना है द्र० १ : ४ : ११।

(५) अनुभाव : दृष्टि संकेत आदि उपयुक्त लक्षणों द्वारा भाव प्रकट करना। 'भावं मनोगतं साक्षात् स्वगतं व्यंजयति येतेऽनुभावा इति ख्याता यथा भ्रूभंग कोपस्यव्यंजक : (साहि० : द० १६२)

पाद-टिप्पणी :

दात्री, दात्री, बम्बई।

२५१. (१) लय : लय का स्वरूप आवृत्ति-मूलक होता है। उसकी व्याप्ति दिक् एवं काल दोनों में होती है। गायन, वादन एवं नृत्य को सूत्रवद्ध लय करता है। लय—(१) द्रुत (२) मध्यम तथा (३) विलम्बित होता है। संगीत में नृत्य, गीत एवं वाद्य की समता या मेल है। यह समता नृत्य शील के हस्त, पाद, कण्ठ तथा मुख से प्रकट होती है। संगीत दामोदर के अनुसार हृदय, कण्ठ और कपाल लयके स्थान माने गये हैं। कुछ आचार्यों ने लय के द्विपदी, लतिका एवं झल्लिका इत्यादि अनेक भेद माने हैं। वह समय जो किसी स्वर को निकालने में लगता है। गीत गाने के तर्ज, धुन या ढंग से भी

यस्या मुखं हिमरुचिर्ननु यद्विधात्रा
संपूर्णपर्वमवशेपतयात्र मुक्तः ।
आश्यानतामुपगतोऽस्य रुचायमास्ते
नासाग्रमौक्तिकमिपादमृतस्य बिन्दुः ॥ २५२ ॥

२५२ जिसका मुख चन्द्र ही है, जिसमे विधाता ने पूर्ण चन्द्र की सम्पूर्ण कान्ति यहाँ रख दी, इस ( मुख ) की कान्ति से शुष्क हुआ, अमृत बिन्दु ही मानो नासिकाग्र पर स्थित, मौक्तिक[1] के व्याज से शोभित हो रहा है।

आसां कर्णालिकप्रोतलम्बिमुक्ताफलच्छलात् ।
मुखेन्दोर्निर्गता नूनं लावण्यामृतबिन्दवः ॥ २५३ ॥

२५३ इन ( नर्तकियो ) के कर्ण एव शिर पर गुथे, लटकते, मुक्ताफल के व्याज से लगता है कि मुख चन्द्र से लावण्यामृत की बूँदें ही निकल पडी है।

---

अर्थ लगाया जाता है। लय की परिभाषा की गयी है--

क्रियान्तर विश्रान्तिर्लय स त्रिविधो मत ।
द्रुतो मध्यो विलम्बश्च द्रुत शीघ्रतो मत ॥
—स० रत्ना० ५ ४४
द्विगुणद्विगुणौ ज्ञेयौ तस्मान्मध्यविलम्बितौ ॥
५ ४५

तत कला कालकृतं लय इत्यभिमज्ञाति।
त्रयो लयास्तु विज्ञेया द्रुत मध्य विलाम्बित ॥
भरत ना० शा० ३१ : ५

य कालो वतते मध्ये कलयोर्लय एव स ।
लीङ् धातो श्लेषणार्थत्वादिह लघ्वन्तरेण य ॥
आश्लेखो लयनात् सोऽत्र लयशब्देन गीयते ।
ते लयास्त्रिविधा ज्ञेया द्रुतमध्यविलम्बिता ॥
स० राग० वाद्य रत्न कोश । पृ० १०२

पाद-टिप्पणी

पाठ--बम्बई।

२५२ (१) मौक्तिक नासिका विवर किंवा दोनों रन्धो के मध्य वाली दिवाल मे छिद्र कर एक मोती गुथा बुलाक पहना जाता है। वह ऊपरी ओष्ठ के मध्य झूलता है। आजकल इसका प्रचलन समाप्त हो गया है। पुराने चित्रों में स्त्रियाँ बुलाक पहने चित्रित की जाती थी। इसमें एक मोती लगी रहती थी। अमृत समुद्र से निकला था। मुक्ता भी समुद्र से निकलता है। अमृत का रग उज्ज्वल होता है। मुक्ता भी उज्ज्वल होता है। अमृत बिन्दु में पानी रहता है। इसी प्रकार मोती में भी आब या पानी होता है। जिस मोती में पानी नही होता, वह सीप तुल्य है। केवल भस्म बनाने के काम आता है। यहाँ पर इसीलिये बुलाक के मुक्ता की उपमा अमृत बिन्दु से दी गयी है।

पाद-टिप्पणी

२५३ (१) मुक्ताफल काली वेणी में श्वेत गुथी मोती हरित वृक्ष में लगे फल के सदृश लग रहे थे। स्त्रियाँ कानो तथा शिर पर भी मुक्ता के गुच्छे धारण करती हैं। कमनीय कलेवरधारिणी नारी की इस अनुपम शोभा का वर्णन करते, मुक्ता गुथे और झूलते इस प्रकार प्रतीत होते रहे है, जैसे नवयौवना सुन्दरी का लावण्य बिन्दु मोती बनकर, निकल आया था। द्र० रघु० ६ , २८, १६ ६२, कु० १ १३

इत्यादि शंसां कुर्वाणो नृपतिर्नवयौवनः ।
लीलामित्रैः समं ताभ्यो मद्यपात्रमगाहत ॥ २५४ ॥

२५४. इस प्रकार प्रशंसा करते हुए, नवयुवा राजा ने लीला मित्रों[1] के साथ उन (नर्तकियों) से मद्य पात्र ग्रहण किया ।

तत्तत्कलापरिचये कविवाक्प्रपञ्चे
पञ्चेषुसंचयनिभासु वराङ्गनासु ।
संगीतचर्वणविधौ वसुधानुभोगे
धन्या नृपाः प्रतिदिनं व्यसनं भजन्ते ॥ २५५ ॥

२५५. तत् तत् कलाओं के परिचय में तथा कवि वाक्प्रपंच में, पंच वाण[1]-संचय सदृश, वाराङ्गनाओं में, संगीत स्वाद विधि एवं पृथ्वी के भोग में, धन्य नृप प्रति दिन व्यसन सेवन करते हैं ।

श्रुत्वा दिगन्तरात् कीर्तिं राज्ञः कर्णामृतप्रदाम् ।
गीतकाव्यकलाख्यातः पवारकदनोऽभ्यगात् ॥ २५६ ॥

२५६. दिगन्तर से राजा की कर्णामृतप्रद कीर्ति श्रवणकर, गीत काव्य कला में प्रख्यात पवार-कदन आया ।

---

पाद-टिप्पणी :

२५४. (१) लीला मित्र : साथ के खिलाड़ी या साथ खेलने वाला मित्र समूह ।

पाद-टिप्पणी :

२५५. (१) पंचवाण : कामदेव के पाँच वाण या शर—(१) सम्मोहन (२) उन्मादन (३) स्तंभन, (४) शोषण तथा (५) तापन । कामदेव के पाँच पुष्प—(१) कमल (२) अशोक (३) आम (४) नव-मल्लिका (५) नीलोत्पल ।

(२) वाराङ्गना : नारी, योषिता, वनिता, गणिका, तथा वेश्या अर्थ होता है ।

पाद-टिप्पणी :

२५६. (१) पवार कदन : पवार जातिवाचक तथा कदन व्यक्तिवाचक नाम है । श्री दत्त ने पवार कदन को एक नाम माना है । यह श्लोक ३ : २६० के वर्णन से स्पष्ट हो जाता है । पवरिया लोग छोटी सारंगी बजाते और गीत गाते हैं । उनका गीत प्रबंध काव्य की तरह होता है । उत्तर प्रदेश के पूर्वीय अंचल में पवरिया या पौरिया, जन्म, विवाह आदि के पश्चात् कम से कम तीन व्यक्ति के गोल में आते हैं । गृहद्वार के सन्मुख बैठकर गाने लगाते हैं ।

श्रीवर ने दिगन्तर शब्द पवार कदन के लिये लिखा है । वह काश्मीरी नहीं था । काश्मीर के बाहर से आया था । जैनुल आबदीन के समय संगीत कला में काश्मीर की ख्याति थी । ग्वालियर आदि सुदूर स्थानों से संगीतज्ञ काश्मीर आते थे । इसी प्रकार काश्मीर के बाहर से पवार कदन या गदन काश्मीर आया था । गिरवर कवि की उक्ति है—

साईं इन न विरोधिए गुरु, पण्डित, कवि, यार ।
बेटा वनिता पौरिया यज्ञ करावन हार ॥

पवार शब्द परमार का अपभ्रंश तथा क्षत्री एवं परमार वंशीय राजाओं के लिए आता है परन्तु यहाँ पर पौरिया गायकों से ही अभिप्राय है ।

**गायतः सोऽनुगीतानि स्वकृतानि सभान्तरे ।**
**तुष्टो महीपतिस्तस्मै व्यधात् कनकवर्षणम् ।। २५७ ।।**

२५७ सभा मे स्वनिर्मित, अनुगीत[१] करते, उस गायक से सन्तुष्ट होकर, राजा ने उसे प्रचुर सुवर्ण प्रदान किया ।

**प्रबन्धगीतचतुरः कदाचित् स नृपाग्रगः ।**
**अगायत् सर्वलीलाख्यं प्रबन्धं देशभाषया ।। २५८ ।।**

२५८ प्रबन्ध गीत[१] मे दक्ष, वह किसी समय राजा के समक्ष सर्व लीला[२] नामक प्रबन्ध देशी भाषा[३] मे गाया ।

---

पाद-टिप्पणी

२५७ (१) अनुगीति एक मात्रिक छद है। गीत के पश्चात गाया हुआ गीत। पवरिया लोग समयानुसार घर के वश, स्त्री, पुरुषो का नाम जानकर छन्द बना बनाकर गाते है। पवरिया का भाष्य मेरा अनुमान मात्र है। इसका दूसरा अर्थ भी हो सकता है।

पाद-टिप्पणी

२५८ (१) प्रबन्ध गीत प्रबन्ध काव्य श्रव्य प्रबन्ध का एक भेद है। यह पद्यबद्ध तथा सर्गबद्ध कथात्मक काव्य होता है। प्रबन्ध काव्य कथा काव्य के निकट है। उनकी शैली अलकृत तथा उनमें रसात्मक कथा होती है। प्रबन्ध गीत की शैली से भी गाया जाता है। शार्ङ्गदेव का प्रबन्ध के विषय म मत है—सज्ञात्रय निबद्धस्य प्रबन्धो वस्तु रूपकम्। निबद्ध के तीन नाम पाश्वदेव देते है—वस्तु, प्रबन्ध एव रूपक निबद्ध।

षडगों तथा चतुर्धातुओं द्वारा प्रबद्ध होता है। अतएव गीत लक्षण कोविद इसे प्रबन्ध कहते है। राग मे आरोपण हेतु होने के कारण सज्ञा रूपक दी गयी है। उद्ग्राह आदि चार धातु तथा षडग जिस प्रबन्धो मे वास करते हैं, उसका नाम वस्तु है।

(२) सर्वलीला इस नामका कोई प्रबन्ध काव्य उस समय रहा होगा। इसका अभी तक पता नही चला है। विश्व के किसी पुस्तकालय में पाण्डुलिपि भी पुस्तक की नही मिलती। भाषा से अर्थ हिन्दुस्तानी किंवा हिन्दी नही लगाना चाहिए। हिन्दुस्तानी भाषा का स्पष्ट उल्लेख श्रीवर ने २ २१४ में किया है। देशी भाषा का अर्थ काश्मीरी से यहाँ तात्पर्य है।

'सर्वगोचर देश भाषा' का उल्लेख तेरहवी शताब्दी मे शितिकण्ठ के महानय प्रकाश में मिलता है। सस्कृत पठित तथा बोल चाल की भाषा थी। परन्तु चौदहवी शताब्दी में काश्मीर में मुसलिम आबादी और अरबी तथा फारसी के राजकीय प्रश्रय के कारण सस्कृत से बिगडकर काश्मीरी भाषा ने एक नवीन रूप ले लिया। मुसलिम काल में देवभाषा सस्कृत के स्थान पर, काश्मीरी भाषा लोकदर्शन एव लोक सस्कृत की भाषा बन गयी थी। सन् १४५० ई० में जो श्रीवर का काल था, उसमें 'बाणासुर वध' मे सर्वलीला काश्मीरी भाषा का रूप मिलता है। यह हरिवश पुराण में वर्णित उषा एव अनिरुद्ध की प्रणय गाथा पर आधारित है। खण्ड काव्य है। उसमें हसन शाह की प्रशस्ति है। श्रीवर की सत्यता इन ग्रन्थो के कारण और प्रमाणित हो जाती है कि भाषा में ग्रन्थ लिखने की परम्परा प्रचलित हो गयी थी।

अनभिज्ञतया राज्ञः पृष्टोऽहं तस्य लक्षणम् ।
तूर्णं भरतशास्त्रादेः सोदाहरणमब्रवम् ॥ २५९ ॥

२५९. अनभिज्ञता के कारण, राजा ने उसका लक्षण मुझसे पूछा। शीघ्र ही मैंने भरत शास्त्र[1] आदि का उदाहरण देकर कहा—

पदपाठस्वरैस्तैस्तु तालरागैर्मनोहरम् ।
श्रुत्वा षडङ्गं तं मत्तो राजाभूदुदिताशयः ॥ २६० ॥

२६०. उन पद, पाठ, स्वरों एवं ताल रागों से षडङ्ग[1] युक्त उसे ( गीत ) सुनकर, उदार हृदय राजा मत्त हो गया।

---

इस भाषा का आदि काल सन् १२५० ई० से १४०० ई० माना जाता है। सन् १३३९ ई० में काश्मीर में शाहमीर राज वंश की स्थापना हुई। इसके पश्चात् फारसी एवं अरबी शब्द प्रचुर संख्या में काश्मीर की लोक भाषा में प्रवेश करने लगे। इस भाषा में श्री शितिकंठ का महानय प्रकाश, छुम्म सम्प्रदाय, लल्ला रख के वाख, नन्द ऋषी के अर्थात् नुदर्येश के श्लोक तथा अन्य ऋषियों अर्थात् उपदेशों के पद हैं। ऋषि परम्परा मुसलिम सन्तों की परम्परा थी, जो किसी कारण वश हिन्दू से मुसलमान हो गये थे। इस काल की रचना में संस्कृत छंदों की झलक स्पष्ट दिखायी देती है। छुम्म सम्प्रदाय में काश्मीरी सूत्र अधिक मिलते हैं।

श्रीवर का समय काश्मीरी भाषा का प्रबन्ध काल है। यह काल पन्द्रहवीं तथा सोलहवी शती में माना गया है। सुलतान जैनुल आबदीन के समय संस्कृत के स्थान पर फारसी राजभाषा बन रही थी। संस्कृत ग्रन्थों का अनुवाद फारसी तथा देशी भाषा में होने लगा था। जनता मुसलिम बहुल थी। इसका परिणाम यह हुआ कि संस्कृत जोरों के साथ स्थान छोड़ने लगी और उसका स्थान देशीभाषा तथा फारसी ने ले लिया। हिन्दुओं की धार्मिक भाषा संस्कृत एवं मुसलमानों की अरबी होने के कारण मुसलमान संस्कृत पढ़ना छोड़ने लगे। सिकन्दर बुतशिकन के समय ( १३८०–१४२० ) जबर्दस्ती मुसलमान बनाये गये हिन्दू, जिनकी भाषा संस्कृत थी, उसे छोड़ नहीं सके थे। परन्तु उनकी सन्तानों के लिये संस्कृत के प्रति कोई आकर्षण नहीं था। वे फारसी अथवा देशी भाषा तक ही अपना पठन पाठन सीमित कर दिये थे।

पाद-टिप्पणी

२५९. ( १ ) भरत शास्त्र = नाट्य शास्त्र : द्रष्टव्य : पादटिप्पणी : रा० : ४ : ४२३। नृत्य, गीत एवं अभिनय की विद्या भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्र का प्रतिपाद्य विषय है। ब्रह्मा ने अनिरुद्धावतार ग्रहण कर नाट्य उपवेद की रचना की थी। इसे गन्धर्व वेद भी कहते है। ब्रह्मा ने भरत को नृत्य, वाद्य, गीतादि की शिक्षा दी थी। उसी के आधार पर जगत् उपकारार्थ भरत ने नाट्यशास्त्र की रचना की थी।

पाद-टिप्पणी

२६० ( १ ) षडङ्ग : संगीत के षट् + अंग है—(१) स्वर, (२) विरुद, (३) पद, (४) तेनक, (५) पाठ एवं (६) ताल। कुछ लोगों का मत है कि (१) स्वर, (२) ताल, (३) नृत्य, (४) भाव, (५) कोक और हस्त इनके समाहार को संगीत कहते हैं। वेद के ६ अंग—(१) शिक्षा, (२) कल्प, (३) व्याकरण, (४) निरुक्त, (५) छन्द एवं (६)

तद्गीतस्याङ्गवैकल्यं ज्ञात्वा मामब्रवीदिदम् ।
गीतदर्पभृता वादं कुर्वनेन सभान्तरे ॥ २६१ ॥

२६१ उसके गीत का अग वैकल्य[1] जानकर, महाराज ( राजा ) ने मुझसे यह कहा,—'गीत का दर्प करने वाले इसके साथ सभा मध्य वाद करो,—'

तथेत्युक्ते महाराजो द्वयोर्वादमकारयत् ।
सभायां विहिते वादे गीतग्रन्थावलोकनात् ॥ २६२ ॥

२६२ स्वीकृति देने के पश्चात् महाराज ने वाद ( शास्त्रार्थ ) कराया। सभा मे वाद किये जाने पर, एव गीत ग्रन्थो के अवलोकनानन्तर—

श्रुत्वा प्रबन्धान्मत्तः स साश्चर्यो गदनोऽभवत् ।
अहो काश्मीरिकोऽपीदृक् चतुरः सर्वशास्त्रवित् ॥ २६३ ॥

२६३ मुझसे प्रबन्धो को सुनकर, वह गदन आश्चर्य युक्त हो गया—'अहो ! काश्मीरी भी, तुम ऐसे सर्व शास्त्र वेत्ता एव चतुर हो ?'—

इत्युक्त्वालिङ्ग्य मां मे त्वं गुरुरित्यब्रवीत् स्फुटम् ।
कौशेयकपरीधानप्रसादानन्दिताशयम् ।
अकरोन्मां नृपस्तूर्णं तद्वादजयरञ्जितः ॥ २६४ ॥

२६४ इस प्रकार कहकर, मेरा आलिगन कर—'तुम मेरे गुरु हो'—यह सुस्पष्ट कहा। उस शास्त्रार्थ के विजय से प्रसन्न राजा ने शीघ्र ही मुझे कौशेय वस्त्र प्रसाद मे प्रदान कर, परमानन्दित किया।

---

ज्योतिष। शरीर के ६ अग १,२) दो पैर (३,४) दो हाथ (५) सिर (६) धड। दूसरे मत से (१) हृदय, (२) शिर (३) शिखा (४) नेत्र, (५) कवच तथा (६) अस्त्र। गाय से प्राप्त होने वाली ६ वस्तुएँ—(१) गोमूत्र, (२) गोबर, (३) गोदुग्ध (४) गोघृत, (५) गोदधि, (६) गोरोचन।

पाद-टिप्पणी

२६१ 'तद्–अग' बम्बई।

पाद-टिप्पणी

२६३ ( १ ) गदन श्लोक सख्या २५४ में वर्णित 'कदन' ही 'गदन' है। व्यक्तिवाचक नाम है। श्रीदत्त ने 'कदन' तथा 'गदन' को एक ही व्यक्ति माना है।

( २ ) काश्मीरी श्रीवर ने अपने जीवन के विषय में तीन परिचय इस प्रसग में दिया है। प्रथम वह सुल्तान के सगीत विभाग का अध्यक्ष था। स्वय सगीत पारगत था। दूसरा उसने भरत मुनि के नाट्यशास्त्र के साथ ही, सगीत शास्त्र का गम्भीर अध्ययन किया था। वह इतना विद्वान् था कि किसी भी वाहरी व्यक्ति से सगीत के अग-प्रत्यगों पर वाद करने के लिये सक्षम था। तीसरा वह महाकवि के साथ सगीतज्ञ होने के नाते सुल्तान का सगीत गुरु

घोषाः स्वोत्पत्तितोषा गतिगुणचतुराः पीवराङ्गास्तुरङ्गाः
स्फीतं यज्ञोपवीतं कनकमणिचितं द्रव्यमन्यच्च भव्यम् ।
वस्त्रोद्द्योताश्च पोता निजवपुषि धृता वस्त्रयोगाः सभोगा
राज्ञा श्रीहस्सने प्रसभमिह मयि श्रीवरे किं न दत्तम् ॥ २६५ ॥

२६५. उत्पत्ति पूर्ण गृहों, गति एवं गुणों में उत्तम पीवरांग, ( हृष्ट-पुष्ट ) तुरंगों, कनक एवं मणि से युक्त प्रचुर यज्ञोपवीत एवं अन्य भव्य द्रव्य तथा वस्त्रों से शोभित पोत और अपने शरीर पर धृत भोगसहित वस्त्रों को ( देकर ), इस प्रकार राजा हस्सन ने बलात् मुझ श्रीवर को क्या नहीं दिया ।

नयज्ञः शंसदेनोऽभून्मन्त्री चालाभदेनकः ।
वीरः शाहाभदेनः स कुद्ददेनो विवेचकः ॥ २६६ ॥

सुल्तानों का मूल्यांकन :

२६६. शंसदीन ( शाहमीर ) नयज्ञ ( नीतिज्ञ ), अलाभदीन ( अलाउद्दीन ) मन्त्री, शाहाबदीन ( शिहाबुद्दीन ) वीर, एवं वह कुद्ददेन ( कुतुबुद्दीन ) विवेचक हुए ।

श्रीशेकन्धरशाहोऽपि यवनेन्द्रमतप्रियः ।
आलिशाहोऽभवद् दाता श्रीमाञ्जैनमहीपतिः ॥ २६७ ॥

२६७. श्री शेकन्धर ( सिकन्दर बुतशिकन ) यवन धर्म प्रेमी, और आलिशाह (अली शाह) दाता हुआ । श्रीमान् जैन ( जैनुल आबदीन ) भूपति—

सर्वशास्त्रप्रियः सर्वभाषाकाव्यविचक्षणः ।
राजा हैदरशाहः स तन्त्रीवाद्यविशारदः ॥ २६८ ॥

२६८. सर्वशास्त्र प्रेमी तथा सर्व भाषा के काव्यों में विचक्षण था । राजा हैदर शाह वीणा एवं तन्त्री वाद विशारद था ।

संगीतनिपुणः सोऽयं हस्सनेन्द्रो नरेश्वरः ।
एकैकगुणबाहुल्या प्रसिद्धा नृपमण्डली ॥ २६९ ॥

२६९. राजा हस्सनेन्द्र संगीत में निपुण था । इस प्रकार एक-एक गुण से पूर्ण प्रसिद्ध नृप मण्डली को—

---

भी था । स्वयं गाता था । वह जैनुल आबदीन, हैदर शाह तथा सुलतान हसन के साथ गा चुका था । काश्मीर के उक्त तीनों ही सुलतान स्वयं काव्य रसिक एवं संगीतज्ञ थे ।

पाद-टिप्पणी :

२६७. 'मत' पाठ–बम्बई ।

मण्डलेऽस्मिञ् जनैर्दृष्टेत्यवोचन्नृपतेः सदा ।
श्रुत्वा राज्ञो महागीतं रागालप्तिमनोहरम्
श्रीज्यहाङ्गिरमार्गेशमुख्याः पादौ ववन्दिरे ॥ २७० ॥

२७० इस मण्डल मे लोगो ने देखा। इस प्रकार सर्वदा राजा की सभा कहती थी। राग[1], आलाप[2] से मनोहर, राजा के महागीत को सुनकर, श्री जहाँगीर मार्गेश प्रमुख लोगो ने उसकी पाद वन्दना करते थे।

देशेऽस्मिन् परवञ्चनात् प्रकुरुते लोको यदा संचय
तत्तद्धर्मविपर्ययेण च भजन् स्वाचारनिःसारताम् ।
उत्पातैर्विविधैस्तदा समुदिताः संपीडयन्ति प्रजा
दुर्वात्यानलदाहदुर्हिममहाशैत्यस्व भेदामयाः ॥ २७१ ॥

विपत्ति का कारण

७१ इस देश मे जब लोग प्रवचना द्वारा ( धन ) सचय करते और तत्-तत् धर्म विपर्यय के कारण अपनी मायावी निस्सारता प्रकट कर देते हैं, उस समय विविध प्रकार के उपद्रवो से उत्पन्न, तूफान, अग्निदाह, प्रचण्ड हिमपात से घोर शीत एव रोगादि प्रजा को पीडित करते है।

---

पाद-टिप्पणी

२७० (१) राग भरत मुनि के अनुसार-(१) भैरव (२) कौशिक (३) मालकोस (४) हिडोल (५) दीपक (६) श्री तथा (७) मेघ है। ब्रह्म एव सोमेश्वर के मत मे—(१) श्री (२) वसत (३) पचम (४) भैरव (५) मेघ एव (६) नट नारायण है। नारद सहिता के अनुसार—(१) मालव (२) मल्लार (३) श्री (४) वसत (५) हिडोल (६) कर्णाटक है।

स्वरभेद से राग—(१) सम्पूर्ण—जिसमें सभी स्वर लगते है। (२) षाडव—केवल ६ स्वर लगते हैं। (३) ओडव में पाँच स्वर लगते है। दो स्वर वर्जित है।

मतग के मत से राग—(१) शुद्ध (शास्त्रीय) (२) सालक अन्य राग की छाया छलकती है अथवा दो रागों के योग से जो बनत है। (३) सकीर्ण अनेक रागों के योग से बनते है। इसे शकर राग भी कहते हैं।

रागो के ऋतु, समय, पहर, निश्चित स्वर क्रम या सरगम होते हैं। भरत मतानुसार प्रत्येक राग की पाँच रागनियाँ तथा सोमेश्वर मतानुसार ६ रागनियाँ होती है। प्रत्येक राग के आठ पुत्र तथा आठ पुत्रियाँ हैं।

महादेव के पच मुख से पचराग (१) श्री (२) वसत (३) भैरव (४) पचम और (५) मेघ निकले है। पार्वती के मुख से (६) नटनारायण राग निकला है।

(२) आलाप सगीत के सातो स्वरो का साधन—तान। गाने का एक अग तान है। अनुलोम एव विलोम गति से गमन, मूर्च्छना आदि द्वारा राग या स्वर का विस्तार किया जाता है। विविध विभागों में स्वर को खीचते है। लय का विस्तार यथा आलाप करते है।

जब सातों स्वर के आरोही अथवा अवरोही क्रम में एक या दो स्वरो को छोड देते है, तब मूर्च्छना शुद्ध तान का रूप धारण कर लेती है। षडज ग्राम *में षाडक (छ स्वरों की) तानें २८ और मध्यम* ग्राम में षाडव तानें २१ होती है। कुल मिलाकर षाडक तानें ४९ होती है। षडज ग्राम में औडुक (पाँच स्वरो की) तानें २१ होती है। मध्यम ग्राम में औडुव तानें १४ होती है। कुल मिलाकर औडुव तानें ३५ होती है। षाडक और औडुव दोनों मिलाकर (४९ + ३५)=८४ शुद्ध तानें होती है।

आलाप में राग का तिरोभाव नही होता। रागालाप तथा रूपकालाप दो भेद है। रागालाप में अपन्यास स्वरो पर विश्रान्ति नही होती। रूपकालाप में अपन्यास स्वरों पर विश्रान्ति होती है।

**कदाचित् पौरवणिजो गोवधं नगरान्तरे ।**
**आजन्महिन्दुकाचाराश्चक्रुर्मौसुलवल्लभाः ॥ २७२ ॥**

२७२. किसी समय, जन्म से हिन्दू आचारवाले, पौर वणिकों[१] ने जो मौसुल ( मुस्लिम ) वल्लभ थे, नगर में गोवध[२] किया ।

**यत्र गावो हता भुक्तैस्तन्मासैस्तैर्दुराशयैः ।**
**स विहारः स नगरः शुद्धयै चाग्नौ स्वमक्षिपत् ॥ २७३ ॥**

२७३. उन दुराशायों ने जहाँ पर गाय की हत्या की थी और उनका मांस खाया था, वह विहार, वह नगर, शुद्धि हेतु स्वयं को अग्नि में डाल दिया ।

**अथ नैर्ऋतदिग्वातो जातोत्पातशताचितः**
**अकस्मादुदभूद् देशे प्रत्यूहापातदुःसहः ॥ २७४ ॥**

२७४. देश में अकस्मात् सैकड़ों उत्पात से युक्त, विघ्नपात से दुःसह, नैर्ऋत्य दिशा की वायु उठी ।

**आरम्भ एव कोऽप्येतं श्लोकं सूनुर्विपश्चितः**
**गणरात्रं समालोच्य दुर्वातं तं महाद्भुतम् ॥ २७५ ॥**

२७५. विद्वान् के किसी पुत्र ने प्रारम्भ में ही कई रातों तक, उस महा अद्भुत दुर्वात को देखकर, यह श्लोक पढ़ा—

**खरवर्णेन मेघेन चन्द्रवर्णेन भानुना ।**
**नैर्ऋतेनातिवातेन हा प्रजे क्व गमिष्यसि ॥ २७६ ॥**

२७६. खर[१] वर्ण के मेघ, शशि वर्ण के सूर्य से युक्त, और नैर्ऋत्य[२] के इस अतिवात के कारण हे प्रजा ! कहाँ जाओगी ?

---

पाद-टिप्पणी :

२७२. (१) पौर वणिक : पूर्वकालीन हिन्दू वणिक धर्म परिवर्तन कर मुसलमान हो गये थे ।

(२) गोवध : गोवध का यहाँ प्रथम उल्लेख मिलता है । द्र० : ४ : ५०, ५०४ ।

पाद-टिप्पणी :

२७३. पाठ—वम्बई ।

पाद-टिप्पणी :

२७४. (१) नैर्ऋत्य : दक्षिण–पश्चिम दिशा से तात्पर्य है । अरब सागर से मानसून और हवा जो उठती है, वह सीधे शिवालिक पर्वतमाला से टकराती है और कांगड़ा तथा हिमाचल प्रदेश में वर्षा होती है। यह हवा काश्मीर तक पहुँचते-पहुँचते जल अथवा नमी-रहित हो जाती है । शीत ऋतु में साइक्लोन उठता है । उन्हें काश्मीर में गर्दवाद हवा कहते है । यह हवा भूमध्य सागर से उठती है । फ़ारस की खाड़ी से नमी उठाकर, अफ़गानिस्तान, बलूचिस्तान, सीमान्त उत्तर पश्चिमोत्तर प्रदेश तथा पंजाब से होती काश्मीर में प्रवेश करती है । इनसे पंजाव तथा काश्मीर उपत्यका में वर्षा होती है । जम्मू में इनका प्रवेश पीर पंजाल के कारण नहीं होता । जो कुछ थोड़ी हवा जम्मू पहुँच जाती है, उसमें नमी कम होती है ।

पाद-टिप्पणी :

२७६. (१) खर : श्लिष्ट शब्द है । खर का

वत्सरे पञ्चपञ्चाशे प्रवरेशपुरान्तरे ।
गोसौनिकापणोपान्तादकस्मादुदभूच्छिखी ॥ २७७ ॥

२७७ पचपनवें वर्ष प्रवरेशपुर के अन्दर गौ-सैनिकों (गो-वधिकों) के आपणों ( बाजारों ) के समीप से अकस्मात् अग्नि उत्पन्न हुई ।

मारीतटैकपार्श्वस्था गुलिकावाटिकावधिः ।
क्षणान्नगरभूर्दाहाद् दग्धारण्यमिवाभवत् ॥ २७८ ॥

२७८ मारी[1] तट के एक भाग में स्थित, वह ( अग्नि ) गुलिका वाटिका[2] तक फैल गयी । क्षण भर में नगर की भूमि दाह से दग्ध, अरण्य सदृश हो गयी ।

भूर्जत्वग् वायुनोद्धूता ज्वलन्ती सजवागता ।
बृहन्मस्जेदाच्छत्रान्तः पपातोत्पातदूतिका ॥ २७९ ॥

२७९ बृहन्मसजिद[1] से वायु द्वारा उड़ायी गयी, जलती हुई भोजपत्र त्वक, बड़ी तेजी से सत्र में आ गिरी जो उत्पात-दूतिका थी ।

---

अर्थ घना = अमंगल, क्रूर तथा गधा होता है । खर संवत होता है । साठ संवत्सरों में वह पचीसवाँ संवत् है । इस संवत्सर में बहुत उपद्रव होते हैं ।

(२) मेघ नैऋत्य दिशा से जुलाई मास में मानसून की हवा अरब सागर से उठती, काश्मीर पहुँचती है । शीत ऋतु में (जनवरी से अप्रैल) हवा पश्चिम उत्तर से काश्मीर में प्रवेश करती है ।

पाद-टिप्पणी :

२७७ (१) पचपनवें सप्तर्षि ४५५५ = सन् १४७९ ई० = विक्रम १५३६ = शक १४०१ = कलि गताब्द ४५८० ।

पाद-टिप्पणी

पाठ-बम्बई ।

२७८ ( १ ) मारी मर नहर = मार नहर प्राचीन नाम महासरित हैं ।

(२) गुलिका वाटिका यह स्थान श्रीनगर शहर में गोजवार स्थान है । (काश्मीरी रामायण भूमिका पृष्ठ १ ) ए० एम० बी० सन् १९३० संस्करण ।

पाद-टिप्पणी

२७९ ( १ ) बृहन्मसजिद जामा मसजिद काश्मीर की प्रसिद्ध भव्य इमारत है । सिकन्दर बुतशिकन ने इसका निर्माण कराया था । सन् १४७९ ई० में भयंकर अग्निदाह में जल गयी थी । इसके साथ ही साथ खानकाह मुअल्ला भी जल गया था । सुल्तान ने दोनों स्थानों का जीर्णोद्धार कराया था । ( वाकियाते काश्मीर पाण्डु० ३६ बी०, तारीख हसन : पाण्डु १ १३० ए० तथा बी०, सैय्यद अली तारीख काश्मीर : ३९-४० । )

पीर हसन लिखता है—हिजरी ८८५ में सिकन्दरपुर और अलाउद्दीनपुर में कहर खुदा की आग लगकर, इकतीस मुहल्ले और तखमीनन् दस हजार घर जल गये । मसजिद जामा और खानकाह मुअल्ला दोनों मशअल नूर हो गये । सुल्तान ने इन दोनों मुतबरक मुकामों की दोबारह तामीर पर, हिम्मत का हाथ बढ़ाकर, पहले से भी ज्यादा नक्श व निगारी और दीवारों के खतूत और किताब के जरिये, रौनक और ज़ीनत बढ़ायी ।

प्रसारिता चतुर्दिक्षु यत्र भित्तिः सुधासिता ।
श्रीशेकन्धरभूभर्तुर्मूर्ता कीर्तिरिवाभवत् ॥ २८० ॥

२८०. जहाँ पर चारों दिशाओं में सुधासित[1] (चूने से लिपी) भित्ति फैली हुई थी, जो कि राजा श्री सेकन्धर ( सिकन्दर बुतशिकन ) की मूर्तिमती कीर्ति सदृश थी।

व्यधाद् यदन्तर्जनता प्राणीता पुनरुत्थिता ।
स्वङ्गत्सरोवरोत्तुङ्गतरङ्गावलिभङ्गिताम् ॥ २८१ ॥

२८१. जिसके अन्दर प्रणत[1] एवं पुनः उत्थित जनता, बहते सरोवर के उत्तुंङ्ग तरंग वलियों की भंगिमा सदृश लग रहे थी।

---

पाद-टिप्पणी :

२८०. (१) सुधासित : जामा मसजिद चौकोर भव्य इमारत है। दिवालें ऊँची हैं। उनमें गवाक्ष लगे हैं। भीतर चीड़ तथा देवदार के बड़े-बड़े शहतीरों के खम्भा लगे हैं। उन पर छाजन टिकी है। दिवाल आज भी चूने से पोती जाती है।

पाद-टिप्पणी :

२८१. ( १ ) प्रणत-उत्थित : मसजिद में नमाज पढ़ते समय सिजदा (प्रणत) करने और उठने को ( क़याम ) सुन्दर उपमा श्रीवर यहाँ समुन्द्र की लहर से देता है। इस श्लोक को समझने के लिये नमाज प्रक्रिया को अच्छी तरह समझना चाहिए।

नमाज के पूर्व अज़ां दी जाती है। दोनों कानों में उगली डालकर मसजिद का मुअज्जिन अज़ां देता है। अज़ां नमाज़ पढ़ने के लिये लोगों को बुलाया या आह्वान होता है। वह नमाज़ के समय की सूचना है। अज़ां के लगभग पन्द्रह मिनट पश्चात् लोग मसजिद में एकत्रित होकर, नीयत बाँधते है, जमात में खड़े हो जाते हैं। इमाम सबके आगे खड़ा होता है। पश्चिम काबा की ओर सबका मुख रहता है। अल्लाहो अकबर कहकर दोनों हाथों को कानों तक उठा कर छाती पर नाभि के पास हाथ बाँध लेते हैं। शिया लोग खुले हाथ नमाज़ पढ़ते हैं। उनका हाथ झूलता रहता है। नमाज़ में एक क़याम (खड़ा होकर पढ़ना) एक 'रुकअ' झुककर पढ़ना तथा दो सज़्दा किया जाता है।

सिज़दा में मस्तक भूमि पर टेक दिया जाता है। कुछ क्षण पश्चात घुटनों के बल बैठ जाते है। पुनः सिजदा में माथा टेकते है। खड़ा होते है। एक रकअस नमाज़ एक बार खड़े होकर बैठने तक होती है। एक रक़अत में दो सिजदे और एक रुकअ एक रक़अत में एक क़याम एक रुकअ और दो सज्दा होते हैं। सिजदों के उपरान्त घुटनों के बल बैठ जाते है। पहले दायीं और बायीं ओर मुँह फेरते हैं फिर बायीं ओर। तत्पश्चात् दोनों हाथ उठाकर अल्लाह से दुआ माँगते हैं। इस प्रकार नमाज़ की दो रक़अत पूर्ण होती है। जुमा की नमाज़ के पूर्व इमाम भाषण देता है। उसे खुतबा कहते हैं। शिया लोगों के यहाँ वाज़ अर्थात् उपदेश या खुतबा नमाज़ के पश्चात् होता है।

श्रीवर ने नमाज़ पढ़ना देखा था। उसने विशाल जनसमूह में लहर की उठने की तुलना क़याम, सम होने से रुकअ तथा नीचे जाने की तुलना सिज्दा से किया है।

श्रीवर ने जुमा तथा ईद की नमाज़ का उल्लेख करता है। जुमा की नमाज सूरज ढलने के बाद पढ़ी जाती है। यह मध्याह्न १२ तथा १ बजे के बीच होती है। जुमा के दिन कारबार आधा दिन बन्द रखा जाता है। पैगम्बर साहब का उपदेश है कि जुमा की नमाज़ के पश्चात् रोजी के लिये निकले। जुमा की नमाज़ में खुतबा पढ़ा जाता है। नमाज़ केवल अज़ान के बाद पढ़ी जाती है।

ईद की नमाज सूरज ढलने के पहले अर्थात् १२ बजे दिन के, पूर्व पढ़ी जाती है। इसके नमाज़

मन्त्रपाठोद्यतं यत्र यवनानां कदम्बकम् ।
गुञ्जन्मधुपगर्भाब्जसहस्रमिव राजते ॥ २८२ ॥

२८२ जहाँ पर मन्त्र पाठ के लिये उद्यत, यवनो का समूह गूँजते[1] भौरो से युक्त, गर्भवाले सहस्त्रो कमल समूह सदृश शोभित हो रहा था।

चतुर्दिग्द्वारनिर्गच्छच्छुक्रवारागता जनाः ।
कुर्वन्ति भूगतम्लेच्छतद्दहनिर्गमभ्रमम् ॥ २८३ ॥

२८३ शुक्रवार[1] को आये चतुर्दिक द्वार से निकलते लोग भूगत[2] म्लेच्छो के उस (कयामत) दिन निकलने का भ्रम उत्पन्न कर रहे थे।

यन्मध्योच्चचतुःस्तम्भदम्भाद् विधिदिदृक्षया ।
चतुष्पादिव तद्धर्मः प्राप्तो भात्युज्झितस्थितिः ॥ २८४ ॥

२८४ जिसके मध्य उन्नत चार स्तम्भ ( मीनार ) के व्याज से व्यक्त स्थिति चतुष्पाद[1] उनका धर्म ही विधि देखने की इच्छा से आकर शोभित हो रहा है।

---

म केवल दो रुकअ तथा चार सिजदा होता है। प्रत्येक सिजदा के पूर्व घुटने के बल बैठकर भूमि पर माथा टेकते है। दोनो हाथ की हथेली जमीन पर लगी रहती है। यह बैठना योग के वज्रासन तुल्य होता है।

प्रतिदिन पाँच बार नमाज पढने की हिदायत है। फजर सुबह की नमाज में दो रुकअत, जहर में चार रुकअत असर में चार रुकअत, मगरिब में तीन रुकअत और एशा मे चार रकअत नमाज फर्ज जाती है।

( २ ) त्वङ्गत्सरो 'तवत्सगरो' पाठ लिखने की गलती से हो गया है। त्वङ्गत्सरो पाठ ठीक है।

पाद-टिप्पणी

उक्त श्लोक कलकत्ता तथा बम्बई सस्करणो का २८२ वाँ श्लोक है।

२८२ (१) गूँजता नमाज में अल्लाहो अकबर की गूज के साथ सिजदा करते तथा उठते है। यह आवाज गूँजती है। उसकी तुलना भौरों के गूजने से श्रीवर ने किया है।

पाद-टिप्पणी

२८३. (१) शुक्रवार जुमा की नमाज। कथा है कि कयामत के दिन मानव का ईश्वर न्याय करेगा। मृतकों का पुनरुत्थान होता है।

शुक्रवार का दिन मुसलमानो में अच्छा माना जाता है। इस दिन मरना भी अच्छा मानते है।

(२) भूगत गडे लोग कयामत अर्थात् हश्र या महाप्रलय के दिन जैसे कब्रों से निकले आ रहे थे। मुसलमान, ईसाई तथा यहूदी मान्यता के अनुसार सृष्टि के अन्तिम दिन सब गडे मुर्दे कबरो से निकलकर खडे हो जायगें और ईश्वर के सम्मुख उनका इन्साफ होगा।

पाद-टिप्पणी

२८४ (१) चतुष्पाद धर्म का चार पद अर्थात् धर्म, व्यवहार, चरित्र एव शासन ( नारद . १ १० )। याज्ञवल्क एव बृहस्पति के अनुसार— अभियोग, उत्तर, क्रिया एव निर्णय चतुष्पाद है ( याज्ञ० २ ८ )। कात्यायन के अनुसार चतुष्पाद अभियोग, उत्तर, प्रत्याकलित एव क्रिया है। द्र० १ ३ १७।

स्वर्णछत्रच्छलाद्यत्र मायाकर्णनकौतुकात् ।
कर्णं दातुमिवाभ्यर्णं भजन् भाति दिवाकरः ॥ २८५ ॥

२८५. जहाँ पर स्वर्ण छत्र के व्याज से माया सुनने के कौतूहलवश दिवाकर कान[1] लगाने के लिये ही मानो निकट आया शोभित होता था।

तन्महासदनं व्याप्तगगनं रचनाद्भुतम् ।
म्लेच्छदर्शनराजार्थं रक्षादुर्गश्रियं ददत् ॥ २८६ ॥

२८६. आकाश तक व्याप्त अद्‌भुत् रचना से युक्त वहाँ महासदन म्लेच्छ के दर्शन (धर्म) के राजाओं[1] के लिये रक्षा दुर्ग के सदृश शोभित हो रहा था।

कुर्वन् कल्पाग्निनिर्दग्धविश्वज्वालावलिभ्रमम् ।
क्षणमात्रात्तदा यातं भित्तिमात्रावशेषताम् ॥ २८७ ॥

२८७. कल्पाग्नि से निर्दग्ध विश्व की ज्वाला पुञ्ज का भ्रम करते हुए, (वह) क्षणमात्र में भित्तिमात्र अवशेष रह गयी।

निमित्तजा विधा यस्यां म्लेच्छा कुर्वन्ति भक्तितः ।
एधामहोत्सवाद्येषु गणशो मिलिताः सदा ॥ २८८ ॥

२८८. एधा[1] (ईद) महोत्सव आदि के अवसर पर गणशः मिलकर म्लेच्छ लोग जिससे सदैव भक्तिपूर्वक नैमित्तिक[2] विधियाँ सम्पन्न करते थे।

---

पाद-टिप्पणी :

२८५ (१) कान : अज़ा देने के समय दोनों कानों के छिद्र उंगली से बन्दकर लिये जाते हैं। वजू के वक्त प्रत्येक मुसलमान कुहनियों तक हाथ धोता है। मुख व नाक आदि साफ करता है। कान पर भी हाथ फेरता है। वजू के पश्चात् नमाज की जमाअत में खड़े होने पर, सर्वप्रथम दोनों हाथों से दोनों कानों का स्पर्श किया जाता है। श्रीवर इसी ओर संकेत करता है।

पाद-टिप्पणी :

२८६. (१) राजा : राजा का पाठभेद वाज भी मिलता है। श्री दत्तने अनुवाद किया है कि म्लेच्छ राजदर्शन राजाओं के समर्थन हेतु वह दुर्ग सदृश शोभा दे रहा था। उसने राज पाठ माना है। यदि वाज पाठ मान लिया जाय तो अर्थ भिन्न हो जायगा। वाज शब्द का अर्थ धर्मोपदेश मजहबी नसीहत, उपदेश तथा सीख = नसीहत है। मुल्ला अथवा इमाम नमाज पढ़नेवालों को उद्‌बोधित करता है। 'यदि नवाज का तात्पर्य लगाया जाय तो नमाज पढ़ना होगा। श्रीवर वृहन्मसजिद की उपमा एक दुर्ग से देता है। जिस प्रकार दुर्ग में सेना तथा राजा निर्भय एवं रक्षित होकर कार्य करता है, उसी प्रकार मसजिद के अन्दर रक्षित तथा भयरहित मुसलमान नमाज पढ़ते हैं, जहाँ उनका धर्म मसजिद प्राकार से रक्षित है।

पाद-टिप्पणी :

२८७. 'यात' पाठ—बम्बई।

पाद-टिप्पणी :

२८८. (१) ईद : ईद का शाब्दिक अर्थ हर्ष, आनन्द, खुशी है। शब्द अरबी है। यह शब्द ऊद से बना है। जिसका अर्थ प्रतिवर्ष आनेवाला होता

अभूद्बहामखानीयपञ्चावासादिभिर्गृहैः ।
सताण्डवचटत्कारं तैः खाण्डववनायितम् ॥ २८९ ॥

२८९. बहराम खा के पच आवास आदि गृह ताण्डव[1] एवं चटत्कार ( चटकना ) शब्द पूर्वक खाण्डव[2] वन की तरह आचरण किये ।

ज्वलद्भूर्जत्वचो याता वितस्तासलिलान्तरम् ।
दग्धा जलगता नावाः शेकुः शमयितुं न याः ॥ २९० ॥

२९०. जलते भोजपत्र वितस्ता सलिल मे गिरे, जहाँ पर जलगत नावे जल गयी, उन्हे बुझाया नही जा सका ।

---

है । ईद दो पर्वों का नाम है । एक इदुल फित्र अर्थात् बकरा ईद है । यह जोहिज्जा की दसवी तारीख को पडती है । यह शब्द अरबी है । दूसरी इदुल अज्हा है । यह रमजान के रोजा रखने के पश्चात् प्रथम शाब्बाल को मनायी जाती है । इसमें सेवई पकाने तथा खिलाने की प्रथा है । इन प्रार्थनाओ में दो रकअत नमाज तथा वाज अर्थात् धर्मोपदेश होता है । प्राय यह नमाज शहर के बाहर बने खुले मैदान में बनी मसजिद ईदगाह में पढी जाती है ।

शिया मुसलमान एक तीसरी ईद भी मनाते हैं । इसे ईद गदीर कहते है । यह नाम मक्का मुअज्मा तथा मदीना मुनवरा के मध्य एक तालाब के नाम पर आधारित है । शिया लोगों का विश्वास है कि उक्त सरोवर पर आकर पैगम्बर साहब ने कहा था–जिस किसी का भी मैं पूज्य हूँ, उसका पूज्य अली भी है । गदीर शब्द अरबी है । उसका अर्थ होता है वह जल जो नदी में बाढ आने के समय नदी से निकल कर कही जमा हो जाता है । इस पानी के एकत्र होनेवाले को गदीर कहते हैं ।

( २ ) नैमित्तिक विधि : नमाज ।

पाद-टिप्पणी :

२८९. ताण्डव शिव का प्रसिद्ध नृत्य है । पुरुषो के उद्धत या उग्र नृत्य की सज्ञा ताण्डव से दी गयी है । उस नृत्य का सम्बन्ध भैरव तथा वीरभद्र से है । शिव का यह नृत्य श्मशान में देवो तथा भूत-पिशाचों के साथ उद्धत रूप से होता है । ताण्डव नृत्य आकार की अष्ट किंवा दशभुज शिव की मूर्तियाँ एलोरा, एलिफेण्टा, भुवनेश्वर आदि में शिला पर उत्कीर्ण है । दक्षिण भारत में वह नृत्य तथा शिव की ढली कास्य प्रतिमा अत्यन्त लोकप्रिय है । उसे नटराज कहते है । कुछ लोग नन्दी को इसका प्रवर्तक मानते हैं । एक मत है कि ताण्डव नामक ऋषि ने सर्वप्रथम इसकी शिक्षा दिया था ( द्रष्टव्य १ ४ १० ) ।

( २ ) खाण्डव : कुरुक्षेत्र का एक प्राचीन वन है । महाभारत तथा तैत्तरीय आरण्यक में इसका उल्लेख मिलता है । यह वन इन्द्र द्वारा रक्षित था । अर्जुन एवं कृष्ण की सहायता से अर्जुन के बाण से अग्नि ने प्रकट होकर वन का दाह किया था । इन्द्रप्रस्थ नगर इसी भूमि पर बसाया गया था । वन दाह के समय तक्षक नाग की पत्नी का अर्जुन ने वध किया था ( आदि० २२३-२२५ ) । यह आदिपर्व का एक अवान्तर खाण्डवदाहपर्व है (आदि० : २२१-२२६) ।

पाद-टिप्पणी

२९० 'याता' पाठ–बम्बई ।

पुरपत्तनघोषेषु तदुपप्लववायुना ।
सहस्रसंख्या वेश्मौघास्तद्दिने उज्ज्वलुर्न के ॥ २९१ ॥

२९१. पुर, पत्तन[1] एवं घोषों[2] में उस विप्लव वायु से, उस दिन सहस्त्र संख्यक कौन से गृह पुंज नहीं जल गये ।

उत्पातवातजातोर्मिमहापद्मसरोन्तरे ।
शतसङ्ख्या दिने तस्मिन् किराताः प्रलयं ययुः ॥ २९२ ॥

२९२. उत्पात वात से उत्पन्न तरंगों के कारण महापद्म सरोवर में उस दिन शत संख्यक किरात[1] नष्ट हो गये ।

वर्णाचारविपर्यासः स मासः कुजवत्सरः ।
पुरश्रीविहितोद्वासे निवासक्षयकार्यभूत् ॥ २९३ ॥

२९३. मंगल वर्ष[1] का वह मास वर्णाचार[2] का विपर्यास एवं पुरश्री के निर्वासन हो जाने पर, निवासक्षयकारी हुआ ।

अथवा पूर्वकर्तॄणां जाते पुण्यक्षये सति ।
नवीनकर्तृनिर्माणकीर्त्यर्थं कुरुते विधिः ॥ २९४ ॥

२९४. अथवा पूर्व कर्ताओं के पुण्यक्षय हो जाने पर नवीन कर्ताओं के निर्माण कीर्ति हेतु विधि ( इस प्रकार ) करता है ।

---

पाद-टिप्पणी :

२९१. ( १ ) पुर-पत्तन : श्रीदत्त ने सुरपत्तन पाठ मानकर अनुवाद किया है। परन्तु पुर-पत्तन ही ठीक है ( पृष्ठ : २३७ )। पुर एवं पत्तन में अन्तर है। पुराकाल में पत्तन का अर्थ नगर होता था। कालान्तर में नगरों के नाम के साथ पत्तन जोड़े जाने लगे—झालरापाटन, नग्गीपत्तन, विजगापत्तन, मछलीपत्तन। आधुनिक समय में पत्तनों के समान नगरों का नाम तातानगर, सरदारनगर आदि जोड़ा जाने लगा है। पुर-पत्तन से बड़ी इकाई होती है। पुर आधुनिक सिटी तथा पत्तन टाउन के समान थे।

( २ ) घोष : आभीर पल्ली = ग्वालों की बस्ती अथवा पशुपालकों की आबादी से तात्पर्य है।

पाद-टिप्पणी :

२९२. ( १ ) किरात = कैवर्त । द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : ५ : ५८।

पाद-टिप्पणी :

२९३. ( १ ) मंगल वर्ष : मंगल एक क्षितिज से दूसरे क्षितिज में आ जाता है तो उसे मंगल वर्ष कहते हैं। मंगल का एक वर्ष ३६० दिनों का होता है।

( २ ) वर्णाचार : ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र वर्णों का शास्त्र-विहित तथा लौकिक आचार।

निर्मिता तादृशी राज्ञा सा महासदनस्थितिः ।
पुण्यश्रीरिव या स्फीता विभाति नगरान्तरे ॥ २९५ ॥

२९५. राजा ने उस महासदन की स्थिति निर्मित की थी, जो नगर मे स्फीत पुण्यश्री सदृश शोभित हो रही थी ।

अचिरात् सा पुरी दग्धा नवीकृतगृहा बभौ ।
भूपं तरुणमेवेक्ष्य विहिता तरुणी प्रिया ॥ २९६ ॥

२९६ शीघ्र ही दग्ध उस पुर के गृह नवीन कर दिये गये और वह तरुण राजा को देखकर, प्रिय तरुणी सदृश शोभित हो रही थी ।

भूपालदुर्व्यसनजाः प्रभवन्ति दोषा
नाशाय यद्यपि हिमाध्वनि मण्डलेऽस्मिन् ।
अन्योन्यमन्त्रिवरवैरसमुत्थदोषो
राज्यं समस्तमपि नाशयति क्षणेन ॥ २९७ ॥

२९७ हिममार्ग इस मण्डल मे यद्यपि भूपालो के दुर्व्यसन से उत्पन्न दोष नाश करने मे समर्थ होते हैं, किन्तु परस्पर मन्त्रियो के वैर से समुत्थित दोष क्षणमात्र मे समस्त राज्य को नष्ट कर देते हैं ।

शक्तिस्फीतं समुदयलसत्सप्तधात्वङ्गभङ्ग
धत्ते नित्यं यदपि सुभगं सर्वकार्यक्षमत्वम् ।
दोषा वातादय इव महामन्त्रिणोऽन्योन्यदुष्टा
यत्रैते स्युर्गलति न चिराद् देहवत् तत्र राज्यम् ॥ २९८ ॥

२९८ समुदय से शोभित सप्त धातु[1] या अग[2] से युक्त शक्ति समृद्धि, सुभग ( राज्य या शरीर ) यद्यपि सर्वकार्य मे सक्षम रहता है, किन्तु जहाँ पर वातादि दोष सदृश परस्पर द्वेषी महामन्त्री होते हैं, वहाँ राजदेह के समान शीघ्र ही गल जाते हैं ।

अत्रस्थैः सर्वदा रक्ष्यः स्वभेदः प्रभविष्णुभिः ।
चार्वाकाणामिवैषां हि भय न परलोकतः ॥ २९९ ॥

२९९ यहाँ के नृपति सर्वदा अपना भेद रक्षित रखें, क्योकि चार्वाको[1] के समान इन लोगो को परलोक से भय नही होता ।

---

पाद-टिप्पणी

२९८. ( १ ) सप्त धातु सात धातुओं से शरीर रचना हुई है—(१) पित्त, (२) रक्त, (३) मास, (४) वसा, (५) अस्थि, (६) मज्जा, (७) शुक्र ।

( २ ) सप्त अग . राज्य के सप्त अग—(१) स्वामी, (२) अमात्य, (३) राष्ट्र या जनपद, (४) दुर्ग, (५) कोश, (६) दण्ड ( सेना ) तथा (७) मित्र ( द्र० . १ : ७ . ११०, ४ · १४ ) ।

पाद-टिप्पणी :

२९९ ( १ ) चार्वाक · नास्तिक जडवाद के प्रतिनिधिक आचाय है । बृहस्पति के शिष्य थे ।

**ललितादित्यदेवोक्तामिति नीतिं लिलङ्घ्य ये ।**
**मिथो वैरं प्रकुर्वन्ति ते नश्यन्तीह मन्त्रिणः ॥ ३०० ॥**

३००. ललितादित्य देव की कहीं, इस नीति[1] का उल्लंघन कर, परस्पर बैर करते हैं, वे मन्त्री यहाँ नष्ट हो जाते हैं।

**मलाएसाकदर्यावखानादीनां विरोधतः ।**
**स्वभेदजर्जरं राज्यं दृष्टं श्रीजैनभूपतेः ॥ ३०१ ॥**

३०१. मुल्ला ईसाक[1], दर्याव[2] खान आदि ने विरोध के कारण स्वभेद से जर्जर हुए, राज्य को जैनभूपति के राज्य समान देखा।

**तदाप्रभृति तेनैव दृष्टे नाशेऽत्र मण्डले ।**
**मन्त्रिणो नैव कस्यापि मत्सरो विरमत्ययम् ॥ ३०२ ॥**

३०२. उसके द्वारा इस मण्डल के नाश देखे जाने पर, तभी से किसी का यह मत्सर समाप्त नहीं हुआ।

**अहो द्वेषपिशाचोऽयं रूढो राजसभाशये ।**
**केनापि मन्त्रिणा नैव जीयते सर्वनाशकः ॥ ३०३ ॥**

३०३. आश्चर्य है सर्वनाशक यह द्वेष पिशाच, राजसभा में उत्पन्न हुआ और कोई मन्त्री ( उसे ) जीत ( दवा ) नहीं सका।

---

वृहस्पति सूत्र जड़वाद का ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ केवल प्रत्यक्ष प्रमाण तथा ऐहिक सुख को ही परम श्रेय मानता हैं। चार्वाक के अनुसार केवल भौतिक जगत ही सत्य है। पंचमहाभूत में पृथ्वी, जल, अग्नि तथा वायु को ही सत्य मानते हैं। आकाश तत्त्व को नहीं मानते। उनका मत है कि केवल चार तत्त्वों से समस्त पदार्थो की उत्पत्ति होती है। आत्मा का अस्तित्व अलग नहीं हैं। चार भूतों के मिलने के कारण चैतन्य उत्पन्न होता है। मृत्यु पश्चात जीव नाम की कोई वस्तु शेष नहीं रह जाती। स्वर्ग-नरकादि केवल कवियों की कपोल कल्पनायें हैं। राजा ही परमेश्वर है। कर्मकाण्डादि पुरोहितों के जीविका के साधन हैं। भस्मीभूत देह का पुनरागमन नहीं होता।



पाद-टिप्पणी :

३००. ( १ ) नीति : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी रा० : ४ : ३४२–३५९। ललितादित्य के इच्छा-पत्र या वसीयतनामा की ओर संकेत किया गया है।

पाद-टिप्पणी :

३०१. ( १ ) ईसाक : इशहाक या इस्तहाक अरबी नाम का अपभ्रंश है। इस्तियाक का भी अपभ्रंश हो सकता है। सम्भावना इशहाक की ही अधिक है।

( २ ) दर्याव : फारसी शब्द दरयाव का अपभ्रंश है। दरियाव अर्थात् नदी के लिये दर्या शब्द प्रचलित है। इसका उल्लेख १ : ७ : ५२ श्लोक में आया है।

रोगो हतप्रयोगो व्यालो वा धृतमहाविषज्वालः ।
नाग्निस्तादृग् भयकृत् प्रकृतिविरोधो यथा देशे ॥ ३०४ ॥

३०४ असाध्य रोग, महाविष, ज्वाला युक्त सर्प अथवा अग्नि, इतना भयकारी नही होता, जितना कि इस देश मे मन्त्रियो का द्वेष भयकारी हुआ है।

अत्रान्तरेऽह्मदायुक्तो युक्तोऽपि नयसम्पदा ।
अधीर इव नाशाय नेयबुद्धित्वमग्रहीत् ॥ ३०५ ॥

३०५ इसी बीच नीति सम्पत्ति से युक्त अहमद आयुक्त भी अधीर सदृश विनाश के लिये नेय[1] बुद्धित्व अंगीकार कर लिया।

एकदा पितरं पुत्रा विजने नौरुजादयः ।
इत्यूचुर्दूषणां ताजिभट्टीयां विभवासहाः ॥ ३०६ ॥

३०६ एक समय विभव को न सह सकनेवाले, नौरुजादि पुत्र अपने पिता से एकान्त मे ताजभट्ट के दोषो को इस प्रकार कहे—

निग्रहानुग्रहैकाग्रः समग्रे मन्त्रिमण्डले ।
उग्रो भट्टः प्रजायासैर्देशनाशाय वर्धितः ॥ ३०७ ॥

३०७ 'समग्र मन्त्रिमण्डल मे निग्रहानुग्रह, एकाधिकारी, उग्र वह भट्ट प्रजा पीडन द्वारा देश नाश के लिये वर्धित हो रहा है—

तत्रापि दुग्धपितृता राजसूनोर्नृपास्पदे ।
अग्रे ययौ समायोगः सोऽयं दाहाय दुःसह ॥ ३०८ ॥

३०८ नृपास्पद मे राजपुत्र के पालन-पोषण का भी अधिकार, उसे ( दुग्धपिता—ताजभट्ट ) प्राप्त है, यह दु सह योग महान् दाहप्रद है।

राज्ञीराजावदश्चास्मै सेनानीरयमेव हि ।
प्रबलं बाधते ह्यस्मान् यदि नाय प्रणाश्यते ॥ ३०९ ॥

'३०९ राजा एव रानी के अनुकूल है, यही सेनापति भी है। यदि यह नष्ट नही किया जाता, तो हमलोगो को बहुत कष्ट देगा।'

---

पाद टिप्पणी

३०५ ( १ ) नेय जो व्यक्ति अपने बुद्धि मे काम करना त्याग देता है तथा दूसरो के संकेत पर यन्त्रवत कार्य करता है, उसको सज्ञामूढ किंवा नेय बुद्धि से दी जाती है। यहाँ नेय शब्द का प्रयोग बुद्धि के विशेषण रूप में किया गया है। जिसका अर्थ चपल बुद्धित्व अर्थात् सहज इधर-उधर होनेवाली बुद्धि है।

यथा—"मूढ परप्रत्ययनेयबुद्धि"

पाद-टिप्पणी

३०८ 'दु' पाठ—बम्बई।

इत्याकर्ण्य सुतैरुक्तंवैगुण्यादवलोक्य च ।
पुत्रीकृतेऽपि मल्लेकस्ताजिभट्टे व्यरज्यत ॥ ३१० ॥

३१०. इस प्रकार पुत्रों की बात सुन और उसे दोषभाव से देखकर, पुत्र रूप में स्वीकृत[1] भी ताजभट्ट से मल्लेक ( अहमद ) विरक्त[2] हो गया ।

राज्याङ्गानि समस्तानि योऽरक्षत् समया दृशा ।
प्राक्पुण्य संक्षयात् सोऽपि शनैरासीत् स्खलन्मतिः ॥ ३११ ॥

३११. जिसने समदृष्टि से समस्त राज्यांगों[1] की रक्षा की थी, पूर्व पुण्यभाव के नष्ट हो जाने पर, क्रमशः उसकी बुद्धि स्खलित हो गयी ।

स्वार्थं परित्यज्य विभोर्हितं ये
कुर्वन्ति तत्कार्यकृतावधानाः ।
विनाशकाले समुपस्थिते ते
भवन्त्यकस्माद् विपरीतचेष्टाः ॥ ३१२ ॥

३१२. जो लोग स्वार्थ त्याग कर, स्वामी का हित करते हैं और उसके कार्य के लिये सावधान रहते हैं, विनाश काल उपस्थित होने पर, वे लोग अकस्मात् विपरीत चेष्टा करने लगते हैं ।

इति चिन्ताकुलस्तांस्तानुपायान् मल्लिकोऽकरोत् ।
अथैकदाब्रवीद्राज्ञः सभायां मल्लिकः क्रुधा ॥ ३१३ ॥

३१३. इस चिन्ता से व्याकुल मल्लिक तत्-तत् उपायों को करने लगा । एक समय राजा की सभा में मल्लिक ने क्रोध से कहा—

---

पाद-टिप्पणी

३१०. (१) पुत्रीकृत : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन : ३ : १६२ ।

(२) विरक्त = उदासीन : पीर हसन लिखता है—इसी असना में मलिक अहमद एतु और ताजी-भट्ट के दरम्यान शकरंजी वाका हो गयी जिससे एक दूसरे की मुखालिफत पर कमरबस्ता हो गये । बदई सबब अराकीन सल्तनत के मा बैन भी निफा और झगड़ा पड़ गया (१९०) ।

पाद-टिप्पणी :

३११. ( १ ) राज्यांग : (१) स्वामी (२) अमात्य. (३) जनपद या राष्ट्र, (४) दुर्ग, (५) कोश, (६) दण्ड या सेना तथा (७) मित्र ।

पाद-टिप्पणी :

३१३. 'प्रभविष्णु रयं राज्ञो दूरीकार्यः कया-धिया'—'प्रभावशाली इसे राजा से किस बुद्धि से दूर किया जाय ।'

उक्त श्लोक की उक्त प्रथम पंक्ति कलकत्ता संस्करण में नहीं है । परन्तु बम्बई संस्करण में उक्त श्लोक यथावत् है । श्री कण्ठ कौल का मत बम्बई संस्करण से मिलता है । अनेक पाण्डुलिपियों में नहीं है । कुछ में है । अतएव विषय को विवादास्पद बनाने के लिये इसे पाद टिप्पणी में रखकर अनुवाद कर दिया गया है ।

**राज्येनाप्तेन किं राजन्नाक्रान्ता बाह्यभूः परैः ।**
**चिन्ता कस्यापि नैवास्ति यावत्सर्वं प्रणश्यति ॥ ३१४ ॥**

३१४. 'हे राजन् ! राज्य प्राप्त करने से क्या लाभ है, जब कि शत्रुओ ने बाहर की भूमि को आक्रान्त कर लिया है। किसी को चिन्ता नही है, जब तक सब नष्ट हो रहा है—

**वरं स्वयमहं यामि तदाज्ञा दीयतां विभो ।**
**इति श्रुत्वाब्रवीत् ताजिभट्टस्त साहसोत्सुकः ॥ ३१५ ॥**

३१५ 'इसलिये हे प्रभो ! अच्छा है कि मै स्वय जाऊँ' अत आज्ञा दे।' यह सुनकर साहसोत्सुक ताजभट्ट ने उससे कहा—

**यात्रायै दीयतांराज्ञा सेनानीर्मत्परोऽधिकः ।**
**तच्छ्रुत्वा सर्वसामग्रीं दत्त्वा मल्लिकचोदितः ॥ ३१६ ॥**

३१६ 'राजा यात्रा ( युद्ध ) के लिये आज्ञा दे। इस समय मेरे अतिरिक्त और कौन श्रेष्ठ सेनानी है' यह सुनकर मल्लिक प्रेरित राजा ने सर्वसामग्री देकर—

**राजा त कटकोपेतं बाह्यदेश व्यसर्जयत् ।**
**भीत्या प्रीत्या च नीत्या च जग्मुस्तमनु सेवकाः ॥ ३१७ ॥**

३१७ सेना सहित उसे बाहर भेज दिया। भीति-प्रीति-नीति के कारण सेवक उसके पीछे—

**मधुपा इव गर्जन्तो यातु मधुकरेश्वरम् ।**
**राजप्रक्रियया रम्यं दृष्ट्वा त व्ययशालिनम् ॥ ३१८ ॥**

३१८ उसी प्रकार गरजते हुए चले, जिस प्रकार गूंजते मधुप, मधुकरेश्वर ( नायक ) के पीछे चलते हैं। राजप्रक्रिया से सुन्दर उसे व्ययशाली देखकर—

**नृपा राजपुरीयाद्या बभूवुर्विस्मिताशयाः ।**
**अन्येऽप्यज्यभदेवाद्याः समस्ताः मद्रमण्डले ॥ ३१९ ॥**

३१९ राजपुरी[1] आदि के नृप विस्मित हो गये। मद्रमण्डल मे दूसरे अज्यभ[2] ( अजय ) देव आदि समस्त लोग—

---

पाद-टिप्पणी

३१५, 'स्वय' पाठ–बम्बई।

पाद-टिप्पणी .

३१७ (१) सेना : पीर हसन लिखता है—ताजीभट्ट ने एक बडे भारी लश्कर के साथ बागियों के सरकोबी की गरज से चढायी किया (१९०)।

पाद-टिप्पणी

३१८ (१) भीति आशका, भय, त्रास।

पाद-टिप्पणी :

३१९ (१) राजपुरी राजौरी। तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—मलिक अहमद वजीर होने पर मलिक यारीभट्ट, जो उसका प्रिय था, एक

**तत्तारखानमुत्सृज्य तुष्टास्तमुपतस्थिरे ।**
**तदुपोद्वलिता मद्राः क्षुद्रा विद्रावितारयः ॥ ३२० ॥**

३२०. सन्तुष्ट होकर, तातार खां[1] को छोड़कर उसके पास आ गये। उनका समर्थन पाकर क्षुद्रमद्रों ने शत्रुओं को पलायित कर दिया—

**देशं तत्तारखानीयं सोपद्रवमचीकरन् ।**
**दहन् शृगालकोटादौ मस्जेदां खाननिर्मिताम् ॥ ३२१ ॥**

३२१. और तातार[1] खान के देश को उपद्रव युक्त कर दिया। शृगालकोट[2] आदि में खान निर्मित मसजिद को जलाते हुए—

---

बड़ी सेना के साथ दिल्ली की दिशा की ओर राजौरी होते हुए भेजा ( ४४९ = ६७९-६८० ) ।

( २ ) अज्यभदेव = अजयदेव : तवक्काते अकवरी में नाम अजवदेव दिया गया है। उसमें उल्लेख है—'जम्मू के राजा अजयदेव ने वहाँ पहुँचकर यारी (ताजभट्ट) से भेंट किया' ( ४४९ ) ।

पीर हसन लिखता है—'अजवदेव राजा जम्मू ने भी पंजाव पर हमला करने के लिये ताजीभट्ट की इमदाद के लिये अपनी फौजें के साथ कर दीं ( १९० ) ।

डोगरी निवन्धावली में जम्मू के एक राजा अजवदेव का नाम लिखा गया हैं। हमीरदेव के दो पुत्र अजवदेव तथा हासलदेव थे। हासलदेव की सन्तानें सलाथिये राजपूत कहलाये। अजवदेव का राज्यकाल ३१ वर्ष दिया गया है।

फरिश्ता का अभिप्राय मालूम होता है कि मलिक यारीभट्ट ने राजा जम्मू की सेना को सहायता दिया जो पंजाव पर आक्रमण कर रही थी। उसने क्षेत्र को लूट कर स्यालकोट नगर को नष्ट किया। कर्नल व्रिग्गस ( ४ : ४७८ ) लिखते हैं—आक्रमण राजा जम्मू की प्रेरणा पर हुआ था। राजा का नाम अजीतदेव था। वह मित्र सेना का सेनापति था। वह तातार खां से पराजित हो गया था। जम्मू में घुस आया था, स्यालकोट के नगर को नष्ट किया था। वह काश्मीर सेना के सेनापति का नाम मलिक ताजभट्ट देता है। रोजर्स ने नाम यारीभट्ट दिया हैं। उसका मत है कि राजा जम्मू की सहायता के लिये तातार खां के विरुद्ध भेजा गया था, जो काश्मीर की सीमा पर उपद्रव कर रहा था। उन्होंने पंजाव के कुछ भागों को लूटपाट कर स्यालकोट के नगर को नष्ट किया था। कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया ( २८५ ) में लिखा गया है कि हसनशाह ने यारीभट्ट के नेतृत्व में एक सेना राजा जम्मू से सहयोग के लिये भेजा था कि पंजाव के उत्तरीय क्षेत्रों में लूटपाट करें, जहाँ कि तातार खां लोदी, जो कि सैनिक कौलीन्य का प्रतीक था, और जिसका अध्यक्ष दिल्ली का वहलोल लोदी था। स्यालकोट का नगर लूटा गया और मलिक यारीभट्ट ने लूट का सामान लेकर स्वयं अपना एक दल वना लिया।

पाद-टिप्पणी :

'तद्' पाठ—बम्बई ।

३२०. ( १ ) तातार खां : तवक्काते अकवरी में उल्लेख है—मलिक यारी ( ताजभट्ट ) वहुत वड़ी सेना लेकर, उसकी सहायतार्थ पहुँचा और तातार खां से जो देहली के वादशाह की ओर से पर्वत के अंचल तथा पंजाव की विलायत का हाकिम था, युद्ध किया और उसकी समस्त विलायत को नष्ट भ्रष्ट कर दिया ( ४४९-६८० ) । किन्तु श्रीवर तातार खां से युद्ध का उल्लेख नहीं करता।

पाद-टिप्पणी :

३२१. ( १ ) तातार खां : पीर हसन लिखता है—वादशाह देहली की तरफ से पंजाव का हाकिम

सामान्यकुलजोऽप्येष निःसारोऽनुमितो जनैः ।
अचिन्त्यकृतकार्यासीत् स्वामिस्नेहप्रभावतः ॥ ३२२ ॥

३२२ सामान्य कुलोत्पन्न इसको लोगो ने निस्सार ( क्षुद्र ) माना। यह स्वामी के स्नेह प्रभाव के कारण अविचारित कार्य करनेवाला था।

पुरपत्तनघोषादीननयत् स्मृतिशेषताम् ।
प्रतापस्तस्य तत्कालं तीक्ष्णांशोरिव दुःसहः ॥ ३२३ ॥

३२३ पुर, पत्तन, घोष[1] आदि को स्मृतिशेष कर दिया। उस समय सूर्य के समान उसका प्रताप दु सह हो गया था।

तत्तड्ढिल्यादिदेशस्थराजलोकभयं व्यधात् ।
करदीकृत्य सामन्तांस्तत्तत्साहसनिष्ठुरः ॥ ३२४ ॥

३२४ दिल्ली[1] आदि देश मे स्थित राजसमूह को भय प्रदान किया। तत्-तत् साहसपूर्ण कार्यों को करने के कारण निष्ठुर उससे सामन्तो को कर-प्रद बनाकर--

---

तातार खा ताजीभट्ट से मुकाबिला के लिये सियालकोट के हुदूद में पहुँच गया। फरीकैन में निहायत खूरेजी जग हुई। उसमें तातार खाँ को शिकस्त हुई। ताजीभट्ट ने उसके मुल्क को बरबाद कर डाला और साथ ही शहर स्यालकोट भी खराब कर दिया ( १९० )।

( २ ) स्यालकोट सियाल कोट सागल = शाकल इस समय यह पश्चिमी पाकिस्तान में है। प्राचीन नाम साकल है। (मिनान्दर) राजा मिलिन्द की शीतकालीन राजधानी थी। शाकल मद्र देश की राजधानी थी। राजा मिहिर कुल की भी राजधानी थी। मद्रराज शल्य का दुर्ग था। पूर्वकाल मे अशोक द्वारा निर्मित २०० फिट ऊँचा यहाँ स्तम्भ था।

तबक्काते अकबरी में उल्लेख है ताजीभट्ट ने—'स्यालकोट नगर को नष्ट कर दिया ( ४४९ = ६८० )।'

बहारिस्तान शाही, तारीख हैदर मल्लिक में उल्लेख मिलता है कि ताजभट्ट ने स्योलकोट, जो बहलोल लोदी के अन्तर्गत था लूटा। ( बहारिस्तान शाही पाण्डु० ५९ ए० तथा पाण्डु० ' हैदर मल्लिक १२३ बी० तथा १२४ ए० )।

पाद-टिप्पणी .

३२३ ( १ ) घोष ' ग्वालो की बस्ती। प्रचलित नाम एव जाति घोषी, पूर्वकालीन यादव, पशुपालक या अहीर है।

पाद-टिप्पणी

३२४ ( १ ) दिल्ली जब बहलोल लोदी पजाब का गवर्नर था, तातार खा ने सुना तो एक बडी सेना लेकर, काश्मीर पर आक्रमण करने के लिये चला। उसने कुछ गाँवों पर पर्वतमूल में अधिकार कर लिया। किन्तु मार्ग की दुर्गमता के कारण अग्रसर न हो सका ( बहारिस्तान शाही पाण्डु० ५९ ए० बी, हसन० पाण्डु० १२३ ए०, हैदर मल्लिक पाण्डु० १२३ बी० १३४ ए० )।

स्वदेशं प्रत्यगात्तूर्णं पूर्णस्तुरगसम्पदा ।
स्वामिकार्यवशान्मन्त्री पुत्रं पश्यति शत्रुवत् ॥ ३२५ ॥

३२५. तुरग सम्पत्ति से पूर्ण होकर, शीघ्र ही अपने देश लौट गया। स्वामी के कार्य के कारण पुत्र को भी शत्रु समझता है––

शत्रुमप्यतिवैरार्हं पुत्रवत् परिरक्षति ।
इत्यादिनीतिमुल्लङ्घ्य मल्लिको दैवमोहितः ॥ ३२६ ॥

३२६. और अति वैर के योग्य शत्रु का भी पुत्र के समान रक्षा करता है। इन सब नीतियों का उलंघन कर दैव-मोहित मल्लिक––

तदुत्कर्षासहस्तस्य दर्पनाशोद्यतोऽभवत् ।
सबलो बाधते सर्वान् वाल्लभ्यादिति शङ्कितः ॥ ३२७ ॥

३२७. जो कि उसका उत्कर्ष नहीं सह सकता था, उसका दर्प नाश[1] करने के लिये उद्यत हो गया। राजप्रिय होने के कारण सबल यह सबको दुःख देगा, इस प्रकार शंकित होकर––

मल्लिकस्तं प्रति क्रुद्धो भूपं द्वेषमजिग्रहत् ।
अत्रान्तरे सुतो राज्ञः कनीयान् होस्सनाभिधः ॥ ३२८ ॥

३२८. क्रुध मल्लिक ने उसके प्रति राजा को द्रोहयुक्त कर दिया। इसी बीच राजा का कनिष्ठ पुत्र होस्सन[2]––

पयोदानाय मल्लेकनौरुजाय समर्पितः ।
तेन श्रुतेन तद्भूपविधेयत्वविसूत्रितः ॥ ३२९ ॥

३२९. पालन-पोषण हेतु मल्लिक नौरुज को समर्पित कर दिया गया। यह सुनकर उसकी राज विधेयता विसूत्रित हो गयी।

आगच्छन् कटके भट्टो ययौ मन्दप्रतापताम् ।
तस्य सेनागतस्याथ नेयबुद्धिर्नृपेश्वरः ॥ ३३० ॥

३३०. सेना में आते हुए भट्ट का ताप प्रताप मन्द हो गया था। चंचल बुद्धि राजा ने सेना में आये उसका––

---

पाद-टिप्पणी :

३२७. ( १ ) नाश : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है––कुछ शत्रुता मलिक यारीभट्ट तथा मलिक अहमद में उत्पन्न हो गयी। वे एक दूसरे का नाश करने पर तुल गये थे ( ४५०–६८० )। रोजर्स तथा कैम्ब्रिज हिस्ट्री दोनों में उल्लेख किया है कि दोनों दलों में निरन्तर संघर्ष होता रहता था।

पाद-टिप्पणी :

३२८. ( १ ) होस्सन : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है––'उसने ( सुल्तान ) ने अपने दूसरे पुत्र का नाम हुसेन रखकर, मलिक नूर विन मलिक अहमद को दे दिया। ताकि वह उसका पालन-पोषण करे ( ४५०–६८० )।

सत्कारं चोदितं तस्मै नाकरोद् विरसीकृतः ।
अथ तस्यापकारार्थं मल्लिकः स्वयमक्षमः ।। ३३१ ।।

३३० उत्तम सत्कार नही किया । क्योकि वह उसके प्रति विरक्त कर दिया गया था और मल्लिक उसका कार्य करने मे असमर्थ था ।

दध्रे गतानां सैदानां पुनरागमने मतिम् ।
यदोया तनया राजंस्तव पुत्रवती प्रिया ।। ३३२ ।।

३३२ उसने गये हुए सैदो ( सैय्यिदो ) के पुन आगमन के प्रति विचारशील हो गया—'हे राजन् ! जिसकी पुत्रवती पुत्री आपकी प्रिया है—

रक्ष्यः श्वशुरपक्षः स कथ नानीयते त्वया ।
इत्यादि प्रेरणाद्राज्ञो राजाराधनतत्परः ।
सोपधीन् व्यसृजल्लेखान् सैदाण्ढिल्लीशमण्डले ।। ३३३ ।।

३३३ 'उस रक्षणीय श्वसुर पक्ष को क्यो नही ला रहे हो ?' इस प्रकार की प्रेरणा देकर, राजसेवा मे तत्पर उसने प्रवचनापूर्ण लख दिल्लीश[1] मण्डल मे सैय्यिदो[2] के पास भेजा ।

तस्यैवेति प्रभवति जनो दुर्नयैर्दूषणाद्यै-
रेतद्बुद्ध्या नयति न वयः स्वं कथ गाढमूढः ।
सर्वां पृथ्वीं जयति न कथं तन्त्रमन्त्रोर्जितोऽसा-
वित्याशङ्क्यो भवति पुरुषो भाग्यभाग् यावदास्ते ।। ३३४ ।।

३३४ जब तक पुरुष का भाग्य प्रबल रहता है, तब तक उसी के लोग दुर्नीति-दूषण आदि के कारण ही, प्रभावशाली होते हैं, इस बुद्धि से वह मूढ, अपनी आयु व्यतीत क्यो नही करता और तन्त्र-मन्त्र से प्रवृद्ध होकर, वह समस्त पृथ्वी को क्यो नही जीत लेता, इस प्रकार वह शकनीय होता है ।

अपकृत्य पुनः सैदान् यदानयति मल्लिकः ।
तेन स्यात् सर्वनाशोऽस्येत्यवदत् तीक्ष्णधीर्जनः ।। ३३५ ।।

३३५ 'मल्लिक सैय्यिदो का अपकार करके, पुन जो बुला रहा है, इससे इसका सर्वनाश सम्भव है'—यह तीक्ष्ण[1] जनो ने कहा ।

---

पाद-टिप्पणी

'ढि' पाठ—बम्बई ।

३३३ ( १ ) दिल्लीश बहलोल लोदी (सन् १४५१–१४८९ ई० ) दिल्ली का सुल्तान था । इस उल्लेख से पता चलता है कि सैय्यिद लोग दिल्ली में निवास करते थे ।

( २ ) सैय्यिद तवक्कात अकबरी में उल्लेख है—सुल्तान ने सैय्यिद नासिर, जो कि सुल्तान जैनुल आबदीन का विश्वासपात्र था । दरबार में अपने ऊपर प्राथमिकता देता था । उसे सुल्तान हसन के आदेशानुसार काश्मीर से निर्वासित कर दिया गया था और वह किसी स्थान को चला गया था, उसे बुलवाया गया ( ४५० = ६८१ ) ।

पाद-टिप्पणी

३३५ (१) तीक्ष्ण श्रीदत्त ने अनुवाद विच-

सैदानयनवृत्तान्तं बुद्‌ध्वा श्रीफिर्यडामरः ।
गृहं गत्वाऽह्मदायुक्तं युक्तमित्यब्रवीद् वचः ॥ ३३६ ॥

३३६. सैय्यिदों के आगमन का वृत्तान्त जानकर, फिर्य डामर घर जाकर, अहमद आयुक्त से यह उचित ही कहा—

ताजिभट्टो विधेयोऽयं भृत्यवद् वर्तते त्वयि ।
तदेतं रक्ष युक्त्यास्य विधाय मदशातनम् ॥ ३३७ ॥

३३७. 'अनुवर्ती यह ताजभट्ट आपके प्रति स्वयं भृत्यवद् व्यवहार करता है, अतएव युक्ति से इसका मद दूर कर, इसकी रक्षा करो ।

मा प्रवेशय सैदांस्त्वं दुर्धरान् देशकण्टकान् ।
तुरुष्कपुष्कलाश्वासान् यत्नान्निष्कासितानपि ॥ ३३८ ॥

३३८. 'तुम दुर्धर (प्रबल) देश के कण्टक, तुरुष्कों के लिये पुष्कल[1] (अत्यधिक) आश्वास[2] (सहायक) एवं यत्नपूर्वक निष्कासित भी इन सैय्यिदों को मत प्रवेश कराओ ।

एकनाशार्थमिच्छा चेत् सर्वनाशस्तदागते ।
पोतैकहेतोश्चैत्यस्य ज्वलनं किं समर्प्यते ॥ ३३९ ॥

३३९. 'यदि एक के नाश की इच्छा है, तो उनके आने से सर्वनाश ही होगा, एक पोत (पक्षि-शावक) के लिये चेत्[1] (गूलर = औदुम्बर = अंजीर) में क्या आग लगायी जाती है ?

---

क्षण जन' (सगेसियस) किया है परन्तु कल्हण एवं जोनराज ने तीक्ष्णों का अर्थ वध कर्म करनेवाले अथवा हत्यारों से लगाया है । यहाँ अर्थ तीक्ष्णमति या दूरदर्शी होगा क्योंकि तीक्ष्ण शब्द का यहाँ विशेषण है ( जोन० : श्लोक ३०५, ५१७ ) । तीक्ष्ण का एक अर्थ निराश व्यक्ति भी होता है । (काणे० : धर्म० : ६३६ ) द्र० : ३ : १७६, ४ : २५ ।

मंख कोश में तीक्ष्ण के संदर्भ में लिखा है—
विषाजिलो ह्यमिसरे तीक्ष्णमस्त्री खरे त्रिषु ।
अलिङ्करे मेह नांशे रत्ने जादिगलस्तने ॥२१५॥

पाद-टिप्पणी :

३३६. 'बुद्‌ध्वा' 'र्य' पाठ—बम्बई ।

पाद-टिप्पणी :

३३८. ( १ ) पुष्कल : श्रीदत्त ने 'पुष्कर' एवं 'आश्वास' को जातिवाचक शब्द मानकर अनुवाद किया है—तुरुष्क सैय्यिदों पुष्कर आश्वासादि को मत बुलाओ वे शक्तिशाली और देश के लिये कण्टक हैं ।'

पुष्कल का अर्थ प्रचुर, अत्यधिक तथा बहुत होता है—भक्षितेनापि भवता नाहारो मम पुष्कल: हि० : १ : ८४; मनु० : ३ : २७७ ।

( २ ) आश्वास : प्रोत्साहन, सन्तोष, भरोसा तथा रक्षा या सुरक्षा का वचन देना होता है—तदिदं द्वितीयं हृदयाश्वासनम्—श० : ७ । नामवाचक शब्द नहीं है ।

पाद-टिप्पणी :

३३९. ( १ ) चेत् : शब्द श्लिष्ट है । अर्थ चैत्य तथा गूलर वृक्ष दोनों होता है । पोत का अर्थ घर तथा पक्षी का बच्चा होता है । एक गृह के लिये क्या समस्त चैत्य ( देवस्थान ) में आग लगायी जाती है । गूलर वृक्ष पर बैठे एक छोटे पक्षी के बच्चे को मारने के लिये क्या पूरे गूलर वृक्ष में आग

नूनं सपुत्रभृत्यस्य नाशो न भविता चिरात् ।
यत् सैदानयने बुद्धिर्जाता भाग्यविपर्ययात् ॥ ३४० ॥

३४०. 'निश्चय ही पुत्र सहित भृत्य का नाश शीघ्र ही होनेवाला है, भाग्य विपर्यय के कारण जो यह सैय्यिदो के लाने की बुद्धि उत्पन्न हुई है—

कृतापकारान् सैदांस्तानानिनीषुर्भवान् यदि ।
विषमुष्टिं क्षिप स्थाल्यां सान्नायां तत् स्वमृत्यवे ॥ ३४१ ॥

३४१ 'यदि आप अपकारी उन सैय्यिदो को लाने की इच्छा करते है, तो अन्नभरी थाली में एक मुट्ठी विष[1] डाल दीजिए, यह अपने ही मृत्यु की कारण होगी।

मद्वचो गृह्यते सत्यं ज्ञम्मन्येन त्वया न तत् ।
विपत्तौ स्मरणीयं स्यान्मयि लोकान्तरं गते ॥ ३४२ ॥

३४२ 'बुद्धिमान तुम मेरी सच्ची वात नही ग्रहण करते, तो मेरे परलोक चले जाने पर, विपत्ति मे स्मरणीय होगी।'

श्रुत्वेति मल्लिकः प्राह किं कुर्वन्ति मयि स्थिते ।
एकदा ज्ञातसामर्थ्याच्चाटुकारा भवन्ति नः ॥ ३४३ ॥

३४३ यह सुनकर मल्लिक ने कहा—'मेरे स्थित रहते (वे) क्या करेंगे ? एक बार सामर्थ्य जान जाने पर, चाटुकार हो जायगे।'

तथेत्युक्त्वा गते तस्मिन् ज्ञम्मन्यत्वादृणादृते ।
सैदानयनसङ्कल्पान्न मनाग विरराम सः ॥ ३४४ ॥

३४४. (इसके) बुद्धिमत्ता के कारण, ऋण रहित होकर, उसके चले जाने पर, वह सैय्यिदो के लाने के सकल्प से थोडा भी विरत नही हुआ।

ज्ञातायतित्वादुपदिष्टमिष्टै-
गृह्णाति वाक्यं न हि नष्टचेष्टः ।
कष्टे निविष्टः स हि वक्ति शोका-
द्धिङ् मामतिष्ठ न हितोपदेशे ॥ ३४५ ॥

३४५. भविष्य जानने के कारण, इष्टजनो का उपदेश वाक्य नष्ट चेष्टा वाला व्यक्ति निश्चय ही ग्रहण नही करता और कष्ट पड़ने पर शोक से कहता है—'मुझे धिक्कार है। मैने उस उपदेश को नही माना।'

---

लगा दिया जाना उचित है ? एक पक्षी बच्चे की रक्षा के लिये गूलर फल स्थित कोटि-कोटि कीटाणुओ को मारना ठीक होगा ?

पाद-टिप्पणी :

३४१. ( १ ) विष : भावार्थ है। सैय्यदो को बुलाने की अपेक्षा थाली के भोजन में विष मिलाकर और खाकर आत्महत्या करने के समान है।

पाद-टिप्पणी :

३४५. 'ह्ना' पाठ—बम्बई।

ततो लेखान् समालोच्य तस्योत्कण्ठितमानसाः ।
हंसा इवाययुः सैदाः कृतपक्षपरिग्रहाः ॥ ३४६ ॥

३४६. तत्पश्चात् उसके लेखों को देखकर, उत्कण्ठित मानस[1] सैय्यिद हंसों के समान अपना पक्ष परिग्रह कर आ गये ।

अथ प्रथममेवेह स मेयाहस्सनोऽग्रणीः ।
अग्र्याप्तनौरुजायुक्तयुक्तो भूपाग्रमाययौ ॥ ३४७ ॥

३४७. यहाँ विश्वस्त नौरुज आयुक्त सहित अग्रणी वह मेय (मिया) हस्सन[1] पहले राजा के सम्मुख आया ।

विहितान्योन्यकं शंसन् मल्लिकोऽस्मै प्रसन्नधीः ।
खोयाश्रमं प्रदेशं तं स्वकीयं स समार्पयत् ॥ ३४८ ॥

३४८. परस्पर प्रशंसा करते हुए, उस मल्लिक ने प्रसन्न होकर, अपना वह खोयाश्रम[1] प्रदेश, उसे समर्पित कर दिया ।

यत् सैदहस्सनेनापि सिद्धादेशाधिकारिता ।
तस्य तेनैव नाशार्थं सिद्धा देशाधिकारिता ॥ ३४९ ॥

३४९. सैय्यिद हसन ने जो सिद्धादेशाधिकारिता[1] प्राप्त की थी, उसके नाश के लिये देशाधिकारिता सिद्ध हुई ।

क्रमात् समागतैः सैदैराक्रान्ते मण्डले वलैः ।
आभ्यन्तराश्च वाह्याश्च काश्मीरास्तत्रसुर्जनाः ॥ ३५० ॥

३५०. क्रम से आये वली सैय्यिदों से मण्डल के आक्रान्त हो जाने पर, आभ्यन्तरीय एवं वाह्य काश्मीरी जन त्रस्त हो गये ।

---

पाद-टिप्पणी :

३४६. ( १ ) मानस : मानस यहाँ श्लिष्ट है । मानस का अर्थ मन तथा मानसरोवर दोनों होता है । मानसरोवर की ओर हंस एक साथ समूह में जाते हैं । इसी प्रकार सैय्यिद लोग भी अपने पक्ष के लोगों के साथ ससमूह काश्मीर में प्रवेश करने लगे ।

पाद-टिप्पणी :

३४७. ( १ ) मेया हस्सन : तवक्काते अकवरी में उल्लेख है—'तदुपरान्त उसने ( सुल्तान ने ) सैय्यिद हसन वल्द सैयिद नासिर को जो हयात खातून का पिता था, देहली से वुलवाया और अधिकारों की वागडोर उसके हाथों में दे दी ( ४५०-६८१ ) ।

पीर हसन लिखता है—सुल्तान ने सैय्यिद हसन वल्द सैय्यिद नासिर को जो हयात खातून का वाप था, देहली से वुलवाया ( १९० ) ।

पाद-टिप्पणी :

३४८. ( १ ) खोयाश्रम : द्र० क० रा० : ८ : २६९८ । खुय्हहोम परगना है । उलर लेक का उत्तरी तटवर्ती अंचल तथा उपत्यका, जो यहाँ से आरम्भ होती है । द्र० : ४ : ६२७ ।

पाद-टिप्पणी :

३४९. ( १ ) सिद्धादेश : द्र० : ४ : २०२ ।

सैदांस्तरङ्गितान् दृष्ट्वा तुरङ्गाद् भूपतेर्मतात् ।
नृप जायाविधेयत्वात् तद्विधेयक्रमागतः ।
सपुत्रः सोऽह्मदायुक्तो बभूवानुशयाकुलः ।। ३५१ ।।

३५१. तुरग से तथा राजा के प्रियपात्रता से सैय्यिदो को तरंगित देखकर, स्त्री के अधीन नृपति और उसके वश मे स्थित पुत्र सहित अहमद आयुक्त पश्चाताप से आकुल हो गया ।

पश्चाद्भवेद्या मनुजेषु बुद्धिः
कार्ये कृते सा प्रथमं यदि स्यात् ।
मित्रार्पितश्रीः परिभूतशत्रु-
र्नको भवेत् संततसौख्यभागी ।। ३५२ ।।

३५२. कार्य सम्पन्न हो जाने के पश्चात्, जो मनुष्यो मे बुद्धि हो जाती है, यदि वह पहले हो, तो मित्र को सम्पत्ति अर्पित कर, शत्रुओ को परिभूत करके, कौन निरन्तर सतत सुख का भोगी नही हो जाता ?

अथ सैदाः स्वतन्त्रास्ते कलत्रहरणेच्छया ।
बन्धनं ताजिभट्टाय कर्तुमैच्छंश्छलैषिणः ।। ३५३ ।।

३५३ छल ढूँढने वाले स्वतन्त्र वे (सैय्यिद) उसकी (ताजभट्ट) की स्त्री का अपहरण करने की इच्छा से, उस (ताजभट्ट) को बन्धन मे डाल देने की अभिलाषा किये ।

एकदानिष्टमाकर्ण्य स्वात्मनः सैदचिन्तितम् ।
मल्लेकसदनं प्रायात् ताजिभट्टो भयाकुलः ।। ३५४ ।।

३५४ एक बार सैय्यिद चिन्तित, अपना अनिष्ट सुनकर, भयाकुल ताजभट्ट मल्लिक के घर गया ।

सैदविस्फूर्जितं दृष्ट्वा साशङ्कः सोऽभवद्यदा ।
स फिर्यडामरो वृद्धस्तत्कालं प्रमयं ययौ ।। ३५५ ।।

३५५ सैय्यिदो की दहाड देखकर, जब वह सशंकित हुआ, उसी समय वृद्ध फिर्य डामर मर गया ।

प्रतिहार्यादिसुकृतैरिह वा परदुर्लभाम् ।
य एकः सकलश्लाघ्यामलब्धान्त्यक्षणे क्रियाम् ।। ३५६ ।।

३५६ प्रतीहारी आदि सुकृता ( पुण्यो ) से इस लोक अथवा परलोक दुर्लभ, सर्वजन प्रशसनीय, सत् क्रिया को अन्तिम क्षण मे वह नही प्राप्त कर सका ।

तच्छ्रुत्वा नृपतिस्तूर्णं क्रुद्धः सैदप्रतारितः ।
रोद्धुं तद्व्यसृजज् जोनराजानकमुखान् भटान् ।। ३५७ ।।

३५७. यह सुनकर सैय्यिदों द्वारा प्रतारित राजा क्रुद्ध हो गया, अतएव शीघ्र उसे वन्दी बनाने के लिये जोनराजानक प्रमुख भटों (सैनिकों) को भेजा—

स्वगृहे स्थाप्यतां बद्धो हृतस्वो दत्तरक्षकः ।
इत्युक्तो मल्लिकस्ताजिभट्टं तेभ्यः समार्पयत् ।। ३५८ ।।

३५८. 'धन अपहृत कर, वान्धकर, रखवाली में, उसे उसके घर में ही रखो'—राजा ने आदेश दिया। ऐसा कहे जानेपर, मल्लिक ने ताजभट्ट[1] को सैनिकों के अधीन कर दिया।

तथैव स्थापितो बद्धः पुण्यशेषतयात्मनः ।
कालं वृत्त्या कृताप्यायः सकुटुम्बोऽत्यवाहयत् ।। ३५९ ।।

३५९. अपने पुण्य शेष के कारण, उस प्रकार से वन्दी कर रखा गया, वह वृत्ति द्वारा कुटुम्ब सहित तृप्त होकर, समय व्यतीत किया।

भूर्यर्थव्ययपुण्यः स बद्धोऽपि स्वगृहान्तरे ।
सकुटुम्बः सुखं तस्थौ मराल इव मानसे ।। ३६० ।।

३६०. प्रचुर धन व्यय रूप पुण्यशाली, वह अपने घर में वन्दी होने पर, मानस में मराल सदृश कुटुम्ब में सुखपूर्वक रहा।

विभवे दानभोगं यः करोति सुकृतेच्छया ।
एतद्भ्रष्टः समाप्नोति भूयस्तत् ताजिभट्टवत् ।। ३६१ ।।

३६१. जो सुकृत की इच्छा से विभव का दान-भोग करता है, वह इससे रहित होने पर, पुनः उसे ताजभट्ट की तरह प्राप्त करता है।

एवं मल्लेकाह्मदेन परोद्रेकासहिष्णुना ।
ध्वस्तप्राया व्यधीयन्त सर्वे ते प्रभविष्णवः ।। ३६२ ।।

३६२. इस प्रकार दूसरे की उन्नति न सह सकनेवाले मल्लिक अहमद ने उन सब प्रभावशाली लोगों को ध्वस्तप्राय कर दिया।

---

पाद-टिप्पणी :

३५७. 'जोन' पाठ—बम्बई।

पाद-टिप्पणी :

३५८. ( १ ) ताजभट्ट : तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—सैय्यिद हसन ने सुल्तान को काश्मीरियों के विरुद्ध कर दिया। उसके प्रयत्न से अत्यधिक मलिकों की हत्या कर दी गयी। मलिक यारी ( ताजभट्ट ) वन्दी बना लिया गया ( ४५० )।

पीर हसन लिखता है—सुल्तान ने मलिक ताजी बट को भी कैद कर डाला ( १९० )।

कृतापकारी सैदेभ्यो भागिनेयप्रणाशनात् ।
ज्यहाङ्गिरोऽपि मार्गेशो मल्लिके शङ्कितोऽभवत् ॥ ३६३ ॥

३६३ भागनेय का विनाश करने के कारण, सैय्यिदो का अपकारी जहाँगीर मार्गेश[1] भी मल्लिक से शकित हो गया ।

सर्वाधिकारसामग्री स्वपक्षस्य समर्पिता ।
प्रतीहारादिवीरेन्द्राः स्वार्थबुद्धया विनाशिताः ॥ ३६४ ॥

३६४ सर्वाधिकारी सामग्री अपने पक्ष को दिया था, और स्वार्थ बुद्धि से प्रतीहारादि श्रेष्ठ वीरो को नष्ट कर दिया था ।

इत्यादिदूषणै राजा मल्लिके विरसोऽभवत् ।
रक्षत्युक्त्या स्वमात्मान कदाचित् कृतदर्शनः ॥ ३६५ ॥

३६५ इन सब दोषो के कारण राजा मल्लिक से विरक्त हो गया । युक्तिपूर्वक अपनी रक्षा करता हुआ, कदाचिद् दिखायी देनेवाला —

नैकत्रात्रस्थितिस्तिष्ठन् स्वराष्ट्रान्तः स्थितिं व्यधात् ।
अथागात् कुसुमक्रीडां कर्तुं सैदसमन्वितः ॥ ३६६ ॥

३६६ एकत्र न स्थित रहकर अपने राष्ट्र मे स्थित रहा । राजा सैय्यिद सहित, कुसुम क्रीडा करने के लिये--

भवनोपवन राजा शक्रश्चैत्ररथं यथा ।
विधाय लीलां पुष्पाणां नौकायातो महीपतिः ।
मार्गेशनौरुजायुक्तः पानलीलां व्यगाहत ॥ ३६७ ॥

३६७ भवनोपवन मे उसी प्रकार गया जिस प्रकार इन्द्र चैत्ररथ[1] मे पुष्प लीला करके, नौका से आकर, महीपति ने मार्गेश नौरुज के साथ पान लीला की ।

---

पाद टिप्पणी

३६३ ( १ ) जहांगीर मार्गेश कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया (२८५) में उसे माकू जाति का नेता लिखा है। यह भ्रामक है। जहाँगीर माकरी' के स्थान पर तवक्काते अकबरी में 'जहाँगीर वाकरी' लिखा गया है। द्र० ३ २३१ ।

पाद-टिप्पणी

३६६ ( १ ) चैत्ररथ कुबर के उद्यान का नाम चैत्ररथ है। चित्ररथ ने उद्यान का निर्माण कराया था अतएव नाम चैत्ररथ पड गया। इसका स्थान इलावर्ष के पूर्व मे है। ( भाग० ३ २३ ४०, ५ १६ १४, ९ १४ २५, मत्स्य० : २७ ४, विष्णु० ४ ६ ४८, वायु० ३६ ११, ४२ १५, ४७ ६, ६९ १३७, ९१ ६, विष्णु० २ २ २५ ) ।

सर्वे परस्परं श्रीवास्तत्तद्वाचानुबन्धिनः ।
ते वृष्णय इवान्योन्यं चक्रुर्वाक्छुरताडनम् ।। ३६८ ।।

३६८. मदमत्त वे सब लोग, परस्पर तत् तत् प्रकार से शब्द प्रयोग करके, वृष्णियों के समान एक दूसरे पर, वाक् वाण प्रहार करने लगे ।

क्षोभे प्रवृद्धे क्रुद्धोऽथ त्यक्तमस्तकवेष्टनः ।
अगात् कर्तुमुपालम्भं नृपो मल्लिकमन्दिरम् ।। ३६९ ।।

३६९. इस प्रकार क्षोभ बढ़ जाने पर, क्रुद्ध राजा शिरोवेष्ठन (पगड़ी) त्यागकर, (नंगे शर) उलहना देने के लिए, मल्लिक के यहाँ गया ।

प्रसादितोऽपि स प्राप राजधानीं क्रुधान्वितः ।
पुत्रदुर्नयजः शोको मल्लिकस्य च मानसम् ।। ३७० ।।

३७०. प्रसन्न किये जाने पर भी, वह राजा क्रोधान्वित राजधानी गया, और पुत्र की दुर्नीति से उत्पन्न शोक, मल्लिक के हृदय में प्रवेश किया ।

अन्येद्युरहितांस्तस्य राजा विरलमानसः ।
रक्ष्यो नायुक्तपक्षो मे युक्तमित्यब्रवीद्रहः ।। ३७१ ।।

३७१. दूसरे दिन उदासीन (विरल मानस) राजा ने उसके शत्रुओं से एकान्त में यह कहा—'आयुक्त पक्ष मेरे द्वारा रक्षा योग्य नहीं है ।

अवश्यमेव च्छिद्रं तं समासाद्य विरोधिनः ।
अपकाराय संनद्धा देहे दोषा इवाभवन् ।। ३७२ ।।

३७२. अवश्य ही यह छिद्र (दुर्बलता) पाकर, विरोधी अपकार के लिये, देह में दोष के समान तैयार हो गये ।

राज्ये योसोभखानं चेत् कुर्युः किं क्रियते त्वया ।
एभ्यो नीत्वा तदन्यस्मै देह्येनं रक्षणाय भोः ।। ३७३ ।।

३७३. 'हे ! राजन् !! योसोभखान' को राज्यासीन कर देंगे, तो तुम क्या करोगे ? अतः उसको इनसे लेकर, रक्षा के लिये दूसरे को दे दो ।'

तथेत्युक्त्वा नृपोऽन्येद्युर्जोनराजानकं द्रुतम् ।
विन्यस्य रक्षणे युक्त्या मल्लिकात् खानमग्रहीत् ।। ३७४ ।।

३७४. 'ठीक है'—कहकर, राजा ने दूसरे दिन रक्षा के लिये, जोनराजानक को नियुक्तकर, युक्ति से मल्लिक से खान को ले लिया ।

---

पाद-टिप्पणी :

३७३. (१) योसोभ खान : यूसुफ खान । मल्लिक अहमद आयुक्त राजा के सबसे कनिष्ठ पुत्र यूसुफ का संरक्षक था । यूसुफ शब्द अरबी है ।

पुत्रं विन्यस्य भूपाग्रे तद्दिने स्वगृहस्थितः ।
अपकर्तास्मि शत्रूणां प्रातरित्यब्रवीत् प्रियाम् ॥ ३७५ ॥

३७५. पुत्र को राजा के समक्ष रखकर, उस दिन घर रहकर—'प्रात शत्रुओ का अपकार करूँगा'—अपनी स्त्री से कहा।

अत्रान्तरे मार्गपतिर्नृपाहूतो बलान्वितः ।
स्वराष्ट्रात् साहसोद्युक्तो नगरे तूर्णमाययौ ॥ ३७६ ॥

३७६ इसी बीच राजा के बुलाये जाने पर, सेना सहित एव साहस युक्त, मार्गपति (जहाँगीर) अपने राष्ट्र से शीघ्र नगर मे आया।

प्रातः श्रुत्वाथ मल्लेकः सबलोऽगान्नृपान्तिकम् ।
रुषा निवृत्तो रुद्धोऽपि चिल्लया दक्षिणस्थया ॥ ३७७ ॥

३७७ प्रात यह सुनकर, क्रोध से भरा वह मल्लिक सेना सहित, दक्षिण स्थित चील्ह[1] पक्षी द्वारा अवरोध करने पर भी, नृपति के पास गया।

पादाभ्यां ताडयन् वक्षो गच्छतोऽस्य तुरङ्गमः ।
भविष्यत्स्वामिविरहाच्छुचेवास्रुमुखोऽभवत् ॥ ३७८ ॥

३७८ जाते हुए, इसका अश्व[1] पैरो से वक्षस्थल ताडन (मारते) करते हुए, स्वामी के भावी विरह के शोक से ही मानो अश्रुमुख हो गया।

तत्कालोदितसूर्यार्चिःसङ्क्रान्तिज्वलितायुधः ।
नृपाज्ञप्तोऽपि मार्गेशः ससैन्योऽविशदङ्गनम् ॥ ३७९ ॥

३७९ तत्काल उदित सूर्य के किरणो के सम्पर्क से प्रज्वलित (चमकते), आयुध युक्त, नृपादेश प्राप्त, मार्गेश सेना सहित प्रागण मे प्रवेश किया।

---

*पाद-टिप्पणी*

३७७ ( १ ) चील्ह चील्ल = चिल्ल। चील पक्षी का दाहिने तरफ से मार्ग काट देना, अशुभ मानते है जैसे बिल्ली का मार्ग काटना। काश्मीर मे अपशकुन माना जाता है। रामायण में वर्णन है कि युद्ध के लिए प्रस्थान करते समय, खर के सम्मुख चील्ह आकाश में आ गये थे। हिन्दू आज भी चील्ह का मकानों पर बैठना अशुभ मानते हैं।

पाद-टिप्पणी :

३७८ ( १ ) अश्व : यदि घोडा चलते समय अपना पैर उठा-उठाकर छाती से *लगा ले या पीटने* लगे अथवा रोने लगे, तो वह अपशकुन माना जाता है। घोडे का रोना अपशकुन होता है। इसका अनुभव मैंने भी किया है। मेरे पास एक्का-घोडा था। एक समय उसके आँख से आँसू निकलने लगा। कुछ ही समय पश्चात् सईस का देहावसान हो गया। अश्व का अकस्मात् गिरना भी अशुभ माना जाता है ( अरण्य० : २३ : २ )।

अन्योन्यस्पर्धया तत्र द्वयोः प्रविशतोस्तदा ।
संनद्धयो राजधानी ययौ संभ्रमलोलताम् ॥ ३८० ॥

३८०. उस समय परस्पर स्पर्धापूर्वक सन्नद्ध, दोनों के वहाँ प्रवेश करने पर, राजधानी संभ्रम से चंचल हो उठी।

सशस्त्रोऽयं प्रविष्टः किमित्यायुक्तः स भाङ्गिलम् ।
अदापयज् ज्यंसराय मार्गेशाय नृपः क्रुधा ॥ ३८१ ॥

३८१. इसने सशस्त्र क्यों प्रवेश किया, इसलिये आयुक्त ने क्रोध से भांगिल[1] प्रदेश-राजा, स जंसर[2] मार्गेश को दिला दिया।

तावन्निर्गत्य भीतेन राज्ञा स प्रेरितस्ततः ।
पुरान्तर्ग्रन्थनां कृत्वा ससैदः पुनराययौ ॥ ३८२ ॥

३८२. भीत राजा से प्रेरित वह, वहाँ से निकलकर, नगर के मध्य मोर्चाबन्दी करके, सैय्यिदों सहित पुनः आ गया।

निर्मुच्य बन्धनात् ताजिभट्टं राजानकान्वितः ।
राजधान्यङ्गनास्कन्दं ददौ जिष्णुर्ज्यहाङ्गिरः ॥ ३८३ ॥

३८३. राजानक सहित विजयी जहाँगीर ने ताजभट्ट को बन्धन से निर्मुक्त करके, राजधानी आँगन रौंद डाला।

प्रेरितास्ताजिभट्टेन तद्भटाः समरोद्यताः ।
पश्चिमद्वारधानीं तां राजधान्यामदाहयन् ॥ ३८४ ॥

३८४. ताजभट्ट द्वारा प्रेरित, समर के लिये उद्यत, उसके सैनिक राजधानी में पश्चिम के द्वार-भाग को जला दिये।

सोऽग्निर्हस्सनराजानकावासान्तं क्षणान्तरात् ।
सोच्चागारां गृहश्रेणीं दग्धारण्यमिवाकरोत् ॥ ३८५ ॥

३८५. उस अग्नि ने क्षणभर में हस्सन राजानक के आवास पर्यन्त, उच्च आगारवाली गृहपंक्ति को दग्ध[1] कर अरण्य सदृश कर दिया।

---

पाद-टिप्पणी :

३८१. ( १ ) भांगिल : यह वर्तमान परगना बांगिल है। भांगिल का अपभ्रंश बांगिल है। परिहासपुर के पश्चिम-दक्षिण स्थित है। आइने अकबरी में इसे बंकाल लिखा गया है। जोनराज ने लोकप्रकाश में २७ विषयों अर्थात् परगनों में भांगिल की भी गणना की है। द्र० : पाद-टिप्पणी : जोन० : श्लोक : २५१ तथा राज० : ७ : ४९८; ८ : ९२९; ३१३० तथा शुक० : १ : ६८।

( २ ) जंसर : जमशेद फारसी नाम का संस्कृत रूप है।

पाद-टिप्पणी :

३८५. ( १ ) दग्ध : तबक्काते अकबरी में

इन्द्रवासोपमा वेश्मरचना ज्वलिता श्रुता ।
दूरस्थितानामप्यन्तः सन्तोपमुदपादयत् ॥ ३८६ ॥

३८६ इन्द्रवास समान वेश्म रचना को जली हुई सुनकर, दूरस्थ लोगो के भी मन मे असन्तोष उत्पन्न कर दिया ।

तद्धूमस्तोमसंघट्टज्वालाजालगतोष्मणा ।
सर्वेऽन्तःस्थाः कटाहान्तर्जीवन्मत्स्योपमां दधुः ॥ ३८७ ॥

३८७ उसमे धूमपुञ्ज सहित ज्वाला समूह की गर्मी से, सभी अन्तःस्थित लोग, कडाही[1] के अन्दर जीवित मत्स्य[2] तुल्य, जलने (छटपटाने) लगे ।

अङ्गनेऽग्निं समालोक्य ज्वलन्तं राजसद्मनि ।
सभीतिर्नृपतिर्भीतो विह्वलः समपद्यत ॥ ३८८ ॥

३८८ राज सद्म के प्रागण मे जलती अग्नि[1] देखकर, राजा भय से विह्वल हो गया ।

उष्णायमानमार्गेषु स्फुरन्तोऽपि युयुत्सवः ।
न केऽपि शेकुस्तान् योद्धुं तद्भाग्यैर्यन्त्रिता इव ॥ ३८९ ॥

३८९ गरम होते मार्गेश, स्फुरित होते युद्धेच्छुक लोग, उनके भाग्य से नियन्त्रित सदृश होकर, उन लोगो से युद्ध न कर सके ।

स्वभृत्यांश्चलितान् दृष्ट्वा पुत्रोत्सेवावशेपितः ।
बभूव मल्लिकस्तत्र किंकर्तव्यतयाकुलः ॥ ३९० ॥

३९० अपने भृत्यो को भागा देखकर, पुत्रो सहित अवशेष मल्लिक, यहाँ किंकर्तव्य विमूढ हो गया ।

---

उल्लेख है—'वे एक रात्रि में सेना एकत्र कर सुल्तान के दीवानखाने में पहुँचे और उन्होंने लूटमार आरम्भ कर दी और आग लगा दी ( ४५० ) ।

पाद-टिप्पणी

'तद्धूम' पाठ—बम्बई ।

३८७ ( १ ) कटाह कडाही शि० ५ ३७, नै० : २२ ३२ ।

( २ ) मत्स्य मत्स्य का जीवन जल है । जल एवं अग्नि परस्पर विरोधी है । मछली जल से निकलने पर, जीवन आशा खो बैठती है । अग्नि पर जलती कडाही में डालने पर, वह प्राणरक्षा हेतु अधीन होकर, छटपटाने लगती है । इसी की उपमा उन व्यक्तियों से श्रीवर ने दिया है, जो घरों में आग लग जाने के कारण बाहर न निकल कर और प्राण रक्षा हेतु अधीर हो उठे थे ।

पाद-टिप्पणी

३८८ ( १ ) अग्नि : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—अजीम लडाइयाँ हुईं जब कि एक रात को अपने आदमियों को एकत्रित कर, सुल्तान के राजप्रासाद में घुसकर, उत्पात मचाया और आग लगा दिया । वहाँ पर सरकारी कामों में बहुत विघ्न पड गया ( ४५० = ६८१ ) ।

पाद-टिप्पणी

३९०. उक्त श्लोक का पाठ विचारणीय है ।

पुत्राः कुर्वन्तु मा युद्धं राज्यं नश्यति भूपतेः ।
अयं राजास्य देशस्तु रक्षितो दश वत्सरान् ॥ ३९१ ॥

३९१. 'पुत्रगण युद्ध करें, राजा का राज्य नष्ट हो जायगा, यह राजा है, इसका यह देश है, दश वर्षों[1] तक इसे रक्षित किया है।

तद् कथं नाश्यते युद्धादस्मिन् विषमविग्रहे ।
तत्रापि ज्येष्ठः पुत्रो मे तटस्थोऽरिषु मध्यगः ॥ ३९२ ॥

३९२. 'इस विषम युद्ध में युद्ध से उसे क्यों नष्ट किया जा रहा है, उसमें भी मेरा ज्येष्ठ पुत्र, जो कि शत्रु मध्य है, तटस्थ है—

अनिष्टं नौरुजाद्या मे लभन्तेऽस्माद्रणक्षणे ।
वरं ममैव नाशोऽस्तु नाकीर्तिं वार्द्धके सहे ॥ ३९३ ॥

३९३. 'रण काल में मेरे नौरुज आदि का अनिष्ट होगा, अच्छा है, मेरा ही नाश हो, वृद्धावस्था में अकीर्ति नहीं सहूँगा।'

इति ध्यात्वाब्रवीत् पुत्रान्न योद्धव्यमिहास्यत ।
इत्युक्त्वा गलितोत्साहो नृपं शरणमाययौ ॥ ३९४ ॥

३९४. यह विचार कर, उसने अपने पुत्रों से कहा—'लड़ो मत, यहाँ रहो'—ऐसा कहकर निरुत्साह होकर, राजा के शरण आ गया।

मण्डपे राजधान्यां स राजा विन्यस्य रक्षिणः ।
स्नेहादरक्षदायुक्तान् पूर्वसेवामनुस्मरन् ॥ ३९५ ॥

३९५. वह राजा राजधानी के मण्डप में रक्षकों को रखकर, प्रेम के कारण, पूर्व की सेवा का स्मरण कर, आयुक्तों की रक्षा की।

आयुक्तनत्यकाद्यास्ते ज्ञात्वा भूपं तदाश्रितम् ।
युद्धाशक्ताश्च निर्गत्य भुट्टदेशान्तरं ययुः ॥ ३९६ ॥

३९६. युद्ध में असमर्थ, आयुक्त नत्यक[1] आदि राजा को उसके आश्रित जानकर, निकलकर भुट्ट[2] देश चले गये।

---

पाद-टिप्पणी :

३९१. (१) दश वर्ष : हसनशाह सन् १४७२ ई० में राज्य प्राप्त किया था अतएव यह समय सन् १४७२ ई० + १० वर्ष = सन् १४८२ ई० होना चाहिये। द्र० : ३ : ४०२।

पाद-टिप्पणी :

३९२. 'धृ' पाठ—बम्बई।

पाद-टिप्पणी :

३९६. 'नत्य' पाठ—बम्बई।

(१) नत्यक : इसका पुनः उल्लेख नहीं मिलता।

(२) भुट्टदेश : द्र० : १ : १ : ५१, ८२; ३ : ३२; ३ : ३९५, ४३९।

अथोत्तरदिशा द्वारधान्या मान्या जयोद्यताः ।
ज्यहाङ्गिराद्या गर्जन्तः प्राविशन्त नृपाङ्गनम् ॥ ३९७ ॥

३९७ उत्तर के द्वार से मान्य एव जयोद्यत जहाँगीर आदि गरजते हुए, नृपागण मे प्रवेश किये ।

रणदुन्दुभिनिःस्वानप्रतिश्रुत्यारवच्छलात् ।
अहसद्राजधानीव तुष्टा तत्साहसक्रमात् ॥ ३९८ ॥

३९८ रण दुन्दुभी[1] के शब्द की प्रतिध्वनि के व्याज से, राजधानी उसके साहस से तुष्ट होकर, मानो हँस रही थी ।

राजदर्शनतुष्टानामुत्कृष्टानां जयार्जनात् ।
प्रापुः प्रसादं तत्कालं मनांसि च वपूंषि च ॥ ३९९ ॥

३९९ राजदर्शन से तुष्ट तथा जय-प्राप्ति से उत्कृष्ट जनो के मन एव शरीर तत्काल प्रसन्न हो गये ।

प्रातः सपुत्रं मल्लेकं तत्तत्सेवकसंयुतम् ।
क्रुद्धैस्तैश्चोदितो राजा कारागारान्तरेऽक्षिपत् ॥ ४०० ॥

४०० क्रुद्ध उन लोगो द्वारा प्रेरित होकर, राजा ने तत्-तत् सेवको के साथ पुत्र सहित मल्लिक को प्रात काल कारागार[1] मे डाल दिया ।

---

पाद-टिप्पणी

३९८ ( १ ) दुन्दुभी नगाडा, धौंसा, ढक्क, विजय, हर्ष, उत्साह, मगल समय में दुन्दुभी बजाने की प्रथा थी ।

विजय दुन्दुभितायुर्णवा '–रघु० ९ ११, तव देवन दुन्दुभी बजाई–(तुलसीदास) । मख कोश में दुन्दुभी का अर्थ दिया गया है–नामेर्या दुन्दुभि स्त्री स्याददाविन्दुत्रिक द्वये । श्लोक ५६१ ।

पाद-टिप्पणी

४००. ( १ ) कारागार आयुक्त अहमद के कारागार में जाने तथा इस घटना का काल सुल्तान के राज्यप्राप्ति काल के १० वर्ष पश्चात् पडता है ( जैन० : ३ : ४०२ ) । सन् १४७२ ई० में हसन शाह ने राज्यप्राप्ति किया था अतएव यह काल सन् १४८२ ई० होना चाहिये ।

फिरिश्ता लिखता है—मल्लिक अहमद के राज्य-प्रासाद में ससैन्य प्रवेश कर, अपमान करने के कारण सुल्तान ने मल्लिक को कारागार में डाल दिया ( ४७९ ) । तवक्काते अकबरी में भी यही लिखा गया है—सुल्तान ने मलिक अहमद आँसू को उसके सैनिकों के साथ बन्दी बना लिया ( ४५० ) ।

पीर हसन लिखता है—एक रात जमात इकट्ठी करके दीवानखाना शाही में लडने लगे और शाही महल को आग लगा डाली । इस चीज के पेश-नजर सुल्तान ने मलिक अहमद येतू को व मय उसके हमसाइयों को कैद करके उसका माल व असबाब गारत करा दिया ( १९० ) ।

आयातायुक्तसदनाद्　भीतेवातिव्ययादिभिः ।
अकरोद्राजलक्ष्मीः सा स्वगृहे सुखसुप्तिकाम् ॥ ४०१ ॥

मल्लिक-कोश हरण :

४०१. अति व्यय आदि के कारण भयभीत-सी, आयुक्त सदन से आयी हुई वह राजलक्ष्मी अपने स्वगृह[1] में शयन की ।

तेषां　राजविरुद्धानां　दासकायस्थपीडनात् ।
सञ्चितं रौप्यकुप्यादि सर्वं तद् राजसादगात् ॥ ४०२ ॥

४०२. उन राज-विरोधियों का दासो एवं कायस्थों के पीड़न से संचित, रौप्य[1] एव कुप्य[2] आदि सव कुछ नृपाधीन हो गया ।

यन्मन्त्रात् सभयः स जैननृपतिः श्रीहाज्यशाहेऽभवद्
यन्नीत्या दशवत्सरीं गतभयः पुत्रोऽस्य राज्यं व्यधात् ।
यातास्ते स्मृतिशेषतां यदमता वहामखानादयः
सोऽपि व्याकुलतामगाद् रिपुभये धिग् वैभवं स्वामिनाम् ॥ ४०३ ॥

४०३. जिसकी सलाह से, वह जैन नृपति श्री हाजी खाँ से भी भयभीत हो गया था, जिसकी नीति से, इसका पुत्र दश वर्ष[1] तक निर्भय होकर राज्य किया, जिसके प्रतिकूल वहराम खाँन आदि स्मृति-शेष हो गये, वह भी शत्रु भय आने पर, व्याकुल हो गया । स्वामियों के वैभव को धिक्कार है ।

---

तवक्काते अकवरी में उल्लेख है—सुल्तान ने मलिक अहमद असवद तथा उसके कुछ सम्बन्धियों को वन्दी कर लिया और उसकी जायदाद लूटपाट करने के लिए छोड़ दी गयी । वह स्वयं कैद में मर गया ( ४५० = ६८१ ) ।

पाद-टिप्पणी :

४०१. ( १ ) स्वगृह : राज धन या सम्पत्ति जो कुछ आयुक्त अपने पद का लाभ उठाकर, अपने घर ले गया था, राजा ने उसे—उससे लेकर, पुनः उसे उसके पूर्व स्थान राजकोश किंवा राजभवन में रख दिया ।

पाद-टिप्पणी :

४०२. ( १ ) रौप्य : चान्दी : रजत । रुप्प एवं कुप्प शब्दों का प्रयोग पुनः ४ : ५१६ में श्रीवर ने किया है ।

( २ ) कुप्प : सोना तथा चान्दी के अतिरिक्त अन्य धातु । द्र० : ४ : ७१, ५१६ ।

पाद-टिप्पणी :

'सभय', 'वत्सरी' पाठ—वम्वई ।

पाद-टिप्पणी :

४०३. दश वर्ष : सन् १४८२ ई० । द्र० : ३ : ३९० ।

एकदा जुगभट्टस्त बन्धने प्रष्टुमभ्यगात् ।
अयन्न् किमस्ति ते स्वर्णं तूर्णं राज्ञे समर्प्यताम् ॥ ४११ ॥

४११. एक बार जुगभट्ट[1] बन्धन मे उससे पूछने के लिये गया और (कहा)—'जो तुम्हारे पास स्वर्ण है, वह सब राजा को समर्पित कर दो ।'

क्रुद्धस्तमब्रवीद् द्रव्यकोटिसख्य हृत मम ।
एतावतापि नो तृप्तिः प्रभोर्लुब्धस्य विद्यते ॥ ४१२ ॥

अहमद मल्लिक का पश्चाताप

४१२ क्रुध होकर, उससे कहा—'मेरा कोटि सख्यक धन हर लिया, इतने पर भो लोभी राजा को तृप्ति नही है ?

किं ब्रूमो राज्यरक्षार्थं स्वपक्षो नाशितोऽखिलः ।
शक्तेनापि न युद्धाय सोढ तत् तुमुलेऽन्तरे ॥ ४१३ ॥

४१३ 'क्या कहे—राज रक्षा हेतु अपना सम्पूर्ण पक्ष नष्ट कर दिया और युद्ध के लिये समर्थ होने पर भी उसमे सब कुछ सहा ।

कांदिशीकाः समानीय सैदाः संवर्धिता मया ।
द्रोग्धारस्तेऽपि मे जाताः कृतघ्नेऽस्मिन् महीपतौ ॥ ४१४ ॥

४१४ 'भयभीत दिशाओ मे भागे हुए, सैय्यिदो को लाकर, मैंने सम्बर्धित किया, इस राजा के कृतघ्न होने पर, वे भी मेरे द्रोही हो गये ।

सर्वं मयोजित राज्यमन्ध तावत् करोत्वसौ ।
पुनश्चेद् भुज्यतां राज्य मन्नाशान्मुदितस्तु सः ॥ ४१५ ॥

४१५ 'मेरे द्वारा योजित, सम्पूर्ण राज्य को वह अन्धकारपूर्ण (नष्ट) कर दे और यदि पुन राज्य भोगे, तो मेरे नाश से वह प्रसन्न हो ।

---

पाडव जाति का राग है । गान समय मध्याह्न काल है ।

( ३ ) वेश्या रस वेश्या का स्नेह प्रीति अथवा उससे प्राप्त ह नेवाला सुख, कामक्रीडा आदि । वेश्या-सुख का अनुभव या आनन्द ।

( ४ ) राज स्थिरता राजा में स्थिरता का अभाव पाया जाता है । उसका विचार परिस्थितियो, मन्त्रियों, पिशुनो विटो, स्वार्थियों के कारण बदलता रहता है ।

पाद-टिप्पणी

४११ ( १ ) जुगभट्ट इस व्यक्ति का केवल इसी स्थान पर उल्लेख किया गया है । इसके विषय में और कुछ ज्ञात नही है ।

पाद-टिप्पणी

४१५ 'राजमन्ध' पाठ—बम्बई ।

दशवत्सरपर्यन्तं राज्यतन्त्रनियन्त्रणा ।
मदीयासीद् भवे दग्धे यदीदृश्यपि तद्विभुः ॥ ४१६ ॥

४१६. 'इस तुच्छ संसार में इस प्रकार दश वर्षों[1] तक राजतन्त्र का नियन्त्रण मेरे हाथ में रहा, उससे विभु स्वामी—

तुष्यत्वस्मत्प्रणाशेन मयि लोकान्तरं गते ।
इत्याद्युक्त्वा नृपाग्रे स स्वविज्ञप्तिं व्यसर्जयत् ॥ ४१७ ॥

४१७. 'हमलोगों के नाश होने से, मेरे लोकोत्तर चले जाने पर, प्रसन्न हो'—इस प्रकार कहकर, राजा के समक्ष अपनी विज्ञप्ति प्रेषित की ।

धिङ्मां येन गृहीतं न वचनं दीर्घदर्शिनः ।
श्रीफिर्यडामरेशस्य निनिन्दात्मानमन्वहम् ॥ ४१८ ॥

४१८. 'मुझे धिक्कार है, जिसने दीर्घदर्शी श्री फिर्य डामरेश की बात[1] नहीं मानी'—इस प्रकार प्रतिदिन अपनी निन्दा की ।

यद्यहं सुविशुद्धोऽस्मि तन्मद्द्रोहकरा अमी ।
मार्गेशताजिभट्टाद्या लभन्त्वल्पदिनैः फलम् ॥ ४१९ ॥

४१९. 'यदि मैं सुविशुद्ध हूँ, तो मेरा द्रोह करनेवाले, ये मार्गेश ताजि भट्टादि थोड़े ही दिनों में (इसका) फल पायें ।'

इत्यादि दुःखदग्धः स बन्धनस्थो यदब्रवीत् ।
अचिरात् तत्फलं दृष्ट्वा साश्चर्यो भविता जनः ॥ ४२० ॥

४२०. बन्धन में स्थित, दुःख से दग्ध, वह इस प्रकार जो कहा, शीघ्र उसका फल देखकर, लोग आश्चर्य में पड़ गये ।

---

पाद-टिप्पणी :

४१६. ( १ ) दश वर्ष : बन्दी बनाये जाने तथा उक्त घटना का वर्ष श्रीवर ने नहीं दिया है। राजा ने बारह वर्ष, पाँच मास राज्य किया था। उसकी मृत्यु लौकिक ४५६० = सन् १४८४ ई० में हुई थी। इस समय में २ वर्ष, पाँच मास निकाल दिया जाय, तो उक्त घटना का समय निकल आता है। यदि सन् १४७२ ई० में वैशाख मास में १० वर्ष जोड़ दिया जाय तो यह काल सन् १४८२ ई० के लगभग होता है।



पाद-टिप्पणी :

४१८. ( १ ) बात : फिर्य डामर तथा अहमद आयुक्त का संवाद। द्र० : जैन० : ३ : ३३४–३४२ ।

इत्थं निद्रोहवृत्तेऽस्मिन् सपुत्रे मल्लिकाह्मदे ।
नाशितेऽन्ये व्यजृम्भन्त खलप्राया नृपास्पदे ॥ ४२१ ॥

४२१ इस प्रकार निर्दोही पुत्र सहित, मल्लिक अहमद के नष्ट कर दिये जाने पर, अन्य दुष्ट लोग राजगृह मे उल्लसित हुये ।

पाजभट्टादयो लुब्धाः सैदानामधिकारिणः ।
प्रमेयान् पीडयामासुर्दुष्टा देहमिवामयाः ॥ ४२२ ॥

४२२ सैय्यिदो के अधिकारी लोभी एव दुष्ट पाजभट्टादि प्रमेयो[1] को उसी प्रकार पीडित किया, जिस प्रकार रोग देह को ।

आनन्दपुष्पदीन्नारखण्डप्राप्त्यादिनामभिः ।
सैदाधिकारिणश्चक्रुः प्रजायासैर्धनार्जनम् ॥ ४२३ ॥

४२३ सैय्यिदो के अधिकारी जन 'आनन्द पुष्प', 'दीनार खण्ड' की प्राप्ति आदि नामो से प्रजा पीडनपूर्वक धन अर्जित किये ।

श्रीज्यहाङ्गिरमार्गेशनोसराजानकादयः ।
मधाविव द्रुमाश्चित्रपत्रास्ते शिश्रियुः श्रियः ॥ ४२४ ॥

४२४ वसन्त ऋतु मे विचित्र पत्र युक्त द्रुमो के समान श्री जहाँगीर मार्गेश, नोसराजानक आदि श्रीसम्पन्न हो गये ।

मल्लेकपदवीं मल्लां श्रीमेयाहस्सनोऽभजत् ।
नाग्राममग्रामराष्ट्रादि तदीय तद्वदग्रहीत् ॥ ४२५ ॥

४२५ श्री मेया हस्सन[1] ने मल्लिक की पदवी 'मल्ला' प्राप्त किया और उसका नाग्राम[2] आदि उसी प्रकार ले लिया ।

---

पाद टिप्पणी

४२१ 'निर्दोह' पाठ–बम्बई ।

पाद टिप्पणी

४२२ ( १ ) प्रमेय = जागीर श्रीदत्त ने प्रमेय का अर्थ जनता किया है ।

पाद टिप्पणी

४२५ ( १ ) मेया हस्सन पूरा नाम सैय्यिद हसन बैहकी है । सुल्तान का श्वसुर था । उसे सुल्तान ने अहमद आयुक्त के स्थान पर प्रधानमन्त्री किंवा वजीर बनाया ।

फिरिश्ता लिखता है—तथापि सुल्तान ने उस ( सैय्यिद नासिर ) के कुटुम्ब की क्षतिपूर्ति किया । उसने उसके पुत्र को दिल्ली से बुलाकर वजीर बनाया ( ४७९ ) ।

(२) नाग्राम द्रष्टव्य पाद टिप्पणी जैन० २ १० ।

सभृत्यपुत्रवर्गेभ्यः प्रमेयान् विभजन्नवान् ।
स मेयामह्लदायार्थधनराष्ट्रं समार्पयत् ॥ ४२६ ॥

४२६. उसने भृत्य सहित पुत्र वर्गों को नये प्रमेयों को देकर, मेया (मीया) मह्लद को अर्थ-वन[1] राष्ट्र समर्पित कर दिया ।

स्वायत्तीकृतभूपास्ते सैदा जयविशृङ्खलाः ।
दूतान् विसृज्य चतुरमानिन्युः सैदनासिरम् ॥ ४२७ ॥

४२७. राजा को स्वाधीन कर, विजय से विशृंखलित, सैय्यिद दूतों को भेजकर, सैय्यिद नासिर[1] को ले आये ।

प्राप्ते पश्चालदेवाग्रं तस्मिन् शूरपुराध्वना ।
ज्वरस्तद्धृदयं पूर्वं पश्चात् स पुरमाविशत् ॥ ४२८ ॥

४२८. शूरपुर[1] अध्वन मार्ग से पाञ्चाल देव[2] के सम्मुख पहुँचने पर, पहले ज्वर ने उसके हृदय में प्रवेश किया, उसके पश्चात पुर में प्रवेश किया ।

पौत्रीजामातृसम्बन्धिबान्धवाः सर्वमन्त्रिणः ।
अपुनःसङ्गमायेव सर्वेषां दर्शनं दधौ ॥ ४२९ ॥

४२९. पौत्री जामाता, सम्बन्धी, बान्धव एवं सब मन्त्री उन सबका पुनः समागम न प्राप्त के लिये ही, मानो दर्शन किया ।

---

पाद-टिप्पणी :

४२६. ( १ ) अर्व : नराज किंवा नदव राज्य का अर्ववन अदविन परगना है । जोनराज, अबुल फजल ने आइने अकबरी, मूरक्राफ्ट, हूगेल, वाइन तथा बेट्स ने गजेटियर में इसका उल्लेख किया है ।

अर्ववन यदि पाठभेद मान लिया जाय तो अर्थ होगा । अर्ववन राष्ट्र समर्पित किया ।

कलकत्ता संस्करण में अर्व-वन राष्ट्र पाठ है । जिसका अर्थ होता है कि आधा वन एवं राष्ट्र समर्पित किया । किन्तु इस प्रकार का उल्लेख अन्यत्र प्राप्त नहीं होता । बम्बई श्लोक ४९१ तथा कलकत्ता पंक्ति ४५५ में अर्ववन शब्द दिया गया है । राष्ट्र शब्द के प्रयोग से यह देशवाचक शब्द हो जाता है । 'व' तथा 'ब' प्लेट में लिखने से बहुत कम अन्तर मालूम पड़ता है । प्रसंगादि के कारण इस शब्द का 'अर्ववन' पाठ ठीक प्रतीत होता है । किन्तु कलकत्ता एवं बम्बई दोनों में अर्ववन है । अतएव पाठ में अर्ववन ही दिया गया है ।

पाद-टिप्पणी :

४२७. ( १ ) नासिर : पीर हसन लिखता है—'कुछ मुद्दत बाद सुल्तान हसनशाह ने सैय्यिद नासिर बैहकी को हिन्दुस्तान से बुलवाया (१९७) ।'

४२८. (१) शूरपुर : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : १ : १०७ ।

( २ ) पाञ्चाल देव : पंचाल अथवा पांचाल अथवा पन्तशाल अथवा पीर पंजाल या पीर पन्तशाल का नाम पांचाल था । पंचाल स्थानीय नाम पीर पंजाल दर्रे का है । पांचाल देव पीर पंजाल का ही एक नाम है । नामों के मुसलिम करण के उन्माद में देव का नाम पीर तथा पंजाल का पंजाल या पन्तशाल बना दिया गया ।

पाद-टिप्पणी :

४२९. 'मायेव' पाठ—बम्बई ।

तदर्थमिव संप्राप्तो मृतकल्पो दिनद्वयम् ।
अतिवाह्य ज्वराक्रान्तः स्वगृहे पञ्चतां ययौ ॥ ४३० ॥

४३० इसीलिये मृतकल्प[1] सदृश वहाँ पहुँचा और ज्वराक्रान्त दो दिन तक बिताकर, अपने घर ही पञ्चता[2] प्राप्त किया।

मल्लिको बन्धनस्थः सन्त्रस्तः पुत्रप्रवासनात् ।
तत्तच्छोकामयग्रस्तः सोऽप्यस्वस्थो व्यपद्यत ॥ ४३१ ॥

४३१. बन्धन[1] मे स्थित एव पुत्र प्रवासो से सन्त्रस्त, तत् तत् शोक-रोग से ग्रस्त, वह मल्लिक भी अस्वस्थ होकर, मर गया।

बद्धस्यापि मृतिं तस्य श्रुत्वा मन्त्रिशिरोमणेः ।
देशे सरुदिताक्रन्द शुशोच सकलो जनः ॥ ४३२ ॥

४३२. बन्धन प्राप्त भी, उस मन्त्री शिरोमणि का मरण सुनकर, देश मे सब लोग, रोदन क्रन्दनपूर्वक, शोक प्रकट किये।

सत्कार्यभाजां महतां वियोगाद्
भवन्ति नीचाः पदवीषु योग्याः ।
प्रकाशकेऽस्मिन् द्युमणौ प्रयाते
भवन्ति दीपाः शरणं प्रजानाम् ॥ ४३३ ॥

४३३ सतकार्य के पात्र महान् लोगो का वियोग होने से, नीच जन पदवियो के योग्य हो जाते हैं, प्रकाशक इस सूर्य के चले जाने पर, दीपक ही प्रजाओ को शरण देता है।

---

पाद-टिप्पणी

४३० मृत कल्प मृतप्राय = बेहोश। तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'सैय्यिद नासिर जब पीर पजाल दर्रे के समीप पहुँचा, तो उसकी मृत्यु हो गयी ( ४५० )।'

फिरिश्ता कुछ असगत बात लिखता है—'सुल्तान का एक स्नेहपात्र सैय्यिद नासिर जो जैनुल आबदीन के दरबार में ख्याति प्राप्त कर लिया था, वह इस तरह निष्काशित कर दिया गया था, कुछ समय पश्चात् मर गया ( ४७९ )।'

पीर हसन का वर्णन भिन्न है—'( सैय्यिद नासिर ) सैय्यिद मजकूर ज्यों ही पीर पजाल के पास पहुँचे, इत्तकाल मर गये ( १९० )।'

( २ ) पचता मरना या शहीद के पाँचों तत्वो का विघटित हो जाना।

पचभिर्निर्मिते देहे पचत्व च पुनर्गते, स्वा स्वा योनि मनुप्राप्ते तत्र का परिवेदना।—रत्न० ३ ३

पाद-टिप्पणी

४३१ ( १ ) बन्धन = मृत्यु। तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'उसकी बन्दीगृह में मृत्यु हो गयी ( ४५० )।'

पीर हसन लिखता है—'और उस ( अहमद एतू ) को जेलखाना में ( सुल्तान ) ने मरवा डाला ( १९० )।'

दुहितृभाग्यसौभाग्यसंप्राप्तविभवोर्जिताः ।
सैदाः कार्श्मीरिकान् सर्वान् न तृणायाप्यजीगणन् ॥ ४३४ ॥

सय्यदों का उन्माद :

४३४. पुत्री[1] ( हयात खातून ) के भाग्य रूप सौभाग्य से, सम्प्राप्त विभव से उर्जित, सैय्यिद सब कार्श्मीरियों को तृण बराबर भी नहीं समझते थे।

याभूत् सैदमुखादाज्ञा निर्यान्ती स्वार्थलिप्सया ।
राज्ञस्तदर्थनिष्ठस्य प्रतिश्रुतेव सामवत् ॥ ४३५ ॥

४३५. स्वार्थलिप्सा के कारण सैय्यिदों के मुख से जो आज्ञा निकलती थी, वह उन्हीं का लाभ देखनेवाले राजा की सहमतिपूर्ण सदृश होती थी।

सैदेषु द्वैधनिष्ठेषु क्षान्तिशीले महीपतौ ।
प्रबलासु च नारीषु कोऽप्यजृम्भत विप्लवः ॥ ४३६ ॥

४३६. दो भागों में निष्ठ सैय्यिदों में तथा शान्त शील राजा में नारियों का प्रबल प्रभाव होने पर, कोई विप्लव उठ खड़ा हुआ।

उत्कोचग्रहणं धर्मः प्रजापीडा च कौशलम् ।
स्त्रीषु च व्यसनं सौख्यममन्यन्ताधिकारिणः ॥ ४३७ ॥

४३७. अधिकारियों ने उत्कोच ग्रहण करना धर्म, प्रजापीड़न कौशल, स्त्रियों में व्यसन सुख माना।

प्रातिबन्धिकनिर्वृत्त्या स्वाच्छन्द्यप्राप्तिदर्पितः ।
स मेयाहस्सनः सर्वतन्त्रेभ्यो यन्त्रणां व्यधात् ॥ ४३८ ॥

४३८. प्रतिबन्धकों के समाप्त हो जाने से, स्वच्छन्दता की प्राप्ति से, दर्पित उस मीया हस्सन ने सर्वतन्त्रों[1] ( अधिकारियों ) को यन्त्रणा दी।

प्रवर्धमानो राज्ञः स शनैराक्रान्तमण्डलः ।
प्राधिपत्यं सर्वेषां राहुच्छायामिवाकरोत् ॥ ४३९ ॥

४३९. राहु[1] की छाया की तरह बढ़ता हुआ वह धीरे-धीरे समस्त मण्डल पर आक्रान्त हो गया और सबका आधिपत्य करने लगा।

---

पाद-टिप्पणी :

४३४. 'दुहितृ' पाठ—बम्बई।

पाद-टिप्पणी :

४३५. 'श्रुतेव' पाठ—बम्बई।

पाद-टिप्पणी :

४३८. 'स्वाच्छन्द' पाठ—बम्बई।

( १ ) सर्वतन्त्र : तन्त्र प्रशासकीय व्यक्तियों को कहते हैं। परन्तु दक्षिण-भारत में तन्त्र का अर्थ सेना भी लगाया जाता है यहाँ सभी प्रशासकीय वर्ग से तात्पर्य है।

पाद-टिप्पणी :

४३९. ( १ ) राहु : पाप या क्रूर ग्रह है।

अथ सूक्ष्मबृहद्भुट्टदेशान् सैदा जिगीषया ।
श्रीज्यहाङ्गिरनासेरौ यात्रायै द्वौ व्यसर्जयन् ॥ ४४० ॥

४४० सैय्यिदो ने सूक्ष्म ( छोटे[1] ) एव वृहद ( बडे[2] ) भुट्ट देश को जीतने की इच्छा से जहाँगीर एव नासिर[3] इन दोनो को आक्रमण के लिये भेजा ।

उभावेकत्र गच्छावो यद्यावां कर्म सेत्स्यति ।
इति मार्गपतेर्वाक्यं सैदौ नैवान्वतिष्ठताम् ॥ ४४१ ॥

४४१. 'यदि दोनो एक जगह चलते हैं, तो हम दोनो का कार्य सिद्ध होगा—' मार्गपति के इस वाक्य को दोनो सैय्यिद नही माने ।

तयोर्देशं विजित्यैकः सयशाः प्राविशत् पुरम् ।
अन्यो विशङ्कितो बद्धो युक्त्यात्मानमरक्षत ॥ ४४२ ॥

४४२. उन दोनो मे से एक ने देश को जीतकर, यश सहित पुरी मे प्रवेश किया, शकित दूसरा बन्दी हो गया और युक्ति से अपनी रक्षा किया ।

निपत्य पश्चाद् भुट्टैर्यत् सेनायाः कदनं कृतम् ।
कालापेक्षानुरोधेन न मनाग् वर्णनं कृतम् ॥ ४४३ ॥

४४३ पीछे से आकर, भुट्टो ने जो सेना का विनाश किया, समय के अनुरोध[1] से उसका थोडा भी वर्णन नही किया ।

---

उसकी छाया या प्रभाव बुरा माना जाता है । राहु बडा प्रबल ग्रह है । उसकी दशा में लोग अनेक विपत्तियों में पडते है ।

पाद-टिप्पणी

४४० (१) भुट्टदेश सूक्ष्म बालतिस्तान ।

(२) भुट्टदेश वृहद : लद्दाख ।

(३) नासिर सैयिद नासिर का इस समय देहान्त हो चुका था । यह व्यक्ति सैय्यद हसन होना चाहिए । श्री मोहिबुल हसन का यही मत है । किन्तु नासिर कोई और भी व्यक्ति हो सकता है । श्रीवर स्वय श्लोक में सैय्यद नासिर जो सुलतान का ददिया स्वसुर उल्लेख किया है । ( श्लोक ४२९ ) श्रीवर इन घटनाओं का स्वय प्रत्यक्षदर्शी था अतएव केवल दश ही श्लोक पश्चात उसे जीवित लिख देना सम्भव नही था । वह वृद्ध था और वृद्ध योग्य था भी नही । उसका भेजा जाना सम्भव नही था । यह नासिर कोई और व्यक्ति था ।

पाद-टिप्पणी :

४४२. (१) इस युद्ध का काल सन् १४८३ ई० माना जाता है । फारसी इतिहासकारो के अनुसार सैय्यिद हसन ने बालतिस्तान पर आक्रमण कर जीत लिया था । वहाँ के सरदारो को जीतकर श्रीनगर लौटा ।

जहाँगीर पराजित हो गया था । वहाँ के शासक ल्हचेन भगन (सन् १४७०–१५०० ई०) ने जहाँगीर को पराजित किया था । भोट्टो ने सेना के पृष्ठभाग मे आक्रमण किया था । (इडियन एण्टीक्वेरी : २ १९१ सन् १९०८ ई०) ।

पाद-टिप्पणी :

४४३. (१) अनुरोध . परिस्थितियो के कारण

बहद्रुरागादयस्तस्य सेवका वृद्धभूभुजः ।
केचिज् ज्युल्च्याणभुट्टाजिवह्नौ शलभतां गताः ॥ ४४४ ॥

४४४. उस वृद्ध भूपति के बहद्राग आदि कुछ सेवक ज्युलचा[1] एवं भुट्ट[2] के युद्धाग्नि में सलभ बन गये।

पूर्वापकारस्मरणात् सैदास्ते रन्ध्रलब्धिताः ।
नोस्सराजानकं रुद्धदर्शनं तं न्यवारयन् ॥ ४४५ ॥

४४५. रन्ध्र[1] (दुर्बलता) का लाभ उठाकर, सैय्यिदों ने पूर्व उपकार का स्मरण कर, उस राजानक को निवारित कर दिया जिसको राजदर्शन करने से वंचित कर दिया गया था।

तेभ्यः स्वानिष्टमाशङ्क्य निजरक्षणदक्षधीः ।
युक्त्या तद्दर्शनो राज्ञो राष्ट्रं मार्गपतिर्ययौ ॥ ४४६ ॥

४४६. उनसे अपने अनिष्ट की आशंका करके, निज रक्षण में दक्ष बुद्धि मार्गपति, उसके दर्शन हेतु युक्ति से राजा के राष्ट्र में गया।

---

से श्रीवर वर्णन करना उचित नहीं समझता। वह घटनाओं का प्रत्यक्षदर्शी था अतएव परिस्थितियों से बाध्य होकर, उसने सत्य बात कहना उचित नहीं समझा क्योंकि उस पर तथा अन्य लोगों पर उसके कथन के कारण विपत्ति किंवा संकट आ सकता था।

**पाद-टिप्पणी :**

४४४. (१) ज्युल्च्या : जुलजू = जुलजू = दुलुचा : दलचा = दुलच्छा = जुलू = जुल कदर खां : एक ही शब्द के पर्यायवाची नाम जोनराज के परवर्ती इतिहासकारों ने दिया है। दुलचा आक्रमक काश्मीर मण्डल में जोजिला दर्रे द्वारा प्रवेश किये थे। मंगोल आक्रमक थे। दुलचा आक्रमण का काल सन् १३१९ ई० माना जाता है। जुलचा लोगों ने भयंकर अत्याचार किया था। उनके अत्याचार की कहानी प्रत्येक इतिहासकार वर्णन करता है। जुलचा आक्रमण के समय काश्मीर में किंचितमात्र प्रतिरोधात्मक शक्ति नहीं रह गयी थी। जुलचा ने मनमाना लूटपाट किया। काश्मीर मण्डल त्याग कर बाहर निकल गया। द्र० . जोन० : श्लोक : १५६।

(२) भुट्ट : जुलचा आक्रमण के उत्तरार्ध-काल में रिंचन भौहकी जोजिला दर्रा से काश्मीर मण्डल में प्रवेश किया था। रिंचन ने काश्मीर का त्याग लूटपाट कर नहीं किया बल्कि रामचन्द्र की हत्या कर, काश्मीर के सिंहासन को हस्तगत कर लिया। यह पहला विदेशी काश्मीर के ज्ञात पाँच हजार वर्षों के इतिहास में है, जिसने काश्मीर में विदेशी शासन की नींव डाली। सन् १३२० ई० में वह काश्मार का राजा बन गया। तत्पश्चात् शाहमीर सन् १३३९ ई० में कोटा रानी की हत्या कर, काश्मीर का राज्य हस्तगत कर स्वयं प्रथम मुसलिम सुल्तान बन गया। परिणाम हुआ कि कालान्तर में समस्त काश्मीर मुसलमान हो गया और हिन्दू राज्य सर्वदा के लिए लोप हो गया। द्र० : १ : १ : ५१; ८२।

**पाद-टिप्पणी :**

४४५. (१) रन्ध्र = छिद्र = खाई = दरार। बलहीन या अरक्षित स्थान जहाँ से सरलतापूर्वक आक्रमण, व्यूह, दुर्ग, मोर्चेबन्दी में प्रवेश किया जा सके।—रन्ध्रोपनिपातिनोऽनर्थाः–श० : ६, रन्ध्रान्वेषण दक्षाणं दिपायामिषतांययौ–रघु० : १२ : ११ : १५ : १७; १७ : ३१।

ततः सैदेष्वनष्टेषु प्रजानाशनकारिषु ।
आशङ्क्यानिष्टमात्मीयं युक्त्या राजाग्रमाययौ ॥ ४४७ ॥

४४७. सैय्यिदो के प्रजा का नाश करते रहने पर, अपने अनिष्ट की आशका करके युक्ति से राजा के सम्मुख आया।

एकदा रहसि क्ष्मापमब्रवीत् स ज्यहाङ्गिरः ।
राजन् सैदा यदानीता अमी निष्कासिता अपि ॥ ४४८ ॥

जहाँगीर की चेतावनी :

४४८ उस जहाँगीर ने एक समय एकान्त मे राजा से कहा—'हे राजन्! निष्कासित भी यह सैय्यिद जो—

सोऽयं निष्कण्टके देशे स्वस्यानर्थः स्वयं कृतः ।
यथैव राज्ययोग्यस्त्वं पौत्रः श्रीजैनभूपतेः ॥ ४४९ ॥

४४९ 'इस निष्कटक मे ले आये गये, यह स्वय अपना ही अनर्थ किया गया। जिस प्रकार श्री जैनभूपति के पौत्र तुम राज्य के योग्य हो—

दौहित्रोऽपि तथैवास्य प्राप्तो मेयामहम्मदः ।
सैदास्ते सर्वदा शङ्क्यास्तुरुष्काश्वस्तमानसाः ॥ ४५० ॥

४५० 'उसी प्रकार उसका दौहित्र मिया मुहम्मद भी आ गया। तुरुष्को से आस्वस्य मन-वाले वे सैय्यिद सर्वदा शकनीय हैं—

गृध्रा इवामिषे राज्ये ये लुब्धाः सन्ति संततम् ।
न युक्तैकप्रियासक्तिर्बहुभावस्य ते विभो ॥ ४५१ ॥

४५१ मास पर गृद्ध की तरह राज्य पर जिनकी लुब्ध दृष्टि सदैव रहती है। हे राजन्! बहुभाव वाले आपके लिये एक प्रिया के प्रति आसक्ति ठीक नही है—

एकवल्लीरतो भृङ्गः सततं केन शस्यते ।
यदि जायाविधेयत्वं न स्यात् तव महीपते ॥ ४५२ ॥

४५२ 'एक वल्ली मे निरन्तर रत भृङ्ग' की कौन प्रशसा करता है। हे नृप! यदि तुम स्त्री के आधीन न होते—

---

पाद-टिप्पणी :

४५१. उक्त श्लोक में प्रयुक्त भाव के स्थान पर भार्या का अर्थ प्रसङ्गोचित प्रतीत होता है।

पाद-टिप्पणी :

४५२ (१) भृङ्ग : भौंरा : भ्रमर। इसका अर्थ लम्पट एव कामुक भी होता है। लम्पट अथवा कामुक जिस प्रकार एक ही नारी से सम्पर्क न रख कर परनारी के पीछे दौडता रहता है, उसी प्रकार भृङ्ग केवल एक पुष्प पर न गुनगुना कर, अनेक पुष्पो पर गुंजन करता फिरता है।

—भृङ्गो पुष्प पुरुष स्त्री वाछति नवं नवम्

सर्वं सिद्ध्यति कार्यं तत् स्त्रीजितो मा भव प्रभो।
मया त्वद्राज्यरक्षार्थं स्वरक्षार्थं च गम्यते ॥ ४५३ ॥

४५३. 'तो तुम्हारा सब कार्य सिद्ध हो जाता। अतः हे प्रभु ! स्त्रीवश वशीभूत मत हो। मैं तुम्हारे राज्य और अपनी रक्षा के लिये—

बहिर्देशो ह्यतः स्वात्मा रक्षणीयो यथा तथा।
इति श्रुत्वा तथेत्युक्त्वा राजा रात्रौ प्रियान्तिके ॥ ४५४ ॥

४५४. बाहर के देश जा रहा हूँ। अतः यथा कथंचि अपनी रक्षा कीजिए।' यह सुनकर—'ठीक है', कहकर, रात्रि में प्रिया के निकट—

तदुक्तमब्रवीत् सर्वं स्नेहमोहवशीकृतः।
तेन मार्गपतेः क्रुद्धा भोगिनीव भयावहा।
अनिष्टं चिन्तयन्त्यासीत् पितृपक्षमतादृता ॥ ४५५ ॥

४५५. मोह के वश होकर, उसकी कही सब बातें (रानी से) कह दिया। इससे भयावह सर्पिणी के समान क्रुद्ध होकर, पितृपक्ष में आदरभाव वाली, वह मार्गपति का अनिष्ट चिन्तन करने लगी।

पुरुषानवधीर्य यत्र नारी
प्रभवत्येव जितप्रिया स्वतन्त्रा।
कुपितेव तदीक्षणाद् विशिष्टा
न चिरं तिष्ठति तत्र राज्यलक्ष्मीः ॥ ४५६ ॥

४५६. प्रिय को जीतकर, स्वतन्त्र नारी पुरुषों की उपेक्षा कर, जहाँ प्रभावशाली हो जाती है, उसे देखने से कुपित-सी होकर के, विशिष्ट राजलक्ष्मी चिरकाल तक वहाँ नहीं रहती।

अमुञ्चद् वल्लभापार्श्वं तत्पक्षानुग्रहग्रहः।
मल्लेकाह्मदवद्राज्यं तदायत्तं ततोऽकरोत् ॥ ४५७ ॥

४५७. उस (रानी) के पक्ष के ऊपर अनुग्रह युक्त होकर, (रानी) के पास से वह गया, और मल्लिक अहमद के समान राज्य उनके आधीन कर दिया।

जहाँगीर का बहिर्गमन :

सैदेभ्योऽनिष्टमाशङ्क्य त्रस्तो राज्ञ्या विरुद्धया।
कार्कोटद्रङ्गमार्गेण मार्गेशः सबलो ययौ ॥ ४५८ ॥

४५८. सैय्यिदों से अनिष्ट की आशंका कर, और विरुद्ध रानी से त्रस्त, मार्गेश सेना सहित कार्कोट द्रंग[१] मार्ग से चला गया।

---

पाद-टिप्पणी :

४५३. 'ह्यतः' पाठ—बम्बई।

पाद-टिप्पणी :

'राज्ञ्या' पाठ—बम्बई।

४५८. कार्कोट द्रंग : द्रंग शब्द द्वार का अप-

सर्वां कुटुम्बसामग्रीं भाङ्गिलान्तरतो नयन् ।
गच्छन् दुर्गममार्गेण न स धैर्याद् व्ययुज्यत ॥ ४५९ ॥

४५९. सब कुटुम्ब सामग्री भांगिल[1] के अन्दर से लेकर, दुर्गम मार्ग से गमन करते हुए, जहाँ-तहाँ वह धैर्यच्युत नही हुआ।

तद्राज्यसिन्धुर्विपुलः समृद्ध्या
व्यलक्षि यः संभृतवाहिनीकः ।
परस्परामात्यविरोधवात्या-
विक्षोभितोऽभूत् स विकीर्णरत्नः ॥ ४६० ॥

४६० वाहिनी से पूर्ण एव समृद्धि से विपुल, उसका राज्य रूप समुद्र, जो देखा गया था, वह मन्त्रियो के परस्पर विरोध रूपी ववडर से विक्षोभित हो उठा और रत्न[1] राशि बिखर गये।

---

भ्रश है। तोश मैदान प्रवेश मार्ग पर यह सैनिक अथवा पहरे किंवा सुरक्षा की चौकी थी वीरू परगना में यह वर्तमान गाँव द्रग है। द्वार के स्थान पर पुराने पहरे का मीनार खडा था। इस समय बरबल अर्थात् फाटक या दरवाजा का स्थान कहा जाता है। तोश मैदान से कर्कोट द्रग होता मार्ग लोहर जाता था। कार्कोट नाम एक पर्वत बाहुमूल के कारण पडा है। उसे आज काकोदर कहते हैं। इस पर्वत के किनारे-किनारे ६ मील तक मार्ग जाकर, काश्मीर उपत्यका की ओर दर्रा से उतरता है। काश्मीर में पहाडों के नाम के 'दर' लगा देते है। दर शब्द धर का अपभ्रश है। धर का अर्थ पहाड या पर्वत होता है। द्र० क० रा० : ७ · १४०; ८ १९९७।

पाद-टिप्पणी :

४५९. ( १ ) भांगिल : द्र० : पाद-टिप्पणी : जै० · ३ : ३८० ।

पाद-टिप्पणी ·

४६० ( १ ) रत्न . राज्य के सर्वोच्च अधिकारी रत्नी किंवा रत्न कहे जाते थे। अकबर के नवरत्न प्रसिद्ध है। भारतवर्ष की सर्वोच्च पदवी भारतरत्न है। राजा के ग्यारह रत्नियों का उल्लेख वैदिक साहित्य में मिलता है। कालान्तर में कुछ परिवर्तन अवश्य हुआ, परन्तु बहुधा सभी ग्रथों में रत्नियों का वर्णन एक-सा ही है—(१) सेनापति, (२) पुरोहित, (३) राजमहिषी, (४) सूत ग्रामणी, (५) क्षत्ता, (६) सगृहीता, (७) अक्षावपि, (८) भागदुध, (९) गोविकर्तन, (१०) दूत, (११) परिवृत्ति। ( शतपथब्राह्मण० . ५ : ३ : २, तैत्तरीय ब्राह्मण० : १ : ७ : ३ ) ।

रत्नियों को राज्य का दाता कहा गया है। कालान्तर में कुछ उक्त पदाधिकारी तीर्थ कहे जाने लगे। उनकी संख्या अट्ठारह तक हो गयी थी।

सान्ना दैन्यमुदारदानविधिना वित्तप्रकर्षक्रिया
मेदाद् पैशुनकर्म मर्मदलनं युद्धेन नाशो विशाम्।
इत्यालोच्य विरोधिषु प्रतिदिनं वर्धत्स्वशक्ते प्रभौ
देशत्यागमुपायमेकमुचितं कोऽप्युत्तमो गाहते ॥ ४६१ ॥

४६१. साम[1] से दैन्य[2] का, उदार दान विधि से धन का प्रकर्ष,[3] पारस्परिक भेद से मर्मघाती पैशुन कर्म, युद्ध द्वारा प्रजा का विनाश आदि का विचार कर, विरोधियों में प्रतिदिन राजा की शक्ति के बढ़ जाने पर, एक मात्र उचित उपाय देश त्याग को, कोई एक उत्तम पुरुष मानता है।

आयुक्तपक्षनाशेन पश्चात्तापाहतो नृपः।
मार्गपत्यादिनाशेन क्षते क्षारमिवान्वभूत् ॥ ४६२ ॥

४६२. आयुक्त पक्ष के नाश के कारण पश्चाताप से आहत, नृप मार्गपति आदि का नाश होने से, क्षत पर क्षार[1] (कटे पर नमक) सदृश, दुःख अनुभव किया।

मार्गेशाद्यैर्विना राजा सर्वसैंदान्वितोऽपि सन्।
स्वात्मानं गणयामास यूथभ्रष्टमिव द्विपम् ॥ ४६३ ॥

४६३. समस्त सैंय्यिदों से समन्वित होने पर भी, राजा मार्गेश आदि जनों के विना, अपने को यूथ भ्रष्ट सदृश माना।

मार्गपत्यन्वये जाताः प्रतीहारान्वये च ये।
ठक्कुरान्वयजाः कोशाध्यक्षजा अपरे च ये ॥ ४६४ ॥

४६४. मार्गपति[1], प्रतीहार[2], ठक्कुर[3] वंश में जो लोग उत्पन्न थे, दूसरे कोशाध्यक्ष के सन्तान में—

---

पाद-टिप्पणी :

४६१. (१) साम : द्र० : १ : ७ : ८३; २ : १८७।

(२) दैन्य : दयनीय, दरिद्रता एवं अहंकार का प्रतिकूल भाव है—दरिद्राणां दैन्यम्—गंगा २। —इन्दोर्दैन्यं त्वदनुसरण क्लिष्टकान्तेर्बिभर्ति—मेघ० ७४।

(३) प्रकर्ष : श्रेष्ठता, प्रमुखता, तीव्रता, प्रबलता—प्रकर्ष गतेन शोकसन्तानेन : उत्तर० : ३।

पाद-टिप्पणी :

४६२. (१) क्षतैक्षार : कटे पर नमक छिड़कना प्रचलित मुहावरा है। संस्कृत में भी प्रचलित है—क्षतेक्षार मिवासह्यं जातं तस्यैव दर्शनम्—उत्तर० : ४ : ७; क्षारं क्षते प्रक्षिपन—मृच्छ० : ५ १८।

पाद-टिप्पणी :

४६४. (१) मार्गपति : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी जैन० : १ : १ : ८८।

(२) प्रतिहार : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : १ : ८८।

स्वस्वपक्षोर्जिताः पूर्वे येऽभवन् विजयोर्जिताः ।
नष्टमन्त्रविरोधेन शतैकीयोऽवशिष्यते ॥ ४६५ ॥

४६५. पहले के जो लोग अपने अपने पक्ष मे प्रवृद्ध एव विजयोर्जित हो गये थे, दुर्मन्त्र एव विरोध के कारण, उन सैकडो मे कुछ एक बचे ।

तस्मिन् याते बहिर्वर्षत्तुषारं प्रसभ नभः ।
भाग्याधिकोऽयं सर्वेभ्यो विशां चिच्छेद संशयम् ॥ ४६६ ॥

४६६ उसके बाहर चले जाने पर, जोरो की तुषार वृष्टि करते नभ ने—'सबो की अपेक्षा वह अधिक भाग्यशाली है, प्रजाओ के इस सशय को दूर कर दिया ।'

हिमानीपातभारेण येऽवसन्नत्र मण्डले ।
ययुर्निश्छायतां वृक्षा भग्नशाखा जना इव ॥ ४६७ ॥

४६७ इस मण्डल मे जो लोग रहते थे, वे हिमपात के भार से भग्न शाखावाले वृक्षो के समान, छाया रहित हो गये ।

प्राक्चेत् पतेद्धिम तावन्म्रियेरन् त्रुडिताः क्षणात् ।
पिष्टराभ्यर्गर्तााटाः प्रविष्टा इव तद्भटाः ॥ ४६८ ॥

४६८ पिष्टर मे प्रविष्ट चूहे सदृश, गर्त मे छिपे, उसके भट्ट यदि पहले हिमपात हुआ होता, तो क्षणभर म सब डूब मरते ।

तेनैकेन विना सर्वहृदयाह्लाददायिना ।
नाशोभत सभा राज्ञश्चन्द्रेणेव कुमुद्वती ॥ ४६९ ॥

४६९ सबके हृदय के आल्हाद देनेवाले, उस एक के बिना, राजा की सभा उसी प्रकार शोभित नही हो रही थी, जिस प्रकार चन्द्रमा क बिना कुमुदिनी ।

तटस्थो भृत्यकार्येषु सैंदभार्याविधेयधीः ।
विस्रस्तव्यवहारस्त्र निन्द्यत्वं चागमन्नृपः ॥ ४७० ॥

४७० सैय्यिदो एव भार्या के आधीन बुद्धि, राजा भृत्य कार्यो मे तटस्थ और उसका व्यवहार विशृंखलित और निन्दनीय हो गया था ।

---

( ३ ) ठक्कुर द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० १ १ ४४ तथा जोन० श्लोक ६८८ तथा ७१६ । क्षेमेन्द्र ने लोकप्रकाश में ठक्कुरों (ठाकुरों) के विषय में लिखा है—ठक्कुरो नापितश्चैव मल्लुल्यापि कुशाग्र धी । विद्यासगुर कर्मज्ञो वाकछुते वंदि मतम् ॥ पृष्ठ ५२ ।

पाद-टिप्पणी

४६९ ( १ ) कुमुदिनी : कमल सूर्य के प्रकाश में खिलता है और चन्द्रज्योत्स्ना में कुमुदिनी विकसित होती है—यथेन्दावानन्द व्रजति समुपोढे कुमुदिनी—उत्तर० ५ २६, शि० : ९ ३४ ।

स्वराज्यरक्षणाचारलक्षणाक्षमशासनः ।
निन्दन् दाक्ष्यं सदैवासीत् प्रियेक्षणकृतक्षणः ॥ ४७१ ॥

४७१. स्वराज्य रक्षण के आचार लक्षण में उसका शासन अक्षम था और प्रिया को देखना ही, उसका उत्सव था और वह सदैव दक्षता की निन्दा करता था ।

निग्रहानुग्रहव्यग्रा उत्कोचग्रहतत्पराः ।
अन्तरङ्गाः स्त्रियोऽभूवन्न मन्त्री न च सेवकः ॥ ४७२ ॥

४७२. निग्रह एवं अनुग्रह में व्यग्र, उत्कोच ग्रहण में तत्पर, स्त्रियाँ अन्तरंग थीं, न कि मन्त्री और सेवक ।

भोगलोभोज्झितौचित्या अर्थं विन्दन्ति साम्प्रतम् ।
तुरुष्कपुष्कलाश्वासाः स्वार्थमर्थं न च प्रभोः ॥ ४७३ ॥

४७३. तुरुष्कों द्वारा प्रचुर (पुष्कल[1]) आश्वासन प्राप्त ये लोग, भोग लोभ से, औचित्य त्यागकर, इस समय केवल अपने स्वार्थ को प्राप्त करने में लगे थे, न कि स्वामी के लाभ की ।

अनायका विनश्यन्ति नश्यन्ति शिशुनायकाः ।
स्त्रीनायका विनश्यन्ति नश्यन्ति बहुनायकाः ॥ ४७४ ॥

४७४. बिना नायक के लोक का विनाश हो जाता है, शिशु जिनका नायक होता है, उनका भी नाश हो जाता है, स्त्री नायक वालों का विनाश हो जाता है और बहुनायक[1] वालों का नाश हो जाता है ।[2]

स्त्रीविधेयं समालोक्य राज्यं तस्य महीपतेः ।
इति श्लोकं पठँल्लोकः सशोकः समदृश्यत ॥ ४७५ ॥

४७५. उस राजा का राज्य स्त्री द्वारा अनुशासित जानकर, इस श्लोक को पढ़ते हुए लोग शोकान्वित देखे गये ।

---

पादटिप्पणी :

४७२. 'मुत्कोच' पाठ-बम्बई ।

४७३. (१) पुष्कल : श्रीवर ने 'पुष्कल' तथा आश्वास को समानार्थक शब्द माना है। श्रीवर ने पुष्कल एवं आश्वास इस श्लोक में प्रयुक्त है। द्र० : ३ : ३३१। इसका एक अर्थ किया जा सकता है। तुरुष्कों द्वारा प्रचुर अर्थ प्राप्त ये लोग भोग-लोभ से औचित्य त्यागकर इस समय केवल अपने स्वार्थ को प्राप्त करते में लगे थे न कि स्वामी के लाभ की इच्छा से ।

पादटिप्पणी :

४७४. (१) नायक : श्रीवर ने विनाश एवं नाश में भेद किया है। बिना नायक एवं स्त्री नायक वालों का विनाश तथा शिशु एवं बहुनायक वालों का नाश होता है ।

(२) यह श्लोक चाणक्य (ना० : २ : ५४) से उद्धृत किया गया है ।

ध्यायतो मार्गपत्यार्दीस्तत्प्रत्यानयनाक्षमः ।
शयनीयविमुक्ताङ्गस्तप्यते स्म दिवानिशम् ॥ ४७६ ॥

४७६ इस महीपति का राज्य स्त्री के आधीन देखकर, सशोक लोक यह (उक्त) श्लोक पढ़ते देखे गये ।

अत्रान्तरे स मार्गेशो लोहरान्तरसंश्रयः ।
स्वामिचिन्ताकुलो लेखशिक्षामित्थं व्यसर्जयत् ॥ ४७७ ॥

४७७. इसी बीच लोहरान्तर में आश्रय[1] प्राप्त कर, स्वामी की चिन्ता से आकुल, मार्गेश इस प्रकार शिक्षाप्रद लेख भेजा ।

राजन् पुंरत्नकोशस्ते योऽभूत् सर्वार्थसाधकः ।
उत्पाट्योत्सारितः सैदैर्यद्दारिद्र्यं सुदुःसहम् ॥ ४७८ ॥

४७८. 'हे ! राजन् !! सैय्यिदो ने सर्वार्थ साधक[1] पुरुष-रत्नो को उत्पाटित कर, दूर कर दिया और दुःसह दारिद्र्य ला दिया ।

निसर्गगुरवो नान्यसङ्गमिच्छन्ति चञ्चलाः ।
अमी परस्पराभिन्नाः पारदस्य कणा इव ॥ ४७९ ॥

४७९ 'स्वभाव से भारी (गुरु) एव चचल, परस्पर भिन्न ये लोग, पारद[1] के कण सदृश, दूसरे की सगति नही चाहते ।

---

पाद-टिप्पणी

४७७ ( १ ) आश्रय : फिरिश्ता लिखता है—'अन्य अधिकारियों में जो सैय्यिद हसन के दमन से बच सके थे, वह जहाँगीर माक्रे था । उसने लोहर दुर्ग में आश्रय लिया ( ४७९ ) ।

पीर हसन लिखता है—'बाकी लोग खौफ से हिन्दुस्तान भाग गये । एक बहुत बडे अमीर जहाँगीर रैना ने किला लोहरकोट में आकर पनाह ली ।'

पाद-टिप्पणी .

४७८ सर्वार्थ साधक : सभी कार्यों या समग्र विषयों को पूर्ण या सिद्धकर्ता । सर्वार्थसिद्ध भगवान बुद्ध की एक सज्ञा है ।

पाद-टिप्पणी :

४७९. ( १ ) पारद = पारा : उज्ज्वल तरल रहता है । वह निकलने पर लुढकता रहता है । द्रव अवस्था में रहता है । परन्तु वह किसी से मिलता नही । अपना अस्तित्व अलग बनाये रखता है । किसी वस्तु के पास रखने या मिलाने पर, उसका कण-कण अलग दिखाई पडता रहता है । यह क्रिया कच्चे पारे में होती है ।

गन्धक और पारा मिला द्रव्य मिलता है । उसे इगुर कहते है । पारा की खान नैपाल, चीन, जापान तथा स्पेन में है । वहाँ से भारत में आता है । पारा की सज्ञा रसराज से दी गयी है । पुराणों में पारे की उत्पत्ति शिव के वीर्य से मानी गयी है ।

श्वेत, रक्त, पीत एव कृष्ण रंगों में पारा मिलता है । श्वेत पारा श्रेष्ठ होता है । इगुर से पारा अलग तथा शोधन करने की अनेक विधियो का उल्लेख रस ग्रन्थ में है । पारा में छ. रस वर्तमान रहते हैं । पारा विषय रसेश्वर दर्शन ही है । पारा रसेन्द्र है ।

हरिचन्दनवद् राजन् सर्वसौख्यप्रदो भवान् ।
किंतु फूत्कारकारिण्या भोगिन्या वेष्टितो ह्यसि ॥ ४८० ॥

४८०. 'हे ! राजन् !! सबके लिये सुखप्रद, आप हरिचन्दन[1] वृक्ष के समान फूत्कारिणी, भोगिनी द्वारा परिवेष्टित कर लिये गये हो।

यस्मिन् स्फूर्जद्विषज्वाला व्यालाः सन्ति परासहाः ।
निधानमिव तद्राज्यं त्याज्यं कस्य न सन्मतेः ॥ ४८१ ॥

४८१. 'जहाँ पर परासहिष्णु, परांमुख एवं प्रवृद्ध विष ज्वाला युक्त व्याल है, विधान सदृश वह राज्य, किस बुद्धिमान के लिये त्याज्य नहीं होगा ?

प्रदीप्तापि न या स्पृश्या दृश्यापि भयकारिणी ।
श्मशानाग्निशिखेवासौ लक्ष्मीः सा केन सेव्यते ॥ ४८२ ॥

४८२. 'जो प्रदीप्त होने पर स्पर्श योग्य नहीं है, और देखने पर भी भयकारिणी है, श्मशान अग्नि शिखा सदृश लक्ष्मी का सेवन कौन करेगा ?

---

पारा कृमी और कुष्ठ नाशक है। नेत्र के लिए हितकर है। छः रसों से युक्त त्रिदोषनाशक, योगवाही, शुक्रवर्धक एवं सर्वनाशक है। कच्चा पारा में दोष होता है। उसका पाचन कठिन है। पारा शोध कर ही व्यवहार किया जाता है। पारा शोधन का कार्य आठ प्रकार का—स्वेदन, मर्दन, उत्थापन, पातन, बोधन, नियामन और दीपन कहा गया है। भावप्रकाश में मूर्छन का उल्लेख मिलता है। कुछ औषधियों के मर्दन से शुद्ध होता है।

पाद-टिप्पणी :

'फूत्कार' पाठ—बम्बई।

४८०. (१) हरिचन्दन : एक प्रकार का चन्दन तथा स्वर्ग के पाँच वृक्षों में एक है।

पञ्चैते देव तरवो मन्दारः पारिजातकः सन्तानः कल्पवृक्षश्च पुंसि वा हरिचन्दनम् ॥ अमर० : १ : स्वर्गवर्ग : ५३।

(१) मन्दार, (२) पारिजात, (३) सन्तान, (४) कल्पवृक्ष, (५) हरिचन्दन।

हरिचन्दन का परिभाषा अमरकोषकार करता है–हरिचन्दन महस्त्रियाम् : २ : मनुष्य वर्ग : १३१। पीत वर्ण चन्दन को हरिचन्दन कहा जाता है। राजनिघण्टु में उल्लेख है—

हरिचन्दनं सुरार्हं हरिगन्धं चन्द्र चन्दनं दिव्यम् ।
दिविजं च महागन्धं नन्दनजं लोहितजं नवसंज्ञम् ॥
हरिचन्दं तु दिव्यं तिक्तं हिमं तदिहदुर्लभं मनुजैः ।
पित्तादोषविलोपि चन्दनं वन्ध्रमहरं च शोषहरम् ॥

लोकप्रकाश में चन्दन, हरिचन्दन तथा श्रीखण्ड चन्दन का उल्लेख किया गया है (पृष्ठ २०)।

मंख ने हरिचन्दन को कुंकुम तुल्य माना है—
कुङ्कुमे देववृक्षे पुंसि वा हरिचन्दनम् ॥ ५२७ ॥

हरिचन्दन पीतचन्दन की लकड़ी या पीले चन्दन को भी कहते हैं।

स मेयाहस्सनस्तत्तद्दुर्ग्रहग्रस्तवासनः।
आप्तैरुक्तोऽपि सन्मार्गे न तिष्ठतीव रावणः॥ ४८३॥

४८३ 'तत् तत् दुराग्रहो मे ग्रस्त संस्कारवाला, वह मीया हस्सन विश्वस्त जनो के कहने पर, भी रावण[1] के समान सन्मार्ग पर नही आता है।

मेराख्या ताडकेवात्र सूत्कोचामिषभक्षिणी।
पौलस्त्यस्येव ते सर्वनाशार्थं निकटे स्थिता॥ ४८४॥

४८४ 'ताडका' सदृश उत्कोच रूपी आमिष का भक्षण करनेवाली, मेरा[2] पौलस्त्य (रावण) के समान सबका नाश करने के लिये तुम्हारे निकट रहती है।

तिष्ठन्त्वभ्यन्तरे सैदा मदीष्टा भवदन्तिके।
तुरुष्ककरगं देशमिहस्थः साधयाम्यहम्॥ ४८५॥

४८५ 'प्रिय सैय्यिद लोग आपके निकट अन्दर स्थित रहे मै यहाँ स्थित रहकर, तुरुष्क हस्तगत देश को ठीक कर रहा दूँ।'

---

पाद-टिप्पणी :

४८३. ( १ ) रावण : रावण दशग्रीव लकापति है। पिता का विश्रवस् तथा प्रपिता का नाम पुलस्त्य था। राम दाशरथी सीता का हरण करने के कारण प्राचीन भारतीय इतिहास में रावण पाशवी वासना एव दुष्टता का प्रतीक बन गया है। राम से युद्ध न कर, सीता को लौटा देने के लिए पत्नी मन्दोदरी, भ्राता कुम्भकर्ण, विभीषण, बालिपुत्र अगद तथा अनेक लोगों ने उसे अच्छी सलाह देकर विनाश से उसे बचाने का प्रयास किया किन्तु अपने विश्वासपात्र सबकी उपेक्षा करता, कुमार्ग का त्याग नही कर सका। अन्त में राम द्वारा मारा गया। उसके स्थान पर विभीषण राजा हुआ। लका जल गयी। कुल का नाश हो गया।

पाद टिप्पणी :

'सूलोच' पाठ—बम्बई।

४८४. ( १ ) ताडका : सुकेतु यक्ष की कन्या थी। जम्भ के पुत्र सुद की पत्नी थी। इसे हजार हाथियों का बल था। मारीच एव सुबाहु इसके पुत्र थे। सुद ने अपराध किया था। अगस्त्य ने उसे शाप देकर नष्ट कर दिया। प्रतिहिंसा से क्रोधित अपने पुत्रों सहित अगस्त्य पर ताडका ने आक्रमण किया। अगस्त्य ने मारीच को राक्षस तथा ताडका को मनुष्यभक्षी एव कुरूप होने का शाप दिया। शाप के पश्चात् मलय तथा करुपदेश में निवास करने लगी। वह प्रदेश मानव-भक्षण के कारण उजड गया। उसका नाम ताडका वन पड गया। विश्वामित्र मुनि के यज्ञ को वह नष्ट किया करती थी। मुनि ने भगवान रामचन्द्र की सहायता लिया। राम ने ताडका वध किया। ताडका मायावी थी। अनेक रूप धारण करती थी।

( २ ) मेरा : इस स्त्री का सुल्तान के ऊपर प्रभाव था। परिस्थिति का लाभ उठाकर, वह घूस तथा जनता को पीडा पहुँचा कर, धन एकत्रित करती थी। यह मेर हस्सन की कन्या थी। यह भी सुल्तान की एक रानी थी।

पाद-टिप्पणी

'करग' पाठ—बम्बई।

४८५. ( १ ) श्रीदत्त ने अनुवाद किया है—

राजद्रोही न कोऽप्यस्मत्कुलेऽभूद् भक्तिवर्जितः ।
त्वदेकशरणः सोऽहं स्थामस्थो द्वाःस्थवद् वसे ॥ ४८६ ॥

४८६. 'हमारे कुल में (राज) भक्ति रहित एवं राजद्रोही नहीं हुआ, एक मात्र तुम्हारे शरणवाला द्वार पर द्वास्थ (द्वारपाल) सदृश स्थिर रहूँगा ।

वयमेव सदाचारा विचारविशरारवः ः
उन्मार्गे यदि गच्छामः कोऽप्यस्मासु न विश्वसेत् ॥ ४८७ ॥

४८७. 'सदाचारी एवं विचारशील हमलोग ही यदि कुमार्ग पर चलेंगे, तो कोई विश्वास नहीं करेगा ।

कल्पान्तमपि जीवित्वा कृत्वापि धनसञ्चयम् ।
हत्वाप्यरीन्न कोऽप्यत्र भवे भवति सुस्थिरः ॥ ४८८ ॥

४८८. 'कल्पान्त तक जीवित रहकर, धन संचय करके, और शत्रुओं का हनन करके, इस संसार में कौन सुस्थिर हो पाता है,—

नष्टेऽन्यस्मिन् भवांस्त्राता त्वयि नष्टे परोऽस्तिकः ।
इति लेखं नृपस्याग्रे बुद्ध्वा मार्गपतेर्द्रुतम् ॥ ४८९ ॥

४८९. 'अन्य के नष्ट होने पर आप रक्षक हैं और आपके नाश होने पर, दूसरा कौन है ?' मार्गपति का यह लेख राजा के समक्ष जानकर—

स मेयाहस्सनः क्रोधाच्छ्वसन्नहिरिवाब्रवीत् ।
सोऽहं स्थानच्युतस्तत्र स्वजीवनविवर्जितः ॥ ४९० ॥

४९०. वह मिया हस्सन सर्प सदृश स्वास लेता हुआ बोला—'स्थानच्युत तथा वहाँ अपनी जीवन रक्षा से भी रहित यह—

नूनमस्मत्प्रतापेन शुष्यतीवाब्जषण्डवत् ।
ग्रीष्मोष्मणा विशुष्कस्य पङ्कमात्रावशेषिणः ॥ ४९१ ॥

४९१. 'निश्चय ही हमारे प्रताप से कमल सदृश सूख जायगा । ग्रीष्म की गरमी में शुष्क पङ्क मात्र अवशेष—

---

'यदि आप चाहें तो सैय्यिदों को अपने साथ राज्य में रहने दें, मैं यहाँ से तुरुष्कों के सरदार के करविन्द (करंग) देश में जाऊँगा । श्रीकण्ठ कौल ने नामवाचक शब्द नहीं माना है ।

पाद-टिप्पणी :

'भक्ति' पाठ—बम्बई ।

४८६. ( १ ) द्वास्थ : ड्योढ़ीदार = ड्योढ़ी पर पहरा देनेवाला नौकर । याज्ञ० : ३ : १२; मनु० : ३ : ३८ ।

भृत्यास्तस्य न तिष्ठन्ति तडागस्येव पक्षिणः ।
किं करोतु स्थितस्तत्र तत्रत्यैर्विहितादरः ॥ ४९२ ॥

४९२ 'तडाग के पक्षी सदृश भृत्य उसके पास नही रहेगे। वहाँ रहकर, वह क्या कर सकता है ? वहाँ के लोगो द्वारा आदर प्राप्त—

मदीयदासमात्रोऽपि तं जेतुं क्षमते युधि ।
अथवाहं स्वयं यामि तं निष्कासयितुं ततः ॥ ४९३ ॥

४९३ 'मेरा दास मात्र भी युद्ध मे उसे जीतने की क्षमता रखता है। अथवा मैं स्वय भी उसे वहाँ से निकालने के लिये जाता हूँ।

स तुरुष्कैः समं तत्र ग्रथनं कुरुतेऽन्यथा ।
अथोचे सैदहसनः पूर्वमैत्रीमनुस्मरन् ॥ ४९४ ॥

४९४ 'नही तो तुरुष्को के साथ गठबन्धन कर लेगा।' पूर्व मैत्री का स्मरण कर सैय्यिद हसन ने कहा—

किं नस्तेन हृत राष्ट्रं दीयतामानयाम्यहम् ।
आयुक्तोपप्लवे पूर्वं कृतदिव्याः परस्परम् ॥ ४९५ ॥

४९५ 'उससे हमलोगो की क्या हानि ? अपहृत राष्ट्र दीजिए उसे मैं ले आऊँ। पहले आयुक्त विप्लव के समय परस्पर सपथ लेकर—

अनिष्टं चिन्तयामश्चेत् तत् कथं सहते विधिः ।
तच्छ्रुत्वा नृपतेरग्रे तद्वैरैकाग्रमानसः ॥ ४९६ ॥

४९६ 'यदि हम लोग उसका अनिष्ट सोचेंगे, तो विधाता कैसे सहन करेगा ?' राजा के समक्ष यह सुनकर, उसके प्रति अत्यन्त वैर भाव वाला—

तूर्णं दौलतयान स्वं नौशहाराधिपं व्यधात् ।
बाह्यस्थः साधयत्येष कार्यं सद्भृतकाग्रणीः ॥ ४९७ ॥

४९७ 'वह अपने दौलत यान[1] (खान) को नौशहरा[2] का अधिपति बना दिया। सद् भृत्या का अग्रणी, बाह्य देश मे स्थित, यह कार्य सिद्ध करेगा अत इसे सैन्य सग्रह के लिये कोटि द्रव्य दे दूँ।

---

पाद-टिप्पणी

'दौ' पाठ—बम्बई।

४९७ (१) दौलत : श्रीदत्त ने दौल्तयान ही नाम माना है। दौल्तयान का कोई अर्थ नही निकलता। पाठभेद के अनुसार 'यान' शब्द 'खान' है। पुराने समय में 'ख' को 'प' भी लिखते थे। 'प' में

द्रव्यकोटिं ददामोऽस्मै सैन्यसङ्ग्रहसिद्धये ।
इत्युक्त्वा प्रतिमुक्तं तमेवराजानकं पथः ॥ ४९८ ॥

४९८. 'अतः सैन्य संग्रह करने के लिये इसे द्रव्य दूँगा ।' इस प्रकार कहकर भेजे गये, उस एव राजानक को मार्ग से--

द्रुतं निवर्तयामास दत्तद्रव्यमपि स्वयम् ।
श्रुत्वा परशुरामाद्या मद्राः कश्मीरदेशतः ॥ ४९९ ॥

४९९. शीघ्र ही लौटा लिया, जिसे कि स्वयं द्रव्य देकर भेजा था । यह सुनकर, परशुराम[1] आदि मद्र[2] काश्मीर देश से--

स्वानिष्टशङ्कया गन्तुंसाज्ञ तेभ्यो यथोचिरे ।
ऊचुस्तान् प्रतिमुञ्चामो युष्मान् पाथेयसंयुतान् ॥ ५०० ॥

५००. अपने अनिष्ट की आशंका से जाने के लिये, उनसे निवेदन किये । उन लोगों ने उनसे कहा--'पाथेय[1] सहित तुम लोगों को मुक्त करूँगा ।

कियद्दिनानि तिष्ठध्वं तद्यूयं दत्तवेतनाः ।
तेषु स्ववसतिं यात्सु सैंदास्तेऽन्योन्यमब्रुवन् ॥ ५०१ ॥

५०१. 'अतः वेतन प्राप्त तुम लोग कुछ दिन ठहरो ।' उनके अपने वसती में जाने के लिये उद्यत होने पर सैय्यिदों ने एक दूसरे से कहा--

निष्कास्याः सर्वथैतेन तुरुष्कैकविरोधिनः ।
अत्रान्तरे नरेन्द्रस्य तत्तद्भृत्यादिचिन्तनात् ॥ ५०२ ॥

५०२. 'एक मात्र तुरुष्कों के विरोधी ये लोग सर्वथा निष्काशन योग्य हैं ।' इसी बीच तत् तत् भृत्य आदि के विषय में चिन्तन करने के कारण राजा का--

---

यदि बीच की लकीर छूट जाय तो उसे 'ध' पढ़ सकते हैं । दौलतखान प्रचलित नाम है । यही ठीक मालूम पड़ता है ।

( २ ) नौशहार : शुक ने भी नौशहार का उल्लेख ( १ : १२४ ) किया है । दोनों के अक्षर विन्यास में केवल 'श' तथा 'शा' का अन्तर है । पाठभेद में 'शा' भी मिलता है । अतएव शुक तथा श्रीवर वर्णित नौशाहार तथा 'नौशहार' पाठभेद का 'नौशाहार' एक ही है । इसका वर्तमान नाम नौशेरा है । जम्मू-पूँछ मार्ग पर अखनूर, चौकीचूरा के पश्चात् नौशेरा, पश्चात् चिंगस, राजौरी और पूँछ पड़ता है। मैं इस सड़क से यात्रा दो वार कर चुका हूँ । भीमवर से सत्ताइस मील उत्तर तथा श्रीनगर से एक सौ बाइस मील दक्षिण-पूर्व है । नौशेरा के मध्य शहर में एक मुगलकालीन सराय है । भारत के आजादी के पूर्व ब्रिटिश फौज की छाउनी थी ।

पाद-टिप्पणी :

४९९. ( १ ) परशुराम : मद्र सैनिकों का नेता था । द्र० : ४ : २५, ३५, २७०, ३४५ ।

( २ ) मद्र : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० : २ : १४८ ।

पाद-टिप्पणी :

५००. ( १ ) पाथेय : राह-खर्च ।

जाताधिव्याधितं वक्त्रं पौषे पद्ममिवाभवत् ।
मृगयारसिकाः सैदा निन्युस्तं तादृशं नृपम् ॥ ५०३ ॥

५०३. राजा का मुख पौष मास के समान श्रीहीन हो गया। मृगया रसिक सैय्यिद उस अवस्था मे भी राजा को—

मृगया :

माघे विषयराष्ट्रादिगतान् हन्तुं मृगव्रजान् ।
यत्र यत्रावसद्रात्रौ ससैदः कटकोत्कटः ।
पीड्यमानजनाक्रन्दमुखरास्तद्दिशोऽभवन् ॥ ५०४ ॥

५०४ माघ मास मे विषय राष्ट्र आदि के मृग समूहो को मारने के लिये ले गये। सैय्यिदो एव सैन्य मे उत्कट राजा रात्रि मे जहाँ-जहाँ वास किया, वे वे दिशायें पीड़ित होते जनो के आक्रन्दन से मुखरित हो उठी।

पङ्क्तीः प्रसार्य परितोऽद्रिषु तद्विभागं
यत्रोपवेशमकरोत् कटको नृपस्य ।
तत्रोदतिष्ठदतिनिष्ठुरवाग् जनानां
द्राक्षालताच्छिदि शुचा रुदितस्वनौघः ॥ ५०५ ॥

५०५ राजा की सेना पर्वतो पर, सब ओर, प्रत्येक भाग पर, पक्तिबद्ध होकर, जहाँ पर निवास करती थी, वहाँ पर द्राक्षालतोच्छेदन के शोक से अति निष्ठुर वाणी एव प्रचुर क्रन्दन ध्वनि उठती थी।

गिरयोऽत्युन्नतास्तत्र सुखदाः सान्त्वनिर्भराः ।
आक्रान्ताः कटकैर्हिस्रैर्दुर्जनैरिव साधवः ॥ ५०६ ॥

५०६. वहाँ पर अत्युन्नत सुखद एव शान्तपूर्ण पर्वत हिंसक कटको[1] से उसी प्रकार आक्रान्त हो गये, जिस प्रकार दुर्जनो से साधुजन।

प्रालेयपूरमग्नाङ्गाः कुरङ्गा गिरिशृङ्गतः ।
श्रुत्वा कोलाहलं त्रस्ताः सकुटुम्बाः समाययुः ॥ ५०७ ॥

५०७ कोलाहल सुनकर, हिमपुज से मग्न अगवाले कुरग[1] त्रस्त होकर, कुटुम्ब सहित गिरिशृंग से चले आये।

---

पाद-टिप्पणी

५०६. ( १ ) कटक यहाँ अर्थ सेना के राज सैनिकों से लगाना उचित होगा। मख ने भी कटक का एक अर्थ सैनिक लगाया है—कटकोऽस्त्री नितम्बोद्रे क्लीबे वलय सैन्ययोः ॥ ४५ ॥

पाद-टिप्पणी

५०७. ( १ ) कुरग : हरिण की एक जाति है—'कुरंग ईषत्ताम्रः स्याद्धरिण कृतिवो महान—'

कृष्टजिह्वान् स्फुरद्रक्तसिक्तास्यान् श्वगणावृतान् ।
तांस्तत्राग्रागतान् दृष्ट्वा सैदास्ते तुतुषुर्भृशम् ॥ ५०८ ॥

५०८. उनको वहाँ आया देखकर, सैय्यिद बहुत प्रसन्न हुए, जिनकी जीभ बाहर निकली थी और स्फुरित होते रक्त से जिनका मुख सिक्त था और जो श्वानों[1] से आवृत थे।

हरास्मान् पीवरानेतान् पोतान् मा हर दुर्बलान् ।
इतीव वक्तुं भूपाग्रे प्रापुस्ते सार्भका मृगाः ॥ ५०९ ॥

५०९. 'मोटे-ताजे हमलोगों को हर लो और दुर्बल बच्चों को मत मारो'—मानो यह कहने के लिये ही बच्चों सहित वे मृग राजा के सम्मुख आये थे।

सिद्धाभ्युषितशृङ्गस्थत्रस्तैणवधदर्शनात् ।
क्रुद्धाः स्युर्देवता राजन् मा कृथा मृगयामिमाम् ॥ ५१० ॥

५१०. 'हे ! राजन् !! सिद्ध सेवित, शृंग पर स्थित, त्रस्त मृगों का वध देखने से देवता क्रुद्ध होंगे। अतः यह मृगया मत करो।'

इत्याद्युक्तोऽपि बहुशस्तत्रस्थैः सकलैर्जनैः ।
शृङ्गारीवाङ्गनासङ्गान्न व्यरंसीन्मृगग्रहात् ॥ ५११ ॥

५११. इस प्रकार वहाँ के सकल जनों द्वारा बहुशः कहे जाने पर भी मृगों का मृग ग्रहण उसी प्रकार त्याग नहीं सका, जिस प्रकार शृंगारी अंगना[1] संग को।

---

पाद-टिप्पणी :

'श्व' पाठ—बम्बई।

५०८. (१) श्वान : वन्य पशुओं एवं पक्षियों के शिकारों के लिये शिकारी अपने साथ कुत्तों का झुण्ड ले जाते थे। शिकारी मध्यकालीन काल में अश्व पर रहते थे और कुत्ता साथ चलता था। पक्षियाँ बाण लगने से जब गिर जाती थीं, तो कुत्ता उन्हें उठा लाता था।

हिरण के शिकारों में कुत्तों का विशेषरूप से उपयोग किया जाता था। हिरण बाण लगने पर जब भागते थे, तो कुत्ता दौड़ाकर, उन्हें पकड़ लेता था।

महाभारत काल से ही कुत्तों का उपयोग शिकार में किया जाता है। पाण्डवों के साथ वन में कुत्ता गया था। एकलव्य उसके भूकने पर उसके मुख को बाणों से भर दिया था (आदि० : १३१ : ४१)। यूरोप में कुलीन तथा सामन्त लोग शिकारी कुत्ता (ग्रेहाउण्ड) रखते थे। शिकार यात्रा में ग्रेहाउण्डों का समूह उनके साथ चलता था। पुराने चित्र इस प्रकार के दृश्यों के बहुत मिलते हैं। किसी समय उनकी बहुत ख्याति थी। मुसलिम काल में ताजी कुत्ता शिकारों में जाते थे।

पाद-टिप्पणी।

५१०. (१) सिद्ध : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : राज० : १ : २८५; जैन० : १ : ४ : १९; ४ : २०२।

पाद-टिप्पणी :

५११. (१) शृंगारी : प्रेमासक्त, कामोन्मादी, सम्भोगेच्छाकांक्षी विक्रम० : १ : ९। शृंगार काव्य का प्रथम रस है। संभोग शृंगार एवं

आस्थानमृगयोग्रेय नान्यदा क्रियते त्वया ।
मुनिर्वैश्रवणाद्रिस्थो नृपमेत्याब्रवीदिति ॥ ५१२ ॥

५१२ वैश्रवण गिरि के मुनि नृप से आकर, इस प्रकार बोले—'इस शान्त स्थान के चारो ओर विनाशकारी यह मृगया तुम पुन कभी न करना ।'

साक्रन्दमाहता हत्वा मृगीस्ता रुधिरोक्षिताः ।
तद्गर्भनिर्भरां भूमिं सैदाश्चक्रुर्दयोज्झिताः ॥ ५१३ ॥

५१३ क्रन्दनपूर्वक आयी घायल रुधिर से भीगी उन हरिणियो को मारकर, निर्दयी सैय्यिदो ने उनके गर्भ से भूमि भर दिया । (रक्तार्द कर दिया) ।

अतृप्तस्तद्वधात् कृत्वा निर्मृगांस्तान् गिरीश्वरान् ।
साय श्रान्तः स घोषौघान् वसतीरादिशन्नृपः ॥ ५१४ ॥

५१४ उनके वध से तृप्त न होकर, उन पर्वतो को मृग रहित करके, सायकाल श्रान्त, उस राजा ने घोष समूहो के वसती को आक्रान्त करने का आदेश दिया ।

भव्या स्नुषास्य तनया तरुणी च जाया
कादम्बर प्रसरके पशवश्च मीनाः ।
तिष्ठाम्यमुष्य सदनेऽहमिहैव रात्रौ
ध्यात्वेति कोऽपि न्यविशद् यमकिङ्कराभः ॥ ५१५ ॥

५१५ इसकी भव्य पुत्रवधू, तनया, तरुणी जाया, प्रसरक मे कादम्ब[१], (मदिरा) पशु एव मीन है, अत मै रात्रि म इसी के घर ठहरूँगा, ऐसा विचार कर, यमदूत सदृश किसी ने प्रवेश किया ।

---

विप्रलम्भ शृगार दो प्रकार का होता है ।—पु स स्त्रिया स्त्रिया पु सि सभोग प्रति या स्पृहा । स शृगार इति स्यात क्रीडाद्यादि कारक ।

साहित्यदर्पण २१० । शृगारी का अर्थ शृगार या प्रेम-सम्बन्धी तथा सिंदूर या गेरू से चित्रित भी होता है ।

( २ ) अगना सुन्दर अगवाली कामिनी । कन्या राशि ।

पाद टिप्पणी :

'वैश्रवणाद्रिस्थ' पाठ—बम्बई ।

५१२ श्रीदत्त ने वैश्रवण मुनि अनुवाद किया है—वैश्रवण नामक मुनि का आश्रम पहाडी के ऊपर था । वह सुल्तान के पास आये । उससे प्रार्थना किये कि मृगो के लिए स्थान अवध्य तथा आश्रय स्थान है ( पृष्ठ २६० ) ।

( १ ) वैश्रवण गिर स्थान का अनुसन्धान अपेक्षित है ।

पाद टिप्पणी

५१३ 'रुधिर' पाठ—बम्बई ।

पाद-टिप्पणी

५१४ 'गिरीश्वरान्' पाठ—बम्बई ।

पाद-टिप्पणी

५१५ (१) कादम्ब मदिरा, शराब । कदम्ब से बनी शराब । कादम्ब का पाठभेद कादम्बरी

धानुष्कपुष्कलबला बलिनस्तुरुष्काः
षट्कर्मधर्मनिरताग्र्यगृहोपविष्टाः ।
तद्भाण्डपक्वहतकुक्कुटमांसभक्ष्या
यक्षा इवात्र विदधुर्मधुपानलीलाम् ॥ ५१६ ॥

५१६. धनुर्धारियों की प्रचुर सेना बली तुरुष्क, षट कर्म-धर्म में निरत के गृह के अग्रभाग पर बैठकर, उनके भाण्ड (बर्तन) में पकाये, हत कुक्कुट मांस का भक्षण करते, यक्षों की तरह मधु-पान लीला किये।

पशुतण्डुलमद्यादि हृत्वा वास्तव्यलोकतः ।
लुब्धास्तत्सेवकाः केऽपि स्वगृहे भरणं व्यधुः ॥ ५१७ ॥

५१७. उसके कुछ लोभी सेवक प्रजा (निवासी जन) से पशु, मद्य आदि अपहृत कर, अपने घर का भरण-पोषण करते थे।

मान्यदागमनं भूयाद् युष्माकं जनपीडया ।
इत्यादि चाशिषः शृण्वन्नशक्तो विव्यथे नृपः ॥ ५१८ ॥

५१८. 'जन-पीड़ाकारी तुमलोगों का पुनः कभी आगमन न हो'—इत्यादि आशीर्वचन सुनते हुए, आसक्त नृपति व्यथित हुआ।

मृगया व्यसनं राज्ञो धिक् फलं भुज्यते न यैः ।
मृगापदेशाल्लोकानामेव सा क्रियते स्फुटम् ॥ ५१९ ॥

५१९. राजा के मृगया व्यसन को धिक्कार है, जो कि फल नहीं भोगते, मृगों के व्याज से लोगों का ही स्पष्ट रूप से शिकार किया जाता है।

---

मिलता है। कादम्बरी का अर्थ कोयल, सरस्वती तथा मदिरा या शराब होता है। कादम्बर कदम्ब के फूलों की बनी मदिरा को कहते हैं।

पाद-टिप्पणी :

'मध्य' पाठ—बम्बई।

५१६. (१) षट्कर्म : मनु के अनुसार—(१) अध्यापन, (२) अध्ययन, (३) यजन, (४) याजन, (५) दान, (६) प्रतिग्रह ६ कर्म विहित हैं।
अध्यापनमध्ययनं यजनंयाजनं तथा।
दानं प्रतिग्रहश्चैव षट्कर्माण्यग्र जन्मनः ॥ १० : ७५ ॥

ब्राह्मणों की जीविका हेतु विहित षट्कर्म—
उञ्छं प्रतिग्रहोभिक्षा वाणिज्यं पशुपालनं।
कृषिकर्म तथा चेति षट्कर्माण्यग्र जन्मनः ॥

योग के षट्कर्म हैं—
धौतिर्वस्ती तथा नेति त्राटकस्तथा।
कपालभाती चैतानी षट्कर्माणि समाचरेत् ॥

एन्द्रजालिक के षट्कर्म—शान्ति, वशीकरण, स्तम्भन, विद्वेष, उच्चाटन तथा मारण हैं।

पशुवच्छतशो बद्ध्वा मृगौघो यत्र मार्यते।
मृगया सा विनोदाय यदि शौनिककर्म किम् ॥ ५२० ॥

५२०. जहाँ पर पशुओ के समान सैकडो बार मृग समूह को बाँधकर मारा जाता है, यदि वह मृगया विनोद हेतु है, तो वधिक कर्म क्या है ?

श्रमस्त्वयं चले लक्ष्ये स्पृहणीयोऽस्ति सादिनाम्।
कोऽयं बद्धे मृगे श्लाघ्यः शराभ्यासो धनुष्मताम् ॥ ५२१ ॥

५२१. अश्वारोहियो का यह श्रम सचल लक्ष्यपर तो स्पृहणीय है, किन्तु धनुर्धारियो का बद्ध मृग पर क्या यह शराभ्यास[1] प्रशंसनीय है ?

क्षत्रियैर्मृगया कार्या निरवद्यतृणाशनात्।
नैकान्तव्यसनं युक्तं ह्यति सर्वत्र गर्हितम् ॥ ५२२ ॥

५२२ क्षत्रियो को अनिन्द्य तृण मात्र भोजी मृगादि की मृगया करनी चाहिए किन्तु अत्यन्त व्यसन उचित नही, अति सर्वत्र गर्हित होता है।

महापद्मसरस्तीरगिरिगांश्च मृगव्रजान्।
आगतो नृपतिस्तद्वन्निःशेषानकरोद् वधात् ॥ ५२३ ॥

५२३ महापद्मसर तीर एव गिरि के मृग समूहो को राजा ने आकर, उसी तरह वध से निःशेष कर दिया—

इत्याद्यनुचितं किञ्चिन्मृगयादूषणं कृतम्।
विलोक्य यद् भवेद्भीतिर्भाविनां मृगयाजुषाम् ॥ ५२४ ॥

५२४ इस प्रकार के कुछ अनुचित मृगया दोष किया, जिसे देखकर भावी मृगया-प्रेमियो को भय हो—

---

पाद-टिप्पणी

५२१ ( १ ) शराभ्यास : श्रीवर उक्त श्लोकों द्वारा शिकार के सम्बन्ध में अपना मत प्रकट करता है। धनुर्धारी अपनी शरसाधना सचल लक्ष्य पर छोडते हैं ताकि बाण छोडने में पारगत हो जाँय किन्तु बँधे हुए मृग समूहों की बाण द्वारा हत्या करना, वह क्रूरता एव हत्या मानता है। श्रीवर ने सैय्यिदों के क्रूर प्रवृत्ति का वर्णन किया है।

पाद-टिप्पणी

५२२ ( १ ) क्षत्रिय : तृणभक्षी पशुओं का मांस ग्राह्य है। विचित्र विडम्बना है। शाकाहारी पशु जो कभी मांस न तो ग्रहण करते हैं और न हत्या, उन्ही का मांस मनुष्य खाता है। मांसभोजी हिंसक शेर, चीता, कुत्ता, बिल्ली, आदि मांसभोजी पशुओं का मांस नही खाया जाता। श्रीवर नृशंस नही बल्कि सुखप्रद मृगया का समर्थन करता है। वह मृगया को जो लोग अपना व्यसन बना लेते हैं उनका विरोधी है। द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० २ : १०२।

सुल्तान की बीमारी :

आखेटिकां नृपः कृत्वा राजधानीं समागतः ।
अस्वास्थ्यमवहद् देहे ग्रहणीगदसम्भवम् ॥ ५२५ ॥

५२५. मृगयावृत्ता शिकार करके, राजधानी पहुँचकर, राजा का शरीर ग्रहणी[1] (संग्रहणी) रोग से अस्वस्थ हो गया।

केऽप्यूचुर्मृगयादोषात् कुपिता देवतास्ततः ।
अतीसारगदारम्भस्तत्रैवास्य विलोकितः ॥ ५२६ ॥

५२६. कुछ लोगों ने कहा—'मृगया दोष से देवता कुपित हो गये, जिससे, वहीं पर उसे अतीसार रोग का आरम्भ हुआ। यह देखा गया।'

पाद-टिप्पणी :

५२५. ( १ ) ग्रहणी : पक्वाशय एवं आमाशय के मध्य की नाड़ी अग्नि एवं पित्त का प्रधान आधार है। इस नाड़ी के दूषित होने पर, एक प्रकार का रोग उत्पन्न होता है। भोज्य पदार्थ का पाचन नहीं होता। मलद्वार से निकल जाता है। पेट में पीड़ा होती है। मल कभी पतला, कभी गाढ़ा दुर्गन्ध युक्त होता है। शरीर दुर्बल और निस्तेज हो जाता है। रात की अपेक्षा दिन में रोग अधिक कष्टकर होता है। इस रोग को ग्रहणी कहते हैं। अनियमित भोजन, अधिक परिश्रम, मलमूत्र का वेग रोकना, शक्कर या खाँड़ अधिकाधिक सेवन वर्जित है। मूसली का रस, गाय की दही या मट्ठा में सोंठ, सेंधा नमक तथा धनियाँ लाभप्रद होता है। खिचड़ी कढ़ी, मूँग की पतली दाल पथ्य है। पंचामृत पर्पटी लोह पर्पटी, सुवर्ण पर्पटी, सिद्ध नामी कांचन पर्पटी, ग्रहणी गजकेसरी, रसकला चूर्ण, ग्रहणीहर क्वाथ आदि स्थिति के अनुसार आयुर्वेदिक औषधियाँ हैं।

पाद-टिप्पणी :

'रम्भः', 'कितः' पाठ—बम्बई।

५२६. ( १ ) अतिसार : अतिसार के भेद—(१) वातजन्य, (२) पित्तजन्य, (३) कफजन्य, (४) सन्निपातजन्य, (५) शोकजन्य तथा (६) आमजन्य है। भारी अर्थात् गुरु, गरिष्ठ चिकनी, सूखी, गर्म, पतले भोज्य पदार्थों के सेवन, बिना भोजन के पाचन पुनः भोजन, विष, भय, शोक, अत्यन्त मद्यपान, कृमी दोष, ठण्डा भोजन, अशुद्ध जल से उत्पन्न होता है।

मल की वृद्धि के कारण उदराग्नि मन्द हो जाती है। मल शरीर के रसों के साथ बारम्बार बाहर निकलता है। आमाशय की भीतरी झिल्लियों में शोथ के कारण भोज्य पदार्थ वहाँ न ठहर कर, मल के रूप में बाहर निकल जाता है। इसमें आनन्द भैरव गुटी, कर्पूर सुन्दरी गोली, अगस्त्य सूतराज, चित्रकादि वटी, अभय नृसिंह, कर्पूर रस, वृद्ध गंगाधर चूर्ण, कुटजा वलेह, आयुर्वेदिक औषधियाँ बीमारी की स्थिति के अनुसार दी जाती हैं। खिचड़ी, गाय का मट्ठा, भात, मूँग का पानी, गेहूँ, बाजरी की पतली राब देना उत्तम है।

तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'कुछ समय पश्चात् सुल्तान को आमातिसार हो गया। वह बड़ा दुर्बल हो गया था ( ४५० = ६८१ )।'

फिरिश्ता लिखता है—'कुछ समय पश्चात् सुल्तान को उसकी सरल बीमारी ने दुहरा दिया। वह अतिसार से पीड़ित हो गया।'

केऽपिप्रच्छन्नराज्येच्छाः सैदाः स्वातन्त्र्यकाङ्क्षिणः ।
व्यधुः किमपि भूपाले तुरुष्कादृतमानसाः ॥ ५२७ ॥

५२७ और कुछ लोगो ने कहा—'प्रच्छन्न रूप से राज्य के इच्छुक, स्वातन्त्र्याकांक्षी एवं तुरुष्को द्वारा समादृत सैय्यिद राजा के प्रति कुछ कर दिये ।'

केऽपि मन्त्रिवियोगोत्थचिन्तासन्तापितात्मजाम् ।
रुजमाहुर्न तद्व्याधेर्निश्चयः कस्यचिदभूत् ॥ ५२८ ॥

५२८ कुछ ने कहा—'मन्त्रि वियोग से उत्पन्न चिन्ता संताप से रोग को स्वयं उत्पन्न माना'—इस प्रकार उसके व्याधि का निश्चय किसी को नही हुआ ।

सर्जोत्सव :

भूपस्तादृगवस्थः स नववर्षादिवासरे ।
ययौ सर्जप्रदेशं तद् व्यर्थया शकुनेच्छया ॥ ५२९ ॥

५२९ उस प्रकार अस्वस्थ राजा नववर्ष के प्रथम दिन व्यर्थ की शकुनेच्छा[1] से सर्ज[2] प्रदेश गया ।

---

पाद-टिप्पणी

५२९ ( १ ) शकुनेच्छा : शकुन शब्द श्लिष्ट है । एक अर्थ शकुन विचार है । नववर्ष का प्रथम दिन था । राजा लोग इस दिन शकुन का विचार करते हैं । वर्ष शुभ या अशुभ अथवा किस प्रकार की घटनाएँ देश में घटेंगी । कुछ घटनाओं को देखकर, उनसे शुभ तथा अशुभ फल निकाला जाता है । बिल्ली का रास्ता काटना, अशुभ माना जाता जाता है । जलकलश एवं मृतक का मार्ग में मिलना शुभ मानते हैं । विशिष्ट पक्षियों की बोली, नीलकण्ठ आदि का देखना शुभ है । शकुनशास्त्र के अनुसार दही, घी, दूर्वा, चन्दन, शीशा, शंख, मछली, देवमूर्ति, फल, फूल, पान, सोना, चान्दी, रत्न, वेश्या का मार्ग में दर्शन शुभ है । सर्प, चमड़ा, नमक, खाली बरतन अशुभ हैं ।

मुझे स्मरण है । मेरे बगीचा और अखाड़ा गोनिया पर, जो मेरे घर से दो फरलांग पर था । शमी का वृक्ष था । वहाँ विजयादशमी के दिन शमी पूजा के लिये जाते थे । घर से निकलते ही घर का नापित अर्थात् नाई शीशा दिखाता था । हम उसमें अपना मुख देखते थे । उन दिनो उसे एक रुपया दिया जाता था । हम लोग केवल यह जानते थे कि त्योहारी लेने के लिये वह आता था । परन्तु यह प्रसंग पढ़ने पर मुझे आज स्मरण हो गया । मार्ग में या प्रस्थान समय दर्पण या शीशा का देखना शुभ माना जाता था । उसी परम्परा के अनुसार नापित या नाई दर्पण मुख के सम्मुख करता था ।

( २ ) सर्ज : वेर्हो अथवा वनेटों स्थान का नाम एक सर से है । अनुसन्धान की आवश्यकता है । दूसरा मत है कि सर्ज शब्द न होकर, सर या मर्ज है । इसका पाठ सन्दिग्ध है । मर्ग यदि शब्द है, तो उसका अर्थ खुला मैदान या खुली उपत्यका होती है । पक्षियों का शिकार खुले मैदान में ही हो सकता है ।

तद्दिने गच्छतस्तस्य राज्ञो नौकान्तरस्थितेः ।
जैनवाटविहाराग्रात् सर्पस्तुत्रोट पद्धतिम् ॥ ५३० ॥

५३०. उस दिन नौका में स्थित जाते हुए, उस राजा के मार्ग को जैनवाट विहार के सामने, सर्प ने काट दिया ।

तद्दुर्निमित्तभीशान्त्यै हत्वा तं शायकैर्नृपः ।
अहरद्धृद्याशङ्कां न शरीराद् रुजं पुनः ॥ ५३१ ॥

५३१. इस दुर्निमित्त (अपशकुन) भय की शान्ति के लिये, राजा ने वाणों से उसे (सर्प[1]) मारकर, हृदय का सोच दूर कर दिया । किन्तु शरीर से रोग को दूर न कर सका ।

किमर्थं निर्गतो वासि चिरं त्वं सुकृतं कुरु ।
इतीवाग्रतो वायुः सवेगतं न्यरुद्ध्यत ॥ ५३२ ॥

५३२. 'किस लिये निकले हो, चिरकाल तुम सुकृत करो'—इसीलिये सामने से वायु ने वेगपूर्वक उसे रोका ।

अस्मिन् गते प्रजापीडा भविष्यत्यत्र मण्डले ।
अकम्पत शुचेवोद्यत्तरङ्गतरलं सरः ॥ ५३३ ॥

५३३. 'इसके जाने पर मण्डल में प्रजाओं को पीड़ा होगी'—(इसी शोक से ही मानो) उठते तरंगों से तरल सर प्रकम्पित हो उठा ।

तत्र सर्जोत्सवे[1] भुक्त्वा सैदमन्त्रिसभावृतः ।
अपुनर्दर्शनायेव सर्वेषां दर्शनं ददौ ॥ ५३४ ॥

५३४. वह सर्जोत्सव में सैय्यिद मन्त्र सभा मण्डली के साथ खाकर, पुनः दर्शन देने के लिये ही, मानों सब लोगों को दर्शन दिया ।

---

५३१. (१) सर्प हत्या : अनावश्यक सर्प की हत्या वर्जित की गयी है । पाप माना जाता है । काश्मीर के एक संसद सदस्य श्रीचरक थे । उनसे सर्पों के सम्बन्ध में बातें होने लगीं । उन्होंने एक दिन अपने मकान के पास निकले सर्प को मार दिया । दूसरे दिन भी सर्प निकले । उन्होंने पुनः सर्प मारा । सर्पों का निकलना बन्द नहीं हुआ । अन्त में उनकी माँ ने उन्हें न मारने के लिए कहा । सर्प निकलने पर उन्होंने बन्दूक से उसे नहीं मारा । परिणाम हुआ कि सर्पों का निकलना बन्द हो गया । सर्पों तथा उनके जोड़ों के प्रतिहिंसक तथा बदला लेने की अनेक कहानियाँ तथा जनश्रुतियाँ प्रचलित हैं ।

पाद-टिप्पणी :

५३४. (१) सर्ज : द्र० : ३ : ५२९ । यदि सर पाठभेद मान लिया जाय तो सर उत्सव अर्थ हो जायगा । 'सर्ज' भी पाठभेद मिलता है । संस्कृत शब्द सर्ज का अर्थ साल या सलई का वृक्ष होता है । काश्मीर में साल वृक्ष नहीं होता परन्तु साल के समान ही सफेदा के वृक्ष तथा देवदार वृक्ष प्रचुर होते हैं । वृक्ष अर्थ मानने पर वनोत्सव लिखने का अभिप्राय हो सकता है ।

नौकारूढस्ततस्तूर्णं सभृत्यः स दिनावधि ।
उत्कण्ठाखण्डनायैव श्येनैः पक्षिवधं व्यधात् ॥ ५३५ ॥

५३५. वहाँ से शीघ्र ही भृत्य सहित, वह नौकारूढ होकर दिन भर, उत्कण्ठा दूर करने के लिये ही, बाजो द्वारा पक्षियो का वध किया ।

अद्यैवेमं विनोदं नः करोति न पुनः प्रभुः ।
इत्येव श्येनाः पक्ष्यालीं गृहीत्वोपायनं व्यधुः ॥ ५३६ ॥

५३६. 'हम लोगो का स्वामी आज ही यह विनोद कर रहा है, पुन. नही करेगा—' इसीलिये पक्षियो के समूह को श्येन पकड कर ( राजा को ) उपायन प्रदान किये ।

सुल्तान की बीमारी :

प्रत्यावृत्तस्ततो राजा सैंदांस्तान् प्रतिमुच्य च ।
नाहं स्वस्थोऽस्मि तल्पस्थो देवीं ज्ञातरुजं व्यधात् ॥ ५३७ ॥

३३७ वहाँ से लौटकर, राजा ने उन सैय्यिदो को छोड दिया और शय्या पर स्थित रह‑कर,—'मैं स्वस्थ नही हूँ'—इस प्रकार से अपना रोग रानी को ज्ञात करा दिया ।

तत्पथ्यपरिचारिण्या स्वयं देव्यावृतो नृपः ।
दिवसेन्दुरिव क्षीणरुचिर्विच्छायतामगात् ॥ ५३८ ॥

३३८ उसकी पथ्य परिचर्या करनेवाली, स्वय देवी से सेवित भी नृपति दिन मे चन्द्रमा के समान, क्षीण रुचि एव कान्तिहीन हो गया ।

कवाटविकटं वक्षः श्यामगौरं तदाननम् ।
कटयूरुजानुपादाश्च पीनाः पद्मदलोपमाः ॥ ५३९ ॥

५३९ कपाटवत् विकट वक्ष, श्याम-गौर उसका आनन तथा पीन एव पद्मदल सदृश कटि, उरु, जानु, पाद—

सुन्दरं नयनद्वन्द्वं ललाटं भ्रूमनोहरम् ।
तद्रुजा नृपतेः सर्वं विवर्णं समपद्यत ॥ ५४० ॥

५४०. सुन्दर युगल नयन, भ्रू, मनोहर ललाट, उस रोग से राजा का सब विवर्ण हो गया।

सुल्तान की इच्छा

एकदा सोऽवदद्राजा तं मेयाहसनं रहः ।
नाहं जीवामि राज्यार्हाः न सुताः शिशवो मम ॥ ५४१ ॥

५४१. एक बार एकान्त मे उस राजा ने मीया हस्सन[1] से कहा—'मैं जीवित नही रहूगा, और मेरे शिशु राज्य के योग्य नही हैं—

---

पाद-टिप्पणी

५३६. 'पक्ष' पाठ—बम्बई ।

पाद-टिप्पणी :

५४१. (१) मीया हस्सन : फिरिश्ता लिखता

वद्धो वहामखानीयो न पाति मम बालकान् ।
वरमादमखानीयं युक्त्यानीयाभिषिच्यताम् ॥ ५४२ ॥

५४२. 'वहराम खांन का सन्तान जो कि बन्दी है, मेरे पुत्रों को रक्षित नहीं करेगा, अच्छा है कि युक्ति से आदम खांन के सन्तान को लाकर, अभिषिक्त[1] करो—

अथवेयं भवत्कन्या यद्वक्ष्यति करोतु तत् ।
श्रुत्वेति भव धीरस्ते स्वास्थ्यं स्यादिति सोऽब्रवीत् ।
केवलं सैदहसनो रुदोद भृशदुःखितः ॥ ५४३ ॥ कुलकम् ॥

५४३. 'अथवा आपकी यह कन्या जो कहे उसी को करो—' यह सुनकर, 'धैर्य धारण करो, तुम स्वस्थ होगे' यह उसने कहा, केवल सैय्यिद हसन बहुत दुःखित होकर, बहुत रो रहा था। कुलकम्।

अथ राज्यवदत् पित्रे रहो मेरमुखादिदम् ।
सन्देहितासू राजायं राज्ये किं क्रियतेऽधुना ॥ ५४४ ॥

५४४. एकान्त में रानी ने मेरा के मुख से पिता के लिये यह कहा—'इस राजा के प्राण संकट में हैं, राज्य के लिये इस समय क्या कर रहे हो ?'

---

है—'यह जानकर कि अब वह जीवित नहीं रह सकेगा, उसने मीया हस्सन को बुलवाया (४७९)।'

पाद-टिप्पणी :

५४२. (१) अभिषिक्त : तवक्काते अकवरी में उल्लेख है—'मरते समय वसीयत की, क्योंकि मेरा पुत्र अभी अल्पावस्था में है, अतः युसुफ खां विन वहराम खान को जो वन्दीगृह में है, फतह खां पुत्र आदम खां जो सहवास की विलायत में है, सिंहासनारूढ़ कर दिया जाय। सैयिद हसन ने इसे वाहरी तौर से मान लिया (४५० = ६८१)।'

फिरिश्ता लिखता है—'सुल्तान ने मीया हस्सन से कहा—मेरे सभी लड़के वहुत ही छोटे हैं और वे राज्य कार्य के उपयुक्त नहीं हैं, अतएव मेरी यह इच्छा है कि मेरे किसी एक भतीजा को चाहे युसुफ खां पुत्र वहराम खाँ या फतह खांन पुत्र आदम खांन को मेरा उत्तराधिकारी वना दो। मन्त्री ने वात मानने का वहाना वनाकर सुल्तान का आदेश पालन करने का वचन दिया (४७९)।'

पीर हसन लिखता है—'सुल्तान ने वसीयत की कि मेरे लड़के अभी छोटे हैं, इसलिए या तो युसुफ खांन पिसर वहराम खांन को या फतह खांन इब्न आदम खांन को जो इस वक्त विलायत जसरोटा में है, तख्त पर वैठायें, और मुहम्मद खांन को वली-अहद वनायें, सैयिद हुसेन वैहकी ने यह वसीयत जाहिर में क़बूल कर ली और सुल्तान इस मुल्क से राहे मुल्क वक़ा हो गया (१९१)।'

तवक्काते अकवरी के एक पाण्डुलिपि में 'हसवास' तथा दूसरे में 'खत' लिखा मिलता। फिरिश्ता के लीथो संस्करण में 'जसरोथह' लिखा गया है। रोजर्स ने उसका अनुवाद 'जसरोथ' किया है (जे० ए० एस० पी० : ५४ : १०९)। कर्नल व्रिग्गस ने स्थान का नाम नहीं दिया है (४ : ४७९)। श्रीवर ने भी स्थान का नाम नहीं दिया है। कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया में वसीयतनामा का उल्लेख नहीं है।

पाद-टिप्पणी :

५४३. 'रुरोद' पाठ—वम्बई।

पाद-टिप्पणी :

५४४. (१) मेरा : द्र० : ३ : ४८३; ४ : २७।

वरं बहामखानीयो युवायमभिषिच्यताम् ।
यौवराज्ये च ज्येष्ठोऽयं दौहित्रः स्थाप्यतामिति ॥ ५४५ ॥

५४५. 'अच्छा है, इस युवा बहराम खा के पुत्र को अभिषिक्त करो, और युवराज पद पर ज्येष्ठ इस दौहित्र को स्थापित करो।

द्वित्रा द्विष्टाश्च वध्यन्तां सर्वे स्युरविनश्वराः ।
श्रुत्वेति मेयाहसनः सक्रोधस्तामभर्त्सयत् ॥ ५४६ ॥

५४६ 'दो-तीन द्वेषियो का वध कर डालो, और सबका नाश न हो।' यह सुनकर मीया हस्सन ने क्रुद्ध होकर, उसे भर्त्सित किया।

तच्छ्रेयःप्राप्तिसंकल्पकल्पितद्रव्यसंचयान् ।
मौसुलेभ्यो ददुः सैदा द्विजभक्तिविवर्जिताः ॥ ५४७ ॥

५४७ उसने श्रेय[1] (पुण्य) की प्राप्ति के सकल्प से किये गये, द्रव्य को द्विज[2] भक्ति रहित सैय्यिदो को दे दिया।

सुल्तान की चिकित्सा

प्रभुं द्रष्टुं न यच्छन्ति गच्छन्त्यभ्यन्तरं स्त्रियः ।
मन्त्रपाठं निषेधन्ति तत्तद्गारुडिकोचितम् ॥ ५४८ ॥

५४८ स्वामी को देखने नही देते और स्त्रियाँ ही अन्दर जाती थी, तत् तत् गारुडिको[1] के मन्त्र पाठ का निषेध करते थे और—

---

पाद-टिप्पणी .

५४७ ( १ ) श्रेय सौभाग्य, शुभ, पुण्यकर्म, सद्गुण, मगल, कीर्तिकर, यशकारक, कल्याणकारी—बध्नंना द्रक्षण श्रेय —हि० ३ ३, पूर्वावधी रित श्रेयो दु ख हि परिवर्तते—श० ७ १३। प्रति बध्नाति हि श्रेयः ५ ३४, पूज्य पूजा व्यतिक्रम —रघु० १ ७९, उत्तर० ५ २७, ७ : २०।

श्रेय एक साम का नाम है। ज्योतिष का दूसरा मुहूर्त है।

( २ ) द्विज मुसलमान होने पर भी पूर्व परम्परा के अनुसार दान आदि ब्राह्मणों को दिया जाता था। परन्तु मुस्लिम तथा विदेशी मुसलमानो एव सैय्यिदो के प्रभाव के कारण ब्राह्मणों को दानादि न देकर, मुसलमानो में श्रेष्ठ वर्ग जिन्हें ब्राह्मण तुल्य ही मानते थे सैय्यिदो को दानादि दिया गया।

पाद-टिप्पणी

५४८ (१) गारुडिक विषवैद्य मत्र से साँप का विष उतारनेवाला, सपेरा, जादू मन्त्र करनेवाला ऐन्द्रजालिक या विष औषधि विक्रेता—सगृहीत गारुडेन, का० ५१ रघु० : १३ . ५३। सैय्यिद कट्टर मुसलमान थे अतएव झाड-फूक, ओझाई, मन्त्र-पाठ आदि जनता में व्याप्त सस्कारों में विश्वास नही करते थे। मन्त्रों द्वारा शरीर में व्याधियों द्वारा विष उतारने अथवा मन्त्र पढ़कर रोग दूर करने में विश्वास नहीं करते थे। गारुडी

चिकित्सां वैद्यकोक्तां तामन्यथा रचयन्ति च।
तत्रापि गुलिकां भोक्तुं रचयन्ति स्वसाधिताम् ॥ ५४९ ॥

५४९. वैद्यों की कहीं चिकित्सा को अन्यथा कर देते और वहाँ भी अपने द्वारा बनायी गयी, खाने के लिये गुलिका ( गोलियाँ ) देते थे।

क्रिमप्यनिष्टं कर्मेति कृतमित्यादिवादिनः।
वर्चो विवर्णं पश्यन्तोऽप्यन्तरङ्गा महीपतेः ॥ ५५० ॥

५५०. 'कुछ अनिष्ट कर्म किया गया है—' इस प्रकार कहनेवाले राजा के अन्तरंग लोगों ने भी उसके मलिन तेज को देखा।

वैद्यो गारुडिकश्चाहं दृष्टकर्मेति कत्थयन्।
तथाभूद् रुय्यभट्टः स स्त्रीवैद्यककृतार्थनः ॥ ५५१ ॥

५५१. उस समय—'मैं वैद्य गारुडिक एवं दृष्टकर्मा हूँ' कहनेवाले उस रुय्यभट्ट को स्त्री वैद्यों ने बुलाया।

मुमूर्षुः सेवकैः पृष्टः का रुक् किं चेक्षसे विभो।
सण्डो निवार्यतामग्रादित्यूचे तान् महीपतिः ॥ ५५२ ॥

५५२. 'हे स्वामी! क्या रोग है? क्या देख रहे हो?' इस प्रकार सेवकों के पूछने पर मुमूर्ष महीपति ने उनसे कहा—'सामने से 'सण्ड'[1] को हटा दें।'

कृतान्तमहिषो दृष्टो दिवमद्यैव यात्ययम्।
इत्युक्त्वा शुशुचुः सर्वे साक्रन्दं साश्रुलोचनाः ॥ ५५३ ॥

५५३. 'राजा ने यमराज के महिष को देखा है, अतएव यह आज ही स्वर्ग चला जायगा'—ऐसा कहकर, अश्रुपूर्ण नैनों से सब लोग क्रन्दनपूर्वक शोक प्रकट किये।

---

शब्द लोक भाषा में भी प्रचलित है—

चले सब गारुड़ी पछिताइ।
नेकहु न मन्त्र लागत समुझि काहु न जाइ।
(सूर शब्दावली)।
डरी री भाई, श्याम भुअंगम कारे।
आनहु वेगि गारुड़ी गोविंद जो यह विषहि उतारै।
(सूर शब्दावली)।

पाद-टिप्पणी :

'रुक्' 'सण्डो' पाठ—बम्बई।

५५२. (१) सण्ड : शण्ड = भीड़ = धूर्त = साड़। किन्तु यहाँ लाक्षणिक अर्थ महिष या भैंसा ही बैठता है। पाठभेद में भी 'महिष' मिलता है। इसकी पुष्टि श्लोक संख्या ५५२ से भी होती है। श्री दत्त ने अनुवाद हाइपोक्रीट अर्थात दाम्भिक या धूर्त अथवा कपटी किया है। सण्ड का अर्थ हीजड़ा तथा नपुंसक भी होता है।

सुल्तान की मृत्यु

संरुद्धवसनः साश्रु घूर्णयन् दृष्टिमण्डलम् ।
तस्यामेव रजन्यां स मुमूर्षुरभवन्नृपः ॥ ५५४ ॥

५५४ संरुद्ध वसन, अश्रुपूर्ण दृष्टि को घुमाते हुए, वह राजा उसी रात मरणासन्न हो गया।

वर्षे षष्टितमे कृष्णनवम्यां मासि माधवे ।
पञ्चाहं द्वादशाब्दांश्च राज्यं कृत्वा दिवं ययौ ॥ ५५५ ॥

५५५ साठवें¹ वर्ष, वैशाख मास, कृष्णपक्ष, नवमी को बारह वर्ष, पाँच दिन राज्य कर, स्वर्ग चला गया।

सुल्तान की अन्त्येष्टि

आक्रन्दमुखरा रात्रिः सर्वा सा जनताप्यभूत् ।
प्रातर्यानं समारोप्यच्छत्रचामरसंयुतम् ॥ ५५६ ॥

५५६ वह सम्पूर्ण रात्रि एवं समस्त जनता, आक्रन्दन से मुखरित हो गयी। प्रातःकाल उसे चामर सहित यान¹ पर आरोपित कर—

---

पाद-टिप्पणी

५५५ (१) साठवाँ वर्ष : सप्तर्षि ४५६० सन् १३८४ ई० = विक्रमी १५४१ = शक १४०६। माहिबुल हसन मृत्यु का समय अप्रैल १९ सन् १४८४ ई० देते हैं।

तवक्काते अकबरी में लिखा है—'उसके राज्य की अवधि का पता नहीं है (४५१ = ६८२)।' फिरिश्ता लिखता है—'कुछ समय पश्चात् सुल्तान की मृत्यु हो गयी। परन्तु हमें इसकी जानकारी नहीं है कि उसकी मृत्यु का निश्चित समय क्या है? इस प्रकार उसका राज्यकाल देने में असमर्थ हूँ। किन्तु मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि उसने १९ वर्ष शासन किया था (४७९-४८०)।'

तवक्काते अकबरी मृत्यु का कारण उसके अतिसार के रोग को देती है (४५१ = ६८२)। फिरिश्ता मृत्यु का कारण नहीं देता।

कैम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया (६९८) में राज्यकाल १८ वर्ष अर्थात् हिजरी ८७६ सन् १४७२ ई० से हिजरी ८९४ = सन् १४८९ दिया है। कर्नल ब्रिग्गस (४ : ८०) का मत है कि सुल्तान ने लगभग १९ वर्षों तक राज्य किया था। उसके पिता हैदर का अन्तकाल हिजरी ८७८ में न होकर ८९१ हिजरी सन् में हुआ था। अतएव उसका राज्यकाल किसी प्रकार भी १३ वर्ष से अधिक नहीं हो सकता।

जैनुल आबदीन भी उत्तरायण ज्येष्ठ मास, उसके पुत्र हस्सन का मधुमास, पिता हैदरशाह माधव अर्थात् वैशाख मास उत्तरायण तथा पौत्र हस्सनशाह मधु अर्थात् वैसाख मास उत्तरायण में दिवंगत हुए थे, जो भारतीय परम्परा के अनुसार उत्तम माना जाता है। भीष्म पितामह ने शरशय्या इसीलिये लिया था कि उत्तरायण काल में मृत्यु प्राप्त करें।

पाद-टिप्पणी

५५६ (१) यान : इस शब्द का अर्थ सवारी होता है। मुसलमानों का शव तावूत में ले जाया जाता है। लोग कन्धा देते हैं। परन्तु यहाँ यान शब्द का प्रयोग किया गया है। यान पर शव ले जाना आश्चर्य की बात नहीं है।

ईसाई लोगों का शव कफन में बन्दकर किसी गाड़ी पर रख कर ले जाते हैं। सम्राटों, राजाओं

सैदाः ससेवका सर्वे निन्युः पितृशवाजिरम् ।
श्रीजैनभूपप्रमये दुःखिता नाभवत् प्रजा ॥ ५५७ ॥

५५७. सेवक सब सैय्यिद लोग पितृ शवाजिर[1] (खान्दानी कब्रिस्तान) में ले गये। जैन भूपति के मरने पर, प्रजा उस प्रकार दुःखी नहीं हुई—

तादृशी यादृशी तस्य मरणे शरणोज्झिता ।
तद्गुहाश्मनि वस्त्राढ्ये तस्य मस्तकवेष्टनम् ॥ ५५८ ॥

५५८. जितना निस्सरण होकर, इस राजा के मरने पर दुःखी हुयी। प्रचुर वस्त्रपूर्ण, उस गुहा[1] के पत्थर पर, मन्त्रियों ने उसके मस्तक वेष्ठन को—

तद्बन्धरचनं टुप्पिकोज्ज्वलं मन्त्रिणो व्यधुः ।
तदालोक्य जनः सर्वो दर्शनोत्कण्ठिताशयः ॥ ५५९ ॥

५५९. सुन्दर बन्धन रचना युक्त, सुन्दर टोपी से संयुक्त किया, दर्शन के लिये उत्कण्ठित हृदयवाले सब लोग, उसे देखकर—

स्मारं स्मारं नृपं मेने निषण्णमिव मध्यगम् ।
प्रातःप्रातः समागत्य सैदाः सप्तदिनावधि ।
स्ववेदाध्ययनं चक्रुर्मिश्रितं रुदितैःस्वनैः ॥ ५६० ॥

५६०. राजा का बारम्बार स्मरण कर, मध्य में स्थित उसे सोया[1] हुआ माने। प्रातः आकर, सात दिनों तक सैय्यिदों ने रुदित ध्वनि से मिश्रित अपने वेदों का अध्ययन किया।

---

तथा सेनानायकों का शव भी यान पर ले जाते थे। आजकल तोप की गाड़ी पर ले जाते हैं। राष्ट्रपति जाकिर हुसेन, पं० जवाहर लाल नेहरू, मौलाना आजाद का शव तोप की गाड़ी पर ले जाया गया था।

अफगानिस्तान की अपनी यात्रा मैंने देखा था कि प्रतिष्ठित व्यक्तियों का शव धूमधाम के साथ सवारी पर ले जाया जाता था। काश्मीर में भी यह प्रथा प्रचलित थी।

पाद-टिप्पणी :

५५७. (१) पितृ शवाजीर : मजारिये सलातीन।



पाद-टिप्पणी :

५५८. (१) गुहा : गुफा = खाई = गर्त = कब्र।

पाद-टिप्पणी :

५६०. (१) निषण्ण : विश्रान्त रघु ९ : ७६। शाब्दिक अर्थ, आसीन, बैठा, सहारा लगाये हुए, आश्रित आदि भी होता है। परन्तु यहाँ पर चिर-विश्रान्ति अर्थात क़यामत तक के लिये विश्राम या सोने से तात्पर्य है।

(२) वेदों : क़ुरान शरीफ एवं मुसलिम पवित्र ग्रन्थों, अथवा मुसलिम धार्मिक ग्रन्थों से तात्पर्य है।

स्मशान वैराग्य

विहितरतयो दृष्टा येऽन्यैर्महाविभवोज्ज्वला-
स्तरुणवयसो बालालीलाविलासमदालसाः ।
कतिपयदिनैस्तेऽमी रिक्ता व्रजन्ति शुचान्विता
विरसमनसो राज्याद् वेश्यागृहादिव कामुकाः ॥ ५६१ ॥

५६१ लोगो ने जिन्हे रतिक्रीडा करते, महा विभव से समुज्वल, तरुण आयु से युक्त, बालाओ के लीला विलास मद से अलस[1] देखा था, कतिपय दिनो पश्चात् वे ही वेश्यागृह से, कामुक सदृश, राज्य से रिक्त, शोकान्वित, विरस मन, होकर जा रहे है ।

देशो मेऽय रचितरचना राजधानी ममेय
कोशो मेऽय युवतिरपि मे मे सुता मे च भृत्याः ।
इत्येवान्तः कलयति नृपो यावदेत्यन्तकस्त
त्यक्त्वा सर्वं व्रजति सुशिरः पुण्यपापैकभागी ॥ ५६२ ॥

५६२ यह मेरा देश है, सुन्दर रचना युक्त यह राजधानी मेरी है, यह कोश मेरा है, युवती, सुत तथा भृत्य भी मेरे ही है, उस प्रकार राजा जब तक मन म विचार करता है तभी यमराज उसके निकट आ जाता है और वह सुशिर[1] केवल पाप-पुण्य का भागी होकर, सब कुछ त्याग कर चला जाता है ।

सप्ताङ्गसुभग राज्य ममेदमिति योऽब्रवीत् ।
तदीयो नाभवत्तस्य स्वदेहान्ते पृथक् स्थितेः ॥ ५६३ ॥

५६३ सप्ताग[1] सुभग यह राज्य मेरा है यह जिसने कहा था, अन्त म सप्ताग सुभग शरीर भी अपना नही हुआ ।

---

पाद टिप्पणी

'राज्याद्' पाठ–बम्बई ।

५६१ (१) अलस मैथुन के पश्चात मनुष्य शिथिल क्लान्त, स्फूर्तिहीन तथा श्रान्त हो जाता है । शराब का नशा उतरने पर भी मनुष्य की यही दशा होती है । शराब तथा काममद में जिस स्फूर्ति का उसमें उदय होता है उसका मद उतरते ही लोप हो जाता है । सूरदास बडा उत्तम वर्णन करते है :

चन्दन मिटाये तन अतिहि अलस मन ।
नागरी की पीक लीक लागी है कपालौ ॥

पाद-टिप्पणी

५६२ (१) सुशिर सुन्दर शिरवाला व्यक्ति अथवा सुन्दर शिर युक्त । सुशिर का अर्थ बासुरी बाजा भी होता है । मख न सुशिर का अर्थ किया है—

स्याद्वाद्यभेदे सुशिर गर्ते गर्तान्विते त्रिपु ।
नडे तु सुशिराभीरु शतावयभय त्रिपु ॥७३९॥

पाद टिप्पणी

५६३ (१) सप्ताग राज्य की सात प्रकृतियाँ तथा सप्त धातुयुक्त शरीर से अभिप्राय है । द्रष्टव्य पाद टिप्पणी जैन ३ २९६ ।

इत्थं शवाजिरे लोकः शुशोच नृपसंहतिम् ।
अश्मैकरचनामात्रावशिष्टां तत्र संस्थिताम् ॥ ५६४ ॥

५६४. इस प्रकार लोगों ने शवाजिर[1] में प्रस्तर की रचना मात्र से अवशेष, स्थित नृप समुदाय के प्रति शोक प्रकट किया ।

राज्यदानाय राज्ञी सा म्लेच्छसम्पर्ककर्कशम् ।
बहामखानजं पुत्रं दुःखोदर्कमतर्कयत् ॥ ५६५ ॥

५६५. उस रानी ने राज्य देने के लिये म्लेच्छ सम्पर्क से कर्कश बहराम खां के पुत्र को जो कि दुःखोदय था विचार किया ।

इति जैनराजतरङ्गिण्यां पण्डितश्रीवरविरचितायां हस्सनशाहिराज्यवृत्तान्तवर्णनं नाम तृतीयस्तरङ्गः ।

इति हस्सनशाहि स्वर्याणम्

इस प्रकार पण्डित श्रीवर विरचित जैनराजतरंगिणी में हस्सनशाह का राज्य वृत्तान्त नामक तृतीय तरंग समाप्त हुआ ।

॥ इति हस्सन शाह का स्वर्ग गमन ।

पाद-टिप्पणी :

५६४. (१) शवाजिर : कब्रिस्तान : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : ७ : २२६; २ : ८५, ८९; ३ : ३५५ ।

पाद-टिप्पणी :

प्रस्तुत संस्करण में बम्बई के समान ५६५ श्लोक है । कलकत्ता संस्करण में ५७२ पंक्तियाँ हैं, पृष्ठ ४० से ६१ तथा श्रीकण्ठ कौल में ५६४ श्लोक है ।

पीर हसन लिखता है—'हिजरी ८९२ में मीर शमसुद्दीन इराकी, सुल्तान हुसेन मिरजा वालिये, खुरासान की तरफ से बतौर सिफ़ारत काश्मीर में आये । शाही खत के अलावा सुल्तान के पहुँचने की एक खास पोस्तीन सुल्तान हस्सनशाह के पास बतौर तुहफ़ा लाये इसके साथ ही बादशाह से वालिये खुरासान की तरफ से काश्मीर के कुछ उम्दा तुहफ़े भेजे जाने की इलतजा की ।

बादशाह के इन्तकाल के बाद मीर शम्श इराकी आठ साल तक यहाँ मुकीम रहे । आप अगरचे जाहिर तौर बाबा इस्माइल के मुरीदों में दाखिल हो गये थे लेकिन बातन में बाबा अली, अली नजार को शीया मजहब की तरफ मायल करके खुद खुरासान की तरफ वापस लौट गये । मीर साहब मजकूर फतहशाह के अहद हकूमत में काश्मीर में दोबारह वारिद हुए और पूरे तौर पर मजहब शीया का रवाज दिया ( १९१-१९२ ) ।'

किन्तु श्रीवर जो उस समय का प्रत्यक्षदर्शी था उक्त घटना का उल्लेख नहीं करता ।

रघुनाथ सिंह पुत्र स्वर्गीय श्री बटुकनाथ सिंह, जन्मस्थान पंचक्रोशी, अन्तर्गत वरुणातीर स्थित, ग्राम खेवली, रामेश्वर स्थान समीप तथा निवासी मुहल्ला घीहट्टा (औरंगाबाद) वाराणसी, नगर उत्तर प्रदेश भारतवर्ष ने श्रीवरकृतराज जैनराजतरंगिणी तृतीय तरंग का भाष्य एवं अनुवाद लिखकर समाप्त किया । सन् १९७६ ई० = संवत् २०३३ विक्रमी = शक १८९८ = कलि गताब्द ५०७७ = सप्तर्षि या लौकिक संवत् ५०५२ = फसली सन् १३८३-१३८४ ई० = हिजरी १३९६-१३९७ = बंगला सं० १३८२-१३८३ ।

# श्रीवर पण्डित कृता तृतीया जैनराजतरंगिणी

## चतुर्थस्तरंगः[1]

राज्याभिषेक

तृतीयेऽहनि मैदास्ते मिथः मंमन्त्र्य मत्वराः ।
व्यधुर्महम्मदखानाय राज्यदानाय निश्चयम् ॥ १ ॥

१ तीसरे दिन[1] शीघ्र ही वे सैय्यिद परस्पर मन्त्रणा करके, मुहम्मद खाँन को राज्य प्रदान करने का निश्चय किये।

प्रतीक्षाक्षममालोक्य कालं मैदास्त्वराकुलाः ।
राज्याभिषेकदानेच्छामकुर्वन्नृपसूनवे ॥ २ ॥

२ समय को प्रतीक्षा योग्य न जानकर, शीघ्रता से व्याकुल सैय्यिद, नृप पुत्र को राज्याभिषेक देने की इच्छा की।

मुहम्मदशाह (सन् १४८४–१४८६)

अथ राज्ये व्यधीयन्त तत्सुतं सप्तवार्षिकम् ।
कृत्वा महम्मदशाहाख्यं गोनन्दमिव सुन्दरम् ॥ ३ ॥

३. गोनन्द[1] के समान सुन्दर सप्तवर्षीय[2] उसके पुत्र को मुहम्मदशाह नामकरण[3] करके, राज्य पर आसीन कर दिये।

---

पाद-टिप्पणी

'सत्वरा' पाठ–बम्बई।

इस तरग में मगलाचरण नही है। जैसे तृतीय तरग का ही चतुर्थ क्रम है परन्तु श्लोक सख्या १ से आरम्भ किया गया है। इस तरग में प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय तरगो के समान मगलाचरण का अभाव खटकता है। कुछ पाण्डुलिपियों मे मगलाचरण दिया गया है।

प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय तरगों में 'अथ' मे शीर्षक आरम्भ किया गया है। चतुर्थ तरग में अथ नही दिया गया है।

१. (१) तीसरा दिन - तीजा। मृत्यु के तीन दिन पश्चात् तक शोक मनाया जाता है। मुसलमानों में एक मान्यता है कि तीन दिन तक मृत व्यक्ति कब्र में जबाब-सवाल करता है। वह कब्र में उठकर बैठ जाता है। इसलिये कब्र उठकर बैठ जाने इतनी ऊँची बनायी जाती है। उसका मुख खोल दिया जाता है। तीजा के दिन मृतक मुसलमान के सम्बन्धी गरीबों को रोटी बाँटते या खाते-खिलाते हैं।

तबक्काते अकबरी के एक पाण्डुलिपि में पिता हसन के स्थान पर हुसेन है। लिथो सस्करण में 'शाह' शब्द नही है।

पाद-टिप्पणी :

३. (१) गोनन्द कल्हण ने काश्मीर के तीन गोनन्द राजाओं का वर्णन किया है। श्रीवर ने एक वचन 'गोनन्द' का प्रयोग किया है।

प्रथम गोनन्द भगवान कृष्ण के ज्येष्ठ भ्राता

तस्य सिंहासनस्यान्ते स्थापिता वस्तुसंततिः ।
त्यक्त्वा भोजनसामग्रीं पूर्वं शार्ङ्गेऽपतत् करः ॥ ४ ॥

४. उसके सिंहासन के समीप वस्तु परम्परा स्थापित की गयी थी, भोजन सामग्री त्यागकर, सर्वप्रथम उसका हाथ धनुष[१] पर पड़ा ।

---

बलराम द्वारा मथुरा युद्ध में वीरगति प्राप्त किया था। प्रथम गोविन्द का पुत्र दामोदर था। उसने भी भगवान कृष्ण के हाथों वीरगति प्राप्त किया था। भगवान कृष्ण ने दामोदर के गर्भस्थ पुत्र द्वितीय गोनन्द को काश्मीर का राजा घोषित किया था। वह गर्भ से ही काश्मीर का राजा था। उसकी माता यशोवती अभिभाविका रूप से शासन मन्त्रिमण्डल के साथ करती थी। तृतीय गोनन्द बालक राजा नहीं था। श्रीवर का तात्पर्य यहाँ गोनन्द द्वितीय से है। कल्हण ने भी गोनन्द द्वितीय के विषय में लिखा है। उसने पिता का राज्य तथा प्रपिता का नाम दोनों प्राप्त किया था। द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी राज० : १।५७—६४; ७०—८३; १८५—१९१; नीलमत पुराण : २८ = ४८, ३० = ५०, ३७२ = १५८; ८७५ = १०४६; ७७८ = १०४९; ८७९ = १०४९; १३-६६ = १५८२; १३७९ = १५८३; हरि० : २ :३४—३६; नील० : २३७ = ३१४; ३—२३ = ७—२३ ।

(२) सप्तवर्षीय : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'मुहम्मद खाँ सात वर्ष की अवस्था में सैय्यिद हसन के प्रयत्न के फलस्वरूप सिंहासनारूढ़ हुआ (४५१)।'

(३) नामकरण : राज्याभिषेक के समय राजा तथा सुल्तान अपना मूल नाम त्यागकर, अभिषेक नाम धारण कर लेते थे। यह अभिषेक नाम भारत में कहा जाता था। मुहम्मद खाँन का नाम बदलकर मुहम्मद शाह रख दिया गया। मुहम्मद पैगम्बर का पवित्र नाम है। अतएव उसे बदलना सम्भव नहीं था। खाँन बदलकर शाह कर दिया गया। उसके नाना सैय्यिद हसन के हाथों में प्रशासनिक कार्य था। बहारिस्तान शाही : पाण्डु० : ३१ ए० ।

फिरिश्ता लिखता है—'सुल्तान ने वफात करने के तुरन्त पश्चात् उसके वजीर सैय्यिद हसन ने दिवंगत सुल्तान के ज्येष्ठ पुत्र राजकुमार मुहम्मद को सात वर्ष की उमर में सुल्तान बना दिया (४८१—४८२)।'

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'मुहम्मद खाँ सात वर्ष की अवस्था में सैय्यिद हसन के प्रयास के फलस्वरूप सिंहासनारूढ़ हुआ (४५१ = ४८२)।'

पीर हसन लिखता है—'सैय्यिद हसन बैहकी की इमदाद से सरदारी और हकूमत का झण्डा बुलन्द किया। इस वक्त इसकी उमर सिर्फ सात बरस थी (१९३)।'

पाद-टिप्पणी :

४. श्रीवर राज्यकाल ४५६० में माघव मास कृष्ण षष्ठि में पक्ष नवमी, श्रीदत्त कलि ४५८५ = शक १४०६ = सन् १४८४ ई० तथा राज्यकाल २ वर्ष, ७ मास देते हैं। पीर हसन राज्यकाल विक्रमी १५४४ = हिजरी ८९२ तथा मोहिबुल हसन सन् १४८४ ई० देते हैं। आइने अकबरी में सन् १४८६ ई० = हि० ८९१; राज्य २ वर्ष ७ मास। कन्म्रिहेन्सिव हिस्ट्री आफ इण्डिया में सन् १४८४ ई० तथा केम्ब्रिज हिस्ट्री आफ इण्डिया में सन् १४८९ ई० = ८९४ हिजरी दिया गया है।

(१) धनुष : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'उस दिन समस्त सोना चाँदी, अस्त्र, शस्त्र तथा वस्त्र इत्यादि उसके सम्मुख प्रस्तुत किये गये। परन्तु उसने किसी ओर अपनी दृष्टि नहीं डाली और धनुष को अपने हाथ में ले लिया (४५१ = ६८२)।'

फिरिश्ता लिखता है—'इस समय राजकीय कोष, की सामग्री के साथ ही साथ पहनने का

एतद्राज्ये सदा युद्धं भविता मण्डलान्तरे।
दृष्ट्वा शकुनविज्ञाः केऽप्यूचुस्तत्रान्तिकस्थिताः ॥ ५ ॥

५. वहाँ निकट स्थित कुछ शकुन[1] विज्ञो ने देखकर, यह कहा—'उसके राज्य (काल) मे मण्डल मध्य सर्वदा युद्ध होगा।'

रौप्यसिंहासने छत्री विबभौ बालभूपतिः।
दत्तानन्दः पयःपूरैर्बालेन्दुरिव सुन्दरः ॥ ६ ॥

६. बालेन्दु सदृश सुन्दर, पय पूर से, दत्तानन्द, छत्रधारी, बाल भूपति रजत के सिंहासन[1] पर शोभित हुआ।

---

सामान, अस्त्र-शस्त्र, उसके सम्मुख रखा गया। बालक ने रत्न, भड़कीले वस्त्रादि एक तरफ करते हुए, एक धनुष उठा लिया (४८२)।'

शार्ङ्ग अर्थात सींग के बने धनुष को शार्ङ्गी कहते है। मंगोल जाति बारहवीं शताब्दी तक सींग के बने धनुष का प्रयोग करती थी। चिंगेज की सेना की पंक्ति तीन भागों में विभाजित रहती थी। प्रथम अर्थात अगली पंक्ति में वर्मधारी अश्वारोही सींग से बने धनुष, तीन तरकश भरा तीर और बर्छी लेकर चलते थे। द्वितीय तथा तृतीय पंक्ति के अश्वारोही वर्मधारी नहीं होते थे। वे केवल धनुष, बाण एवं बर्छा लेकर चलते थे।

जहाँ बाँस अथवा धनुष योग्य लकड़ी नहीं मिलती थी तथा वृक्षहीन केवल घासवाले मैदान थे, जैसे मंगोलिया से हगरी मध्यवर्ती विशाल चर भूखण्ड वहाँ पशुमांस भोजन तथा धनुष आदि बनाने के लिये पशु के सींग का प्रयोग किया जाता था।

पाद-टिप्पणी

५. (१) शकुन : तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'उपस्थित गण ने उसके इस कार्य से उसके पौरुष तथा श्रेष्ठता के विषय में निष्कर्ष निकाला और वे कहते थे कि वह राज्य व्यवस्था हेतु प्रयत्नशील होगा (४५१ = ६८२)।'

फिरिश्ता लिखता है—'इस घटना से एक अच्छा शकुन निकाला गया कि युवक राजा एक प्रसिद्ध सेनानी होगा (४८२)।' द्र० १ : १ १०४; २ : ११९, ३ : ३७६, ४ : ५।

शकुन तथा ज्योतिष आदि की फलगणना या भविष्य निकालना पुरातन मुसलिम परम्परा विरुद्ध है। परन्तु काश्मीर में हिन्दुओं की अनेक परम्पराएँ धर्म परिवर्तन पश्चात भी मुसलिम मानते थे।

पाद-टिप्पणी

६. (१) सिंहासन : हैदरशाह का राज्याभिषेक स्वर्ण सिंहासन पर हुआ था (जैन : २ : ६)। हसनशाह के राज्याभिषेक के समय एक स्थान पर केवल सिंहासन (जैन : ३ : ८) तथा दूसरे स्थान पर रजतमय आसन का उल्लेख किया गया है (जैन० : ३ : १०)। मुहम्मदशाह का राज्याभिषेक रजत के सिंहासन पर हुआ था। मुसलिम धर्म सोना हराम अर्थात वर्जित समझता है। चान्दी हलाल अर्थात विहित मानी जाती है। इस परिवर्तन का कारण है। जैनुल आबदीन की मृत्यु के पश्चात हैदरशाह सिंहासन पर बैठा था। उस समय धार्मिक कट्टरता नहीं थी। परन्तु सैय्यिदों तथा विदेशी मुसलमानों के पुन: काश्मीर में प्रभाव के कारण, दरबार में कट्टरता का प्रवेश हो गया था। अतएव स्वर्ण के स्थान पर चान्दी अर्थात रजत सिंहासन का प्रयोग किया गया है।

सैंदाः शुभ्रांशुकन्यस्तकुङ्कुमालोहितत्विषः ।
भाविद्रोहकृतोद्गच्छद्रक्तसिक्ता इवाबभुः ॥ ७ ॥

७. शुभ्र अंशुक पर छपे, कुमकुम से, लोहित कान्तिवाले सैय्यिद, भावी द्रोह के कारण, निकले रक्त से सिक्त, सदृश शोभित हुए।

भ्राता होस्सनखानोऽस्य कनीयान् रुचिराकृतिः ।
बभौ बालनृपस्याग्रे शुक्रस्येव बृहस्पतिः ॥ ८ ॥

८. सुन्दर आकृतिवाला इनका कनिष्ट भ्राता होस्सन खाँन, बाल नृपति के समक्ष, उसी प्रकार शोभित हुआ, जैसे शुक्र[1] के समीप बृहस्पति[2]।

शोकहर्षान्वितो लोकस्तद्दिने पितृपुत्रयोः ।
दधौ तमःप्रकाशाढ्यां लोकालोकाचलश्रियम् ॥ ९ ॥

९. उस दिन पिता-पुत्र के शोक-हर्ष से युक्त लोक तम एवं प्रकाश से समृद्ध लोकालोक[1] पर्वत की शोभा धारण कर रहा था।

---

पाद-टिप्पणी :

'कृतोः' पाठ—बम्बई।

७. (१) रक्त : महाभारत तथा रामायण के अनुसार रक्त बूँदों का गिरना अशुभ माना जाता है। सैय्यिदों के श्वेत वस्त्र पर कुमकुम रंग की बूटी छपी या कढ़ी थी। उन बूटियों से श्रीवर रक्त सिक्त की उपमा देकर, भावी अपशकुन की बात करता है। उनके वस्त्रों पर वे रक्तबिन्दु के समान लग रही थी। मध्य युग में बूटेदार कपड़ा पहनने का बहुत रिवाज था। मुसलिम-कालीन चित्रों में उमरा तथा सुल्तान बहुधा बूटेदार वस्त्र पहने चित्रित किये गये हैं।

पाद-टिप्पणी :

८. (१) शुक्र : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : ५ : ९२ तथा २ : ७।

(२) बृहस्पति : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० : २ : ७।

पाद-टिप्पणी :

९. (१) लोकालोक : ब्रह्मा ने लोकालोक पर्वत के चारों दिशाओं में चार दिग्गज—(१) ऋषभ, (२) पुष्पचूड़, (३) वामन और (४) अपराजित स्थापित किया है। वे चतुर्दिग पृथ्वी के प्राकार के समान हैं। इसके कुछ भाग में सूर्य का प्रकाश दिखायी पड़ता है और कुछ में नहीं।

पौराणिक गाथा के अनुसार सातों समुद्रों को परिवेष्ठित करनेवाली पर्वत श्रेणी है। पृथ्वी को घेरनेवाले दो पर्वत लोकालोक एवं चक्रवाल हैं। इसका शाब्दिक अर्थ दृश्य एवं अदृश्य लोक है। कल्हण ने लोकालोक पर्वत में कृत्तिका का स्थान माना है। द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : राज० : १ : १३७।

एक मान्यता के अनुसार एक पर्वत है, जो सातों समुद्रों और द्वीपों को चारों ओर से घेरे है। उसके बाहर चन्द्र या सूर्य का प्रकाश नहीं पहुँचता। बौद्ध ग्रन्थों में उसकी संज्ञा चक्रवाल से दी गयी है।

दौहित्राभ्युदये सैदाश्चेरुरानन्दसुन्दराः ।
सुगन्धिमकरन्दाढ्ये मधौ मधुकरा इव ॥ १० ॥

१० दौहित्र के अभ्युदय से आनन्दित, सैय्यिद सुगन्ध एवं मकरन्द से भरे वसन्त मे मधुकर सदृश विचरने लगे।

वाद्यमानोत्सवातोद्यप्रोद्यत्प्रतिरवच्छलात् ।
अकुर्वन्निव वृद्ध्यर्थं राज्ञस्तस्याशिषो दिशः ॥ ११ ॥

११ उत्सव मे बजते आतोद्य[1] की प्रतिध्वनि के व्याज से मानो दिशाओ ने उस राजा की वृद्धि हेतु आशीर्वाद दिये।

राजधान्यङ्गने सैदाः परिधानप्रसादनैः ।
अतोषयन्नुत्सवान्तः सर्वं नृपपरिच्छदम् ॥ १२ ॥

१२ राजधानी (प्रासाद) के आगन मे उत्सव के मध्य सैय्यिदो ने परिधान प्रसाद[1] द्वारा समस्त नृप अनुचरो का सन्तुष्ट किया।

एकस्मिन् कीर्तिशेषेऽन्या दिग्द्वयाद्धस्सनद्वयी ।
तादृशे ददृशे पौरैः स्फूर्जत्सादिशतावृता ॥ १३ ॥

१३ एक (हस्सन) के कीर्ति शेष हो जाने पर अन्य हस्सन द्वय को पुरवासियो ने दो दिशाओ मे स्फूर्जित होते सैकडो अश्वारोहियो से घिरा हुआ देखा।

राज्यसम्पत् ससप्ताङ्गा तद्गृहे समलक्ष्यत ।
तत्कन्योद्वेजितेवाप्ता वक्तुं रिपुपराभवम् ॥ १४ ॥

१४ उसकी उद्वजित कन्या सदृश सप्ताग[1] सहित राज्य सम्पत्ति, रिपु का पराभव कहने के लिये ही मानो उसके घर चली आयी थी।

---

पाद-टिप्पणी

११ ( १ ) आतोद्य एक प्रकार का आघात से बजाया जानेवाला वाद्य है। इसका उल्लेख प्रसिद्ध संस्कृत कवियो ने किया है—आतोद्य विन्यासादिका विषय ( वेणी० १, ) सजमातोद्य शिरो निवेशिताम्—( रघु० ८ १४, १५, ८८, उत्तर ७ द० ३ १३ )।

पाद-टिप्पणी :

१२ ( १ ) परिधान प्रसाद उत्सव, विवाह, अभिषेक आदि के समय नवीन वस्त्र सेवको तथा मित्रों को देने की प्रथा राजाओं तथा सम्पन्न परिवार मे आज भी प्रचलित है।

पाद-टिप्पणी

१४ ( १ ) सप्ताग : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० ३ : २९६, १ . ७ : ११० ।

राज्ञः सेवकसामन्ताः प्राप्नुवन्तस्तदन्तिकम् ।
प्रवेशं लेभिरे नान्तर्लुठन्तः कुक्कुरा इव ॥ १५ ॥

१५. राजा के सेवक सामन्त[1], उसके निकट पहुँचते हुए भी, खुश करनेवाले कुत्तों के समान, अन्तः प्रवेश[2] नहीं प्राप्त किये।

देश्यसंस्कृतशास्त्रज्ञविद्वत्कृतविडम्बनाः ।
गृहे स्त्रीषु बहिः श्येनलीलासु व्यसनं दधुः ॥ १६ ॥

१६. देशी एवं संस्कृत शास्त्रज्ञ विद्वानों की विडम्बना[1] करनेवाले वे लोग घर पर स्त्रियों में एवं बाहर श्येन लीलाओं[2] में व्यसनी बने।

---

पाद-टिप्पणी :

१५. (१) सामन्त : द्र० पाद-टिप्पणी : रा० : ४ : ५५६; जैन० : ४ : ११३। सीदत्ति रट्टों के यहाँ एक उच्च अधिकारी होता था ( बम्बई गजेटियर भाग २१ : बेलगाँव।) सन् ५९५ ई० के शंकर गणों के फलक ( इ० आई० : ९ : २९१) हर्ष के मधुबन फलक (इ० आई० : ७ : १५८) तथा सन् ६०९-६१० ई० के बुद्धराज के फलक में इस शब्द का उल्लेख मिलता है।

( २ ) प्रवेश : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'सैय्यिदों को इतना प्रभुत्व प्राप्त हो गया था कि किसी अमीर तथा वजीर को सुल्तान के पास न आने देते थे ( ४९१-६८२ )।'

फिरिश्ता लिखता है—'सैय्यिद मुहम्मद हसन रेजिडेण्ट घोषित किया गया। उसने राजा के पास जाने से सबको रोक दिया ( ४८० )।'

पीर हसन लिखता है—'बैहकी ने हुकूमत के मुआमलात पर कब्जा करके किसी एक को भी अमूर सल्तनत में दखल देने की ताकत न छोड़ी। बल्कि किसी को भी सुल्तान से मुलाकात हासिल न हो सकती थी ( १९३ )।'

पाद-टिप्पणी :

'देश्य' पाठ-बम्बई।

१६. ( १ ) : विडम्बना : उपहास किया परिहास से यहाँ तात्पर्य है—इयं च तेऽन्या पुरतो विडम्बना—( कु० ५ : ७० )।

( २ ) श्येन लीला : श्येन का वर्णन वेदों में बहुत किया गया है (ऋ० : १ : ३२ : १४; १ : ३३ : २; १ : ११८ : ११; १ : १६३ : १; १ : १६५ : २; तै० सं० : २ : ४ : ७ : १; ५ : ४ : ११ : १; पड्विंश ब्राह्मण : ३ : ८; का० सं० ३७ : १४; गो० ब्रा० : १ : ५ : १२; श० ब्रा० : १२ : ७ : १ : ६; तां०ब्रा० : १३ : १० : १४; श्रब्रा० : ३ : ८ )। वह पक्षियों में सबसे अधिक गतिशील है। छोटे-छोटे पक्षी बाज से भयभीत रहते हैं। पक्षियों के समूह पर आकाश में आक्रमण करता है। वायु में दूर तक उड़ने के कारण इसको नृ-चक्षस् कहते है। श्येन स्वर्ग से सोम पृथ्वी पर लाय था।

विश्व में यह सर्वत्र पाया जाता है। शिकारी पक्षी है। चील से छोटा परन्तु अधिक भयंकर होता है। इसका रंग मटमैला, पीठ काली और नेत्र लाल होते हैं। वह आकाशगामी कबूतरों तथा छोटी चिड़ियों को झपट कर पकड़ लेता है। पुरातन काल में आखेट एवं युद्ध के काम में लाया जाता था।

मेरे मुहल्ला औरंगाबाद में एक बड़ी सराय है। औरंजेब बादशाह की बनवायी हुई है। हमारे वंश के लोग इस सराय में आढ़त का काम करते थे। रेलगाड़ी के पूर्व काबुली तथा पठान मेवा, ऊनी सामान, हींग, छोहाड़ा आदि लेकर आते थे। कारवाँ

चलता था। मेरी बाल्यावस्था में कुछ व्यापारी आते थे। रेल चलने के पश्चात् उनका आना शनै शनै समाप्त हो गया। मुझे स्मरण है। पठान बायें हाथ में चमडे का दस्ताना पहनते थे। उस पर बाज रखते थे। उसे मास चुगाते थे। आकाश में पक्षियो के ऊपर छोडते थे, नीचे से लोग इकट्ठा होकर हल्ला करते थे। पक्षियाँ भयभीत होकर भागती थी। आकाश पक्षी-शून्य हो जाता था। बाज एकाध पक्षी का शिकार कर, अपने मालिक के हाथ पर, पुन आकर बैठ जाता था।

बाज कई प्रकार के होते है। उनमें चार प्रकार मुख्य है। हरिण का शिकार बाज करता था। उसके शर पर बैठ जाता था। हिरण की आँख निकाल लेता था। इसे अग्रेजी में इगल हाक कहते है। यह बाज हाथ पर नही बैठाया जाता था। उसे बैठाने के लिये लकडी या लोहा का 'अड्डा' टी शेप का होता था। उसी पर शिकारी उसे बैठाकर चलते थे। पक्षी के शिकार करनेवाले बाज को 'मुरीचा' हमारी तरफ कहते है। वह हाथ पर बैठाया जाता था। हाथ पर बैठा कर बाज को चलना एक समय फैशन था। इसको अग्रेजी में स्पैरो हाक कहते है। इस वर्ग का बाज गुरु गोविन्द सिंह देव, बाबर, अकबर तथा मुगलकालीन अमीर, उमरावा के तस्वीर में हाथो पर बैठा दिखाया गया है। बाज यदि हाथ से दिया मास चोच और पैर से मुँह में डालकर खाने लगे, तो वह पाल्तू हो जाता है। पोश मानता है। भागता नही। बाहरी बाज पोश नही मानता। बहेलियाँ लोग भी पक्षी पकडने के लिये बाज रखते थे। बाज रखने की प्रथा समाप्त हो गयी है।

ईरान, अफगानिस्तान तथा तुर्किस्तान में बाज रखने की खूब प्रथा थी। सैय्यिद लोग काश्मीर में उसी भूखण्ड से आये थे। वे शिक्षित श्येन या बाज भी अपने साथ लाये थे। उनसे वे शिकार करते थे। श्रीवर का वर्णन सत्य है। सैय्यिद हरिण तथा पक्षियों का शिकार करते थे। बाजो का प्रयोग इस प्रकार के श्येन लीला में किया जाता था। पतग उडाने के समान बाज के शिकार के समय भी दर्शको की भीड एकत्रित हो जाती है। आकाश में पक्षियों का उड़ना उनका बाज से बचकर भाग जाना, जान बचाने के लिये भयाकुल होकर छिप जाना आदि खेल काश्मीर में भी प्रचलित थे। उन्ही का वर्णन श्रीवर करता है।

मुगल बादशाहो यथा बाबर, अकबर आदि के चित्रों में वाम हस्त पर बाज लिये चित्रित किया गया है। बाज रखने का फैशन उत्तर हिन्दुस्तान में आज से ७० वर्ष पूर्व तक खूब प्रचलित था। अब यह प्रथा बन्द हो गयी है। केवल कहानी और चित्रों में उन्हें सुना तथा देखा जाता है। बाएँ हाथ पर बाज बैठाकर दायें हाथ से कच्चा मास बाज रखनेवाले खिलाते थे।

मगोल तथा तुर्क जाति बाज पालक थी। उनका भूखण्ड उर्वर नही था। अतएव भोजन के लिए मास ही एकमात्र आधार था। आकाश की पक्षियों को बाज द्वारा पकडकर, उनका मास प्राप्त करते थे। चिंगेज खाँ तथा उनके उत्तराधिकारी बाएँ हाथ पर बाज बैठाये चलते थे। यह प्रथा मुगलकालीन भारत में खूब प्रचलित हो गयी थी। हिरणो के शिर पर बैठकर उनकी आँखें बाज निकाल लेते थे। हिरण अन्धे हो जाते थे और उन्हें आसानी से पकड़ लिया जाता था।

विगुणव्यवहारेषु क्रूराचारेषु दर्पिषु
दुःसहान्तकदूतेन लोभेन क्षोभितेषु च ।
दौःशील्यानभिगम्येषु प्रसरन्मत्सरेषु च
विरागं तेषु सैदेषु सप्रजाः सेवका ययुः ॥ १७ ॥

१७. दोषपूर्ण व्यवहार करनेवाले, क्रूराचारी, अभिमानी, लोभ के कारण दुस्सह, यमदूत तुल्य, कष्टदायी, दुःशीलता के कारण अविकार अनभिगम्य, (पहुँच के बाहर) मात्सर्य युक्त, उन सैय्यिदों से प्रजा सहित, सब सेवक विरक्त हो गये ।

हितानामपि सैदानां केचिद् भूपालसेवकाः ।
नाभ्यनन्दन् परिचयं काकानामिव कोकिलाः ॥ १८ ॥

१८. कुछ भूपाल सेवकों ने हितकारी भी सैय्यिदों के परिचय का उसी प्रकार आदर नहीं किया, जिस प्रकार कोकिल[१] कौओं का ।

द्विजस्थितिः सुखं यासीत् सतीसरसि निश्चला ।
तेषां श्येनैश्च भृत्यैश्च भ्रामिता च पलाशया ॥ १९ ॥

१९. सतीसर[१] में पक्षियों की जो निश्चल सुखद स्थिति थी, उनके उस स्थिति को, मांस की आशा से श्येन एवं भृत्यों द्वारा दूर कर दिया ।

स्फीतगीतोल्लसन्नादा येऽभवन् वृन्दगायनाः ।
शोकमूका इवाभ्यर्णे माघे भृङ्गा इवाभवन् ॥ २० ॥

२०. स्फीत वर्द्धित गीत से उल्लसित, नादवाले जो गायक वृन्द थे, माघ के निकट आने पर, भ्रमरों[१] समान शोक से मूक हो गये ।

---

पाद-टिप्पणी :

"विरागं" पाठ–बम्बई ।

१७. (१) विराग : वृत्ति परिवर्तन, असन्तोष, उदासीनता तथा अरुचि अर्थ होता है ।

पाद-टिप्पणी :

१८. (१) कोकिल : कोकिल अपने अण्डे का सेवन नहीं करती । कौआ उसके अण्डे का सेवन करता है । अण्डा फूटकर बच्चा पैदा होता है । बच्चा बोलने लगता है । कौआ को गलती मालूम होती है । तथापि कोयल कौओं के उपकार का न तो स्मरण करती है और न अपने बच्चों को पालने के लिये उसका आदर ( द्र० : ४ : ६३५ ) । संस्कृत में इसलिये कोयल को 'अन्यपुष्ट' एवं परभृत कहते हैं ।

पाद-टिप्पणी :

१९. ( १ ) पक्षी-सतीसर : काश्मीर मण्डल में पक्षी नहीं मारे जाते थे । द्विज, विप्र तथा पक्षी काश्मीर मण्डल में अवध्य थे । पक्षियों के हत्या की श्रीवर ने सर्वदा भर्त्सना किया है । पक्षियाँ सरोवरों के तट पर वृक्षों पर निर्भय विहार करती थीं ( द्र० : १ : १ : ८५ ) ।

पाद-टिप्पणी :

२०. बम्बई संस्करण में श्लोक १९ के पश्चात् श्लोक क्रम संख्या २१ दी गयी है ।

अथ प्रथममेवैते गृहीत्वा नवभूपतिम् ।
शकुनापेक्षिणो नावा वितस्तातटमभ्ययुः ॥ २१ ॥

२१ शकुनापेक्षी ये लोग पहले ही नवीन भूपाल को लेकर नाव से वितस्ता के तट पर गये।

स्वपक्ष्यावर्जकास्तत्र पृष्ठभोज्यान्नसम्पदः ।
स्वातन्त्र्यप्राप्तिदर्पान्धाः काश्मीरानादरं व्यधुः ॥ २२ ॥

२२ अपने पक्षियों (श्येनों) से पक्षियों को पकड़नेवाले अपने पीछे भोज्यान्न सम्पत्ति रखनेवाले, स्वातन्त्रता प्राप्ति में गर्वीले उन लोगों ने काश्मीरियों का अनादर किया।

अपुनर्गमनायेव विधाय शकुनिक्षयम् ।
एकदा स्वीयसंयुक्ता व्यधुः किमपि मन्त्रणम् ॥ २३ ॥

२३ मानो पुनः न आने के लिये पक्षियों का नाश कर एकबार अपने लोगों (सैय्यिदों) से मिलकर मन्त्रणा किये।

तेषां तत्केवलतया श्रुत्वा षाड्गुण्यमन्त्रणम् ।
काश्मीरिकाश्च मद्राश्च शङ्किता नगरेऽभवन् ॥ २४ ॥

२४ केवल उन्हीं लोगों के (सैय्यिद) षाड्गुण्य[1] मन्त्रणा को सुनकर, नगर में काश्मीरी एवं मद्र शंकित हो गये।

ततः परशुरामाद्यैस्तद्द्विष्टैः सह तद्दिने ।
मिलिताः पञ्चशःस्तीक्ष्णाः सैदद्रोहमचिन्तयन् ॥ २५ ॥

२५ इसके पश्चात् उसी दिन उनके द्वेषी परशुराम[1] आदि के साथ पाँच तीक्ष्ण मिलकर सैय्यिदों से द्रोह करने का विचार किये।

---

इसमें श्लोक क्रम संख्या २० नहीं है। अतएव इसके पश्चात् प्रस्तुत संस्करण तथा बम्बई एवं कलकत्ता संस्करणों में १ श्लोक संख्या का अन्तर पड़ता गया है।

पाद टिप्पणी :

२४ (१) षाड्गुण्य : कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में छः गुणों की परिभाषा दी है—(१) सन्धि, (२) विग्रह, (३) आसन, (४) यान, (५) संश्रय एवं (६) द्वैधीभाव।—पण्बन्धः सन्धिः अपकारो विग्रहः उपेक्षणमासनम् अभ्युच्चयो यानम्, परार्पणं संश्रयः सन्धि विग्रहोपादानं द्वैधीभाव। इति षड्गुणाः। (अर्थ० ७ : १, रघुवंश० ८ : २१)।

पाद टिप्पणी :

२५ (१) परशुराम : फारसी लेखकों ने उसे जम्मू का राजा लिखा है (मोहि० १०६ पीर हसन १९३, फिरिश्ता (४८२) तबक्काते अकबरी (४५१ = ६८२) बहारिस्तान शाही जम्मू के राजा का घटना में भाग लेना नहीं लिखता।

(२) तीक्ष्ण : द्रष्टव्य पाद टिप्पणी जैन०

जिघांसतामथैतेषां वैजन्यावसरेक्षिणाम्।
न भेदमगमन्मन्त्रो गुप्तस्तद्दुष्कृतैरिव॥ २६॥

२६. हत्या के इच्छुक एवं निर्जन अवसर की अपेक्षा करनेवाले लोगों का गुप्त मन्त्रणा, उनके दुष्कृति के समान अप्रकट रही।

एकदा तत्सुताभीष्टा मेराख्या मेरहस्सनम्।
मूर्तेव दुर्दशा गेहयागत्येत्यब्रवीद्रहः॥ २७॥

२७. एकबार उसकी प्रिय पुत्री मेरा, मूर्तिमती दुर्दशा के समान घर आकर, एकान्त में मेर हसन से इस प्रकार बोली—

राज्ञः कापि क्रिया साध्या तूर्णमागम्यतां प्रभो।
इत्युक्त्वानिष्टमप्येनं सा निनाय गृहान्तरात्॥ २८॥

२८. 'हे! स्वामी!! राजा का कहीं कोई कार्य करना है, शीघ्र आइये'—यह कहकर, अनिष्ट भी उसे घर से ले गयी।

द्रोहस्ते सूर्यवारे स्यान्न गन्तव्यो नृपालयः।
पित्रेत्युक्तोऽपि स स्वप्ने ययौ दैवविमोहितः॥ २९॥

२९. 'सूर्य (रवि) वार के दिन नृपालय को नहीं जाना चाहिए, तुम्हारे साथ द्रोह होगा'—इस प्रकार स्वप्न में पिता के कहने पर भी, दैवविमोहित होकर, वह चला गया।

तावत् स सैदहसनोऽप्यायथौ स्वगृहाद् द्रुतम्।
पादोच्छेदोऽस्ति ते द्रोहान्मा पल्ययनमारुह॥ ३०॥

३०. तब तक शीघ्र ही वह सैय्यिद हसन भी अपने घर से आ गया। द्रोह से तुम्हारा पादच्छेद होगा, पल्ययन[1] (जीन) पर मत चढ़ो,—

---

२ : १७६। यहाँ तीक्ष्ण का अर्थ क्रूरकर्मी होगा। द्र० : मंख कोष श्लोक : २२१। महाभारत में भी इसी अर्थ में तीक्ष्ण शब्द का प्रयोग किया गया है—

हत्तिकां पीडयं स्तीक्ष्णैर्नक्षत्रं पृथिवीपते।
अभीक्ष्णवाता वायन्ते धूमकेतु मवस्थिताः॥
भीष्मपर्व० : ३ : ३०

पाद-टिप्पणी :

२९. (१) सूर्यवार : रविवार। यह बुरा माना जाता है। कश्मीर में उस समय धारणा रही होगी कि रविवार के दिन राजप्रासाद में जाना शुभावह नहीं होता। श्रीवर ने इसी ओर संकेत किया है। विभिन्न देशों में दिनों के प्रति विभिन्न धारणायें होती हैं।

भारतीय ज्योतिष के अनुसार रविवार को नृप-दर्शन वर्जित है।

पाद-टिप्पणी :

३०. (१) पल्ययन : घोड़ा की जीन। श्रीदत्त ने पलायन पाठभेद मानकर अनुवाद किया है। अर्थ की अपेक्षा से पलायन के स्थान पर पल्ययन पाठ रखा गया है।

इत्येव पादकटकच्छिन्नोऽश्वादपतद् भुवि ।
प्रतोल्यां सैदसाद्यश्वखुरोत्कीर्णरजोमिषात् ।। ३१ ।।

३१ इसी से पादकटक[1] (रिकाव) कट गया और वह अश्व से भूमि पर गिर पडा। प्रतोली[2] सैय्यिदा के अश्वारोहियो के अश्व खुर (टाप) स उठे धूल[3] के व्याज से—

नैते पुनर्विशन्तीति शुचेवोच्छ्वासमक्षिपन् ।
तत्तारखानलेखेन त्वदनर्थादिहेतवे ।। ३२ ।।

३२ 'ये पुन प्रवेश नही करेंगे' इस शोक से ही मानो (अश्व) उच्छ्वास[1] कर रही थी। तातार खाँ[2] का लेख से प्राप्त होने से तुम्हारे अनिष्ट आदि के कारण—

पाद टिप्पणी

३१ (१) पादकटक रिकाव। ठोकर लग जाय, रथ का पहिया टूट जाय अथवा अश्व पर चढते समय रिकाव टूट जाय तो अशुभ भविष्य के सूचक होते है। किसी अनहोनी अशुभ घटना का किसी काय के आरम्भ में अचानक होना अशुभ माना जाता है। यूराप मे भी यही बात मानी जाती है। हिटलर एक स्थान पर शिलान्यास करने गया था। शिला रखने पर जिस हथौडी से वह शिला ठोका वह अचानक टूट गयी। हिटलर खिन्न होकर लौट गया। यह अशुभ-सूचक माना गया। विज्ञान चाहे कितनी ही उन्नति क्यो न कर ले, मानवीय सस्कार एव कुसस्कार उसके पीछे लगे रहत है।

(२) प्रतोली नगर का गौण द्वार, गली कूचा, बाजार के बीच का चौडा रास्ता, किले के द्वार वाला माग—प्रापत्प्रतोलीमतुल प्रताप—शिशु० ३ ६४। मेगस्थनीज के वणन मे प्रकट होता है कि पाटलिपुत्र (पटना) में ६४ द्वार थ। उनके अतिरिक्त गौण द्वार भी होते थे। अर्थशास्त्र में गौण नगरद्वार को प्रताली की सज्ञा दी गयी है। महाभाष्य के अनुसार पाटलीपुत्र परकोटा में प्रतोली द्वार बन थे। पृथ्वीचन्द्रचरित पन्द्रहवी शताब्दी की रचना है। उसमें प्रताली द्वार की रचना का उल्लेख मिलता है। अथशास्त्र के अनुसार नगर के प्रधान द्वार की चौडाई प्रतोली स छ गुना होती थी—प्रतोली षट्तुलान्तरं द्वारं कारयेत्।

(३) धूल यात्रा के समय धूल का उडना अशुभ माना जाता है। महाभारत भीष्म० ३ ११, २९, द्र० १ ३ १०–२४।

पाद टिप्पणी

३२ (१) उच्छ्वास घोडा चलता है तो उसके टाप के आघात से धूल उडती है। वहाँ पर गली मे अश्वारोही आ रहे थे। उनके नाको से जो शीत ऋतु के कारण स्वास के साथ भाप निकल रही थी उसकी उपमा कल्हण ने टाप से उठते धूल से दी है। शोक में आदमी लम्बी साँस लेता है। शीत ऋतु में स्वास लेने पर जितना ही लम्बा स्वास निस्वास होगा उतना ही लम्बी भाप नाक और मुख से निकलेगा।

घोडो का निश्वास छोडना किंवा दीन होना अपशकुन माना जाता है। भीष्मपर्व ३ ४५, ३ ७७।

(२) तातार खा बहलोल लोदी सुल्तान दिल्ली के आधीन पजाब का सूबेदार था। सैयिदो ने काश्मीरी उमरावो को दवाने के लिए तातार खा की सहायता माँगा था। उसने कुछ सेना वैहकी की सहायता के लिए काश्मीर भेज दिया। किन्तु जब वह सेना भीमवर पहुँची तो वहाँ के राजा ने उसे रोक कर, वापस जाने के लिए वाध्य कर दिया। म्युनिख पाण्डु० ८० ए०। द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० ३ ३१८, ३१९।

प्राप्तेनाद्य मिथो मन्त्रं विधाय कृतनिश्चयाः ।
आक्रान्तमण्डलाः सैद्या युष्मच्छेषविशङ्किता ।। ३३ ।।

३३. 'आज परस्पर मन्त्रणा करके उन्होंने निश्चय कर लिया। मण्डल को आक्रान्त करने वाले, सैय्यिद तुम लोगों के शेष रहने से शंकित, हो गये हैं—

प्रातर्वध्नन्ति वस्तस्मादुपायः कोऽपि चिन्त्यताम् ।
मिथ्येति बोधिता मद्रा जोनराजानकादिभिः ।। ३४ ।।

३४. 'प्रातः तुम लोगों को वन्दी कर लेंगे अतः कोई उपाय सोचिए।' इस प्रकार मिथ्या ही जोन राजानक आदि ने मद्रों को समझाया—

हन्मस्तान् वयमेवादौ संमन्त्र्येति समाययुः ।
सर्वानमृतवाटयन्तः समेतानवगम्य तान् ।। ३५ ।।

३५. 'हम लोग ही पहले उनका वध कर देंगे' ऐसी मन्त्रणा कर आ गये। अमृतवाट[1] में उन लोगों को एकत्रित जानकर,—

अन्तः परशुरामाद्या विविशुः शस्त्रधारिणः ।
रक्ष्यो द्वारस्त्वया तैरित्युक्तो द्वारेशताजकः ।। ३६ ।।

३६. शस्त्रधारी परशुराम आदि अन्दर प्रविष्ट हो गये। 'तुम द्वार की रक्षा करो'—इस प्रकार कहकर, उनके द्वारा नियुक्त द्वारपाल ताजक[1] ने—

---

पाद-टिप्पणी :

३५. ( १ ) अमृतवाट : यह स्थान श्रीनगर में ही था। दक्षिण-पूर्व एशिया में विहार को वाट कहते हैं। वाट भारत में भी बौद्धों के कारण प्रचलित था। कल्हण वर्णित अमृत भवन विहार (रा० : ३ : ९ ) ही मैं समझता हूँ श्रीवर का अमृतवाट है। यह स्थान भी श्रीनगर के समीप है। इसका इसके पूर्व उल्लेख नहीं मिलता। अनुसन्धान अपेक्षित है। परशियन इतिहासकारों ने इसे नौगहरा का उद्यान या बाग लिखा है (तवक्काते अकबरी : ४५१; ६८२; पीर हसन : १९३ )।

पाद-टिप्पणी :

सैय्यद हत्याकाण्ड का वर्णन श्लोक ३६–५२ में किया गया है।

३६. ( १ ) ताजक : नाम ताज था। काश्मीर में नामों के पीछे 'क' लगा देने का रिवाज था। इसलिए नाम ताजक लिखा गया है। ताज का अर्थ मुकुट, शाही टोपी या परिंदे के सर की कलगी या शिखा होता है। यदि यह शब्द ताजीक होगा तो इसका अर्थ होगा—अरब की यह सन्तान जो ईरान में रहकर जवान हुई है। इसका तीसरा अर्थ ताजिकिस्तान के नागरिकों से लगाया जा सकता है। उन्हें ताजिक कहते हैं। केवल 'इ' की मात्रा का अन्तर शुद्ध नाम में रह जाता है। काश्मीर विदेशी मुसलमानों के आश्रय तथा नौकरी का घर हो गया था। अतएव सम्भव है कि यह व्यक्ति या तो स्वयं ताजकिस्तान से आया था अथवा उसके पूर्वज आये होंगे। ताजक शब्द फारसी है। ताजक जाति ताजकिस्तान, तुर्किस्तान के बुखारा प्रदेश से लेकर बदख्शा, काबुल, बिलोचिस्तान, ईरान में पाई जाती है। इस समय अफगानिस्तान में उन्हें देहान तथा

मन्त्रे प्रवृत्तिरित्युक्त्वा सैदभृत्यान्न्यवारयत् ।
कुर्वन्ति भोजने लुण्ठि त्वद्भृत्या इति तद्गिरा ॥ ३७ ॥

३७ मन्त्रणा हो रही है इस प्रकार कहकर सैय्यिद भृत्यो का निवारित कर दिया 'तुम्हारे भृत्य भोजन सामग्री लूटते हैं, इस प्रकार की उसकी बात से—

सैदाः मशस्त्रान् स्वान् भृत्यान् स्वसमीपान्न्यवारयन् ।
जोनराजानकस्तावत् पथान्येनागमद् द्रुतम् ॥ ३८ ॥

३८ सैय्यिदो ने सशस्त्र अपने भृत्यो को अपने पास से रोक दिया, तब तक शीघ्र ही जोन राजानक दूसरे मार्ग से आ गया—

गृहीत्वा राजभृत्यौघाञ्जिघांसुर्वाटिकान्तरात् ।
ताजदौवारिकोऽप्यश्वमारुह्याप्तो नृपाङ्गनम् ।
बभ्रामाभ्यन्तरेऽन्यत्र मन्मतेन जिघांसया ॥ ३९ ॥

३९ राजभृत्य समूहो को लेकर, मारने की इच्छा से वाटिका से आया था । ताज[1] दौवारिक[2] अश्वारूढ होकर, नृपागण मे पहुचकर, उनकी सलाह से, मारने की इच्छा से, दूसरी तरफ अन्दर ही घूमने लगा ।

वाटिकान्तश्चतुष्खण्डमण्डपोपरि संस्थिताः ।
सैदा मद्रान् समालोक्य साशङ्का इव तस्थिरे ॥ ४० ॥

४० वाटिका मे चतुष्खण्ड मण्डप पर स्थित, सैय्यिद मद्रो को देखकर, सशकित से होकर स्थिर रहे ।

---

बलूचिस्तान में देहवार कहते हैं । ईरान में ताजक शब्द का व्यवहार साधारण कृपक वर्ग के लिये किया जाता है । ताजकिस्तान पर्वतमाला के बाहर तुर्की भाषा का प्रचार बढ गया । ताजिक मुसलमान लोग जो मंगोलों के कैदी या दास हो गये थे, वे भी कालान्तर में मंगोल ही कहलाए । मंगोल भारत में तथा चीन में तातार कहे जाने लगे थे ।

ताजक ज्योतिष ग्रन्थ है । इसके रचनाकार यवनाचार्य है । राजा समरसिंह तथा नीलकण्ठादि ने उसका अनुवाद संस्कृत में किया था । बारह राशियों का विभाग कर, उनके फलाफल निश्चित करने की रीतियाँ बताई गयी है । उसमें मेष, सिंह तथा धनु का स्वभाव पित्त तथा वर्ण क्षत्रिय, वृष एवं कन्या का स्वभाव वायु, वर्ण वैश्य, मिथुन, तुला, कुम्भ का सम-स्वभाव तथा वर्ण शूद्र है । कर्कट, वृश्चिक एवं मीन का स्वभाव कफ तथा वर्ण ब्राह्मण है । ग्रन्थ में नामवाचक शब्द फारसी तथा संस्कृत दोनों भाषाओं में है । यथा—इकबाल योग, इतिहा योग, इत्थशाल योग, इशराक योग एवं गैर कबूल योगादि ।

पाद-टिप्पणी

अर्थ सगति के लिए 'नृपाग्रगम्' के स्थान पर 'नृपागनम्' पाठ रखा गया है ।

३९ (१) ताज इसके विषय मे कुछ और जानकारी नही मिलती ।

(२) दौवारिक क्षेमेन्द्र ने लोकप्रकाश में दौवारिक का उल्लेख किया है ( पृ० २ ) । द्वारपाल अथवा पहरदार या ड्योढीदार इसका अर्थ होता है । द्र० : रघु० ६ . ५९ ।

किं न गच्छत देशं स्वं प्रतिमुक्ताः किमागताः ।
इत्यागतांस्तान् दृष्ट्वैव सेर्ष्यं सिंहद्विजोऽभ्यधात् ॥ ४१ ॥

४१. 'प्रतिमुक्त किये जाने पर भी (तुम लोग) अपने देश क्यों नहीं जा रहे हो ? किस लिये आये हो'—इस प्रकार आगत उन लोगों को देखते ही ईर्ष्यापूर्वक सिंह[1] ( भट्ट ) द्विज ने कहा ।

मार्गमुक्त्यक्षरो नाप्तस्त्वत्तो यामः कथं वयम् ।
अद्य वः प्रतिमोक्ष्यामः सत्यार्थमिति तेऽभ्यधुः ॥ ४२ ॥

४२. 'तुम लोगों से मार्ग-मुक्तिपत्र[1] नहीं प्राप्त हुआ है । हम लोग कैसे जाँय ?' 'आज तुम लोगों को प्रतिमुक्त (मोक्ष, पत्र मिलेगा'—इस प्रकार उन लोगों ने सत्य बात कही ।

वैजन्यमेक्ष्य पाथेययाच्ञाद्म्नादुपागतः ।
परशुः सिंहभट्टं तं न्यवधीत् प्रथमं रुषा ॥ ४३ ॥

४३. पाथेय[1] याचना के व्याज से पहुँचकर और एकान्त देखकर, क्रोध से परशुराम[2] ने पहले ही सिंहभट्ट का वध कर दिया ।

---

पाद-टिप्पणी :

'सेर्ष्यं' पाठ—बम्बई ।

४१. (१) सिंहभट्ट : श्रीवर तथा सिंहभट्ट सुल्तान जैनुल आबदीन के प्रियपात्र थे । सिंहभट्ट तथा श्रीवर के साथ जैनुल आबदीन के नौका विहार का उल्लेख ( जैन० : १ : ५ : ९९ ) मिलता है । इससे प्रकट होता है कि सिंहभट्ट सम्मानित राजकीय व्यक्ति था । यहाँ पर भी सैय्यिदों के समीप सिंहभट्ट दिखायी देता है । अतएव वह इस समय भी उच्च अधिकारी एवं सैय्यिदों का कृपापात्र था अन्यथा उसकी हत्या परशुराम न करता । सिंहभट्ट के विषय में विशेष और कुछ ज्ञातव्य नहीं है ।

पाद-टिप्पणी :

पाठ : 'मुक्त्यक्षरो' : बम्बई ।

४२. ( १ ) मुक्तिपत्र : राहदारी = पासपोर्ट । मोक्षाक्षर = मोक्षपत्र = प्रतिमुक्तपत्र । जोनराज ने इसे 'मोक्षाक्षर' लिखा है । द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जोन० : श्लोक ६५६ ) ।

पाद-टिप्पणी :

४३. ( १ ) पाथेय : मार्ग-व्यय या भोज्य सामग्री जिसे पथिक अपने साथ ले जाता है, या कलेवा—अग्राह् पाथेय मिवेन्द्र सूनुः—कि० ३ : ३७, बिसकिसलयच्छेद पाथेयवन्त—मेघ० ११ ।

( २ ) परशुराम : तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'काश्मीरियों ने इस बात से परेशान होकर, एक रात्रि में जम्मू के राजा परशुराम से जो तातार खाँ के भय से काश्मीर में शरण हेतु चला गया था मलिक सैय्यिद हसन तथा तीस अन्य सैय्यिदों की नौनिहरा उद्यान में विश्वासघात करके हत्या कर दी ( ४९१-४८२ ) ।'

फिरिश्ता लिखता है—'काश्मीरियों ने परशुराम जम्मू के राजा की सहायता से सैय्यिद हसन तथा अन्य तीस सैय्यिदों को मार डाला ।' ( ४८२ ) द्र० : ३ : ४९८; ४ : २५, ३५, २७०, ३४५ ।

चतुष्मण्डपिकाप्रान्ते प्रक्षरत्क्षतजोक्षितः ।
सिंहोऽपि वित्रुटच्छालः सृगाल इव सोऽपतत् ॥ ४४ ॥

४४ चतुष्मण्डपिका[1] के प्रान्त मे (तट) के निकट गिरते रुधिर से भीगा, वह सिंह भी श्रृगाल हो गया और टूटते शालवृक्ष की तरह वह गिर पडा ।

किं द्रोहो द्रोह इत्युक्त्वा यावद् भीताः समुत्थिताः ।
तावत् खड्गप्रहारैस्ताञ् जघ्नुर्मद्राः समेत्य ते ॥ ४५ ॥

४५ 'कैसा द्रोह है ?' 'कैसा द्रोह है ?' यह कहकर, जब तक भयभीत होकर, वे खडे हुए, तब तक मिलकर, उन मद्रो ने खग प्रहारो से उन्हे मार डाला ।

निर्यातः प्रस्फुरन्मेदा द्वाराग्रे सैदहस्सनः ।
हतो मुष्ट्यायुधस्तत्तत्प्रहारशतविह्वलः ॥ ४६ ॥

४६. तुन्दिल (तोद निकले) सैय्यिद हसन, बिना अस्त्र-शस्त्र के, द्वार पर, सैकडो प्रहारो से मर गया ।

तं दृष्ट्वा मेयहस्सनं सभयं विद्रुतं द्रुतम् ।
प्राकारारूढमवधीत् कोऽपि च्छिन्नपदद्वयम् ॥ ४७ ॥

४७. यहाँ से पलायित एव प्राकार (चहारदिवारी) पर आरूढ, मिया हस्सन के दोनो पैर काट कर, मार डाला ।

गदायामीनकासीममल्लजाद्यास्तदन्तिके ।
त्रिंशन्मात्रा हतास्तत्र पुत्रमित्रसमन्विताः ॥ ४८ ॥

४८ उनके पास गदाय[1], आमीन[2], कासिम[3], मल्लकजादादि[4] पुत्र, मित्र सहित तीस[5] की सख्या मे वहाँ मारे गये ।

---

पाद टिप्पणी

पाठ—बम्बई ।

४४ ( १ ) चतुष्मण्डपिका मजिल के अर्थ में प्रयुक्त होता है । मण्डपिका प्रथम तथा दूसरे खण्ड में भी हो सकती है । चतुष्खण्ड एव चतुष्यमण्डपिका में अन्तर है ।

पाद-टिप्पणी

४८ ( १ ) गदाय गदा का अर्थ भिक्षुक या फकीर होता है । शब्द फारसी है । विभक्ति है ।

( २ ) आमीन अर्थ एवमस्तु, तथास्तु है । स्वर्गीय स्वामी रामतीर्थ जी ने आमीन का मूल 'ॐ' शब्द माना है । उनके मत से आमीन 'ॐ' का अपभ्रश है । शब्द अरबी है । यदि यह शब्द अमीन है तो अर्थ अमानतदार या न्यासधारी होगा ।

( ३ ) कासिम शब्द अरबी है । अर्थ विभाजक या वितरक है । यहाँ नामवाचक है ।

( ४ ) मल्लजादा मुल्ला के पुत्र ।

( ५ ) तीस द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० ४ ४३ । बहारिस्तान शाही : पाण्डु० ६२-६३ में उल्लेख मिलता है—'एक रात लगभग तीन-सौ आदमी जिनमें कुछ जम्मू के सैनिक थे, चुपचाप

वदन्तो हाल-हालेति रक्तसिक्तास्तपाणयः ।
चेरुस्ते तद्वधोद्युक्ताः कृतान्तस्येव किङ्कराः ॥ ४९ ॥

४९. उसके वध के लिये उद्यत रक्त-रंजित पाणि वे लोग यम के दूत सदृश 'हाल-हाल'[1] कहते हुए विचर रहे थे।

गृहेषु गोवधात् तेषां पापभीर्नाभवद् यथा ।
तथा तत्र घ्नतां सैदान् मद्राणां नाभवद् घृणा ॥ ५० ॥

५०. घर में जिस प्रकार गौ का वध[1] करने से पाप का भय नहीं हुआ था, उसी प्रकार सैय्यिदों के वध में मद्रों को घृणा नहीं हुई।

मृगयान्ते कुरङ्गादींश्छिन्नाङ्गान् व्यदधुर्यथा ।
तथा सैदाः कृता मद्रैः क्षुद्रैस्तद्वाटिकान्तरे ॥ ५१ ॥

५१. मृगया के पश्चात्, जिस प्रकार कुरंग आदि का (सैय्यिद) अंगच्छेद कर देते थे, उसी प्रकार उस वाटिका में क्षुद्र मद्रों ने सैय्यिदों का भी (अंगच्छेद) कर दिया।

द्विषद्धृतांशुका नग्ना महार्हशयनोचिताः ।
अनाथा इव लोकस्य प्रययुः प्रेक्षणीयताम् ॥ ५२ ॥

५२. बहुमूल्य शयन के योग्य उन लोगों के वस्त्रों को शत्रुओं ने ले लिया था और नग्न वे अनाथ सदृश लोगों को दिखायी पड़े।

---

नौगहर के किले में पहरेदारों को घूस देकर, भीतर घुस आये। दूसरे दिन प्रातःकाल जब सैय्यिद हसन किला में दरबार कर रहा था, उस समय वे लोग छिपे स्थानों से निकल कर, सैय्यिद हसन तथा वेरह दूसरे उसके साथियों को मार डाला।' किन्तु श्रीवर संख्या तीस देता है। फिरिश्ता लिखता है—'सैयिद हसन तथा अन्य तीस सैय्यिदों को मार डाला (४८२)।'

तवक्काते अकबरी में भी उल्लेख है—'सैय्यिद हसन तथा तीस अन्य सैय्यिदों को नौराहरा (नौगहरा) उद्यान में विश्वासघात करके हत्या कर दी (४९१ = ६८२)।'

पीर हसन लिखता है—'सैय्यिद हसन को तीस बड़े सादात के हमराह जो अराकीन सल्तनत के बाग नौगहर में कत्ल कर डाला (१९३)।'

पाद-टिप्पणी

४९. हाल-हाल : दत्त ने अनुवाद किया है—'उन्होंने 'हाल' 'हाल' का हल्ला किया किन्तु रक्ति-रंजित हाथ-मद्र उनके मारने में व्यस्त रहे और वहाँ यमदूतों की तरह चलते थे।'

पाद-टिप्पणी :

५०. (१) गोवध : गोवध भी उस समय हिन्दू-मुसलिम का प्रश्न आज के समान हो गया था। हिन्दू गोवध को अच्छा नहीं मानते थे। यही भावना काश्मीरी मुसलमानों की थी। सैय्यदों तथा विदेशी मुसलमानों के कारण गोवध, जो काश्मीर में अज्ञात था, आरम्भ किया गया था। अतएव काश्मीरी मुसलमान तथा अन्य मुसलमानों का एक वर्ग बन गया था। काश्मीर में काश्मीरी तथा गैर-काश्मीरी मुसलमानों में शक्ति संचय तथा अन्य कारणों से

केचिद्धैभतखानाद्या निष्कृष्टच्छुरिकास्ततः ।
तूर्णं प्राकारमुल्लङ्घ्य गृहीत्वाश्वान् पलायिताः ।। ५३ ।।

५३ हैवत खाँ आदि कुछ लोग छुरिका निकाले हुए, शीघ्र ही प्राकार (चहारदिवारी) लाँघ कर, घोड़ो को लेकर भागे।

तद्दृष्ट्वा तुमुले जाते बहिस्तदनुजीविनाम् ।
कस्यापि निश्चयो नाभूदन्तरे के हता इति ।। ५४ ।।

५४ यह देखकर, बाहर उनके अनुचरो का तुमुल नाद हुआ, अत किसी को यह निश्चय नही हुआ कि अन्दर कौन मारे गये।

भयत्यक्ताभिमानेषु विद्रुतेष्वनुजीविषु ।
चकर्ष शस्त्रं तन्मध्यात् कोऽपि नैवाङ्गनान्तरे ।। ५५ ।।

५५ भय के कारण, अभिमान त्यागकर, अनुचरो के भाग जाने पर, उनके बीच प्रागण मे कोई शस्त्र नही खीच सका।

मल्लजादात्मजाहूतस्तावन्मेयामहम्मदः ।
गृहादेत्य द्रुतं प्रादादास्कन्दं राजमन्दिरे ।। ५६ ।।

५६ तबतक मल्लजाद के पुत्र द्वारा बुलाये जाने पर, मियाँ मुहम्मद[1] घर स आकर, शीघ्र ही राज्यगृह मे युद्ध छेड दिया।

---

संघर्ष होता रहा। द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जै० ३ २७०, ४ १२४, ५०८।

पाद-टिप्पणी

'हूत' पाठ—बम्बई।

५६. ( १ ) मुहम्मद : तवक्काते अकवरी में उल्लेख है—'सैय्यिद हसन का पुत्र सैय्यिद मुहम्मद जो कि सुल्तान का मामा था, सेना एकत्र करके सुल्तान की रक्षा हेतु दीवानखाने में पहुँचा (४५१ = ६८३)।'

फिरिश्ता लिखता है—'सैय्यिद मुहम्मद जो हसन का पुत्र था और सुल्तान का मामा था, राजकीय रक्षको को एकत्रित कर, राजप्रासाद की ओर सुल्तान की रक्षा के लिए आया (४८२)।'

बहारिस्तान शाही में उल्लेख है—'एक नौकर जो बुरी तरह घायल हो गया था, वह किले के परनाले के मार्ग से निकल कर, सैयिद हसन के पुत्र सैयिद मुहम्मद को इस दु खान्त घटना का समाचार दिया। सैयिद मुहम्मद अपने भाई सैयिद हाशिम के साथ किले पर आक्रमण कर, उस पर कब्जा कर लिया। उसने वहाँ के कोश पर भी अधिकार कर, अपने सैनिको में बाँट दिया ( पाण्डु० ६२ ए०, ६३ ए० तथा ६२ बी० )।'

पीर हसन लिखता है—'सुल्तान का मामू सैय्यिद मुहम्मद वल्द सैय्यिद हसन बैहकी अपनी जमीअत लेकर सुल्तान की हिफाजत के लिए मुस्तैद हो गया ( १९३ )।' द्र० ३ : ४२५, ४४८; ४ : ६८, १३८, ३३६, ६२४।

प्रतोलीपालकः सोऽयं द्रोहीत्यग्रागतं द्रुतम् ।
राजमार्गान्तरे क्रुद्धो नोरोल्लाहमघातयत् ॥ ५७ ॥

५७. 'यह राजमार्ग-रक्षक[1] द्रोही है'—यह विचार कर, सामने आये नुरुल्ला को, राजमार्ग में ही क्रुद्ध ( उन लोगों ने ) उसको मरवा दिया ।

बद्धाररिपुटां दृष्ट्वा द्वारधानीं नवीकृताम् ।
ज्ञात्वान्तःस्थान् रिपून् प्राग्वत् क्षोभेनाग्निमदापयत् ॥ ५८ ॥

५८. नवीकृत द्वार बन्द देखकर, और शत्रुओं को अन्दर स्थित जानकर, क्षोभ के कारण पहले के समान अग्नि लगवा दिया ।

न शक्तोपद्रवं द्रष्टुं स्वर्गं मद्रक्षको गतः ।
शुचेवेति द्वारधान्या जुहुवे ज्वलने वपुः ॥ ५९ ॥

५९. 'मेरा रक्षक स्वर्ग चला गया'—और उपद्रव देखने में असमर्थ होकर, मानो शोक से ही फाटक ने अपने शरीर की आहुति दे दी ।

सौधप्राप्तलसद्धूमस्तोमव्याजान्नृपश्रियः ।
क्व मां खला नयन्तीति निःश्वासौघा इवास्फुरन् ॥ ६० ॥

६०. 'मुझे खल कहाँ ले जा रहे हैं?'—राज्य सम्पदायें मानों राजप्रासाद से निर्गत धूम-पुंज के व्याज से निश्वास[1] छोड़ रही थी ।

अत्रान्तरेऽग्निमालोक्य द्रोग्धारो धारितायुधाः ।
राजधान्यङ्गनं प्रापुर्निर्गता वाटिकान्तरात् ॥ ६१ ॥

६१. वहाँ पर आग लगी देखकर, द्रोही आयुध लिये वाटिका से निकलकर, राजधानी के प्रांगण में पहुंच गये ।

जोनराजानको गच्छन् रुद्धः केनापि पत्तिना ।
वीरः खड्गप्रहारेण द्वित्रांस्तत्राङ्गनेऽवधीत् ॥ ६२ ॥

६२. जाते हुए, वीर राजानक को किसी पत्ति[1] (पदाति) ने रोक लिया, किन्तु उसने वहीं प्राङ्गण में खड्ग प्रहार से दो-तीन का वध कर दिया ।

---

पाद-टिप्पणी :

५७. (१) प्रतोलीपालक : प्रतोली या राज-मार्ग का रक्षक । प्रतोली द्वार या मार्ग का रक्षक । द्र० : ४ : ३१ ।

पाद-टिप्पणी :

५८. ५९वें श्लोक के आधार पर राजधानी के स्थान पर द्वारधानी किया गया है, जो प्रसङ्गोचित है ।

पाद-टिप्पणी :

६०. (१) निश्वास : श्लोक ४ : ३१ में उच्छ्वास की तथा यहाँ श्रीवर ने निश्वास की उपमा दी है ।

पाद-टिप्पणी :

६२. ( १ ) पत्ति : क्षेमेन्द्र ने पत्ति की परि-भाषा लोकप्रकाश में किया है—'रथो गजो नराः पञ्च त्रयोऽश्वाः पत्तिरेव च ( पृ० ५९ ) ।' प्राचीन भारतीय सैनिक संघटन का रूप था । उसमें एक

ममारुह्याथ राजाश्वान् सर्वे मद्रसमन्विताः ।
मुक्तामूलकनागान्ते प्राप्ताः प्रोचुः क्षणं मिथः ॥ ६३ ॥

६३. मद्र समन्वित सब लोग राजा के घोडो पर चढकर, मुक्तामूलक[1] नाग के समीप पहुँच गये और वहाँ परस्पर बोले—

वरमत्रैव तिष्ठामः सैदैर्युद्धं विदध्महे ।
स्वल्पावशिष्टैः शत्रूणां न शेषः परिरक्ष्यते ॥ ६४ ॥

६४ 'उत्तम यह है कि यहीं रहे और स्वल्प अवशिष्ट सैय्यिदो से युद्ध करें, क्योकि शेष बचे शत्रु की रक्षा नही की जाती है।'

ज्यलालठक्कुरः श्रुत्वा तानूचे नयकोविदः ।
न युद्धसमयोऽस्तीह गत्वानेन पथा द्रुतम् ॥ ६५ ॥

६५ यह सुनकर, नयकोविद[1] जल्लाल[2] ठक्कुर ने उन लोगो से कहा—'यहाँ युद्ध का समय नही है, शीघ्र ही इस पथ से चलकर—

वितस्तापारमासाद्य तिष्ठामः सपरिच्छदाः ।
तत्रोपायान् विधास्यामो येन नश्यन्त्यमी स्वयम् ॥ ६६ ॥

६६ 'और सेवको सहित वितस्ता पार पहुँचकर, निवास करें, वही पर वह उपाय करेगे, जिससे वे स्वय नष्ट हो जायँगे।'

---

रथ, एक हाथी, तीन अश्व तथा पाँच पदाति अर्थात् पैदल सैनिक होते थे। मख ने 'सेना विशेपे पत्ति—' लिखा है। श्लोक २७३।

यह श्लोक महत्त्वपूर्ण है। काश्मीर में मुसलिम शासन होने पर भी सैनिक सघटन का रूप प्राचीन ही था। काश्मीर की सेना में रथ का अभाव था। पहाडी प्रदेश होने के कारण रथ की कोई उपयोगिता नही थी।

पाद-टिप्पणी .

६३ ( १ ) मुक्तामूलक नाग यह विचार नाग स्थान पर है। विचार नाग ग्राम के समीप एक सुन्दर नाग है। चैत्र मास में यहाँ की यात्रा की जाती है। नीलमत के अनुसार एलपत्र नाग का वह रूप है। तीर्थसग्रह में इस नाग का नाम मुक्तामूलक नाग मिलता है। इस गाँव के पश्चिम में तथा अचार लेक में पानी जानेवाले स्रोत के समीप में तीन मन्दिरों के ध्वसावशेष है, जो इस समय जियारतों में परिणत कर लिये गये है।

पाद-टिप्पणी

६५ ( १ ) नयकोविद : नीतिज्ञ, राजनीतिशास्त्र-पारगत, राजनयिक, राजनीतिज्ञ, दूरदर्शी—रघु० १ : ५५।

( २ ) ज्यलाल : अरबी नाम जलाल है। शाब्दिक अर्थ, प्रताप, तेज, अजमत, हैबत आदि है।

अभिनन्द्येति तद्वाक्यं सर्वे साहसशालिनः ।
जुहिलामठमार्गे वितस्तापारमासदन् ॥ ६७ ॥

६७. समस्त साहसी उसकी बातों का आदरकर, जुहिला[1] मठ के मार्ग से वितस्ता[2] पार पहुँच गये ।

अत्रान्तरेऽन्तरं प्राप्तः क्रुद्धो मेयामहम्मदः ।
अवधीद् भ्रातरौ ताजपाजकौ द्वारपालकौ ॥ ६८ ॥

६८. इसी बीच समय पाकर, क्रुद्ध मीया मुहम्मद ने द्वारपाल ताज एवं पाजक का वध कर दिया, जो दोनों भाई थे ।

राजधान्यङ्गनात् कृष्टौ श्वपचैर्गुल्फदामभिः ।
अमेध्यमध्यमग्नाङ्गौ ययतुस्तौ श्वभोज्यताम् ॥ ६९ ॥

६९. राजप्रासाद के प्राङ्गण से चाण्डालों ने गुल्फ में रस्सी लगाकर ( उन्हें ) खींचा, शरीर के अङ्ग मलयुक्त हो गये और वे कुत्तों के भोजन बने ।

आजन्म कृपणौ ग्राम्यपीडोत्कोचार्जितश्रियौ ।
प्राणदानक्षणे तस्मिन् गतौ सर्वस्वदातृताम् ॥ ७० ॥

७०. जन्मभर कृपण ग्रामीणों को पीड़ित कर, तथा उत्कोच द्वारा सम्पत्ति अर्जित करने-वाले, वे दोनों इस प्राणदान के समय सर्वस्व दानी बन गये ।

---

पाद-टिप्पणी :

'सर्वे' पाठ–वम्बई ।

६७. ( १ ) जुहिला मठ : श्रीवर के वर्णन से स्पष्ट है कि यह स्थान श्रीनगर में था । कल्हण ने श्रीनगर स्थित जोहिला मठ का उल्लेख रा० : ७ १६१९ में किया है । श्रीवर का जुहिला तथा कल्हण का जोहिला मठ एक ही स्थान है ।

( २ ) वितस्ता पार : तवक्काते अकवरी मे उल्लेख है—'और वहत ( वितस्ता ) नदी पार कर ली तथा पुल तोड़ दिया । दूसरी ओर सेना एकत्र कर बैठ गये ( ४५१ = ६८३ ) ।'

फिरिश्ता लिखता है–'तत्पश्चात् वेहुत (वितस्ता) पार कर पुल तोड़ दिया । वे नदी के पार अपना शिविर लगा कर सेना एकत्रित किये (४८२) ।'

पाद-टिप्पणी :

६९. (१) चाण्डाल : राज-सत्ताहीन व्यक्तियों की दुर्दशा का नग्न वर्णन श्रीवर ने किया है । किसी दिन के राज्याधिकारी सत्ताहीन होने पर, कुत्तों, विल्ली के समान उपेक्षित हो गये थे । उनकी लाश उठाने के लिए, उनके घरवाले तक नहीं आये । उन्हे भय था कि विरोधी कहीं उन पर आक्रमण न कर दें । अतएव लावारिशों के लाश के समान डोमों ने उनके पैर में रस्सी बाँध कर खींचा, जैसे जानवरों के पैर में रस्सी बाँधकर, उन्हें सड़क पर घसीटते ले जाकर, कहीं फेंक देते हैं जहाँ चील, कौआ, कुत्ता आदि खा जाते हैं ।

आज भी प्रथा है कि लावारिशों की लाश डोम स्मशान पर ले जाकर, सरकारी खर्च से फूँक देते हैं ।

पाद-टिप्पणी :

७०. पाठ 'कृपणौ' : वम्बई ।

संचितं ग्राम्यपीडाभिर्लुब्धैर्यत् परवञ्चनैः ।
तेषां मद्रूप्यकुप्यादि सर्वं तद्राजसादगात् ॥ ७१ ॥

७१ ग्रामीणो को पीडा देकर, तथा दूसरों से प्रतारित ( ठग ) कर, लोभियो ने जो सग्रह किया था, उनका वह सब रूप्य,[1] कुप्यादि[2], नृपाधीन हो गया ।

कृपणस्य गृहं विशन्ति येऽर्था
न बहिः क्रष्टुमतो जनाः क्षमन्ते ।
बिलमध्यगता इव द्विजिह्वा
यदि निर्यान्त्यसुभिः सहैव सर्वे ॥ ७२ ॥

७२ जो धन कृपण के घर चले जाते हैं, ( उन्हे ) वहाँ से निकालने मे लोग, उसी प्रकार समर्थ नही हो सकते, जिस प्रकार बिल मे प्रविष्ट सर्प[1] को। यदि सब निकलते हैं, तो प्राण निकलने पर ही ।

भिक्षोः प्रसृतिमात्रं यैर्न दत्तं तद्गृहान्तरात् ।
शतं तण्डुलखारीणां भिक्ष्वाद्यैरेव तद्धृतम् ॥ ७३ ॥

७३ जिन्होंने मुट्ठीभर अन्न अपने घर से भिक्षु को नही दिया, उसका सौ खारी[1] चावल भिक्षु आदि ने ले लिया ।

---

पाद-टिप्पणी

७१ ( १ ) रूप्य सुवर्ण या रजत की मुद्रा । कालान्तर में रजत मुद्रा के लिए प्रयोग किया जाने लगा । कलचुरी नरेश कृष्णराज ने रूपक रजत मुद्रा टंकणित कराया था ।

द्र० : ३ ४०१, ४९९ ।

( २ ) कुप्य स्वर्ण तथा रजत के अतिरिक्त अन्य धातु की मुद्रायें । द्र० ३ ४०१ ।

पाद-टिप्पणी

७२ ( १ ) सर्प धन पर साँप की तरह बैठने का मुहावरा बहुत प्रचलित है । सर्प की उपमा कजूस, कृपण, मितव्ययी से दी जाती है । कजूस के गडे धन पर धन का स्वामी 'मरने पर साँप बनकर धन पर बैठेगा ।' यह जनश्रुति बहुत प्रचलित है ।

कंजूस मरने दमतक धन व्यय नही करता और अपने प्राणत्याग मे भी नही डरता । उसका व्यवहार उसी प्रकार होता है, जैसा बिल में घुसा साँप बाहर से खीचने पर मर जाता है किन्तु निकलता नही । इसी प्रकार कजूस मर जाता है, लेकिन धन नहीं खर्चता ।

सर्प यदि बायें तरफ से निकलकर दाहिने तरफ चला जाय, तो वह अशुभ माना जाता है । भगवान् रामचन्द्र का मार्ग साँप ने बायें तरफ से चलकर काट दिया था ।

मैं एक बार दिल्ली से राजस्थान मोटर से जा रहा था । मेरे साथ कार में दो-तीन गणमान्य व्यक्ति थे । मैं दिल्ली-जयपुर सडक थी । अलवर से आगे बढने पर, एक ऊँची जमीन से साँप दाहिने से निकल कर सडक के बीचो-बीच, पार चला गया । मैंने कहा अशुभ हो गया । परन्तु ड्राइवर ने तुरन्त कहा, साँप दाहिने से बायें गया है अतएव यह अशुभ-सूचक नहीं है ।

पाद-टिप्पणी

'भिक्ष्वाद्यैरे' पाठ—बम्बई ।

७३. ( १ ) खारी : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० १ २ · २६ ।

गोधूमपिष्टं पूपैकपर्याप्तं नाप्तमर्थिभिः ।
यत् तल्लुण्ठपतच्चूर्णैर्हिमपातायितं पथि ॥ ७४ ॥

७४. याचकों ने एक पूप[1] ( रोटी ) के लिये भी पर्याप्त, जो गेहूँ का चूर्ण ( आटा ) नहीं प्राप्त किये, वह लूट से गिरे हुए चूर्णों से मार्ग में हिमपात तुल्य हो गया था ।

अत्रान्तरे गृहादाप्तोऽप्यालिखानो भटोद्भटः ।
प्राग्वाटिकाप्रतोलीं तामदहत् तज्जिहीर्षया ॥ ७५ ॥

७५. इसी समय भटोद्भट अली खांन घर से आकर, उसे हरने की इच्छा से पहले वाटिका प्रतोली को भस्म कर दिया ।

एदराजानकाद्याश्च तावद् बहामखानजम् ।
उन्मुच्य बन्धनात् तूर्णमपमार्गेण निर्ययुः ॥ ७६ ॥

७६. तबतक एद राजानक[1] आदि बहराम के पुत्र[2] को बन्धन-मुक्त[3] कर, शीघ्र अपमार्ग[4] से निकल गये ।

अग्रे दृष्ट्वारिसैन्यं च पश्चादपि हुताशनम् ।
क्षमो यातुं न स्थातुं मृगशाव इवाभवत् ॥ ७७ ॥

७७. सामने शत्रु-सेना तथा पीछे अग्नि को देखकर, वह मृगशावक के समान, जाने एवं स्थित रहने में समर्थ न रह सका ।

---

पाद-टिप्पणी :

७४. ( १ ) पूप : पूआ या मालपूआ नामक मीठा पक्वान । संस्कृत में पूप या अपूप कहते हैं । शर्करा-आटा मिश्रित रोटी से बनाया गया मीठा पदार्थ इसे कहीं-कहीं पूड़ा भी कहते हैं ।

पाद-टिप्पणी :

७५. 'वाटिका:' पाठ-बम्बई ।

पाद-टिप्पणी :

७६. ( १ ) एद राजानक : ईदी रैना ।

तबक्काते अकबरी के एक पाण्डुलिपि में 'अहदी इना', लीथो संस्करण में 'एदनी रैना' तथा फ़िरिश्ता के लीथो संस्करण में 'इदि रैना' लिखा मिलता है । कर्नल ब्रिग्स, रोजर्स तथा कैम्ब्रिज हिस्ट्री में नाम नहीं दिया गया है ।

( २ ) पुत्र : यूसुफ खान ।

( ३ ) मुक्त : तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'अब्द जैना ( रैना ) ने यह निश्चय किया कि यूसुफ खांन बिन बहराम खां को जो बन्दीगृह में था, बाहर निकाले ( ४५१ = ६८३ ) ।'

फ़िरिश्ता लिखता है—'नगर के नागरिक यूसुफ खां को मुक्त करना चाहते थे । उसे अथवा राजवंश के किसी आदमी को सुल्तान बनाना चाहते थे, जो अपने अधिकार तथा राज्य की रक्षा कर सके, जो नौजवान हो, जो विरोधियों के अत्याचारों एवं दूसरे गृहयुद्ध से देश को बचा सके ।'

'सैय्यिद लोगों ने जनता के इस विचार का पता लगते ही बन्दीगृह की ओर अली खांन के नेतृत्व में दौड़ पड़े । वहाँ बहराम खां के पुत्र यूसुफ खां का वध कर दिया ( ४८३ ) ।'

( ४ ) अपमार्ग : सीधा मार्ग से नहीं बल्कि पानी निकलने आदि छोटे या बन्द मार्गों से चुपके से निकल गये ।

कृष्टोऽरिष्टाय सोऽय नोरुद्धैरिति त विदन् ।
आलिखानः समाश्वास्य सिंहो मृगमिवावधीत् ॥ ७८ ॥

७८ विरोधियो ने हमलोगा के अनिष्ट हेतु इसे मुक्त किया है, यह समझ कर, आश्वासन देकर, अलि खान ने उसे ( युसुफ को ) इस प्रकार मार डाला, जैसे सिंह मृग को।

महाराज्ञ्यैव कृष्टोऽय पाजभट्टमतस्थया ।
राज्यार्थमिति सैदास्त चुक्रुशुः केचनावदन् ॥ ७९ ॥

७९. 'पाजभट्ट'[1] के मत मे स्थित, महारानी ने ही राज के लिये, इसे मुक्त किया है'— इस प्रकार सैय्यिदो ने उससे कहा।

उपायो बन्धनात् क्रष्टुं चिन्तितस्तस्य योऽपरैः ।
अपायः प्रत्युतास्याभूद् दैवं केन विलङ्घ्यते ॥ ८० ॥

८० दूसरे लोगो ने उसे बन्धन-मुक्त करने का जो उपाय सोचा, वह इसके लिये अपाय हो गया। दैव को कौन लांघ सकता है ?

तस्य मीरादयो भृत्याः पापास्तेन प्रचोदिताः ।
प्रहारविवशं चक्रुः शशक शबरा इव ॥ ८१ ॥

८१ उसके द्वारा मीरादि पापी भृत्य, उसे प्रहार से उसी प्रकार विवश कर दिये, जिस प्रकार शबर शशको को।

राजपुत्रवधोत्पातविवश पृष्ठपातिनम् ।
अवधीत् पाजभट्ट तं स्वपक्षमिव राक्षसः ॥ ८२ ॥

८२ उस राक्षस (अली खान) ने राजपुत्र के वधरूप उत्पात स विवश तथा पीछ स आये, उस पाजभट्ट[1] का भी वध कर दिया, जो कि उसके पक्ष का था।

---

पाद टिप्पणी

७८ ( १ ) युसुफ 'सैय्यिद अली वैहकी एक सैय्यिद सामन्त ने विरोधियों व षडयन्त्र का पता लगा लिया तुरन्त युसुफ खा का मार डाला।' ( म्युनिख पाण्डु० ७९ ए० )।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'सैय्यिद अली खा को जो सैय्यिदों का अमीर था, इस विषय की सूचना मिल गयी और उसने युसुफ खा की हत्या कर दी ( ४५२ = ६८३ )।'

पाद-टिप्पणी

७९ ( १ ) पाजपट्ट द्र० ३ ४२१, ४ ६८, ८२।

पाद टिप्पणी

८० ( १ ) अपाय वियाग, दुर्भाग्य, विपत्ति नाश एव सहार अथ हाता है।—करणापाय विभिन्न वणया—रघु० ८ ४२—काय सनिहितापाय — हि० ४ ६५।

पाद-टिप्पणी

८१ शबर द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी क० रा० ३ ३३।

पाद-टिप्पणी

८२ ( १ ) पाजभट्ट तवक्काते अकबरी में

भुक्तं किमपि नो राज्यान्निर्हेतुः किमयं हतः ।
शुचेवारोदि तद्दृष्ट्वा वृक्षैः पिकरवच्छलात् ॥ ८३ ॥

८३. 'राज्य से कुछ भोग नहीं किया, अकारण वह क्यों मारा गया ?'—यह देखकर, शोक से ही मानों वृक्षों ने भी पिक-रव के व्याज से रुदन किया ।

मा मा वधीरिमं खानं सुचिराद् बन्धनोद्गतम् ।
रुरुदुस्तच्छुचेवेत्थं मरुता कम्पिता लताः ॥ ८४ ॥

८४. 'वहुत दिनों पर वन्धन-मुक्त, इस खांन का वध मत करो',—इस प्रकार शोक से ही मानो वायु प्रकम्पित लताओं ने रुदन किया ।

केऽमी तुरुष्का दुष्कार्यकराः पुष्कलपातकाः ।
इत्येव तरवः कम्पमापुर्वायुविघट्टिताः ॥ ८५ ॥

८५. 'दुष्कार्यकारी, महान पातकी ये तुर्क कौन हैं ?'—इसी से वायु से संघर्ष प्राप्त, वृक्ष प्रकम्पित हो उठे ।

चतुर्विंशतिवर्षोऽयं मात्रा प्राप्तश्चिराच्छवः ।
त्र्यहं रुद्ध्वान्तिके स्नेहात् कृतोऽन्त्यदक्रियया ततः ॥ ८६ ॥

८६. ( उसकी ) माता ने चिरकाल पश्चात्, चौवीस वर्षीय इसके शव को प्राप्त कर, प्रेम के कारण तीन दिन[1] पास रखकर, तत्पश्चात अन्तिम क्रिया किया ।

---

नाम माचीभट्ट दिया गया है—'माचीभट्ट की भी जो युसुफ खां की हत्या पर पश्चाताप करता था हत्या कर दी । ( ४५२ = ६८३ ) ।

फिरिश्ता में उल्लेख है—उनका हाथ अभी खून से तर था ही कि जिन्होंने मलिक ताजभट्ट जिसने उनके इस कार्य की वीरतापूर्वक निन्दा किया था, 'उनके क्रोध का शिकार वना और मार डाला गया ( ४८२ ) ।'

तवक्काते अकवरी की एक पाण्डुलिपि में 'ताजी-भट' तथा 'अजीभट' तथा लीथो संस्करण में 'माजी-भट' लिखा मिलता है । फिरिश्ता के लीथो संस्करण में 'वाजीभट' लिखा है ( द्र० : ३ : ४२१; ४ : ६८, ७९ ) ।

पाद-टिप्पणी :

'निर्हेतुः' पाठ—वम्बई ।

पाद-टिप्पणी :

८६. (१) तीन दिन : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : ४ : १ । तवक्काते अकवरी में उल्लेख है—'युसुफ खां की माता सान देवी, जो उस समय विधवा हो गयी थी, और तीन रोटी से अधिक भोजन नहीं करती थी, अपने पुत्र की लाश तीन दिन तक घर में रखे रही । तदुपरान्त उसे दफन कर दिया ( ४५२–६८३ ) ।'

तवक्काते अकवरी की पाण्डुलिपि में नाम 'देवी' या 'शान देवी', 'सोल देवी' तथा फिरिश्ता के लीथो संस्करण में 'सनानदवूर' लिखा मिलता है ।

यवान्नभक्षणी तस्य जननी विधवा सती।
सोवाणदेवी साजीवमवसत्तच्छवाजिरे ॥ ८७ ॥

८७ यवान्न[1] का भोजन करनेवाली, उसकी सती एवं विधवा माता सोवाण देवी[2], जीवन पर्यन्त उसके शवाजिर में रही।

राजसैंदद्विजानेतान् हतान् वीक्षाम्यहं कथम्।
इतीव तत्क्रुधा रक्तः सूर्यो लोकान्तरं ययौ ॥ ८८ ॥

८८ 'इन मारे गये, राज सैय्यिदों को जो द्विज[1] हैं, कैसे देख सकूँगा ?'—इसलिये मानो इस क्रोध में रक्त होकर, सूर्य लोकान्तर चले गये।

परितो राजधान्यास्तान् दृष्ट्वा नग्नान् महत्तरान्।
न शेकुः केऽपि वस्त्रैकखण्डं दातुं त्रपाहृते ॥ ८९ ॥

८९ राजधानी के चारों ओर महान लोगों को नग्न देखकर, लज्जा दूर करने के लिये, कोई लोग वस्त्र का एक टुकड़ा भी नहीं दे सके।

सरस्तीरगता भेका अविच्छिन्नरवच्छलात्।
साक्रन्दाः सर्वरात्रं ते तच्छुचेवाभवस्तदा ॥ ९० ॥

९० उस समय सरोवरतट स्थित, भेक[1] (मेढक) निरन्तर शब्द के व्याज से, रात भर मानो उसके शोक से क्रन्दन करते रहे।

---

पाद टिप्पणी

८७ यवान्न : यवान्न शब्द यहाँ साभिप्राय है। मुसलिम होते भी सोवाण देवी शाकाहारी थी।

(२) सोवाण देवी : परशियन इतिहासकारों ने सितान देवी नाम दिया है। परशियन इतिहासकारों के अनुसार सोवाण देवी अपने पुत्र युसुफ खाँ की लाश तीन दिन तक रखने के पश्चात उसे मिट्टी दिया। उसके कब्र के पास एक कोठरी बनाकर, उसने अपना शेष जीवन व्यतीत किया (म्युनिख० पाण्डु० ७९ ए०)।

तवकाते अकबरी में उल्लेख है— सैय्यिद अली खाँ जो सैय्यिदों का अमीर था, इस विषय की सूचना मिल गयी और उसने युसुफ खान की हत्या कर दिया। युसुफ खाँ की माता सोन देवी ने जो उस समय विधवा हो गया था और तीन कौर रोटी से अधिक भोजन नहीं करती थी, उसके मकबरे के निकट एक कोठरी बनाकर उसमें निवास करने लगी। इसी अवस्था में इसकी मृत्यु हो गयी (४५१ = ६८३)।'

पाद टिप्पणी

८८ (१) द्विज : हिन्दुओं में जिस प्रकार ब्राह्मण चारों वर्णों में सर्वश्रेष्ठ माने जाते हैं उसी प्रकार मुसलमानों की जाति एवं उप-जातियों में पैगम्बर-वंशीय होने के कारण सैय्यिद लोग मुसलमानों के ब्राह्मण माने जाते थे। मेरे पुराने मकान के पास कुछ सैय्यिदों की आबादी थी। आजकल वे लोग मकान बेच कर चले गये हैं। बाल्यावस्था में जिज्ञासा करने पर कहा जाता था कि सैय्यिद लोग मुसलमानों के ब्राह्मण हैं। पैगम्बर-वंशीय परम्परा में होने के कारण वे निसन्देह आदर की दृष्टि से देखे जाते थे।

पाद-टिप्पणी

९० (१) भेक : मेढक : पङ्के निमग्ने करिणि

ये राजवेश्म विविशुः सुभगाः सुवेशा
स्त्वङ्गत्तुरङ्गखुरधूलिकृतान्धकाराः ।
ते द्वित्रवोढशिबिकाधृतजीर्णवस्त्रा
निष्कासिता नृपगृहात् स्नुतरक्तधाराः ॥ ९१ ॥

९१. जो लोग सुभग[1] एवं सुन्दर वेशयुक्त होकर, राजवेश्म में प्रवेश किये थे, जिनके दौड़ते घोड़ों के टापों से उठी धूलि से अन्धकार कर हो गया था, वे लोग ही दो-तीन शिविकाओं में जीर्ण वस्त्र युक्त, गिरते रक्तधारा समन्वित होकर, नृपगृह से निकाले गये।

इत्थं षष्टितमे वर्षे भाव्युपद्रवकारणम् ।
वैशाखस्य चतुर्दश्यां सैदानां विप्लवोऽभवत् ॥ ९२ ॥

९२. इस प्रकार साठवें वर्ष[1] वैशाख चतुर्दशी को भावी उपद्रव का कारण सैय्यिदों का विप्लव हुआ।

नूनं हसननाम्नां सभृत्यानां तत्र वत्सरे ।
अन्तकः संनिविष्टोऽभूद् येनैते प्रलयं गताः ॥ ९३ ॥

९३. निश्चय ही उसी वर्ष भृत्यों सहित हसन नामवालों अन्तक[1] ( यम ) ने प्रवेश किया था, जिससे ये मारे गये।

---

भेको भवति मूर्धकः। मंख कोश में भी उल्लेख है—चक्रवाकवृको कोकौ भेको मण्डूक भीरुकौ॥ श्लो० १७

पाद-टिप्पणी :

'द्वित्र' पाठ—बम्बई।

९१. ( १ ) सुभग : पतला, सुन्दर, मनोरम, ऐश्वर्यशाली एवं भाग्यवान एवं प्रिय अर्थ होता है। यहाँ पतले, सुन्दर वस्त्र से तात्पर्य है।

पाद-टिप्पणी :

९२. ( १ ) साठवें वर्ष : सप्तर्षि ४५६० = सन् १४८४ ई० = विक्रमी सम्वत् १५४१ = शक १४०६ = कलि गताब्द ४५८५ वर्ष।

पाद-टिप्पणी :

'नाम्नां' पाठ—बम्बई।

दत्त ने अनुवाद किया है—'हस्सन रूप अन्तक ने राजभृत्यों के सम्मुख प्रवेश किया था।' भाग ३, पृष्ठ २७६।

९३. ( १ ) अन्तक : यम किंवा काल जो प्राणियों का अन्त करता है। मारनेवाला, घातक रघु० ११ : २१, ऋपि प्रभा वान्मयि नान्तकोऽपि प्रभुः प्रहर्तुम्—रघु० : २ : ६३। सूरदास ने अन्तक का प्रयोग किया है—'गिरा रहित वृक ग्रसित अजा लौं अंतक आनि गह्यो। सूर० : १ : २०१; व्याकुल सखा गोप भए व्याकुल। अतंकदसा भयौ भय आकुल॥' सूर० १० : ३११५।

सामान्यवेश्मनि वरं जनिरस्तु पुंसां
मा मास्तु राजनिलये बहुदुःखकर्त्री ।
ते शेरतेऽप्यरुचिरेऽल्पपटैकमध्ये
नो भाति राजयुगलं विपुले स्वदेशे ॥ ९४ ॥

९४ अच्छा है मनुष्यो का जन्म सामान्य घर मे हो दुःखप्रद राजगृह मे न हो। वे ( सामान्य जन ) अरुचिर एवं छोटे वस्त्र के एक भाग पर शयन कर लेते हैं, किन्तु दो राजा ( राजयुगल[१] ) अपने बड़े देश में भी नही समाते।

अथालिखानमेयाद्याः क्रुद्धाः पश्चादवालगन् ।
नदीपारगतान् श्रुत्वा द्रोहिणस्तान् विरोधिनः ॥ ९५ ॥

९५ क्रुद्ध अली खान, मीया आदि उन विरोधी द्रोहियो को नदी पार गया सुनकर, पीछे लग गये।

नौसेतुबन्धानुच्छिद्य माद्रैः काश्मीरिकैः समम् ।
ज्यल्लालठक्कुराद्यास्ते मतं चक्रुजिगीषया ॥ ९६ ॥

९६ जल्लाल ठाकुर आदि लोग, विजय की इच्छा से, नौका सेतुबन्धो को काट कर, काश्मीरी मद्रो के साथ समझौता कर लिये।

विशप्रस्थान्तरे सैदाः प्राप्तसनाहवाहनाः ।
तत्तत्पटकुटीपण्डमण्डिताः शिविरं व्यधुः ॥ ९७ ॥

९७ वर्म एवं वाहनो से युक्त, सैय्यिदो ने विशप्रस्थ[१] मे तत् तत् प्रकार के वस्त्र कुटीर[२] ( रावटी–खेमा ) पुंजो से सुमण्डित शिविर स्थापित किये।

---

पाद टिप्पणी

९४ ( १ ) राजयुगल : मुसलिम देशो में दो राज अथवा द्वैराज किंवा युगल राज की प्रणाली अमान्य थी। मुसलिम एकेश्वरवाद में विश्वास करते हैं। इसी प्रकार इस एकत्व की भावना उनके राज्य सिद्धान्त में भी मिलती है। खलीफा मुसलिम जगत का राजनीतिक नेता माना जाता था। हिन्दुस्तान तथा काश्मीर के सुल्तान खलीफा से अपनी मान्यता प्राप्त करने के लिये सचेष्ट रहते थे। मुसलमान एक बादशाह किंवा सुल्तान में विश्वास करते हैं। दो राज्य शासन प्रणाली धर्मनिरपेक्ष किंवा लौकिक राज्य में सफल हो सकती है, जिसका आधार लोकतन्त्रीय प्रणाली थी। यूनान के स्पार्टा में दो शासक तथा रोम में भी शताब्दियों तक दो कौन्सल होते रहे हैं। यह प्रणाली वहाँ सफल हुई थी। भारत में भी दो राजा किंवा द्वैराज की शासन प्रणाली कई स्थानों पर सफल हुई थी। परन्तु मुसलिम देशों में वह कभी अंकुरित हो ही नही सकी। द्रष्टव्य पाद टिप्पणी : जैन० १ : ३ : ८६।

पाद टिप्पणी

९७ ( १ ) विशप्रस्थ : द्रष्टव्य पाद टिप्पणी जैन० १ : ७ : ३।

( २ ) कुटी : वस्त्र भवन = खेमा = डेरा =

पुरमात्रावशिष्टास्ते सैद्रा द्वैधान्निवर्तिनः ।
वाजिवर्मासिभूयिष्ठां राज्यलक्ष्मीं विभेजिरे ॥ ९८ ॥

९८ वे सैय्यिद जिनके पास पुर मात्र अवशिष्ट था, अपने द्वैधभाव के कारण, लौट गये, और पर्याप्त अश्व, वर्म, तलवार आदि प्रचुर राजलक्ष्मी[1] के भागी बने।

येषां वराटिकैकापि नाभूत् करगता क्वचित् ।
स्वर्णरूपकहस्ताङ्कास्चेरुस्ते वेशभूषिताः ॥ ९९ ॥

९९. जिनके हाथ में कभी एक कौड़ी भी नहीं थी, वे वेशभूषित होकर, स्वर्ण एवं रूपक[1] (रुपया) हाथ में लिये घूमते थे।

तेषूत्तुङ्गतुरङ्गेषु सर्वतो वसुवर्षिषु ।
अकारि शस्त्रग्रहणं शिल्पिशाकटिकैरपि ॥ १०० ॥

१००. उन्नत तुरंगोंवाले उनलोगों के चारो ओर से धन बरसाने पर, कारीगरों एवं गाड़ीवानों ने भी शस्त्र ग्रहण कर लिया।

---

रावटी = कुटी साधारण तथा टिकाऊ नहीं होती। रावटी की शकल कुटी के समान होती है। खेमा, रावटी, डेरा आदि वस्त्र के बनते थे। उन्हें सुविधानुसार कहीं भी लगाया जा सकता है। सेना का कैम्प शिविर, डेरा, रावटी तथा खेमों में लगता था। मध्ययुग तथा बीसवीं शताब्दी में भी युद्धस्थल में द्वितीय महायुद्ध के पूर्व सेना का शिविर खेमों में लगता था। वर्तमान काल में नभ-सेना के विकास के पश्चात् खाइयों, ट्रेंचों, बंकरों में सेना रहती है। रावटी और खेमा आकाश से दिखाई देते हैं। अतएव वे बमबारी के शिकार आसानी से हो जाते हैं। यह अस्थायी निवास योग्य आवास होता है। आजकल जिओलोजिकल कार्यकर्ता पहाड़ों और जंगलों तथा मैदानों में कैम्प लगाकर रहते हैं। बड़े-बड़े मेलों तथा पर्वों पर खेमे बहुत बड़ी संख्या में यात्रियों के लिए लगाये जाते हैं। प्रयाग के कुम्भ में सबसे ज्यादा, रावटी, खेमा, तम्बू तथा डेरा लगाया जाता है।

तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'संक्षेप में, सैयिद अली खां तथा अन्य सैयिद विद्रोहियों से युद्ध के उद्देश्य से नदी तट पर एकत्र होकर बैठ गये (४९२ = ६८३)।'

पाद-टिप्पणी :

९८. (१) राजलक्ष्मी : तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'सैयिदों ने अत्यधिक धन व्यय करके बहुत बड़ी सेना एकत्र की (४९२ = ६८३)।'

पाद-टिप्पणी :

९९. (१) रूपक : रुपया। रूपा का अर्थ रौप्य किंवा चाँदी होता है। रुपया चाँदी की मुद्रा का नाम प्रचलित रहा है। रूपक का अर्थ यहाँ चाँदी का रुपया होता है। कलचुरी राजा कृष्णराज की मुद्रा का नाम ही 'रूपक' था। गुप्तकाल में रूपक, स्वर्ण दीनार के सोलहवें भाग के मूल्य के बराबर था। द्र० : ३ : ४०१; ४ : ७१।

पाद-टिप्पणी :

१००. 'तेषूत्तुङ्गतुरङ्गेषु' पाठ-बम्बई।

मन्दुरासुन्दरा येऽश्वा राज्ञोऽभूवन् महागुणाः ।
तानारुह्याधमाश्चेरुस्तद्भृत्या नित्यदुर्लभान् ॥ १०१ ॥

१०१ राजा के मन्दुरा[1] (अस्तवल) मे सुन्दर, महा गुणशाली अश्व के उन दुर्लभ घोडो पर चढकर, उसके भृत्य विचरण कर रहे थे।

ततो हस्सनराजानकाद्यैरन्यैश्च संयुताः ।
षाड्गुण्यं विदधुः सैदाः काश्मीरिकजिगीषवः ॥ १०२ ॥

१०२ तत्पश्चात् हस्सन राजानक आदि तथा अन्य लोगो से मिलकर, काश्मीर को जीतने के इच्छुक सैय्यिदो ने षाड्गुण्य[1] किये।

ते मेयामत्तनाराचमुख्यानां यन्त्रणोज्झिताः ।
स्वसेवकानां विदधुरधिकारसमर्पणम् ॥ १०३ ॥

१०३ यन्त्रणायुक्त उनलोगों ने मीयामत्त नाराच[1] आदि प्रमुख अपने सेवको को अधिकार समर्पित किया।

अत्रान्तरे पारगताष्ठक्कुराद्या महाधियः ।
सैन्यानां संग्रहं चक्रुस्ते जालद्रंगरान्तरे ॥ १०४ ॥

१०४ इसी बीच पार गये, महाबुद्धिशाली ठाकुर आदि लोगो ने जाल डागर[1] मे सैन्य सग्रह किया।

श्रुत्वेति साहसोदात्तं नगरे मद्रनिर्मितम् ।
आययुः सर्वराष्ट्रेभ्यो लोकास्ते शस्त्रधारिणः ॥ १०५ ॥

१०५ नगर मे मद्रो द्वारा किये गये, साहसपूर्ण कृत्य सुनकर, सब राष्ट्रो[1] से शस्त्रधारी लोग आये।

---

पाद टिप्पणी

१०१ (१) मन्दुरा अश्वशाला, अस्तबल, घुडसाल—प्रभ्रष्टोऽयं प्लवगः प्रविशति नृपतेर्मदिरं मन्दुरायाः, रत्ना० २ ३। वाजिशाला तु मन्दुरा—अर्थात अस्तबल के नाम वाजिशाला तथा मन्दुरा है अमर० २ २ ७।

पाद टिप्पणी

१०२ (१) षाडगुण्य राजनीति के ६ उपाय या गुण—(१) सन्धि, (२) विग्रह, (३) यान (आक्रमण), (४) आसन (विराम) (५) द्वैधी भाव तथा (६) संश्रय। नीति के छहों अगों न विज्ञ। द्र० ४ २४।

पाद टिप्पणी

१०३ (१) नाराच - द्र० १ ४ ९। मेयामत्त नाराच' नामवाचक शब्द दत्त (पृ०२७७) तथा श्रीकण्ठ कौल ने माना है।

पाद-टिप्पणी

१०४ (१) जाल डागर द्र० पाद-टिप्पणी शुक० १ ३५, १४५, २२८, ४ ३९६। हैदर मल्लिक के अनुसार यह स्थान जियाल डागर है। श्रीनगर में था (हैदर मल्लिक पाण्डु० २०२ बी०, २०३ ए०।

पाद-टिप्पणी

१०५ (१) राष्ट्र : देश, राष्ट्र, विषय जन-पद शब्द पर्यायवाची हो गये हैं। कभी विषय देश का उपविभाग माना गया है। किन्तु हिरहडगल्ली

**प्रवृत्ते च पुरक्षोभे पुरे ग्रामे च पत्तने।**
**अत्युल्बणजनः सर्वो धावति स्म धृतायुधः ॥ १०६ ॥**

१०६. पुर, ग्राम एवं पत्तन में अति क्षोभ होने पर, अति उग्र होकर, सब लोग हथियार सहित दौड़े।

**शमालावाङ्गिलीयाद्याः क्रमराज्यगताश्च ये।**
**स्थामार्थं क्षिप्तिकातीरे शिविरं समकल्पयन् ॥ १०७ ॥**

१०७. शमाला[1], वांगलीय[2] आदि जो लोग क्रमराज्य[3] गये थे, स्थाम[4] के लिये क्षिप्तिका-तट पर, स्याम (शिविर) लगाये।

---

दानपत्र में विषय के पश्चात् राष्ट्र रखा गया है। इससे प्रकट होता है कि विषय की स्थिति राष्ट्र से बड़ी थी। राष्ट्र कभी-कभी एक जिला अथवा जिला का सब-डिवीजन भी माना जाता था। राष्ट्र का प्रायः अर्थ साहित्य में राज्य होता है। किन्तु राष्ट्रकूट शासन में य एक कमिश्नरी का द्योतक है। दक्षिण में कदम्ब, पल्लव, मालंकयायन राज्यों में राष्ट्र का अर्थ तहसील और अधिक से अधिक जिला था। यहाँ पर राष्ट्र का तात्पर्य काश्मीर के अनेक भू-विभागों अर्थात् विषयों, क्रमराज्य, मडवराज्य आदि लघु सामन्तीय कन्द राज्यों से है।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'काश्मीर के लोग इधर-उधर से बड़ी संख्या मे एकत्र होकर, शत्रुओं से मिलते जाते थे और दोनों ओर से वाण तथा बन्दूक का युद्ध होता था (४५२ = ६८४)।'

पाद-टिप्पणी :

१०६. (१) पत्तन : क्षेमेन्द्र ने पत्तन की परिभाषा किया है। यह परिभाषा काश्मीर के पत्तनों तक ही सीमित है।

ग्रामायुत महस्त्राणां पत्तनं जायते बुधैः।
तत्रापि सारं नगरं तत्पौराः पुरवासिनः ॥
लोक० : पृ० ५९

प्राचीन ग्रन्थों में पत्तन शब्द समुद्रतटवर्ती बन्दरगाह एवं नगर के लिए प्रयुक्त होता था। अमरकोश की टीका लिखते, क्षीरस्वामी ने पत्तन को वह स्थान माना है, जहाँ चारों ओर से व्यापारिक सामग्रियाँ आती थीं। शिल्पशास्त्र तथा मानसार के अनुसार समुद्रतट स्थित नगर था, जहाँ वणिक रहते थे। कालान्तर में पत्तन या पाटन शब्द राजधानी तथा मैदानी इलाके, नगरों के लिए भी प्रयुक्त होने लगा था। नैपाल में भी काठमण्डू से कुछ दूर पाटन है।

प्राचीन काल में नगरों के नामों के साथ पत्तन शब्द का प्रयोग होता था। इसका अपभ्रंश पाटन का पट्टन अनेक नगरों के नाम के साथ प्रयोग किया जाता है। झालरापाटन, विजगापट्टन, मुसलीपट्टन आदि।

पाद-टिप्पणी :

१०७. (१) शमाला : हमल किंवा हुम्मेल जिला है। द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जोन० : श्लोक० : १०७।

(२) वांगलीय : वांगिल = भागिल : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० : २ : २२ तथा शुक० : १ : ११३, ११४; २ : १०।

(३) क्रमराज्य : कमराज : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी रा० : ४ : ६१७; जोन० : श्लोक : ६४९; जैन० : १ : ४०; शुक० : २ : १३४।

(४) स्थाम : प्रसंग वर्णन से स्थाम का सम्बन्ध सैन्य संचालन से होता है। उसका अर्थ शिविर

दरद्भिश्चक्कवाक्काद्यैर्दरद्भिः सुभटैः समम् ।
वैदूर्यभट्टः स्थामस्थो युद्धसंनद्धतां दधौ ॥ १०८ ॥

१०८ स्थाम स्थित वैदूर्य भट्ट, दरददेशीय चक्कवाकु आदि सुभटो के साथ युद्ध हेतु सनद्ध हो गये।

नीलाश्वलोकं संगृह्य पम्पराजानकादयः ।
दुग्धाश्रमान्तिके सिन्धोः पारं स्थामाथमासदन् ॥ १०९ ॥

१०९ पम्प[1] राजानक आदि नीलाश्व[2] लोगो को लेकर, दुग्धाश्रम[3] के निकट सिन्धु[4] के पार स्थाम के लिये पहुँचे।

सर्वतो धान्यसंभारानानीयानीय नाविकैः ।
प्रवासवेतनं कोशाभावात् काश्मीरिका व्यधुः ॥ ११० ॥

११० कोशाभाव के कारण काश्मीरी लोग नाविको द्वारा धान्य सभार ला-लाकर प्रवास वेतन सम्पन्न किये।

क्वचिल्लुण्ठि क्वचिद्दाहं परदेश इवात्र ते ।
पारावारगताश्चक्रुर्नदीं तीर्त्वा पुरद्वये ॥ १११ ॥

१११ नदी को पार कर, उम पार पहुँचे, वे लोग दोनो पुरो मे परदेश के समान, कही लूट, कही दाह किये।

---

कैम्प, सैनिको की बैरिक होना है। स्थाम स्थित का अर्थ सना से कब्जा किया हुआ होता है। स्थाम के नेता को 'स्थाम स्थित' कहते थे। श्री स्तीन का मत है कि सेना के 'स्टेशन' 'स्थान' का तात्पर्य इस शब्द से है। स्थाम का अथ सैन्य शिविर एव सना की बैरिक या निवास स्थान ही, उचित प्रतीत होता है।

द्रष्टव्य राज० ४ २२५, २४९, ४४५, ७ १५४२ तथा ८ ६६३, ७१२, जै० ४ : १३५, २२४।

श्री दत ने स्थाम को नामवाचक शब्द माना है। परन्तु श्री कण्ठ कौल ने नामवाचक नही माना है। स्थाम का अर्थ यहाँ साधारण शिविर है। वह नामवाचक शब्द नही, सज्ञा है।

पाद-टिप्पणी

१०८. (१) सन्नद्ध . कवचित या कवचो = वस्तरवद = शस्त्रास्त्र से पूर्णतया सुसज्जित। सन्नद्ध शब्द वीरों के जिरहबख्तर अर्थात वर्म, शिरस्त्राण आदि बाँधने के लिए मूलत प्रयोग किया जाता रहा है—नव जलधर सन्नद्धोऽय न दृप्त निशाचर। विक्रम० ४ १, मेघ० : ८।

पाद-टिप्पणी

१०९ (१) पम्प केवल यही उल्लेख मिलता है।

(२) नीलाश्व द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जोन० श्लोक १५३ तथा शुक० २ : १२।

( ३ ) दुग्धाश्रम : दुदरहोम गाँव। रा० ४ : २६१।

(४) सिन्धु काश्मीर की सिन्धु नदी। महानद सिन्धु स यहाँ तात्पर्य नही है, यद्यपि दोनों सिन्धु काश्मीर में बहती है।

धनुर्यन्त्रगणैर्मुक्तैः प्रतितीरं पुरद्वये ।
पञ्च सप्त मृता युद्धे प्रत्यहं कटकद्वये ॥ ११२ ॥

११२. प्रत्येक तट पर दोनों नगरों में प्रतिदिन धनुष यन्त्र[1] से छोड़े गये बाणों से युद्ध में प्रतिदिन दोनों सेना के पाँच-सात लोग मरते रहे।

खर्वाश्चोपान्तसामन्ताः क्षीणश्रेण्या गृहोज्झिताः ।
नामावशेषाः खानाश्च क्रूरा दारिद्र्यपीडिताः ॥ ११३ ॥

११३. समीप के सामन्त[1], खर्व, जिनके सिपाही नहीं रह गये थे, जिन्होंने गृह त्याग कर दिया था तथा नाममात्र से दारिद्र्य पीड़ित क्रूर खान लोग—

चौराः कृतप्रमोषाश्च चिरबन्धनयन्त्रिताः ।
तत्तद्राजविरुद्धाश्च पिशुनाश्च स्ववृत्तयः ॥ ११४ ॥

११४. चिरकाल बन्धन से यन्त्रित करने वाले चोर एवं तत्-तत् राजाओं के विरोधी तथा स्व[1] (अपनी) वृत्ति वाले चुगुलखोर—

हृताधिकारास्तत्कार्यन्यायप्रत्यायनाक्षमाः ।
एते चान्ये च तुतुषुर्वेगेऽस्मिंस्तदुपद्रवे ॥ ११५ ॥

११५. जिनका अधिकार हर लिया गया था, जो कार्य एवं न्याय में अविश्वासी थे, वे लोग और दूसरे लोग, उस उपद्रव के समय इस वेग में सन्तुष्ट हुए।

---

पाद-टिप्पणी :

११२. (१) धनुष यन्त्र : प्राचीन तुर्क तथा मंगोल धनुष यन्त्र का प्रयोग सुदूर छठीं शताब्दी से करते रहे हैं। चंगेज खाँ की फौज में इस प्रकार के धनुष यन्त्रों का प्रयोग होता था। धनुष यन्त्र का चंगेज की सेना में अश्वारोही अश्वों पर बैठे-बैठे प्रयोग करते थे। धनुष यन्त्र भूमि पर भी रखकर तुक अर्थात् अग्निबाण, पिण्डबन्ध तथा बड़े बाणों के छोड़ने में प्रयोग किया जाता था।

पाद-टिप्पणी :

११३. (१) सामन्त : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : रा० : ४ : ५५६ तथा ५ : ५०४; जैन० : ४ : ९५। सामन्त का अर्थ वीर, योद्धा भी होता है। किसी राज्य का करद या बड़ा जागीरदार, ताल्लुकेदार या बड़ा जमींदार होता था। शुक्रनीति के अनुसार वह नरेश जिसकी भूमि का राजस्व ३ लाख कर्ष होता था। करद राजा की भी गणना सामन्त में होती थी—सामन्त मौलिमणि रंजित पादाम्भोज—विक्रम० : ३ : १९; रघु० : ५ : ३८। सामंत का अर्थ समीपवर्ती, सीमावर्ती भी होता है।

पाद-टिप्पणी :

११४. (१) स्व : मैंने अपना अनुवाद किया है।

नौसेतुबन्धान्नावश्च सर्वा मडवराज्यतः ।
आनीय वामतीरस्था विदधुः स्वोपयोगिनीः ॥ ११६ ॥

११६ मडव राज्य[1] से नौका सेतुबन्धो तथा नावों को लाकर अपने उपयोग हेतु वाम तट पर स्थित कर दिया—

देवाभिधः शाकुनिको नाविकाधिपतां भजन् ।
प्रतीर्य नौकायुद्धेन विदधे सुभटक्षयम् ॥ ११७ ॥

११७ देव नामक शाकुनिक[1] ने जो कि नाविकाधिपति था, तैर कर नौका युद्ध द्वारा उत्तम वीरों का विनाश कर दिया।

सैदा डल्लसरस्तीरस्थितान् शाकुनिकान्नवान् ।
सपोतान् व्यसृजन् योद्धुं तत्तन्नन्दपुरस्थितान् ॥ ११८ ॥

११८ सैय्यिदों ने डल[1] सर तीर पर स्थित, नये शाकुनिकों[2] को नौकाओं सहित नन्दपुर[3] स्थित, लोगों से युद्ध करने के लिय भेजा।

---

पाद-टिप्पणी

११६ मडवराज्य मराज।

पाद-टिप्पणी

११७ ( १ ) शाकुनिक : बहेलिया = व्याघ्र। बहेलियों की सेना पुराने समय में होती थी। आजकल राजपूत, जाट, डोगरा, सिख, मराठा, हाईलैण्डर, पठान, बलूची, गढ़वाल आदि रेजिमेण्टों के समान, उस समय भी सैनिक जाति जिसे आजकल मार्शियल रेस कहते हैं, सेनायें होती थी। काश्मीर में धीवर का उल्लेख ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। काशिराज के यहाँ बहेलिया सैनिक थे। काशिराज चेतसिंह तथा भारत के प्रथम गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्स के काशी युद्ध में बहेलिया सैनिक—राजा चेतसिंह की माता की तरफ से अग्रजों से युद्ध किये थे। राज्य के विलय हो जाने के पश्चात भी काशिराज के बहेलिया सैनिकों को भी पेन्शन मिलती है। इससे प्रकट होता है कि बहेलिया जाति काश्मीर से काशी तक उत्तर-भारत के राजाओं के यहाँ सेना में कार्य करती थी और चाहे वे मुसलिम सुल्तान या नवाब रहे हों अथवा हिन्दू राजा। सैनिक शास्त्र के इतिहास लेखकों के लिए यह स्वतः एक अनुसन्धान का विषय है कि क्षत्रियों के समान बहेलिया लोग कब से सैनिक वृत्ति में हो गये और उनका सेना में क्या स्थान होता था।

शुभाशुभ निर्णय या शकुन अथवा सगुन को शाकुनक कहते हैं। यात्रा आदि में कतिपय विशेष पक्षियों, जन्तुओं या पदार्थों के मिलने से शुभाशुभ का निर्णय किया जाता है। देव शाकुनिक यहाँ *सैनिक कार्य निमित्त किया गया है, अतएव वह कर्म* से बहेलिया शाकुनिक था।

पाद-टिप्पणी :

'डल्ल' पाठ—बम्बई।

११८ ( १ ) डल सर : सुरेश्वरी सर, डल लेक : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : ५ : ३२।

( २ ) शाकुनिक : बहेलियों की फौज होती थी। काशीराज महाराज चेतसिंह के यहाँ सन् १७८४ ई० तक बहेलियों की सेना थी। वे अंग्रेजों से युद्ध किये थे। मध्ययुगीय मुसलिम काल तथा मुसलिम राजाओं

मेयावफाकनाम्नापि पुररक्षाधिकारभाक् ।
विचार्य चौरांस्तत्काले द्वित्रान् शूले न्यरोपयत् ॥ ११९ ॥

११९. पुररक्षाधिकारी मीयाँ वफाक[1] ने उस समय विचारकर, दो या तीन चोरों को शूली पर चढ़ा दिया।

आसमुद्रमठाज्जैननगरान्तं सडिण्डिमम् ।
तस्मिन् स्फुरति पौराणां न भीश्चौरकृताभवत् ॥ १२० ॥

१२०. डिण्डिम[1] घोषपूर्वक उसके शासन करते समय समुद्रमठ[2] से लेकर जैननगर[3] तक पुरवासियों में चोरी का भय नहीं था।

छिन्नेषु सेतुबन्धेषु तत्तन्नौपुरकादिषु ।
पूर्दुर्गरचनेवाभूद् दुर्गमा तद्विरोधिनाम् ॥ १२१ ॥

१२१. नौपुर[1] आदि स्थानों पर सेतुबन्ध[2] भङ्ग कर दिये जाने पर, पुरी दु ' रचना सदृश विरोधियों के लिये दुर्गम हो गयी।

---

या बादशाहों के यहाँ इस प्रकार की फौज रहती थी। शाकुनी का मछवाहा, माझी, निषाद या काश्मीर के हाजी नाव खेने वाले थे। सम्भव है, माझियों या नाववाले हाजियों के दल के दल को युद्धार्थ भेजा गया। क्षेमेन्द्र ने शाकुनिक को चाण्डाल, धीवर आदि के वर्ग में रखा है—चाण्डालः, श्वपचः, पुक्कसः, जानङ्गम, दाशः, धीवरः, शाकुनिकः, लोक० : पृ० : ५।

( ३ ) नन्दपुर : ऊलर के एक भाग का नाम है।

पाद-टिप्पणी :

'वफाक' पाठ—बम्बई।

११९. ( १ ) वफाक : वफा। 'क' शब्द प्रायः काश्मीर में नामों के आगे उस समय जोड़ देते थे। वफा शब्द अरबी है। अर्थ प्रतिज्ञा पालन, भक्ति तथा वफादारी है। यह नामवाचक शब्द है।

पाद-टिप्पणी :

१२०. (१) डिण्डिम : डुगडुगिया या डुग्गी। मैं समझता हूँ कि डिण्डिम चमड़ा मढ़ा एक प्रकार का बाजा था। अपभ्रंश है। पुरा साहित्य में इसका बहुत उल्लेख मिलता है—इति घोपितीय डिण्डिम—हि० : २ : ८६; मुखरयस्व यशो नवडिण्डिमम्—नै० : ४ : ५३; चण्डि रणिरसनारव डिण्डिम्।

( २ ) समुद्र मठ : श्रीनगर का सुदरमर मुहल्ला है। राजा रामदेव ( सन् १२५२-१२७३ ई० ) की रानी समुद्रा ने इस मठ की स्थापना किया था। सुदरमर में ही सामतीर्थ है। यह सोमयार घाट दूसरे पुल के अधोभाग में है।

( ३ ) जैन नगर : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जोन० : श्लोक ८६९ तथा जैन० : १ : ५ : ४; १ : ७ : ९४; ३ : ७ : ८९, १९७, १९९, ३८०।

पाद-टिप्पणी :

१२१. ( १ ) नौपुर : मैं समझता हूँ कि नौशहर का संस्कृत रूप नौपुर श्रीवर ने लिखा है। नौशहर में ही उन दिनों बालक सुल्तान रहता था। द्र० : ४ : २४१।

( २ ) सेतुबन्ध भंग : म्युनिख पाण्डुलिपि में उल्लेख है कि सेतु टूट गया और दोनों ओर के बहुत से लोग डूब गये ( ८० ए० )।

आस्कन्दं स्कन्दभवनादाशङ्क्योपनृपाङ्गनम् ।
पञ्चहस्तमितां सैदाः परिखां समकल्पयन् ॥ १२२ ॥

१२२ स्कन्दभवन[1] की ओर से आक्रमण की आशंका करके, सैय्यिदों ने पाँच हाथ चौड़ी परिखा (खाई) निर्मित किया।

द्वारधानीसमीपेऽपि रुद्रराजानकान्तिके।
तादृशीं परिखामन्यां चक्रुर्वैरिभयच्छिदे ॥ १२३ ॥

१२३ शत्रु भय निवृत्ति के लिये, (सैय्यिदों ने) रुद्र राजानक[1] के निकट, द्वारधानी के समीप में भी उसी प्रकार की एक दूसरी परिखा[2] तैयार किया।

विरुद्धवेश्मलुठनं कुर्वन्तो हृततद्धनाः ।
सैदभृत्या भयं चक्रुः प्रजानां गोवधादिना ॥ १२४ ॥

१२४ विरोधियों का घर लूटते[1] तथा उनका धन हरण करते, सैय्यिद भृत्य गोवध आदि के द्वारा प्रजाओं में भय व्याप्त कर दिये थे।

---

पाद-टिप्पणी

'नृपाङ्गनम्' पाठ–बम्बई।

१२२ ( १ ) स्कन्द भवन द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी रा० ३ ३८० तथा रा० ६ १३७। यह श्रीनगर का वर्तमान स्थान खण्डबवन है। यह विहार वितस्ता के दक्षिण तट पर, छठें पुल और ईदगाह के मध्य स्थित था। कालान्तर में कब्रिस्तान में परिणत हो गया।

पाद-टिप्पणी

१२३ ( १ ) रुद्र राजानक स्थान का अनुसन्धान अपेक्षित है।

( २ ) परिखा फिरिस्ता लिखता है—'सैयिद अली खाँ इस समय सैयिदों के एक बड़े समूह का नेता हो गया था। उसने विरोधियों का सामना किया। संघर्ष भी हुआ। इस उपद्रव के समय श्रीनगर में चोरों का प्राबल्य हो गया था। इस स्थिति में सैयिदों ने नगर के चारों ओर परिखा ( खाई ) खुदवाया ( ४८३ )।'

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'चोर खुल्लम-खुल्ला नगर में प्रविष्ट होकर लूटमार करते थे। सैयिदों ने नगर के चारों ओर रक्षा हेतु खाई ( परिखा ) खोद ली थी। ताकि चोरों से रक्षा हो सके ( ४५२ = ६८४ )।'

पाद टिप्पणी

१२४ ( १ ) लूट फिरिश्ता लिखता है—'उन्होंने उन लोगों की सम्पत्ति जब्त कर लिया, मकानों को गिरा दिया, जिन लोगों ने नदी के दूसरी तरफवाले शत्रुओं का साथ दिया था ( ४८३ )।'

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'नगर तथा अन्य स्थानों पर जहाँ भी कहीं शत्रुओं के घर थे, उन्हें धराशायी कर दिया। उनकी धन-सम्पत्ति तथा मवेशी नष्ट कर दिया ( ४५२ = ६८४ )।'

विरुद्धमुक्तलुण्ठितगृहदारुसमाप्तितः ।
दिद्दामठो रुद्रवन वासेन्धनकृतोऽभवत् ॥ १२५ ॥

१२५. मुक्त भाव से विरोधियों द्वारा लूटी गयी, घर की लकड़ियों के समाप्त हो जाने पर, (उन लोगों ने) दिद्दामठ[1] को रुद्र वन[2] प्राप्त निवासगृह का ईन्धन बना दिया।

अनभिज्ञतयाल्पानां तद्विरुद्धगृहश्रियः ।
व्यर्थाकुर्वृथा सैदा गावो हत्वा शुनामिव ॥ १२६ ॥

१२६. अनभिज्ञता के कारण सैय्यिदों ने कुछ शत्रुओं के गृहश्री को विनष्ट कर दिया, जैसे कुत्ते के लिये मार कर गायें निरर्थक नष्ट की जांय।

निकृष्टशस्त्राः संनाहममुञ्चन्तो दिने दिने ।
राजधान्यङ्गनं सश्वास्तद्भृत्याः प्राविशन् मदात् ॥ १२७ ॥

१२७. उसके भृत्य मद से प्रतिदिन शस्त्र खींचे तथा वर्म[1] धारण किये, घोड़ों के सहित राजप्रासाद के प्रांगण में प्रवेश करते थे।

मल्लार्मानगृहांश्चुन्दकायस्थसद्मानि च ।
राजानको हस्सनः स ददाह स्वगृहं क्रुधा ॥ १२८ ॥

१२८. उस राजानक हस्सन[1] ने क्रोध से, मल्लार्मान के घरों को, चुन्द[2] कायस्थ के सदनों एवं अपने घर को जला दिया।

काकतालीयकन्यायः सैदकाश्मीरसैन्ययोः ।
परस्परभयभ्रश्यद्धैर्ययोरभवत् तदा ॥ १२९ ॥

१२९. उस समय पारस्परिक भय से नष्ट धैर्य सैय्यिदों एवं काश्मीरियों के सैन्य की स्थिति काकतालीय[1] न्याय जैसी हो गयी थी।

---

पाद-टिप्पणी :

१२५. (१) दिद्दामठ : द्र० : ३ : १३१, १८४।

(२) रुद्र वन : रुद्र राजानक के समीप होने सम्भावना है।

पाद-टिप्पणी :

१२७. (१) वर्म : अश्वारोही सैनिक मध्य-युग में वर्म धारण करते थे। तुर्कों तथा मंगोलों की सेना अश्वारोही होती थी। पैदल सैनिक कम होते थे। वर्मधारी अश्वारोही तुर्क तथा मंगोल सेना में आगे चलते थे। जैसे आजकल यन्त्रसज्जित लौह टैंक, तोपखाना अथवा मेकनाइज्ड फौजें आगे चलती हैं।

पाद-टिप्पणी :

१२८. (१) हस्सन राजानक : द्र० : ३ : ३८४।

(२) चुन्द : इस व्यक्ति का यहीं उल्लेख मिलता है। इसके सम्बन्ध में कुछ और सूचना नहीं मिलती।

पाद-टिप्पणी :

१२९. (१) काकतालीय : संयोगवश =

पारावारगता वीरास्तीर्त्वा साहसिनो द्रुतम् ।
हत्वा तांस्ताञ्छिरश्छित्वा तीरे दण्डे न्यरोपयन् ॥ १३० ॥

१३० साहसी वीर तैरकर शीघ्र नदी पार चले गये तथा शिरछेदन कर, तत्-तत् लोगों को मार डाले और तट पर ही उन्हें दण्ड पर आरोपित कर दिये ।

लोलाश्वारोहिणि हते तीर्त्वा सैदभटद्वये ।
लुण्ठं पिर्वंजखानाद्याश्चक्रुः पद्मपुरान्तरे ॥ १३१ ॥

१३१ सैय्यिदों के दोनों भटों के जो कि लोल (चचल) अश्व की सवारी करते थे, तैर कर मार दिये जाने पर, पिर्वंज (परवेज) खाँन आदि पद्मपुर[1] में लूट-मार किये ।

---

अकस्मात = अप्रत्याशित रूप से घटना या दुर्घटना हो जाती है। उसकी संज्ञा काकतालीय से दी गयी है। इसके समझाने के लिए एक उदाहरण दिया गया है। किसी ताल वृक्ष पर एक कौआ ज्योंही आकर बैठा, उसी समय उसका एक पका फल नीचे आकर गिरा। यद्यपि कौआ ने फल नहीं गिराया परन्तु देखनेवालों की यही धारणा हुई कि कौआ ने गिराया है, जो बातें अकस्मात अप्रत्याशित रूप से हो जाती है उसे काकतालीय कहते हैं—अहो नु खलु भो तदेतत् काकतालीय नाम—मा० ५, काकतालीयप्राप्य दृष्ट्वापि निधि सपत—हि० प्र० ३५। क्रियाविशेषण रूप में प्रयुक्त होने पर संयोग के अर्थ को प्रकट करता है।

पाद-टिप्पणी

१३० ( १ ) दण्ड : बाँस, लट्ठा, लाठी या लकड़ी के स्तम्भ या खम्भा पर शत्रुओं के छिन्न मस्तकों को लोगों में भय व्याप्त करने तथा शत्रुओं को आतंकित करने के लिए लगा देते थे। यह प्रथा मुसलिम जगत में प्रचलित रही है। मुण्ड समूह का मीनार बनाना, उन्हें एकत्रित कर उनकी ढेरी लगा देना, उन्हें बाजार के चौराहों पर लटका देना अथवा भालियों या बाँसों पर लगाकर, सार्वजनिक स्थानों पर प्रदर्शित करना, साधारण बातें थी। द्र० : ४ १९८।

दण्ड लम्बाई की एक माप भी होती है जिसकी लम्बाई चार हाथ होती थी। कालगणना के अनुसार साठ पल या चौबीस मिनट का दण्ड होता था।

म्युनिख पाण्डुलिपि में वर्णन है—'सैयिदों ने अपने विजय उत्सव मनाने के लिए शत्रुओं के शिरों पर मीनार तामीर कराया।' ( म्युनिख : पाण्डु० : ७९ ए, तवक्काते अकबरी : ४५२ = ६८४ )।

छिन्नमुण्ड या शिरों की मीनार बनाना मध्य एशिया तथा चीन के तुर्कों ने आरम्भ किया था। तुर्की साम्राज्य के पश्चात् पश्चिम-उत्तर चीन के अनुर्वर घासवाले विस्तृत मैदान में मंगोलों का शासन स्थापित हुआ था। दोनो जातियों ने युद्ध में हत या वध किये गये सैनिकों अथवा नागरिकों के मुण्ड का स्तम्भ नागरिकों में भय उत्पन्न करने के लिए बना देते थे। भारत में यह प्रथा तुर्क तथा मंगोलों ने आरम्भ किया था। भारतीय रणनीति में इसका स्थान नहीं था। क्योंकि मरने पर, शत्रु-मित्र सभी के शवों का आदर एवं सम्मान किया जाता था। उनका अन्तिम संस्कार धर्मानुसार किया जाता था अथवा शव सम्बन्धियों को अन्तिम संस्कार के लिए दे दिया जाता था। काश्मीर तुर्किस्तान की सीमा के समीप था अतएव अनेक प्रथायें वहाँ की यहाँ प्रचलित हो गयी थीं, जिनका अस्तित्व शेष भारत में नहीं मिलता।

पाद-टिप्पणी

१३१ ( १ ) पद्मपुर : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : ५ : ६०, १ : ६ : १ तथा ४ : ३४२; जोन० : श्लोक ५५१। वर्तमान पामपुर नगर।

**जोनराजानकाद्यास्तच्छ्रुत्वा तीर्णा भटोद्भटाः ।**
**ओवाणादिषु तदोषादुत्पिञ्जं चक्रुरञ्जसा ॥ १३२ ॥**

१३२. यह सुनकर, भटोद्भट जोन राजानक आदि पार जाकर, उसी क्रोध से शीघ्र ही ओवाण[1] आदि स्थानों पर, उत्पिञ्ज (उपद्रव-षड्यन्त्र) आरम्भ किये।

**तेन सैदा अपि ग्रामे जन्मभूमौ गृहावलेः ।**
**जोनराजानकस्यैव क्रोधादग्निमदापयन् ॥ १३३ ॥**

१३३. इससे सैय्यिदों ने भी जोन राजानक के जन्म भूमि ग्राम की गृहावलि में, क्रोध से आग लगवा दिया।

**तच्छ्रुत्वा स तदीयस्य वडवीविषयान्तरे ।**
**ताजिभट्टस्य सदने तद्वदग्निमदापयत् ॥ १३४ ॥**

१३४. यह सुनकर, उसने भी वड़वी विषयान्तर्गत[2], उस ताजभट्ट के सदन में भी, उसी तरह आग लगवा दिया।

**गृहान् पदातिमात्रः स दग्ध्वा लहरमध्यगः ।**
**दुग्धाश्रमादिस्थामस्थान् पलायनपरान् व्यधात् ॥ १३५ ॥**

१३५. केवल पदादितों सहित उस (जोनराज) ने लहर[1] मध्य जाकर, गृहों में आग लगवा दिया और दुग्धाश्रम आदि स्थाम[2] (शिविर = कैम्प) स्थानों को पलालित कर दिया।

---

पाद-टिप्पणी :

'ओवाण' पाठ—वम्बई।

१३२. ( १ ) ओवाण : वर्तमान युयन गाँव है। पामपुर ( पद्मपुर ) से उत्तर-पूर्व तीन मील पर स्थित है। वाइन ने अपने पर्यटन ( ट्रेवेल : २ : ३४ ) में यहाँ के गरम जल के सोते का उल्लेख किया है। पद्मपुर के वर्णन से यह स्पष्ट हो जाता है कि कल्हण वर्णित 'ओवाण' ( रा० . ७ : २९५ ) ही श्रीवर वर्णित 'ओवाण' है। यह गाँव सुन्दर है। यहाँ के गन्धक स्रोत में अनेक व्याधि-ग्रस्त लोग आकर जलग्रहण करते है।

पाद-टिप्पणी :

१३४. (१) वडवी : औलडीय तथा खड्वीय दो विषयों का उल्लेख लोकप्रकाश ( पृष्ठ ६० ) में मिलता है। परन्तु वे वडवी विषय ही हैं और कोई दूसरा विषय है, अनुसन्धान का विषय है।



( २ ) विषय : विषय = विश : विश्य। समानार्थक रूप से प्रयोग किये गये है। यूनानियों ने राज्य एवं 'विश' को एक ही माना है। प्रत्येक राज्य के नागरिकों को विशः की संज्ञा देते है। भारतीय लेखक विषय को जनपद तथा देश कहते हैं। परगनों की प्राचीन संख्या विषय थी।

विषय के विषय में एक जैसी मान्यता नही है। अमरकोश के अनुसार देश, राष्ट्र, विषय एवं जनपद पर्यायवाची शब्द है। विषय कभी देश का एक उपविभाग मान लिया जाता रहा है। कभी विषय मण्डल में सम्मिलित कर लिया जाता था। कहीं पर मण्डल एवं विषय समानार्थक और कहीं पर मण्डल में विषय और कही विषय के अन्तर्गत मण्डल माना जाता रहा है। द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जोन० : श्लोक : ८८९।

पाद-टिप्पणी :

१३५. ( १ ) लहर : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी :

अथ लोहरकोटस्थं श्रीमार्गेशज्यहाङ्गिरम् ।
ज्यल्लालठक्कुराद्यास्ते लेखमित्थं व्यसर्जयन् ॥ १३६ ॥

१३६ जल्लाल[1] ठक्कुर[2] आदि लोहरकोट स्थित, श्री मार्गेश जहाँगीर के पास, इस प्रकार लेख प्रेषित किया—

यत्प्रमादभिया देशात् सकुटुम्बो गतो भवान् ।
समद्रैर्विहितोऽस्माभिर्युक्त्या तद्वधसाहसः ॥ १३७ ॥

१३७. 'जिसके प्रमाद भय के कारण सपरिवार आप देश से चले गये हैं, मद्रों सहित, हम लोगों ने उसके वध करने का साहस किया है।

मेयामहम्मदाद्यैस्तत्पुत्रैरस्मज्जिगीषुभिः ।
वितस्तोदक्षिणो भागो वामोऽस्माभिः समाश्रितः ॥ १३८ ॥

१३८ 'हम लोगों को जीतने के लिये इच्छुक, उसके पुत्र मीया मुहम्मद आदि वितस्ता के दक्षिण भागपर और हम लोग वाम भाग पर स्थित हैं।

जिगीषवो वयं सर्वे क्रान्तकश्मीरमण्डलाः ।
पुरमात्रावशिष्टास्ते सैदास्तिष्ठन्ति वेष्टिताः ॥ १३९ ॥

१३९. 'विजय के लिये इच्छुक, हम सब काश्मीर मण्डल में फैले हैं और पुर (श्रीनगर) मात्र में अवशिष्ट, वे सैय्यिद घिरे हैं।

तद्विलम्बधियं त्यक्त्वा तूर्णमागम्यतां यतः ।
प्राप्ते त्वयि जयोऽस्माकं तव स्युः कीर्तिसम्पदः ॥ १४० ॥

१४० अत विलम्ब करने का विचार त्याग कर, शीघ्र आइये, क्योंकि तुम्हारे आने पर, हम लोगों की विजय और तुम्हें कीर्ति सम्पत्तियाँ प्राप्त होंगी।

राजभक्ताश्च शक्ताश्च यूयमेवात्र मण्डले ।
तदनागमनाद् कीर्तिं मा कार्षीः स्वां कलङ्किताम् ॥ १४१ ॥

१४१ 'इस मण्डल में राजभक्त एवं समर्थ तुम लोग ही हो, अत न आकर, अपनी कीर्ति को कलङ्कित मत करो।

---

पाद-टिप्पणी

१३६ (१) जलाल ठाकुर द्र० ४ : ९६।

(२) लोहर कोट : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० १ . १ . ८२, ३ . ४७६, जोन० श्लोक ४६८; शुक० . १ . १२४, राज० . १७७।

जैन० १ . ५ १२ तथा जोन० श्लोक १६७, शुक० १ १८४, २२१, रा० ५ ५१।

(२) स्याम द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० ४ १०७। श्रीदत्त ने स्याम को दुग्धाश्रम आदि के साथ ग्राम नामवाचक शब्द माना है। परन्तु इसका अर्थ शीतर शिविर ही ठीक है (पृष्ठ २८०)।

बद्धे रणादालिशाहे पूर्वं मल्लेकजसरथात् ।
राज्यरक्षां व्यधादत्र यथा मार्गेशमह्मदः ॥ १४२ ॥

१४२. 'पहले रण से अलीशाह[1] के बन्दी बना लिये जाने पर, जिस प्रकार मार्गेश मुहम्मद ने मलिक जसरथ[2] से यहाँ राज्य की रक्षा की थी—

तद्वत्प्राणं त्वया रक्ष्यं तूर्णमागत्य साम्प्रतम् ।
अन्यथास्य शिशो राज्ये स्थापयन्ति न सैद्‌जाः ॥ १४३ ॥

१४३. 'उसी प्रकार इस समय शीघ्र ही आकर, इस शिशु के प्राण की रक्षा करो, अन्याय सैय्यिद पुत्र इसे राज्य पर आरूढ़ नहीं करेंगे।'

इति लेखं विचार्याशु स्वदेशोत्कण्ठिताशयः ।
तूर्णं पर्णोत्समार्गेण स मार्गपतिराययौ ॥ १४४ ॥

१४४. यह लेख पढ़कर, शीघ्र ही अपने देश के लिये उत्कण्ठित हृदय, वह मार्ग पति परणोत्स[1] मार्ग से आ गया।

प्राप्ते तस्मिन् दिनैर्द्वित्रैः कुत्बदीनपुरान्तरम् ।
चकम्पुः शिविरे सैदाः प्रदीपा इव वायुना ॥ १४५ ॥

१४५. दो तीन दिनों में उसके कुतुबुद्दीनपुर[1] पहुँचने पर, शिविर में सैय्यिद लोग वायु से दीपक के समान काँप उठे।

अथ संमन्त्र्य सैदास्ते भयात् सन्धातुमिच्छवः ।
इत्थं शिखशहाबादींल्लेखहस्तान् व्यसर्जयन् ॥ १४६ ॥

१४६. भय से, सन्धि करने के लिये इच्छुक, ये सैय्यिद, शेख शहाबुद्दीन (आदि) को पत्र के साथ भेजा—

पाद-टिप्पणी :

१४२. ( १ ) अलीशाह : शाहमीर वंश का सातवाँ सुल्तान। द्र० : जोन० : श्लोक ६१३–७५२।

( २ ) जसरथ : द्र० : १ : ३ : १०७; १ : ७ : ६४।

पाद-टिप्पणी :

१४४. ( १ ) परणोत्स : पूँछ।

( २ ) मार्गपति : जहाँगीर मार्गेश। फिरिश्ता लिखता है—'कुछ समय पश्चात् जहाँगीर माक्री जो लोहरकोट में रक्षा हेतु शरण लिया था, विद्रोहियों के साथ मिल गया। यद्यपि सैय्यिदों ने उसे लाभ-प्रद प्रस्ताव दिया था' ( ४८३ )।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'उसी समय जहाँगीर माकरी जो कि लोहरकोट में था, शत्रुओं के बुलाने पर पहुँचा। सैयिदों ने यद्यपि उसके पास सन्धि के सन्देश भेजा परन्तु उसने स्वीकार न किया ( ४५० )।'

पाद-टिप्पणी :

१४५. (१) कुतुबुद्दीनपुर : इस स्थान पर श्रीनगर के वर्तमान मुहल्ले लंगरहट्टा तथा पीर

प्रधानपुरुषाः सन्तः कृतसैदवधाः कथम् ।
भवन्तो बत कुर्वन्ति कार्यं लोकविगर्हितम् ॥ १४७ ॥

१४७ 'प्रधान पुरुष होकर, सैय्यिद वधकारी, दुःख है कि, आप लोग क्यों लोक-निन्दित कार्य कर रहे हैं ?

दैवाद्यदि मृतो भूपस्तत्सुतस्तत्पदे कृतः ।
कस्य किं वो हृतं येन सर्वे छेदार्थमुद्यताः ॥ १४८ ॥

१४८ 'दैवात् यदि राजा मर गया, तो उसके स्थान पर, उसका पुत्र कर दिया गया, तुम लोगों में किसका क्या हर लिया है, जिससे सब लोग विनाश करने के लिये, उद्यत हो गये हो ।

न सर्वे द्रोहिणः सन्ति यूयं काश्मीरिका जनाः ।
वैदेशिकैर्हता यैस्ते द्वित्रांस्तान्नः प्रयच्छत ॥ १४९ ॥

१४९ 'सब लोग द्रोही नहीं हैं, जिन विदेशियों ने तुम काश्मीरियों का वध किया है, उन दो तीन लोगों का हम लोगों को दे दो ।

अथ वा परदेशात्तान्निष्कास्य सपरिच्छदान् ।
यूयमेवात्र देशे स्थ मुख्या मन्त्रिषु पूर्ववत् ॥ १५० ॥

१५० 'अथवा अनुचरों सहित, उन्हें (इस) पराये देश से निष्कासित कर, इस देश में पहले के समान मन्त्रियों में प्रमुख मुख्यमन्त्री[1] बनो ।

या यस्य पदवी पूर्वमासीत् सा तस्य तिष्ठतु ।
संभूय सर्वे भुञ्जामो नास्माकं विग्रहे ग्रहः ॥ १५१ ॥

१५१ पहले जिसकी जो पदवी थी, वह उसी की हो, सब लोग मिलकर, भोग करें, हम लोगों का विग्रह के प्रति आग्रह नहीं है ।

मरणं नियतं जन्तोर्यथैव विधिकल्पितम् ।
तथैवावश्यभावीति के निवर्तयितुं क्षमाः ॥ १५२ ॥

१५२ 'विधाता के विधान के अनुसार प्राणी का मरण निश्चित है । उसी प्रकार अवश्य-भावी को कौन अन्यथा करने में समर्थ हो सकते हैं ?'

---

हाजी मुहम्मद आबाद है । द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन १ ३ ८४, ८२, ८५, १ ७ ३६२, २ १९२, जोन० श्लोक ५२७ ।

पाद-टिप्पणी

१५० (१) मुख्य मन्त्री : आजकल भी प्रदेशों अर्थात राज्यों के चीफ मिनिस्टरों को भारत में मुख्य मन्त्री कहते हैं ।

इति लेखार्थमालोच्य मार्गेशाद्या महत्तमाः ।
यवनाक्षरसम्बद्धमिति लेखं व्यसर्जयन् ॥ १५३ ॥

१५३. इस प्रकार लेख का अर्थ विचार कर, मार्गेश आदि महान लोग यवन[1] लिपि में लिखा, इस प्रकार का पत्र भेजे—

रक्षारत्नं नृपस्तादृग् रक्षितो न दुराशया ।
किमर्थं स हतो राजपुत्रो बहमखानजः ॥ १५४ ॥

१५४. 'दुराशा के कारण रक्षणीय रत्न सदृश, उस प्रकार के राजा की रक्षा नहीं किया और बहराम खाँ आत्मज राजपुत्र (युसुफ) को किस लिये मार डाला ?

नोरोलोहादिवधतः कस्याश्वासो भवत्विह ।
तत्राप्यस्य शिशो राज्ञः सर्वः कोशो विलुण्ठितः ॥ १५५ ॥

१५५. 'नुरुल्ला[1] आदि के वध के कारण, यहाँ किसको विश्वास होगा, और वहाँ भी इस शिशु राजा का कोश लूट लिया ।

लौही सा घटिकैवैका द्वारि तिष्ठति भूपतेः ।
सैदैः शिष्टाहमेवेति ब्रुवन्तीव ध्वनिच्छलात् ॥ १५६ ॥

१५६. 'राजा के द्वार पर केवल एक लोहा की घटिका[1] ही है जो कि—'सैय्यिदों द्वारा मैं ही अशेष छोड़ी गयी हूँ',—इस प्रकार, मानो ध्वनि के व्याज से कहती है ।

---

पाद-टिप्पणी :

१५३. (१) यवन लिपि : फारसी या उर्दू लिपि ।

पाद-टिप्पणी :

१५५. (१) नुरुल्ला : द्रष्टव्य : जैन० : ४ : ५७ ।

पाद-टिप्पणी :

१५६. (१) घटिका = घण्टा : राजद्वार अर्थात ड्योढ़ी पर समय के ज्ञान के लिये घण्टा बजाने की प्रथा थी । राजाओं के अतिरिक्त अन्य गणमान्य लोगों के यहाँ भी घण्टा बजता था । उसे पहरा कहते थे । कुलीनता तथा बड़े होने की यह निशानी समझी जाती थी ।

राजाओं के यहाँ राज्यों के विलय होने के पूर्व सिंहद्वार अथवा प्रवेश द्वार पर प्रहरी रहता था, वह घण्टा बजाता था । यह प्रथा हिन्दू-मुसलमान सभी राजाओं में प्रचलित थी ।

यूरोप में यद्यपि सन् ९९६ ई० में पोप सेल विस्टर द्वितीय ने घड़ी का आविष्कार किया था, किन्तु घड़ियों का प्रयोग तेरहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में होने लगा था । ब्रिटेन के वेस्ट मिनिस्टर घण्टा घर में सन् १२८८ ई० सेण्ट अल्बांस में सन् १३२६ ई० तथा डोवर कौंसिल में सन् १३४८ ई० में घड़ियाँ लगायी गयी थीं । परन्तु भारत में उनका प्रचलन न हो सका ।

भारत में घटिका यन्त्र का प्रयोग राजाओं के यहाँ आज से लगभग ३० वर्ष पूर्व तक होता रहा है । काशीराज के यहाँ घटिका यन्त्र के आधार पर ही घण्टा आदि सन् १९२८ ई० तक बजता रहा है । मैं सन् १९२१ में बनारस जिला जेल में बन्दी होकर पहुँचा, तो वहाँ भी जल-घटिका का ही प्रयोग होता

था। सूर्य घडी का प्रयोग दिन में ही समय मिलने के कारण खूब प्रचलित नही हो सका। वह जल घटिका यन्त्र का समय नियन्त्रित करने में अवश्य सहायक होता था।

भारत में एक नाद में पानी भर दिया जाता था। लोहे का एक तसला या कटोरा में छेद कर, उसे जल में छोड देते थे। यह तसला २४ मिनटों में भर कर डूबता था। उसमें एक रस्सी बँधी रहती थी। उसमे घण्टो की आवाज होती थी। प्रहरी पानी निकालकर पुन कटोरा पानी में डाल देता था। इस प्रकार जल-घटिका का आविष्कार सर्व प्रथम चीन में लगभग तीन हजार पूर्व हुआ था।

यूनान तथा ईरान में जल के स्थान पर बालू का प्रयोग किया जाता था। डमरू के रूप का एक शीशा अथवा लोहा का यन्त्र बना लिया जाता था। एक तरफ बालू भर दिया जाता था। छिद्र से बालू नीचे गिरता था। बालू समाप्त होने पर उसे पुन उलट कर रख देते थे। प्राचीनकालीन वैज्ञानिको के चित्रो में यह यन्त्र रखा प्राय तस्वीर मे चित्रित रहता है।

ब्रिटेन में अलफ्रेड ग्रेट ने जल के स्थान पर मोमबत्ती का प्रयोग आरम्भ किया। लम्बी मोमबत्ती में लम्बाई की ओर समान दूरी पर चिन्ह अकित करते थे। प्रत्येक चिन्ह तक मोमबत्ती जलने पर, निश्चित समय व्यतीत होने का ज्ञान हो जाता था।

श्रीवर ने लौह घण्टा शब्द का प्रयोग साभिप्राय राजा की दयनीय आर्थिक दशा का वर्णन करने के लिये किया है।

घण्टा समय बताने के साथ ही साथ मगल-दायक माना गया है। स्कन्दपुराण के अनुसार गरुडमूर्ति युक्त घण्टा विष्णु भगवान को प्रिय है। मुसलिम तथा यहूदी धर्म के अतिरिक्त धार्मिक कृत्यों में घण्टा वादन अनिवार्य माना गया है। ईसाइयो में घण्टा पवित्र एव शुभ माना जाता है। घण्टा लगाने के समय उसका अभिषेक के साथ नामकरण सस्कार किया जाता है। भारत में घण्टों पर पवित्र धार्मिक वाक्य टकाणित रहते है। इस प्रकार के घण्टों की ध्वनि मगलकारिणी मानी जाती है।

प्रारम्भ मे ईसाई की मृत्यु के पश्चात घण्टा बजाया जाता था। कालान्तर मे आसन्न मृत्यु के समय बजाया जाता है। मान्यता है कि घण्टे की ध्वनि द्वारा मुमूर्ष पवित्र तथा पिशाच भय से दूर हो जाता है। हिन्दुओ मे विशेष व्यक्ति मुख्यतया साधु महात्मा एव वृद्धों की शवयात्रा के समय घण्टा बजाया जाता है। घण्टा ध्वनि पर नीदरलैण्ड तथा ब्रिटेन मे अत्यन्त कर्णप्रिय एव स्वर रचनायें प्रस्तुत की गयी है।

बर्मा, जापान आदि देशो में घण्टो में दोलक या लोलक नही होते। बर्मा में हरिण की सीग की हथौडी मे घण्टा बजाया जाता है। जापान तथा दक्षिण पूर्व के एशियायी देशो मे मुँगरा अथवा दण्ड से बजाया जाता है।

पेकेन में साढे तिरपन टन का एक घण्टा है। उस पर बुद्ध वाक्य टकणित है। मास्को का घण्टा विश्व-विख्यात है। मैंने इसे अपनी रूस की यात्रा मे देखा है। वह २० फुट ७ इच मोटा है। व्यास बाइस फुट है। परिधि तिरसठ फुट से अधिक है। यह ४३२०० पाउण्ड वजन का है। यह नीचे कुछ टूट गया है। घण्टा के द्वार सदृश लगता है। विशालता के कारण उसे लघु गिरजा अथवा चेपल कहते है।

कास्य के घण्टो का अधिक प्रचार है। कालान्तर में चार भाग ताम्र तथा एक भाग रागा बनाकर घण्टा बनने लगा। भारत तथा नैपाल में अष्टधातु का बना घण्टा उत्तम माना जाता है। छोटे घण्टे जस्ता तथा शीशा की मिश्र धातु किवा पीतल से बनते हैं।

उत्तम घण्टा से स्थायी स्वर तथा गुञ्जन स्वर दोनों निकलते है। काश्मीर में भी घण्टा मिश्र-

**गच्छन्त्वनिष्टा मद्रास्ते बहिर्युक्त्या निवारिताः ।**
**सन्तोषवृत्त्या तिष्ठन्तु यूयं पैतामहे पदे ॥ १५७ ॥**

१५७. युक्तिपूर्वक निकाले गये, अनिष्टकारी मद्र बाहर चले जांय और तुम लोग सन्तोषपूर्वक पितामह (जैनुल आबदीन) के पद पर आसीन हो ।'

**इत्यादि श्रुत्वा सैदैः स समाहूतोऽप्यनागतः ।**
**तदग्र व्यसृजद् दूतं स च प्राप्तोऽब्रवीदिदम् ॥ १५८ ॥**

१५८. इत्यादि को सुनकर, सैय्यिदों द्वारा, आहूत होने पर भी, वह नहीं आया, और उसके पास एक दूत भेजा । पहुँचकर उसने इस प्रकार कहा—

**स्थापयन्तु धनं कोशे यद्धृतं बालभूपतेः ।**
**शस्त्रं त्यजन्तु मन्त्रादौ तिष्ठन्तु भयवर्जिताः ॥ १५९ ॥**

१५९. 'बाल भूपति का जो धन हरण[1] किये हैं, उसे कोश में रख दें, और मन्त्रणा करने के पूर्व, शस्त्र त्याग दे और निर्भय हो जांय ।

**अत्रत्या एव कुर्वन्तु राज्यकार्याणि पूर्ववत् ।**
**किञ्चिन्नश्यति नो देशे दोषाः शान्तिं व्रजन्ति च ॥ १६० ॥**

१६०. 'यहाँ के लोग ही, पहले के समान राज करें, इस प्रकार देश में हानि नहीं होगी और दोष भी शान्त हो जायगा ।

---

धातु का बनता था । घण्टा में जितनी अच्छी धातु होती है, उतना ही उनका निनाद उत्तम होता है ।

सैय्यिदों ने इस प्रकार के घण्टों को भी राजप्रासाद में नहीं छोड़ा था । केवल लौह घण्टा जिससे गूंजती ध्वनि नहीं निकलती, चाण्डाल के लौह आभूषण की तरह माना जाता है, राजद्वार पर घण्टा के प्रतीक स्वरूप रहने दिया गया था । ताकि ड्योढ़ी बजती रहे । राजा जीवित है, राज्य है, इसका लोगों का ज्ञान होता रहे । राजद्वार पर, प्रहरी जल किंवा बालू घटिका के आधार पर, रात-दिन समयान्तर से घण्टा बजाता था । इसका दो परिणाम होता था । लोगों को समय की सूचना मिलती थी और प्रहरी सो नहीं सकता था । द्वार सुरक्षित रहता था । भारत में २४ मिनट अर्थात् एक दण्ड पर घण्टा बजता था । अंग्रेजी समय तथा प्राचीन घटिका यन्त्र का तीन, छः, नव तथा बारह बजे का समय मिल जाता था । जल-घटिका, बालू-घटिका, दोनों का प्रचलन भारतीय राज्यों के विलय तथा घड़ियों और समय पर शाइरेन अथवा भोंपा बजने के कारण समाप्त हो गया है ।

घटिका का अर्थ घटी यन्त्र भी होता है । यह समयसूचक यन्त्र था । एक घटी २४ मिनटों की होती है ।

पाद-टिप्पणी :

१५७. 'तिष्ठन्तु' पाठ—बम्बई ।

पाद-टिप्पणी :

१५९. (१) धनहरण : द्र० : जैन० : ४ : ९८ ।

यद्गतं गतमेवात्र मृता जीवन्ति नो पुनः।
अन्योन्यशुद्धिर्वैरस्य जातान्योन्यकृताद् वधात् ॥ १६१ ॥

१६१ 'जो गया सो गया ही, मरे लोग पुन जीवित नही होंगे, एक दूसरे का वध करने से पारस्परिक वैर की शुद्धि हो गयी।'

इत्यादि युक्तमुक्तं तद्वाक्यं श्रुत्वा मदोद्धताः।
सैदास्तदुक्तिजनितक्रोधदग्धा इवाभवन् ॥ १६२ ॥

१६२. इस प्रकार उचित, उसके कथन को सुनकर, मदोद्धत सैय्यिद, उसके कथन से, उत्पन्न क्रोध-से, जल-भुन उठे।

नृपः कोशश्च शस्त्रं च युद्धदक्षास्तथा भटाः।
सर्वमित्यस्मदायत्तं किं कुर्वन्ति विरोधिनः ॥ १६३ ॥

१६३ 'राजा, कोश, शस्त्र, युद्ध म दक्ष भट, सब कुछ हम लोगो के आधीन है, विरोधी क्या करेंगे ?'

इति हैबतखानोक्ता युद्धसन्नद्धबुद्धयः।
अभूवंस्ते कृतोद्योगाः कौरवाः पाण्डवेष्विव ॥ १६४ ॥

१६४ इस प्रकार हैबत खाँ के कहने पर, युद्ध के लिये सन्नद्ध बुद्धि वाले वे सैय्यिद, पाण्डवो के ऊपर कौरवो के समान उद्योगशील हो गये।

अथैकदा सैफडारजोनराजानकादयः।
पुरे नौसेतुमुत्तीर्य सैदयुद्धार्थमाययुः ॥ १६५ ॥

१६५ एक समय सैफ डार[1] और जोनराजानक आदि नौका सेतु को पार कर, सैय्यिदो से युद्ध करने के लिये पुर मे आये।

उपायैः सर्वदा जेयाः समयो न रणस्य वः।
इति मार्गपतेर्वाक्यं नागृह्णंस्ते रणोद्यताः ॥ १६६ ॥

१६६ 'सदैव उपायो से विजय करना चाहिए, यह तुम लोगो के रण का समय नही है'— इस मार्गपति की बात को रणोद्धत वे लोग ग्रहण नही किये।

---

पाद-टिप्पणी

'डार' पाठ—बम्बई।

१६५ (१) सैफडार सैफ डामर। तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'एक दिन दाउद पुत्र जहाँगीर माग्री, सैफी तथा अनकरी ने पुर पार का सैय्यिदो से युद्ध किया ( ४५२ = ६८४ )।'

तवक्कात अकबरी के पाण्डुलिपि में 'सैफी' तथा 'अनकरी' नाम दिया गया है। लीथो संस्करण में 'अकरी' एवं 'सैफी' नाम दिया गया है। फिरिश्ता लीथो संस्करण में केवल नाम 'शफमाकरी' दिया गया है। कर्नल ब्रिग्स तथा रोजर्स ने कोई नाम नही दिया है। 'अकरी' का नाम 'दानकरी' भी दिया गया है।

दावोदनामा मार्गेशपुत्रो धामाकरो द्रुतम् ।
प्रतीहारादिभिर्युक्तो नगरान्तरमासदत् ॥ १६७ ॥

१६७. मार्गेश का पुत्र दाऊद, जो बहुत तेजस्वी था, प्रतिहार आदि के साथ (श्री) नगर में पहुँचा।

समुद्रामठमार्गेण प्रविष्टा पृतनाथ सा ।
प्रापल्लोष्टविहारं तं कर्तुं सैदभटक्षयम् ॥ १६८ ॥

१६८. और वह सेना भी समुद्रमठ[1] मार्ग से प्रवेश कर, सैय्यिद भटों का क्षय करने के लिये लोष्ट विहार[2] में पहुँच गयी।

रणं संत्यज्य डोम्बाद्या येऽन्ये लुब्धा महाभटाः ।
सर्वस्वहरणव्यग्रा बभूवुर्नगरान्तरे ॥ १६९ ॥

१६९. रण त्याग कर डोम्ब[1] आदि जो दूसरे लोग भी वहाँ पहुँचे थे, वे नगर में सर्वस्व हरण करने में व्यग्र हो गये।

डोम्बाद्याः सुभटाश्चान्ये घ्नन्तोऽन्योन्यमुदायुधाः ।
प्रसिद्धपौरवेश्मभ्यो भाण्डागाराद्यलुण्ठयन् ॥ १७० ॥

१७०. हथियार उठाये, सुभट डोम्ब आदि, परस्पर एक दूसरे को मारते हुए, प्रसिद्ध नगर गृहों से भाण्डागार आदि को हर लिये।

भूमौ निखन्य यन्न्यस्तं पौरैर्गुप्तं गृहे धनम् ।
क्षिप्त्वा प्रतिपदं शङ्कून्नीतं तत् तैरिवार्पितम् ॥ १७१ ॥

१७१. पुरवासियों ने भूमि खोद कर, जो धन घर में सुरक्षित रख दिया था, पद-पद पर शंकुओं (भालों) को गड़ा-गड़ाकर, उसे उसी प्रकार ले लिये जैसे उन्होंने रखा हो।

मद्राहते भटे दृष्ट्वा सैदा दिक्पतितं शिरः ।
नाद्यास्माकं जयोऽस्तीति तूर्णं जग्मुर्यथागतम् ॥ १७२ ॥

१७२. मद्रों द्वारा भटों के मारे जाने पर, दिशाओं में गिरे, शिरे को देखकर, सैय्यिद लोग– 'आज हम लोगों की विजय नहीं होगी,'—शीघ्र यथागत (जैसे आये थे वैसे) लौट गये।

---

पाद-टिप्पणी :

१६८. (१) समुद्रमठ : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० : ४ : १२०।

(२) लोष्ट विहार : यह श्रीनगर में ही होने की सम्भावना है।

पाद-टिप्पणी :

१६९. (१) डोम्ब : डुम्ब। द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जोन० : ९५२; तथा रा० : ५ : ३५४।

पाद-टिप्पणी :

१७१. (१) शंकु : भाला, बरछा, नुकीली

अथ सैदचमूः श्रुत्वा तान् प्रविष्टान् पुरान्तरे ।
अग्रे जगाम युद्धाय सायकायुधवर्षिणी ॥ १७३ ॥

१७३ बाण वर्षा करती हुई सैय्यिदो की सेना युद्ध के लिये आगे गयी । उन लोगो के नगर मे प्रवेश की बात सुनकर—

अग्रागतं पद्मभट हत्वा स्वशिबिरान्तरे ।
तद्रक्ततिलकं चक्रुः सैदाः स्वायुद्धसिद्धये ॥ १७४ ॥

१७४ आगे आये पद्मभट्ट को उसके शिविर मे ही मारकर, सैय्यिदो ने अपने आयुध सिद्धि के लिये उनके रक्त से तिलक किया ।

आलिखानः स तत्रस्थस्त्रस्तः श्रुत्वागतां चमूम् ।
लुद्रभट्टविहारेऽग्निं मार्गरोधार्थमार्पयत् ॥ १७५ ॥

१७५ वहाँ पर स्थित, अली खान[1] चमू (सेना) का आगमन सुनकर, त्रस्त होकर, मार्गावरोध करने के लिये, लुद्रभट्ट[2] विहार मे आग लगवा दिया ।

ज्वालाजटाकुले मार्गे प्राप्तो दावोदमार्गपः ।
सहोसनप्रतीहारः स वीरो रणमग्रहीत् ॥ १७६ ॥

१७६ मार्ग के ज्वालापुजो से व्याप्त हो जाने पर, वह वीर मार्गपति दाउद, होसन प्रतिहार सहित, युद्ध करने लगा ।

सेतुसङ्कटमार्गेण पतितः परिखान्तरम् ।
स मार्गपतिदावोदो युध्यन् प्राणैर्व्ययुज्यत ॥ १७७ ॥

१७७ सेतु के सकीर्ण मार्ग से परिखा[1] मे गिरा, वह मार्ग पति[2] (दाऊद) युद्ध करता हुआ, मारा गया ।

---

वस्तु कील या फलदार खोदने या मारने की धातुमय उपकरण या अयुध। बाण के अग्रभाग अर्थात फल के लिए भी इस शब्द का प्रयोग किया जाता है।

पाद-टिप्पणी

१७४ ( १ ) पद्मभट्ट केवल यही उल्लेख मिलता है।

पाद-टिप्पणी

१७५ ( १ ) अली खा द्र० ४ ७५, ७८, ९५, १७५, ३४४।

( २ ) चमू दश ध्वजनियो की एक चमू होती है। एक सेना में ५०० हाथी, ५०० रथ, १५०० अश्व तथा २५०० पदादित सैनिक होते है। दश सेना की एक पृतना, १० पृतनाओं की एक वाहिनी तथा १० बाहिनी की एक ध्वजिनी होती है। यहाँ चमू का अर्थ साधारण सेना है।

( ३ ) लुद्रभट्ट विहार यह स्थान श्रीनगर में ही होना चाहिय। इसका पुन उल्लेख नही मिलता। अन्य राजतरगिणियों में भी उल्लेख नही आया है। अनुसन्धान की अपेक्षा है। केवल यही उल्लेख मिलता है।

पाद-टिप्पणी

१७७ ( १ ) परिखा यह परिखा वही थी

तत्राह्मदप्रतीहारमुख्या वीरा रणाङ्गने ।
ययुः शौर्यं दर्शयन्तो दिव्यस्त्रीसुखभागिताम् ॥ १७८ ॥

१७८. उस रण प्रांगण में अहमद प्रतीहार प्रमुख वीर लोग, शौर्य प्रदर्शित करते हुए, दिव्य (स्वर्गीय[1]) स्त्रियों के सुखभागी बने ।

रूपं तस्य मृतस्यापि स्मृत्वा पौराङ्गनाः पुरे ।
वदन्ति नैव पश्यामस्तादृशं सुभगं क्वचित् ॥ १७९ ॥

१७९. मृत उसके रूप का स्मरण करके, पुर की अङ्गनायें कहती थीं—'ऐसा सुन्दर रूप हम कहीं नहीं देखती हैं ।

सुरूपो मानुषोयोग्यो नायं तन्नीयते दिवम् ।
इतीव देवताभिः किं मूर्तं तत्र न्यधीयत ॥ १८० ॥

१८०. 'यह सुन्दर, रूपवाला मनुष्य स्वर्ग ले जाने योग्य नहीं है, इसीलिये देवताओं ने उसके मृत शरीर को वहीं छोड़ दिया ।'

तावद्धैभतखानाद्यैः पश्चादन्यपथागतैः ।
विदधे खानगाहाग्रे तत्तत्सुभठसङ्क्षयः ॥ १८१ ॥

१८१. तवतक पीछे से, अन्य मार्ग से, हैवत खाँ आदि ने आकर खानकाह[1] के सम्मुख तत्-तत् सुभटों का विनाश किया ।

---

जिसे नगर की रक्षा के लिए सैय्यिदों ने वनवाया था । द्र० : जैन० : ४ : १२२–१२३ ।

(२) दाऊद : दाऊद तथा सैफ डामर ने सैय्यिदों पर नदी पार कर आक्रमण किया परन्तु दाऊद मारा गया । सैय्यिदों ने अपना विजयोत्सव मनाने के लिए शत्रुओं ने मुण्डों पर मीनार वनवाया (म्युनिख : पाण्डु० : ७९ ए०; तवक्काते अकवरी ४५२ ) ।

फिरिश्ता लिखता है—'कुछ समय पश्चात् जहाँगीर माक्रे का पुत्र दाऊद पुनः एक छोटे विद्रोही दल के साथ पार किया और सैय्यिदों पर आक्रमण किया । किन्तु अधिकतर आक्रमणकारी मारे गये ( ४८३ ) ।'

तवक्काते अकवरी में उल्लेख है—'एक दिन दाऊद विन जहाँगीर माकरी तथा सैफी दानकारी ( सैफ डामर ) ने पुल पार कर, सैय्यिदों से युद्ध किया । दाऊद अधिकांश ( मुखालफीन ) विरोधियों सहित मारा गया ( ४५२ = ६८४ ) ।'

म्युनिख पाण्डुलिपि में उल्लेख है—'दाऊद अपने साथी सैफ डामर के साथ युद्ध करने के लिए आया । किन्तु वह पराजित होकर मारा गया (७९ ए०) ।'

पाद-टिप्पणी :

१७८. ( १ ) स्वर्गीय स्त्री : प्राचीन मान्यता है कि वीरगति प्राप्त व्यक्ति सुरवालाओं को प्राप्त करता स्वर्ग में निवास करता है—पराशर ( ३ : ३१ ) तथा वृहत्पराशर ( १० ) का मत है कि उस वीर के पीछे अप्सरायें दौड़ती हैं और उसे अपना स्वामी वनाती हैं । वे वीर जो शत्रुओं से आवृत होने पर भी प्राणभिक्षा नहीं माँगते और युद्ध में लड़ते मारे जाते हैं, उन्हें शाश्वत लोक की प्राप्ति होती है । कौटिल्य का भी यही मत है ( १० : ३ ) ।

पाद-टिप्पणी :

१८१. ( १ ) खानकाह : सम्भवतः खानकाह मुअल्ला से तात्पर्य है ।

भूताविष्टैरिव प्राप्तविजयैरुद्धतायुधैः ।
रणप्रेक्षागताः पौरास्तद्दिने केऽपि तैर्हताः ॥ १८२ ॥

१८२ हथियार उठाये विजयी वे लोग भूतग्रस्त सदृश होकर, उस दिन रण देखने के लिये गये, कुछ पुरवासियो को मार डाला ।

किमन्यत् परदेशीया दूता विप्रगृहे स्थिताः ।
एते मद्रा इति प्रोक्ता लोभाद् द्वित्रा निपातिताः ॥ १८३ ॥

१८३ और क्या कहा जाय, ब्राह्मण के घर स्थित दो-तीन परदेशी दूतो को भी लोभ से यह कहकर, मार डाले कि वे मद्र है ।

विमुच्य बन्धनस्थान् स्वान् युध्यन् सैदभटैः सह ।
स सैफडामरः पौरान् सैदांश्चोत्फलकान् व्यधात् ॥ १८४ ॥

१८४ सैफ डामर ने बन्धन स्थित, अपने जनो को मुक्त कर, सैय्यिदो के साथ युद्ध करते हुए, पुरवासियो को ढाल[1] रहित (अरक्षित) कर दिये ।

अस्मद्वैरिहितः सोऽयमिति सैदभटा रुषा ।
जघ्नुर्गृहस्थितं वैद्यपण्डितं यवनेश्वरम् ॥ १८५ ॥

१८५ यह हम लोगो के वैरियो का हितकारी है, इस क्रोध से सैय्यिद भटो ने घर मे स्थित वैद्य पण्डित यवनेश्वर[1] को मार डाला ।

अत्यन्तानुचितं सैदाश्चक्रुर्यत् तस्य मस्तकम् ।
छित्त्वा चन्दनलिप्ताङ्गं न्यधु राजपथान्तरे ॥ १८६ ॥

१८६ सैय्यिदा ने यह अत्यन्त अनुचित कार्य किया, जो उसके चन्दन लिप्ताग[1] मस्तक को काटकर, राजपथ पर, रख दिया ।

---

पाद-टिप्पणी :

१८५ ( १ ) यवनेश्वर पाठ सन्दिग्ध है। यह हिन्दू था। जैसा श्लोक सख्या १८६ तथा १८८ से प्रकट होता है। उसका मस्तक चन्दन-चर्चित था। मुसलमान चन्दन नही लगाते ।

पाद-टिप्पणी

१८६ ( १ ) लिप्ताग श्रीदत्त ने भावार्थ दिया है—'उन्होने वैद्य के मस्तक के चन्दनलिप्त, अग को काट कर राजपथ पर छोड दिया ।'

वैद्य का नाम यवनेश्वर श्लोक ४ १८५ में दिया गया है। ऐश्वर शब्द नामो के अन्त में शिव मन्दिरो में प्रतिष्ठित देवताओं के आगे तथा स्वामी विष्णु मन्दिर नामवाचक देवता मे साथ लगाया जाता है। यवन शब्द मुसलिमवाचक है। यदि वैद्य यवन होता तो वह चन्दन का लेपन मस्तक पर न करता। शिवलिंग पर चन्दन तथा चन्दन का त्रिपुण्ड लगाया जाता है। वैद्य शैव था। श्रीवर ने वैद्य एव पण्डित दोनो विशेषण यवनेश्वर शब्द के साथ लगाया है। इसस स्पष्ट है कि नाम यवनेश्वर न होकर पवनेश्वर या कुछ और हो सकता है। मुसलमान चन्दन का प्रयाग मस्तक पर नही करत यह निर्विवाद है।

प्रविष्टा राक्षसाः केऽपि तद्दिने ते पुरान्तरे ।
अविचार्य क्षयं चक्रुः सर्वेषां यत् कृपोज्झिताः ॥ १८७ ॥

१८७. उस दिन उस पुर में उन राक्षसों ने प्रवेश किया और बिना विचार किये, निर्दयतापूर्वक, सब लोगों का विनाश कर दिये।

तस्य चन्दनलिप्ताङ्गं मस्तकं वीक्ष्य नागराः ।
न के निन्दां व्यधुः सैदुदुष्कर्माधर्मनिश्चयात् ॥ १८८ ॥

१८८. उसके चन्दन लिप्तांग मस्तक को देखकर, सैय्यिदों का दुष्कर्म एवं अधर्म निश्चय करके, किन नागरिकों ने निन्दा नहीं की ?

आ मल्लेकपुराल्लोष्टविहारान्तं पुरान्तरे ।
शवा इन्धनगण्डाल्य इवासन्निहिताः पथि ॥ १८९ ॥

१८९. मलिकपुर[1] से लोष्ट विहार[2] तक, पुर में पथ पर, ईन्धन समूह के समान, शव रखे हुए थे।

आसन् येषु वपूंषि तूलशयनन्यस्तोपधानोद्गत-
स्पर्शोत्कर्षसुखावमर्षविलसच्छृङ्गारसाराण्यलम् ।
नग्नास्ते भुवि काककुक्कुरवृकैः संभक्षिता लक्षिता
मेदोमांसवसाव्रमत्क्रिमिलसन्निष्यन्द दुर्गन्धिनः ॥ १९० ॥

१९०. रुई की गद्दी पर रखे उपधान के स्पर्श का उत्तम सुख प्राप्त करनेवाले, सुन्दर श्रृंगार परिपूर्ण, वे भूमि पर नग्नावस्था में काक, कुक्कुट, वृकों द्वारा खाये गये, मेदा, मांस, वसा से निकलते कृमियों तथा दुर्गन्ध युक्त देखे गये।

जयेन तावन्मात्रेण तुष्टाः सैदाः परस्परम् ।
विंशप्रस्थान्तरे चक्रुर्वाद्यैस्ते विजयोत्सवम् ॥ १९१ ॥

१९१. इतने ही विजय से सन्तुष्ट, सैय्यिदों ने विंशप्रस्थ[1] में, वाद्यों द्वारा विजयोत्सव[2] सम्पन्न किया।

---

पाद-टिप्पणी :

'ल्लोष्ट' पाठ—बम्बई।

१८९. (१) मलिकपुर : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : ७ : ६६ तथा शुक १ : ३३।

(२) लोष्ट विहार : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : ४ : १६८।

पाद-टिप्पणी :

१९१. (१) विंशप्रस्थ . द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : ७ : ३; ४ : ९७।

(२) विजयोत्सव : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'सैय्यिदों ने प्रसन्न होकर नक्कारे बजाये (४५२)।'

हतावशिष्टान्नष्टांस्तांस्तद्दिने चलितान् बहून् ।
पश्चाच्चेदगलिष्यन्त सर्वसंहरणं भवेत् ॥ १९२ ॥

१९२ मारने से बचे हुए तथा चले गये, बहुत से लोगो के पीछे, यदि वे लगते, तो सर्व सहार हो जाता ।

किंतु प्राग् लुठिता देवा ज्वलिताः केऽपि देशगाः ।
तां बुद्धिं विजयायैषामदास्यन् कुपिताः कथम् ॥ १९३ ॥

१९३. किन्तु पहल देश के कुछ देवता[1] लूटे एव जलाये गये थे, अत. कुपित वे देवता, उन (सैय्यिदो) को विजय के लिये कैसे बुद्धि देते ?

अहंपूर्विकया याततरद्भटभरासहः ।
नौसेतुबन्धस्तुत्रोट तावच्छ्रीनगरान्तरे ॥ १९४ ॥

१९४ तवतक श्रीनगर मे 'मैं पहले–मै पहले' इस प्रकार जाकर, पार करते भटो के भार को, न सह सकने मे, नौका सेतुबन्ध[1] टूट गया ।

सनाहभरमग्नाङ्गाः सेतुभङ्गात् परिच्युताः ।
शतसङ्ख्या दिने तस्मिन् वितस्तायां विपेदिरे ॥ १९५ ॥

१९५ सेतु भग होने से गिरकर, वर्मभार से (स्वत ) डूब गये, इस प्रकार वितस्ता मे शत की सख्या मे (वे) मर गये ।

---

म्युनिख पाण्डुलिपि में उल्लेख है कि—विजयोत्सव मनाने के लिये सैय्यिदो ने मरे हुए लोगों के मुण्डो से एक मीनार बना दिया' ( म्युनिख पाण्डु० ७८ ए० ) ।

पाद-टिप्पणी

१९३ ( १ ) देवता श्रीवर के वर्णन से प्रतीत होता है कि सैय्यिदों ने धार्मिक उन्माद के कारण गोवध के साथ ही साथ प्रतिमाओ को भग करने एव फूकने का क्रम पुन' आरम्भ किया, जो जैनुल आबदीन के समय बन्द हो गया था ।

पाद-टिप्पणी

१९४ ( १ ) सेतु भग फिरिश्ता लिखता है—'सैय्यिदों ने दूसरे दिन सर्वप्रिय दल पर आक्रमण किया किन्तु उन लोगो का जोरो से विरोध नागरिकों ने उनके नौका सेतु पार करते समय किया । उसमें बहुत सेय्यिद मारे गये । सेतु टूट गया । उस पर सैय्यिद दल के जो लोग थे, वे नदी से डूब गये ( ४८३ ) ।'

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'दूसरे दिन सैय्यिद अपनी शक्ति के बल पर पुल पार करना चाहते थे । शत्रु सामने आ गये, और पुल पर युद्ध आरम्भ हो गया । जब पुल टूट गया तो दोनो ओर के बहुत से लोग जल मग्न हो गये ( ४५२–४५३, ६८४ ) ।'

म्युनिख पाण्डुलिपि में उल्लेख है—'काश्मीरी बढे और सैय्यिदो से पुल पर सघर्ष हुआ । अकस्मात पुल टूट गया बहुत से लोग दोनों तरफ के डूब मरे ( म्युनिख : पाण्डु० ८० : ए० ) ।'

पाद-टिप्पणी

१९५ ( १ ) वर्मभार : जिरहबख्तर । कवच

नूनं सा शारदा देवी वितस्तारूपधारिणी ।
तदधर्मक्रुधा ग्रासं विदधे कटकद्वये ॥ १९६ ॥

१९६. निश्चय ही वितस्ता रूपधारिणी शारदा[1] देवी ने उनके अधर्म के क्रोध से दोनों सेना (कि लोगों) को ग्रास कर लिया ।

प्रेक्षागता हताः पौरा इ निन्दानिवृत्तये ।
तत्क्षणोत्कृत्तशिरसां सैदैः राशिः कृतोऽग्रतः ॥ १९७ ॥

१९७. 'देखने के लिये आये नगरवासी मार डाले गये', इस निन्दा की निवृत्ति के लिये सैय्यिदों ने तत्क्षण काटे गये शिरों की राशि सम्मुख कर दी ।

तत्तत्कील्यर्पितमुखैस्तैर्वितस्तातटान्तरान् ।
काष्ठमेकं न्यधुः सैदा भीत्यै दीपवरोपमम् ॥ १९८ ॥

१९८. वितस्ता तट पर तत्तत् कीली पर मुखों[1] को रखकर, उनके द्वारा भय उत्पन्न करने के लिये दीपवर[2] सदृश एक काष्ठ पर रख दिये ।

---

लोहा का बनता है । उसका वजन इतना भारी होता है कि कुशल तैराक न होनेवाला व्यक्ति, उसके भार से ही डूब जाता है । पत्थर बाँध कर जिस प्रकार मनुष्य को डुबो दिया जाता है और वह तैराक होने पर भी भार के कारण डूब जाता है, उसी प्रकार लोहा का वर्मभार इतना अधिक था कि वह साधारण मनुष्यों को डुबाने के लिये पर्याप्त था ।

पाद-टिप्पणी :

१९६. ( १ ) शारदा : वितस्ता को पार्वती का अवतार मानते हैं । देवी पार्वती सती है । उनके नाम पर काश्मीर उपत्यका का नाम सतीसर है । काश्मीर मण्डल का प्राचीन नाम शारदापीठ है । जोनराज ने काश्मीर को शारदा भूमि लिखा है ( जोन० : श्लोक ८२८ ) ।

सतीसर शारदा भूमि है । सती वितस्ता है । अतएव श्रीवर ने वितस्ता को शारदा माना है । प्राचीन काश्मीर की उत्तरी सीमा शारदापीठ बनाता था । शारदा या शारदी की यात्रा जैनुल आबदीन ने भी किया था । द्र० : जैन० : १ : ३७; ४ : ३२५; ८ : २२५७, २३०६; द्र० : शारदा माहात्म्य ।

पाद-टिप्पणी :

१९८. ( १ ) मुख : सैय्यिदों ने इसके पूर्व भी खम्भों पर शिर की अवलियाँ लोगों में भय उत्पन्न करने के लिए लगवा दी थीं (जैन० : १३०) ।

सम्भवतः इसी का उल्लेख तबक्काते अकबरी में दूसरी तरह से किया गया है—'सैय्यिदों ने अपने शत्रुओं के मुण्डों का मीनार बनाया ( ४९३ = ६८४ ) ।'

( २ ) दीपवर : दीवट । जोनराज ने भी हत व्यक्ति भट्ट भिक्षु एवं अवतार के शिर की उपमा दीप से किया है । वे शाहमीर द्वारा छल से मारे गये थे । द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जोन० : श्लोक : २८० । श्रीवर ने श्लोक ४ : १३० की उपमा पुनः यह दुहराई है । तुर्क तथा मंगोल प्रथा है कि आतंक उत्पन्न करने के लिए मुण्डागार या मुण्डों की मीनार बनाते या बर्छों तथा लाठियों पर मुण्ड गाड़ कर घुमाते हैं । यहाँ प्रतीत होता है । काष्ठ पर दीपक तुल्य मुण्ड रख दिये गये थे । दीपमालिका के अवसर पर लम्बे काष्ठ पर पंक्तिबद्ध दीपमाला सजाये जाते हैं । उसी की उपमा यहाँ दी गयी है ।

वितस्तायां शवाः केचित् सलिलोच्छूनविग्रहाः ।
विसस्रुर्विस्रगन्धाढ्या महापद्मसरोन्तरे ॥ १९९ ॥

१९९ वितस्ता मे जल से फूले शरीरवाले दुर्गन्धिपूर्ण कुछ शव, महापद्मसर[1] मे वह गये थे।

अत्रान्तरे समानीयावशिष्टान् परितो भटान् ।
काश्मीरिकाः पुनश्चक्रुः पूर्ववत् सैन्यसंग्रहम् ॥ २०० ॥

२०० इसी बीच काश्मीरी चारो ओर से अवशिष्ट भटो को लाकर, पूर्ववत् पुन सैन्य सग्रह करने लगे।

श्रीजयहांङ्गिरज्यल्लालसैफडामरकादयः ।
मुख्यान् सैदान् पुनर्जेतु रणोपायं व्यचिन्तयन् ॥ २०१ ॥

२०१ श्री जहाँगीर, जल्लाल, सैफ डामर आदि लोगो ने प्रमुख सैय्यिदो को पुन जीतने के लिये, रण का उपाय सोचने लगे।

स सैफडामरः प्राप्तसिद्धादेशपदस्ततः ।
उच्चावचेषु व्यभजद् विषयान् सप्तविंशतिम् ॥ २०२ ॥

२०२ तत्पश्चात सिद्धादेश[1] प्राप्तकर, उस सैफ डामर ने, ऊंचे नीचे स्थानो पर, सत्ताइस विषयो[2] (भागो) मे बाट दिया।

---

पाद-टिप्पणी

१९९ (१) महापद्मसर वितस्ता महापद्मसर ( ऊलर लेक ) में पूव से आकर गिरती और पुन पश्चिम से निकल जाती है। अतएव शव वितस्ता में बहते महापद्मसर में तैर रहे थे। यह इस बात को भी प्रकट करता है कि लोग इतने कायर हो गये थे और उनका मनोबल इतना गिर गया कि शवों को निकाल कर, उनकी अन्तिम क्रिया भी नही किये। काशी में आज भी गरीब से गरीब का सम्बन्धी डूबता है, तो उसकी लाश खोजने का प्रयास किया जाता है और मीलो दूर लोग लाश को ढूढते जाते है कि लाश कही न कही फूली अवश्य मिल जायगी।

पाद-टिप्पणी

२०२ (१) सिध्यादेश प्राचीन काल में भूमि आपके लिए प्रयोग किया जाता था। मुसलिम काल मे इस पद का नाम 'दीवाने कुल' था—द्र० शुक० १ १०३।

(२) विषय परगना। क्षेमेन्द्र के अनुसार काश्मीर सप्तविंश परगने थे। लोक० पृष्ठ ६०। कुल परगनों की सख्या ४२ है। मराज में २४ तथा कमराज में १८ परगने थे। द्र० ४ ५६७।

अबुल फजल ने परगनों की सख्या ३० दिया है। सिखकाल में परगनों की सख्या मूरक्राफ्ट की तालिका के अनुसार ३२ है। वॉन हुगेल ने सख्या ३४ दिया है। वाइन ने ३१ तथा बेट्स गजेटियर में ४० दी गयी है। परगना की सीमा तथा सख्या कालानुसार बढती-घटती रही है। भारत में ही उत्तर प्रदेश के जिलो की सख्या गत तीस वर्षों में चार से अधिक बढ गयी है।

काष्ठागता लसत्पक्षास्तीक्ष्णाश्च सफलीकृताः ।
यन्त्रेषवश्च योधाश्चाघटंस्तेषु दिने दिने ॥ २०३ ॥

२०३. उनमें काष्ठगत[1] पक्ष युक्त तीक्ष्ण एवं फल युक्त यन्त्र वाण[2] तथा योधा प्रतिदिन एकत्रित किये जाने लगे।

क्षुभ्यद्वैतस्ततीरद्वयजयघटनारब्धयन्त्रेषुयुध्य-
त्क्रुध्यद्वीरेक्षणाप्तप्रचुरपुरजनस्वान्तसंक्रान्तशौर्यम् ।
धावत्संनाहिताश्वोत्कटसुभटघटाघातजाताग्निवर्षं
चक्रुः क्रोधात् पुनस्ते प्रवरपुरवरे युद्धमत्युद्धतं तत् ॥ २०४ ॥

२०४. वितस्ता के दोनों तट पर जै-जैकार एवं यन्त्र वाण से युद्ध करते क्रोधपूर्ण वीरों को देखने से समस्त पुरवासी, जहाँ स्वयं अत्यधिक शौर्य का अनुभव कर रहे थे, दौड़ते वर्म (सन्नाह) युक्त अश्वों[1] ने उत्कट सुभट समूहों के आघात से जहाँ अग्निवर्षा-सी हो रही थी, इस प्रकार क्रोध से उन लोगों ने प्रवरपुर[2] में अत्युद्धत युद्ध किया।

यामदुन्दुभिवाद्यानां ध्वनिः सर्वैस्तदा श्रुतः ।
पूर्वं राजगृहे पश्चात् सैदकाश्मीरसैन्ययोः ॥ २०५ ॥

२०५. उस समय सब लोगों ने याम[1] दुन्दुभी[2] वाद्यों की ध्वनि पहले, राजगृह में तत् पश्चात् सैय्यिदों एवं काश्मीरियों की सेना में सुना।

---

पाद-टिप्पणी :

२०३. (१) उक्त श्लोक में श्लिष्ट शब्दों की बहुलता है। श्लोक में काष्ठगत—काष्ठ अथवा दिशा से, पक्ष—वाण में लगा पक्ष अथवा पक्ष, तीक्ष्ण—तीक्ष्ण वाण अथवा तीक्ष्ण रोग, सेनानी अथवा वधिक, फलयुक्त—फलयुक्त वाण अथवा सैनिक सफल थे।

(२) यन्त्र वाण : द्र० : जैन० : ४ : २०६।

पाद-टिप्पणी :

१०४. (१) संन्नाहित अश्व : मध्ययुग में अश्वों को भी वर्मयुक्त करते थे। अश्वों पर बैठा वर्मयुक्त योद्धा की रक्षा उसका कठोर लौह वर्म करता था, उसी प्रकार अश्वों को अस्त्र-शस्त्रघात से बचाने के लिए अश्वों का शरीर लौह कवच से ढँक दिया जाता था। यूरोप में इस प्रकार के वर्म एवं कवचों का बहुत विकास हुआ था। काश्मीर में यह प्रथा भारत तथा तुर्किस्तान से पहुँची थी।

(२) प्रवरपुर : श्रीनगर। शाहजहाँ के समय में भी प्रवरपुर का नाम श्रीनगर प्रचलित था। लोक० : पृष्ठ : ३५।

पाद-टिप्पणी :

२०५. (१) याम = पहर : तीन घण्टे का समय, यामिनी = रात्रि। पहर का समय ज्ञात कराने के लिए बजाया जानेवाला घण्टा, दुन्दुभी आदि। याम का अर्थ घोष किंवा आवाज से है। यहाँ अर्थ दुन्दुभी की आवाज से है। दिन का आठवाँ भाग याम होता है। पश्चिमाद्यामिनी यामात्प्रसाद मिव चेतना—रघु० : १७ : १।

(२) दुन्दुभी : द्र० : ३ : ३९७।

अवतीर्णा जलार्थं याः पारावारपुराङ्गनाः ।
यन्त्रेषुभिर्विदीर्णाङ्गा बह्व्यस्तत्र विपेदिरे ॥ २०६ ॥

२०६. दोनो तट की जो पुरस्त्रियाँ जल लेने के लिये गयो थी, यन्त्र बाणो[1] से उनके अग विदीर्ण हो गये और बहुत वही पर मर गयी ।

स नासीद् दिवसो यत्र द्वित्रा वीराः पतत्रिभिः ।
विद्‌धा मुमूर्षवस्तीरान्न नीताः स्वगृहान् प्रति ॥ २०७ ॥

२०७ ऐसा कोई दिन नही था, दो-तीन बाणो से विद्ध एव मुमूर्ष दो-तीन वीर, तट से अपने घर न लाये गये हो ।

वह्निदानस्फुरद्योधसंहाराद्यैरुपद्रवैः ।
एकमेकं दिनं तत्रानेहस्याभूद् भयावहम् ॥ २०८ ॥

२०८ वहाँ पर, उस समय आग लगने और योद्धाओ के सहार आदि उपद्रव के कारण, एक-एक दिन भयावह हो गया था ।

---

पाद-टिप्पणी

२०६ ( १ ) यन्त्रबाण : यन्त्रचालित शर । बड़ा धनुष तथा यन्त्रबाण दो प्रकार के धनुषों का प्रयोग होता था । उन्हें अग्रेजी में 'लोग वो' तथा 'शॉर्ट वो' कहते है । धनुष साधारण धनुषों के समान होता है । इसे 'लोंग वो' कहते है । एक छोटा यन्त्र तुल्य होता था, जिसमें बाण रखकर मारा जाता था। इसका आकार धनुष से बहुत छोटा होता था । इसे हाथ में लेकर चलते थे। उस पर बाण रखकर चलाया जाता था । अग्रेजी में इसको 'शॉर्ट वो' कहते थे ।

एक बाण और होता था। उसे फलदार धनुष या गोफन कहते थे । उसमें बाण या पत्थर रखकर फेंकते थे । पश्चिम में तथा पश्चिम के प्रभाव से मुसलिम काल भारत में तोप के स्थान पर धनुष होता था । उस पर जलती लुकारी या लुक लगाकर बाण की तरह फेंकते थे । वह किले का प्राकार पार कर भीतर गिरता या अथवा शत्रु के शिविर में गिर कर आग लगा देता था । मैंने अपनी बाल्यावस्था में इस प्रकार के दोनो धनुष देखे थे । विजयदशमी के दिन काशिराज की सवारी निकलती थी। उसमें आधुनिक सैनिक साज-सज्जा के साथ प्राचीन हथियार भी निकलते थे । ऊँट पर से चलनेवाली छोटी तोपें भी ऊँट पर लगी रहती थी । इस समय मैं उनका नाम भूल गया हूँ । मैं समझता हूँ कि श्रीवर वर्णित यन्त्रबाण रहा होगा ।

श्रीवर ने वज्रबाण ( जैन० १ १ ७२ ) का उल्लेख किया है । वहाँ पर बाण, गोली तथा गोले के लिए प्रयोग किया गया है । यन्त्रभाण्ड शब्द तोप के लिए प्रयोग किया गया है ( जैन० : १ १ ७७ ) ।

जिस समय का यह वर्णन है, उसके पूर्व काश्मीर में तोप अग्नि शस्त्रों का प्रवेश हो चुका था । यन्त्रबाण यदि शॉर्ट वो के लिए नही प्रयोग किया गया है, तो इसका तात्पर्य यहाँ बन्दूक से है ।

पाद-टिप्पणी .

२०७. 'विद्वा' पाठ—बम्बई ।

अश्लीलालापिनोऽन्योन्यं रहस्योद्घाटनोद्यताः ।
तटद्वये भटाः क्रूरा अवाच्यमपि तेऽब्रुवन् ॥ २०९ ॥

२०९. दोनों तट पर, अश्लील[1] भाषी, परस्पर के रहस्य के उद्घाटन के लिये उद्यत, क्रूर वे भट, अवाच्य[2] का प्रयोग करते थे।

राजसैंदद्विजद्रोहरोहत्पापादिवादिनः ।
मिथो गालीं वदन्तस्ते किं नावाच्यं बभाषिरे ॥ २१० ॥

२१०. राजा, सैय्यिद एवं द्विजों के द्रोह[1] से उत्पन्न पाप आदि को कहनेवाले परस्पर गाली देते हुए, कौन-सा अपशब्द नहीं कहते थे ?

प्राप्ता दौलतसीहाद्याः काष्टवाटादिदेशतः ।
शिष्टाः सल्हणहंसाश्च शाहिभङ्गनृपात्मजाः ॥ २११ ॥

२११. काष्टवाट[1] देश से आगत दौलत सीह[2] आदि शिष्ट सल्हण हंस एवं शाहि[3] भंग नृपति के पुत्र—

पाद-टिप्पणी :

२०९. ( १ ) अश्लील : असंस्कृत = अशोभनीय = गँवारु = देहकानी = लज्जा का उल्लंघन, अमंगल तथा जुगुप्सा की भावना उत्पन्न करनेवाले गन्दे शब्दों से तात्पर्य है।

—अश्लील प्रायान् कलकलान्—दश० : ४३ ।

( २ ) अवाच्य : जिन शब्दों का सम्बोधन या प्रयोग निन्दित, अकथनीय तथा बोलना अनुचित माना जाता है—(विवक्षुमनर्हस्य वचसः) अनक्षरमवाच्यं स्यात् । न कहने योग्य अनक्षर तथा अवाच्य है—अवाच्यो दीक्षितो नाम्ना यवीनामपि योभवेत्—मनु० : २ : १२८; अवाच्य वानंश्च बहून्वदिष्यन्ति तवाहिताः—भग० : २ : ३६, अवाच्यं वदतो जिह्वा कथं न पतिता तव—अयो० : ३६ ।

पाद-टिप्पणी :

२१०. ( १ ) द्रोह : राजा, सैय्यिद एवं द्विजों तीनों मुख्य लोगों के कारण कासमीर मण्डल त्रस्त हो गया था, जिन पर काश्मीर सुरक्षा, व्यवस्था तथा शान्ति स्थापना का उत्तरदायित्व था । कफ, पित्त, वायु तीनों प्रकृतियों के बिगड़ने से जिस प्रकार शरीर में त्रिदोष उत्पन्न हो जाता है, उसी प्रकार देश में राजा, सैय्यिद एवं द्विजों के द्रोह के कारण राज्य किंवा काश्मीर में त्रिदोष उत्पन्न हो गया था।

पाद-टिप्पणी :

२११. ( १ ) काष्टवाट : किश्तवार । द्र० : पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : ४६ तथा जोन० : श्लोक ७६ तथा ३१३ । एक काष्टवाट का उल्लेख कल्हण ने किया है ( रा० : ६ : २०२; ८ : ३०० ) । यह काष्टवाट काश्मीर मण्डल के अन्तर्गत कुहिन परगना में पश्चिम कहीं था । दोनों काष्टवाटों में अन्तर है ।

( २ ) दौलत सीह : इस नाम का पुनः उल्लेख नहीं मिलता ।

(३) शाहिभंग : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : ३ : ११४; ४ . २७०, २७२, ५५९ ।

पञ्चगह्वरजाः केचित् सिन्धुपत्यन्वयोदिताः ।
खशा म्लेच्छास्तथान्येऽपि रुरुधुः सर्वतो दिशः ॥ २१२ ॥

२१२ कुछ सिन्धुपति-वंशीय, पंचगह्वर[1] के लोग तथा खश[2], म्लेच्छ[3] एवं अन्य लोग भी सब दिशाओं से घेर लिये।

काश्मीरिकाः स्वभेदेन बलप्राप्त्या तथापरे ।
ययुस्त्रासविसूत्रत्वमज्ञातान्योन्यनिश्चयाः ॥ २१३ ॥

२१३ अपने भेद के कारण काश्मीरी लोग तथा सेना के प्राप्त होने से अन्य लोग एक-दूसरे का निश्चय जानने के कारण असंगठित हो गये।

अत्रान्तरे नभस्युल्का सायं दीप्तोदभूत् स्फुटम् ।
उदीच्या दक्षिणां याता प्रज्वलद्बहुमस्तका ॥ २१४ ॥

२१४ इसी बीच सायंकाल आकाश में स्पष्ट रूप मे एक दीप्त उल्का[1] उत्पन्न हुई, जिसमे बहुत से चमकते शिर (ज्वालापुंज) थे, जो उत्तर से दक्षिण[2] को जा रही थी।

---

पाद-टिप्पणी :

२१२ (१) पंचगह्वर द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० : ३ : १०१, जोन० श्लोक १३२।

(२) खश द्रष्टव्य परिशिष्ट नं' खश राज० खण्ड एक लेखक तथा पाद टिप्पणी जोन० श्लोक ५२५, शुक १ : ६२, जैन० ४ : ११३, ४९४, ६५०।

(३) म्लेच्छ द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० १ : ५ : ५९, जोन० श्लोक ५६१, राज० १ : १०७।

पाद-टिप्पणी

२१४ (१) उल्का रामायण में उल्कापात अशुभ माना गया है (अरण्य० : २३ : १५)। ऋग्वेद (४ : ४ : २७, १० : ६८ : ४), अथर्व वेद (१९ : ९ : ९), महाभारत, चीन, यूरोप, भारत प्राचीन साहित्यों म उल्का की चर्चा मिलती है। उनकी उपमा कवियो ने दी है। भाषा में इनको तारा टूटना, लूक टूटना आदि कहते हैं। वे अधिकतया रात्रि के पिछले पहर में आकाश में एक दिशा से दूसरी दिशा की ओर प्रज्वलित शिखा समान आती लोप हो जाती है। वे जैसे-जैसे अधोगति को अग्रसर होती है, उनका प्रकाश कम होता जाता है। उल्का का वेग प्रति सेकेण्ड दश माल से लेकर चालीस मील तक होता है। उल्काओं का एक बड़ा समूह है, जो सूर्य के चारों ओर केतुओं की कक्षा में घूमता है। पृथ्वी उस उल्का क्षेत्र से होकर प्रत्येक तैंतीसवें वर्ष कन्या राशि पर अर्थात् नवम्बर मास की चौदहवी तिथि के लगभग निकलती है। उल्कापात जनवरी से जुलाई की अपेक्षा जुलाई से नवम्बर तक अधिक होता है। उल्का पृथ्वी से चालीस मील से एक शत मील की ऊँचाई से जाते दृष्टिगोचर होते हैं और पृथ्वी पर गिर पड़ती हैं। फलित ज्योतिष के अनुसार मंगला आदि आठ दशाओं में से एक है। यह दशा छह वर्षों तक रहती है।

उल्काएँ एक बिन्दु से चलती हैं। उन्हें उल्कामूल कहते हैं। वे एक बिन्दु से चलती अनेक भागों में अग्नि गोले के रूप में विभक्त होकर, बौछार रूप गिरने लगती है। उन्हें उल्का श्रेणी कहा जाता है। अग्नि गोले, चन्द्रमा के समान बड़ा दिखायी पड़ते हैं। कुछ देखते-देखते फूट जाते हैं। उल्काओं का

दृष्ट्वा तामद्भुतां सर्वे सैन्ययोरुभयोरपि ।
संग्रामाशङ्कितानिष्टा बभूवुर्भयविह्वलाः ॥ २१५ ॥

२१५. दोनों सेनाओं में सब लोग इस अद्भुत दृश्य को देखकर, संग्राम में होनेवाले अनिष्ट की आशंका पर, भय विह्वल हो गये ।

अत्रान्तरे सैदलेखैः प्रेरितो देशलिप्सया ।
तत्तारखानो व्यसृजत् तौरुष्कं पुष्कलं बलम् ॥ २१६ ॥

२१६. इसी बीच सैय्यिद के पत्रों से प्रेरित होकर, देशप्राप्ति की लालच से, तातार खाँ[1] ने तुरुष्कों की बहुत बड़ी सेना भेजा ।

---

जो अंश वायुमंडल में जलने से बचकर पृथ्वी पर आता है उसे उल्कापिण्ड कहा जाता है । कुछ उल्कापिण्ड अधिकांशतः लौह, निकल या मिश्रधातु के होते हैं, उन्हें धात्विक तथा कुछ सिलिकेट खनिजों से बने पत्थर तुल्य होते हैं, उन्हें आश्मिक कहा जाता है । कुछ में दोनों पदार्थ होने से धात्वाश्मिक उल्कापिण्ड कहते हैं ।

श्रीवर के वर्णन से प्रकट होता है कि पहले एक प्रज्वलित उल्का प्रकट हुई । उसमें बहुत-से शिर किंवा ज्वालापुंज थे । रात्रि में उल्कापात होते हैं । कभी-कभी ध्वनि होती है । ध्वनि के साथ विस्फोट होता है और एक पिण्ड से कितने ही छोटे पिण्ड हो जाते हैं । वे सीधी लकीर बनाते एक दिशा से दूसरी दिशा की ओर जाते हैं । श्रीवर का वर्णन वास्तविकता के अत्यन्त समीप एवं सजीव है ( द्रष्टव्य : ४ : ३५९ ) ।

उल्का पिण्ड विशेष आकार के नही होते । आँवा या कंकड़ के समान ऊबड़-खाबड़ होते है । उल्का का रंग काला होता है । उस पर पालिश की तरह चमक रहती है । उल्का धातुमय एवं पाषाणमय होते है । धातुमय में लौह धातु की बहुलता रहती है । निकल भी मिल जाता है । कभी-कभी किंचित ताम्र एवं रांगा मिला भी मिलता है । पाषाण पिण्ड में भी प्रायः लौहकण मिलते है । धातु उल्कापात कम तथा पाषाण विशेष होता है । उल्का का वेग प्रति सेकण्ड दश मील से चालीस मील होता है ।

( २ ) दक्षिण : काल की दिशा, मृत्यु की दिशा, यम की दिशा, दक्षिण दिशा है । यह अशुभ एवं आपत्ति की दिशा मानी गयी है । दक्षिण दिशा में ही श्मशान स्थान रखा जाता है । मृत्यु पश्चात् दक्षिण दिशा की ओर पैर रख कर, आदमी सुलाया जाता है । कब्र में दक्षिण दिशा ही की ओर पैर कर शव दफन किया जाता है । द्र० : पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : १ : १६५ ।

पाद-टिप्पणी :

२१६. ( १ ) तातार खाँ : फिरिश्ता लिखता है—'अब सैय्यिदों ने एक दूत तातार खां पंजाब के सूबेदार के पास सहायता माँगने के लिये भेजा । तातार खाँ ने एक सेना सहायता के लिये काश्मीर की राजधानी की तरफ भेज दिया (४८३) ।'

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'तदुपरान्त सैय्यिदों ने पंजाब के हाकिम तातार खां को पत्र लिखकर, उसे सहायतार्थ बुलवाया । उसने अत्यधिक सेना उनकी सहायतार्थ भेजी (४५३-६८५) ।'

म्युनिख पाण्डुलिपि में भी यही बात लिखी है कि 'सैय्यिदों ने दिल्ली के सुल्तान इब्राहीम लोदी के पंजाब के सूबेदार तातार खां से सहायता की याचना की ( ८० ए० ) ।'

द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० : ३ : ३१८-३१९ तथा ४ : ३२ ।

प्राप्ताः शस्त्रगलस्थानं तुरुष्कास्ते सुदुष्कराः ।
हता भोडनराजाद्यैः प्रालेयैः शलभा इव ॥ २१७ ॥

२१७ वे सुदुष्करकारी तुरुष्क, शस्त्रगल[1] स्थान पहुँचने पर, भोडन राजा[2] आदि लोगो द्वारा प्रालेयों[3] से शलभो के समान मार डाले गये ।[4]

कालीधारापदेशेन काली भगवती क्षुधा ।
व्यधात् तद्भक्षणं नूनं सतीदेशहितेच्छया ॥ २१८ ॥

२१८ निश्चय ही काली धारा[1] के व्याज से, भगवती काली, सती देश[2] के हित इच्छा से, उनका भक्षण कर लिया ।

आदामखानजस्तस्मै विसृज्य इति चोदितः ।
निवर्त्य तं तुरुष्कः स स्वान्तिके समरक्षत ॥ २१९ ॥

२१९ यह (राज सन्देश) कहकर आदम खाँ का पुत्र उसके पास भेजा गया, किन्तु उस तुरुष्क ने उसे लौटाकर, अपने पास रख लिया ।

---

**पाद-टिप्पणी**

२१७. ( १ ) शस्त्रगल : फिरिश्ता स्थान का नाम भीमवर देता है ( ४८३ ) । तवक्काते अकबरी में नाम ( भनवर ) स्थान का नाम दिया गया है ( ४५३-६८५ ) । तवक्काते अकबरी की एक पाण्डुलिपि में 'वहज' तथा दूसरी में 'वहटह' दिया गया है । लीथो संस्करण में 'बहतर' नाम दिया है । फिरिश्ता के लीथो संस्करण में 'वनीर' नाम दिया गया है । कर्नल ब्रिग्गस ने 'भीमवुर' तथा रोजर्स ने 'भीमवर' लिखा है ।

( २ ) भोडन राजा : फिरिश्ता नाम हंस देता है । भीमवर का राजा था । (४८३) तवक्काते अकबरी में भी नाम 'हनश' दिया गया है ( ४५३-६८५ ) ।

तवक्काते अकबरी की पाण्डुलिपि में 'पेश' तथा लीथो संस्करण में 'हन्स' दिया गया है । फिरिश्ता भी 'हन्स' देता है । कर्नल ब्रिग्गस ने 'होन्स' नाम दिया है ( ४ : ४८३ ) ।

(३) प्रालेय : हिम = कुहरा = ओस = तुषार । जिस प्रकार तुषारपात किंवा हिमपात द्वारा शलभ अर्थात् फतिंगे मर जाते हैं, उसी प्रकार राजा द्वारा मारे जाकर ठण्डे पड गये ( द्र० : २ : ४ : ४८ ) ।

( ४ ) फिरिश्ता लिखता है—'तातार खा की फौज के भीमवर पहुँचने पर, उस स्थान के राजा ने उसे पूर्णतया छिन्न-भिन्न कर दिया ( ४८३ ) ।'

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'जब उसकी सेना भनवर ( भीमवर ) के समीप पहुँच गयी तो उस स्थान के राजा हनश ने उन लोगो से युद्ध करके, बहुत-से लोगों की हत्या कर दी ( ४५३-६८५ ) ।'

म्युनिख पाण्डुलिपि में भी उल्लेख है—'तातार खा ने सहायता के लिये कुछ सेना भेज दिया । किन्तु जब वह भीमवर के समीप पहुँची तो वहाँ के राजा ने उनकी बाढ रोक कर, पीछे लौटने के लिये विवश किया ( ८० ए० ) ।'

**पाद-टिप्पणी :**

२१८. ( १ ) काली धारा : किलदार स्थान है । द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी शुक० : १ : १३६ तथा जैन० : २ : १४७ ।

( २ ) सती देश : सतीसर = काश्मीर उपत्यका ( द्र० : १ : १ : ८५; ४ : १९ ) ।

तदीयाश्वपदार्थौघप्राप्त्या तद्देशवासिभिः ।
अनन्यसुलभां प्राप्य श्रियं वैश्रवणायितम् ॥ २२० ॥

२२०. उनके अश्व एवं अन्य पदार्थों की प्राप्ति से तद्देशवासी, अनन्य सुलभ सम्पत्ति प्राप्त कर, कुबेरवत् आचरण करने लगे ।

अथ काश्मीरिकाः श्रुत्वा तद्वधं वाद्यवादनम् ।
चक्रुर्येनाभवन् सैदा विच्छायवदनाः श्रुतैः ॥ २२१ ॥

२२१. उनका वध सुनकर, काश्मीरिकों ने वाद्य वादन[1] किया, जिसे श्रवण कर सैय्यिदों के मुख की कान्ति समाप्त हो गयी ।

गतावशिष्टा दुर्निष्ठदुष्टतत्कटकान्तरात् ।
सहस्रद्वितयी तत्र शवानां निहिताभवत् ॥ २२२ ॥

२२२. दुरवस्था में स्थित सेना के मध्य से जाने से शेष बचे दो सहस्र[1] शव वहाँ पर पड़े थे ।

विशुद्धपार्ष्णिसंत्यक्तभयाः प्राप्तबलोद्धताः ।
काश्मीरिका मतं चक्रू रणार्थं हृष्टमानसाः ॥ २२३ ॥

२२३. विश्वस्त पार्ष्णियों[1] के कारण, भयरहित सैन्य प्राप्ति से उद्धत, काश्मीरी प्रसन्न-मन होकर, रण के लिये विचार किये ।

---

पाद-टिप्पणी :

२२१. ( १ ) वाद्य वादन : तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'विद्रोही यह समाचार पाकर बहुत प्रसन्न हुए ( ४९३ ) ।' खुशी से बाजा बजाने लगे ।

पाद-टिप्पणी :

२२२ ( १ ) दो सहस्र : तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'हिन्दू उनसे युद्ध लड़ा और उनके सर्वश्रेष्ठ आदमियों को मार डाला ( ४९३–६८५ ) ।'

पाद-टिप्पणी :

२२३. (१) पार्ष्णि : सैन्यपृष्ठ = प्रतिरक्षक = मित्र राजा जो किसी राजा की सहायता करता है । ( मनु० : ७ : २०७ ) । राज्य के सप्तांग में सातवाँ अंग मित्र का है । शब्द का सामान्य अर्थ है—जो पीछे से पकड़ या आक्रमण कर सके—सैन्यपृष्ठ । अरि की श्रेणियों में अरिमित्र, अरिमित्र-मित्र, पार्ष्णिग्राह एवं पार्ष्णि ग्राहासार हैं । पार्ष्णि वास्तव में शत्रु है । इस प्रकार का शत्रु अभियान के समय अथवा विजिगीषु के आक्रमण काल में विपत्ति उत्पन्न कर देता है । आक्रन्द मित्र वह है जो पार्ष्णिग्राह की सीमा से मिला रहता है । पार्ष्णिग्राह के मित्र को पार्ष्णिग्राहासार कहा जाता है । जिस समय अरि विजिगीषु के सम्मुख रहता है, तो विपरीत दिशा के राज्य का शासक पश्चात होता है ( मिताक्षरा : याज्ञवल्क्य : १ : ३४५: द्रष्टव्य : हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र : ३ : २२१. ( मण्डल थ्योरी : संस्करण : १९४६: हिन्दी अनुवाद : द्वितीय भाग : पृष्ठ : ६६०-६६१, संस्करण १९६५ लखनऊ ) ।

मध्ये ससैन्यास्तिष्ठन्तु मार्गेशाद्याः पुरान्तरे ।
राजानकाद्या मद्राश्च स्थामस्था यान्तु दिग्द्वयम् ॥ २२४ ॥

२२४ मार्गेश आदि सैन्य सहित पुर के मध्य स्थित रहे और स्थाम[1] मे स्थित राजानक आदि एव मद्र लोग दो दिशाओ मे गये ।

एकतश्चेज्जिताः सर्वे नश्यन्त्यल्पबलाः पुनः ।
इत्येकमतनिष्ठास्ते संमन्त्र्य कृतनिश्चयाः ॥ २२५ ॥

२२५ यदि एक तरफ से अल्प बलवाले सब लोग जीत लिये जायेगे, तो नष्ट हो जायेगे,- अत एकमत स्थित, उन लोगो ने मन्त्रणापूर्वक, निश्चय करके,—

स्थामार्थमादिशंल्लोकं स्वप्रदेशादुपर्यधः ।
नावा सिन्धुं प्रतीर्याथ जोनराजानको द्रुतम् ॥ २२६ ॥

२२६ स्थाम के लिये अपने प्रदेश से ऊपर एव नीचे रहने के लिये आदेश दिया । शीघ्र ही जोन राजानक नाव से सिन्धु को पार कर—

स्थामस्थान् पञ्चषान् हत्वा पलायनपरान् व्यधात् ।
वस्त्रवाजितनुत्रादि हत्वा सैदबलान्तरात् ॥ २२७ ॥

२२७ शिविर म स्थित पाँच-छ लोगो का मारकर पलायित कर दिया । सैय्यिद सेना से वस्त्र, अश्व अगरक्षक आदि का हरण कर—

काश्मीरिका व्यभाव्यन्त प्रयाताः प्रतिवासरम् ।
किमन्यत् स्फुटमेवाह्नि येऽवसन् सैदसंनिधौ ॥ २२८ ॥

२२८ काश्मीरी लोग प्रतिदिन जाते देखे गये। अधिक क्या कहा जाय, दिन मे जो लोग स्पष्ट रूप से सैय्यिदो के पास रहते थे—

निर्लज्जास्ते व्यलक्ष्यन्त काश्मीरिकबलान्तरे ।
इतो याति ततश्चैति लोको विगतयन्त्रणः ॥ २२९ ॥

२२९. निर्लज्ज वे लोग काश्मीरी सेना मे दिखायी पडते थे । नियन्त्रण-रहित लोग यहाँ से आते, वहाँ से आते—

---

पाद-टिप्पणी

२२४ ( १ ) स्याम स्थान का अर्थ सेना का शिविर = छावनी = कैम्प = वैरिक होता है ( द्र० ४ - १०७, १३५ ) ।

पाद-टिप्पणी

'इत्येक' पाठ—बम्बई ।

बाले राजनि मन्दाज्ञे कोऽप्यजृम्भत विप्लवः ।
गृहेषु लुण्ठ्यमानेषु डिंबैर्विहितपेटकैः ॥ २३० ॥

२३०. शिथिल आज्ञावाले उस बाल नृपति के समय उपद्रव (विप्लव) हुआ । पिटारी बनानेवाले दुष्ट डिंबों द्वारा घरों के लूटे जाने पर—

निरुद्धमार्गसञ्चारो देशोऽभूद् भयविह्वलः ।
मासद्वये व्यतीतेऽपि पारावाररणोद्यमैः ॥ २३१ ॥

२३१. मार्ग संचार अवरुद्ध हो गया और सम्पूर्ण देश भयविह्वल हो गया । दो मास[1] बीत जाने पर भी, दोनों तट पर होनेवाले रणोद्यमों से,—

जिगीषां नात्यजंस्तत्र सैन्याः कार्श्मीरिका अपि ।
पूर्वमङ्कुरितः सैन्यवधे पल्लवितः क्रमात् ॥ २३२ ॥

२३२. वहाँ पर सैन्यिकों एवं काश्मीरियों ने विजयाभिलाषा नहीं त्यागी । पहले सैन्यिकों का वध होने से अंकुरित और क्रम से पल्लवित[1],—

परस्परं वैरतरुस्तदागाच्छत शाखताम् ।
दक्षिणे राजकोषादि वामे सेनाद्यवेक्ष्य च ॥ २३३ ॥

२३३. वह पारस्परिक वैर वृक्ष उस समय शाखाओंवाला हो गया । दक्षिण भाग में राज-कोषादि तथा वाम भाग में सेना आदि देखकर,—

बलद्वयेऽपि विजयः संदिग्धः प्रत्यभाद् प्रजाम् ।
पुंसां निरुद्धे सञ्चारे नावा नद्यास्तटद्वये ॥ २३४ ॥

२३४. प्रजा को दोनों बलों की विजय में सन्देह हो गया । नदी के दोनों तटों पर, नाव द्वारा पुरुषों का संचार अवरुद्ध किये जाने पर,—

स्त्रिय एव तदाकुर्वन् पारावारगतागतम् ।
पारादेत्य डिंबैर्लुण्ठिते पांथकव्रजे ॥ २३५ ॥

२३५. उस समय स्त्रियाँ ही इस पार उस पार आने-जाने का कार्य करने लगीं । पार से आकर दोनों डिंबों द्वारा पथिक वृन्द के लूटे जाने पर—

---

पादटिप्पणी :

२३०. (१) डिंब : द्रष्टव्य पादटिप्पणी : जैन० : १ : ३ : १९० तथा राज० : १ : ३५३ ।

पादटिप्पणी :

२३१. (१) दो मास : तबकाते अकबरी में उल्लेख है—'दो मास तक बराबर काश्मीरियों तथा सैन्यिकों के बीच संघर्ष होता रहा (४९३–६८९) ।'

पादटिप्पणी :

२३२. (१) पल्लवित : यही उपमा श्रीवर ने पुनः ४ : ३३३ तथा शुक ने १ : १६२ में दिया है ।

पादटिप्पणी :

२३५. 'पारादेत्य' पाठ–बम्बई ।

अधिष्ठानादिदेशेषु मार्गः प्रचलितोऽभवत् ।
पारावारगतान् कांश्चिदन्योन्यच्छलनोद्यतान् ॥ २३६ ॥

२३६ अधिष्ठान आदि देशो मे मार्ग चलने लगा। परस्पर छलने के लिये उद्यत पारावार (नदी) गये कुछ लोगो को—

निरुध्य प्रत्यहं द्वित्रान् क्रोधाच्छूले न्यरोपयन् ।
अवोचन्नेकदा सैदा भटान् काश्मीरमन्त्रिणः ॥ २३७ ॥

२३७ रोक कर प्रतिदिन क्रोध के कारण दो-तीन को शूली पर चढा देते थे। एकबार सैय्यिदो ने काश्मीर के मन्त्री भटो से कहा—

आयान्तु यदि शक्तिर्वो युध्यन्तु पुनरप्यलम् ।
सीमा व दीयतां तावत् प्रतीक्षामो रणं प्रति ॥ २३८ ॥

२३८ 'यदि तुम लोगो मे शक्ति हो तो आओ युद्ध करो अथवा कोई समय की सीमा (अवधि) निर्धारित करो, तब तक हम लोग युद्ध की प्रतीक्षा करेगे।'

नित्यं जनवधे लोका उद्विग्नाः शरवर्षणैः ।
भजतां विभवं सोऽत्र विधिर्यस्मै प्रयच्छति ॥ २३९ ॥

२३९ नित्य बाणो की वर्षा से, लोगो का जन वध होने से, लोग उद्विग्न हो गये, (और विचार किये) यहाँ, वह वैभव का भागी बने, जिसे विधाता दे।

निशम्येति पुरप्रान्ते सीमार्थं वामपार्श्वगैः ।
चिच्छिदुः सन्धितां रज्जुं तूर्णं सैदभटास्तटात् ॥ २४० ॥

२४० नगर के किनारे इस प्रकार सुनकर, शीघ्र सैय्यिद भटो ने तट से ही वाम पार्श्व[1] के लोगो द्वारा सीमा निर्धारण के लिये बाधी गयी रस्सी को काट दिया।

---

पाद-टिप्पणी

२३७ 'निरुध्य' 'द्वित्रान्' पाठ—बम्बई।

पाद टिप्पणी

२३८ 'भटान्' पाठ—बम्बई।

पाद-टिप्पणी

२४० (१) वामपार्श्व श्रीकण्ठ कौल ने वामपार्श्व को नामवाचक शब्द नही माना है। श्रीदत्त (पृष्ठ ३ २९१) ने भी वामपार्श्व का अनुवाद 'बायी ओर के लोग' किया है। परन्तु यह स्थान-वाचक है। क्षेमेन्द्र ने 'वामपार्श्व' का उल्लेख किया है। वहाँ यह नामवाचक शब्द है (पृष्ठ २८)। वामपार्श्व वर्तमान परगना खोवुरपोर है। अबुल फजल, मूरक्राफट, हुगेल, वाइन ने अपने पर्यटनों तथा वेट्स ने गजेटियर में उल्लेख किया है।

**तितीर्षून् वैरिणो ज्ञात्वा सैदाः काष्ठीलतस्ततः ।**
**न्यधुर्हस्सनराजानकादीन् स्थामार्थमाकुलाः ॥ २४१ ॥**

२४१. शत्रुओं का काष्टील[1] से (नदी) पार करने के लिये इच्छुक जानकर, आकुल होकर, सैय्यिदों ने हस्सन राजानक आदि को स्थाम के लिये रख दिया।

**छिन्नेषु सेतुबन्धेषु सैदैर्नौपुरकादिषु ।**
**नगरीं दुर्गमां दुर्गतुल्यां चक्रुर्द्विषद्भयात् ॥ २४२ ॥**

२४२. नौपुर[1] आदि से सैय्यिदों द्वारा सेतुबन्ध काट दिये जाने पर, शत्रुभय से दुर्ग के सदृश, नगरी को दुर्गम बना दिये।

**अथ काश्मीरिकाः प्रोचुः सैदांस्तीरान्तिकस्थितान् ।**
**नौसेतुबन्धरज्जुर्यद्युष्मभिश्छिन्नो भयेन नः ॥ २४३ ॥**

२४३. तट पर स्थित सैय्यिदों से काश्मीरियों ने कहा—'नाव सेतुबन्ध रज्जु (डोरी) को हम लोगों के भय से (तुम लोगों ने) काट दिया है।

**पुरमात्रावशिष्टत्वादुत्तिष्ठध्वं कियच्चिरम् ।**
**पर्याप्तं भुज्यते धान्यं किं कुरुध्वं पुनः पुरे ॥ २४४ ॥**

२४४. 'पुर मात्र अवशेष रहने के कारण कितने अधिक दिनों तक ठहर सकते हो ? पर्याप्त धान्य खाया जाता है, तो पुनः नगर में क्या करेगा ?'

**श्रुत्वेति सैदास्तांस्तारमूचुरित्थं स्वसेवकैः ।**
**अन्नाभावाद् बुभुक्षार्त्या न चलामो भयादितः ॥ २४५ ॥**

२४५. यह सुनकर सैय्यिदों ने अपने सेवकों द्वारा तार (उच्च) स्वर में इस प्रकार कहे—'अन्न की कमी से, भूख की पीड़ा से, अथवा भय से, यहाँ से, नहीं जायँगे—

---

पाद-टिप्पणी :

'तितीर्षून' पाठ–बम्बई।

२४१. (१) काष्टील : वर्तमान श्रीनगर स्थित कथूल है। कुतकुल तथा वितस्ता के वामतटीय भाग का मध्यवर्ती स्थान शेरगढ़ी राजप्रासाद के अधोभाग से हवा कदल अर्थात द्वितीय पुल तक है। विल्हण ने विक्रमांकदेवचरित में (१८ : २५) काष्ठील का उल्लेख किया है। विल्हण के अनुसार इस क्षेत्र में ब्राह्मण रहते थे। यहाँ पर यशस्कर ने अग्रहार की स्थापना किया था (रा० : ६ : ८९)। क्षेमेन्द्र ने लोकप्रकाश में 'कष्ठिल' नाम दिया है (पृ० २४–२५)।

गर्ज द्वातायन विततपः शास्त्र गोष्ठी वरिष्ठै
स्ताः काष्ठिलद्विज वसतयो यत्र नेत्रोत्सवाय ।
यासुत्रासं विदधति कलेर्दर्शनादेव विप्राः
सायं प्रातः प्रहुतहुत भुग्धूमधूम्रैः शिरोभिः
(१८ : २५)।

पाद-टिप्पणी :

२४२ (१) नौपुर : महासरित अर्थात मर नहर अथवा मारी नदी पर, जो पुल उस समय बना था, उसका नाम नौपुर सेतु था। द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : रा० : २ : ४ टिप्पणी संख्या २। श्रीवर ने इसका उल्लेख जैन० : ४ : १२१ में किया है।

पाद-टिप्पणी :

२४५. 'वुमुक्षार्त्या' पाठ–बम्बई।

का जुगुप्सा तुरुष्केषु सर्वमांसभुजो व॒यम् ।
यावत् पुंपशुगोमांसपर्याप्तिस्तावदास्यते ।। २४६ ।।

२४६ 'तुरुष्को को किस वस्तु की घृणा है ? हम लोग सर्वमांसभोजी है। जब तक पुरुष, पशु गोमाम पर्याप्त है, तब तक रहेगे—

पुरश्चेद् गम्यतेऽस्मान् कः शक्तो रोद्धुं त्वदन्तरात् ।
श्रुत्वेत्युत्पुलकास्तीरे ज्यल्लालमल्लिकादयः ।। २४७ ।।

२४७ 'यदि हम लोग सम्मुख जाय तो (हम लोगो को) तुम लोगो मे कौन रोकने मे समर्थ है ?'—यह सुनकर, तट पर जल्लाल मलिक आदि पुलकित हो उठे।

एकत्र मिलिताः सर्वे चक्रुः संमन्त्र्य निश्चयम् ।
सैन्यं स्थामविभागेन विभज्य पथिभिस्त्रिभिः ।। २४८ ।।

२४८ और सब लोग एक स्थान पर मिलकर, मन्त्रणा कर, निश्चय किये 'सेना को स्थाम विभाग द्वारा विभक्त कर तीन मार्ग[1] से—

उत्तीर्य यामः शीर्यन्ति सैदाः कटकभेदतः ।
अन्यथैकत्र सन्नद्धा दुर्जेयाः सैदपक्षगाः ।। २४९ ।।

२४९. (नदी) पार करके, हमलोग चले'—सैन्य-भेद से सैय्यिद नष्ट हो जायेंगे, अन्यथा एकत्र सन्नद्ध सैय्यिद पक्ष के लोग दुर्जेय होगे—

एकतश्चेज्जिताः सर्वान् जेष्यामोऽल्पबलानमून् ।
अस्माकं प्रबल सर्वे न विलम्बोऽधुनोचितः ।। २५० ।।

२५० 'एक ओर से यदि जीत लिये जायेंगे, तो अल्प बलवाले, उन सबो को जीत लेंगे। हम लोग सब प्रबल है। अब विलम्ब करना उचित नही है।'

श्रुत्वेति मद्रसंयुक्ता जोनराजानकादयः ।
मृत्युर्वा नो जयो वेति युद्धसन्नद्धतां दधुः ।। २५१ ।।

२५१ यह सुनकर, मद्र संयुक्त जोन राजानक आदि लोग—'हम लोगो की मृत्यु हो जाय (किन्तु) विजय हो'—इस प्रकार (निश्चय के साथ) युद्ध मे सन्नद्ध हो गये।

---

पाद-टिप्पणी

२४७ 'पुर' पाठ–बम्बई।

पाद-टिप्पणी

२४८ (१) तीन मार्ग तबकाते अकबरी में उल्लेख है—'अन्त में काश्मीरियों ने सेना का तीन भागो में विभाजित करके नदी पार कर लिया। (५५३ = ६८५)।'

फिरिश्ता लिखता है—'काश्मीरियों ने तीन स्थानों से वेहत नदी को नाव के पुलो से तीन स्थानों से पार कर लिया (४८३-४८४)।'

अथैकं मतसाश्रित्य स्थामस्थाः सैन्यनायकाः ।
पुराणतक्षकस्थानत् तीर्त्वा पर्वतमासदन् ॥ २५२ ॥

२५२. एक का मत मानकर, स्थामस्थ सैन्य नायक पुराण तक्षक[1] स्थान से नदी पार कर, पर्वत पर पहुँचे ।

प्रौलभट्टादयो हस्तवालिकाख्यप्रदेशतः ।
नौभिस्तीर्णा धृतोत्साहाः सोत्सेकान् स्वभटान् व्यधुः ॥ २५३ ॥

२५३. प्रौल्ल भट्ट[1] आदि उत्साही लोग हस्त वालिका[2] प्रदेश से नौका द्वारा पार कर, अपने भटों को गर्व युक्त किये ।

दृष्ट्वा धैर्यं द्विजस्यापि रणाग्रे सरतः क्षणात् ।
गक्कादयो भटाः सर्वे शशंसुर्वीरमानिनः ॥ २५४ ॥

२५४. रण समक्ष चलते द्विज का धैर्य देखकर, गक्क आदि वीरों को मान देनेवाले सब भटों ने प्रशंसा की ।

अन्योन्यप्रहृतिर्माभूदिति काश्मीरिका भटाः ।
पत्रशाखा न्यधुर्मूर्ध्नि हर्तुं निजपरभ्रमम् ॥ २५५ ॥

२५५. परस्पर प्रहार न हो जाय, इसलिये काश्मीरी लोगों ने अपना और पराया भ्रम दूर करने के लिये, शिर पर पत्र शाखा रख लिये ।

---

पाद-टिप्पणी :

२५२. ( १ ) पुराण तक्षक स्थान : क्षेमेन्द्र के लोकप्रकाश में इसका उल्लेख आता है ।

अत्र प्रतिभूः; पुराणतक्षकेयडामरामुकः—पृ० १९ ।

विल्हण विक्रमांकदेवचरित में तक्षक स्थान का उल्लेख करता है—

तस्मादस्ति प्रवरपुरतः सार्घ्यगव्यूति मात्रीं
भूमिं त्यक्त्वा जयवनमिति स्थानमुत्तुङ्ग चैत्यम् ।
कुण्डं यस्मिन्नमलसलिलं तक्षकस्याहिभर्तु
वर्म ध्वंसोद्यत कलिशिरश्छेदचक्रत्वमेति ॥
१८ : ७० ।

[ प्रवरपुर से तीन कोस की दूरी पर जयवन नाम का ऊँचा चैत्यस्थान है, जहाँ सर्पराज तक्षक का जलपूर्ण वह कुण्ड, धर्म का नाश करने में तत्पर, कलि के मस्तक का छेद करने के लिए, चक्र का काम करता था । ]

एक मत से यह स्थान श्रीनगर में वितस्ता तट पर कहीं था ।

पाद-टिप्पणी :

२५३. ( १ ) प्रौल्लभट्ट : केवल यहीं उल्लेख मिलता है ।

( २ ) हस्त वालिका : इस समय इसका नाम अस्त्वोल है । श्रीनगर का एक भाग है ।

पाद-टिप्पणी :

२५४. ( १ ) गक्क : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० : २ : १६२; ४ : ५५५ ।

सैफडारादिवीरेषु शक्तयः कारगा बभुः ।
निर्गतास्तान् रिपून् हन्तुं मूर्तिमत्य इवान्तरात् ॥ २५६ ॥

२५६ सैफडार ( डामर ) आदि वीरो के हाथ मे शक्तियाँ शोभित हो रही थी, और उनसे निकल कर, मानो मूर्तिमती-सी होकर, उन शत्रुओ का विनाश करने के लिये, उनसे निकल रही है।

तानुत्तीर्णान् समाकर्ण्य सैदाश्चकितमानसाः ।
हाशिमं व्यसृजस्तूर्णं प्राग्जयोद्धतमानसम् ॥ २५७ ॥

२५७ उन लोगो को नदी पार किया सुनकर, सैय्यिद चकित हो गये और शीघ्र ही पूर्व विजय से उद्धत मनवाले हाशिम को भेजे।

सम्प्राप्तोऽभिवनायुक्तमठं तीराध्वना व्रजन् ।
गिरिशृङ्गगतैर्दृष्टस्तैः शिलाभिरवार्यत ॥ २५८ ॥

२५८ तटवर्ती मार्ग से जाते हुए, आयुक्त मठ[1] पहुँचने पर, उसे पर्वत[2] शृंग पर स्थित, उन लोगो ने पत्थरो से रोका।

तच्छिलावर्षणत्रस्तस्तुरङ्गात् पतितः क्षितौ ।
पदातिः स चलन् कृच्छान्निस्तीर्णो रणसङ्कटात् ॥ २५९ ॥

२५९ उस शिला वर्षण से त्रस्त, वह तुरग ( अश्व ) से पृथ्वी पर गिर पडा और पैदल चल कर, बडे कष्ट से रण सकट पार किया।

तदीय तुरगं बद्धखड्गं संनाहभूषितम् ।
काश्मीरिकाः करगत मूर्तं जयमिवासदन् ॥ २६० ॥

२६० वर्म भूषित, खग युक्त, उसके तुरग को काश्मीरियो ने मूर्तमान विजय सदृश, प्राप्त किया।

---

पाद-टिप्पणी

२५७ (१) हाशिम अरबी नाम है। हाशिम हजरत मुहम्मद साहब को पूर्वपुरुष थे।

पाद-टिप्पणी

'आयुक्त' पाठ—बम्बई।

२५८ (१) आयुक्त मठ श्रीवर ने अहमद आयुक्त द्वारा मठ निर्माण का वर्णन किया है (जैन० : ३ : ३७)। मठ का नाम नही दिया गया है। आयुक्त ने इस मठ का निर्माण किया था अतएव श्रीवर के समय ही वह आयुक्त मठ नाम से प्रसिद्ध हो गया था।

आज कल उत्तर प्रदेश में आयुक्त डिवीजन अर्थात् कमिश्नरी के कमिश्नर को कहते हैं।

( २ ) पर्वत : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'नदी पार कर पर्वतीय पडोस के स्थानों पर अधिकार कर लिया ( ४५३ = ६८५ )।'

पाद-टिप्पणी

२६० ( १ ) वर्म संन्नाह = जिरहबख्तर : इस श्लोक से प्रकट होता है कि यूरोप के समान काश्मीर के युद्धक अश्व भी मनुष्यों के समान वर्मयुक्त होते थे। यूरोप के वीरयुग में अश्वारोही तथा अश्व दोनों ही लोहवर्म से ढक

तं पराभूतमालोक्य तद् युद्धार्थं भटान्वितान् ।
सैदाः पिरुजखानादीन् रात्रावेव व्यसर्जयन् ॥ २६१ ॥

२६१. उसे पराभूत देखकर, उनसे युद्ध करने के लिये, सैय्यिदों ने भटों सहित, पिरूज खांन आदि को रात्रि में भेज दिया ।

दुग्धाश्रमागता मेयाभाकेराद्याश्च तत्क्षणात् ।
वर्षौघा इव गर्जन्तः प्रापुः पूपामठान्तिकम् ॥ २६२ ॥

२६२. उसी समय, दुग्धाश्रम[1] पर आये, मियां बाकर आदि वर्षा समूह सदृश, गरजते हुए, पूपा मठ[2] के पास पहुंच गये ।

तावन्मद्रप्रतीहारडामराद्या महाभटाः ।
संनद्धाः सुमनोवाटप्रदेशान्तं समासदन् ॥ २६३ ॥

२६३. तबतक मद्र, प्रतिहार, डामर आदि महाभट, सन्नद्ध होकर, सुमनोवाट[1] प्रदेश के समीप पहुँच गये ।

सैदखानादयः सैदहोसनादिसमन्विताः ।
सैदानां सुभटाश्चान्ये प्रापुस्तत्रैव ते प्रगे ॥ २६४ ॥

२६४. सैय्यिद हुसेन आदि सहित सैय्यिद खांन आदि, सैय्यिदों के सुभट, वहाँ पौं फटते पहुँच गये ।

---

जाते थे । अश्वों का केवल पैर की केहुनी से खुर तक का स्थान खुला रहता था । यूरोप में वीर-कालीन चित्रों में इस प्रकार के अश्व तथा अश्वारोही चित्रित दिखाये गये हैं । मनुष्यों के वर्म कुलीन तथा गणमान्य नागरिक मानव प्लस्तर यथा काष्ठमूर्ति पर पहनाकर शोभा के लिए अपने यहाँ सजा कर रखते हैं । आधुनिक यन्त्र युग में युद्ध यान्त्रिक हो जाने के कारण अश्वारोही तथा अश्वों का महत्व कम हो गया है । वर्म पहनने की प्रथा समाप्त हो गयी है । क्योंकि ढाल, तलवार, धनुष-त्राण एवं बर्छा से युद्ध करने की प्रथा नहीं रह गयी है । गोली, गोला तथा वम्ब के प्रयोग के कारण वर्म आदि अनुपयोगी हो गये हैं । अब तो युद्ध विना विरोधी सैनिकों के विना सीधे सम्पर्क में आये, मीलों दूर से संचालित होता तथा लड़ा जाता है । वर्म युक्त अश्व का प्रस्तर मूर्तियाँ काश्मीर में मिली हैं । उनका चित्र काश्मीर के इतिहास लेखकों ने दिया है ।

द्रष्टव्य : जैन० : ४ : २०४ ।

पाद-टिप्पणी :

२६२. ( १ ) दुग्धाश्रम : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : ४ : १०९ ।

( २ ) पूपा मठ : स्थान का अनुसन्धान अपेक्षित है ।

पाद-टिप्पणी :

२६३. (१) सुमनो वाट : द्र० : २ : १२१ ।

करवालाः स्फुरज्ज्वाला बभुः श्यामलकान्तयः ।
भूपीडनादिव व्यालाः पातालविवरोद्गताः ॥ २६५ ॥

२६५ श्यामल कान्ति एवं स्फुरित ज्वालावाली करवाले[1], ( तलवारें ) पृथ्वी पीडन के कारण, पाताल विवर से निकले, सर्प सदृश शोभित हो रही थी।

अथोदतिष्ठत् तुमुलः समरः सैन्ययोर्द्वयोः ।
सखड्गफलकक्षुद्रमद्रव्यूहसुदुःसहः ॥ २६६ ॥

२६६ खग, फलक ( ढाल ) सहित, छुद्र मद्रो के व्यूह के कारण, दुस्सह, भयकर युद्ध प्रारम्भ हुआ।

भो वीराः समरेऽत्र युध्यत मुदा मा यात पश्चादमी
जेतारो यदि तद्धरन्ति सकलं सैदाः क्रुधा निर्घृणाः ।
प्राप्तश्चेद्विजयः सुखं स्वविभवात् स्वर्गेऽपि तच्चेन्मृता
युद्धादाविति मद्रपः स परशुः काश्मीरिकानब्रवीत् ॥ २६७ ॥

२६७ 'हे वीरो ! समर मे प्रसन्नतापूर्वक युद्ध करो। पीछे मत हटो। ये निर्दयी सैय्यिद विजयी होगे, तो क्रोध के कारण सर्वस्व हर लेंगे। यदि विजय प्राप्त करोगे, तो अपने वैभव से सुख मिलेगा।' इस प्रकार युद्ध के प्रारम्भ मे उस मद्रपति परशुराम ने कहा।

पूर्वं पिर्वजखानोऽग्रे निर्ययौ रणगर्वितः ।
तं पिरुजप्रतीहारो रामो राममिवाभ्यगात् ॥ २६८ ॥

२६८ पहले सम्मुख रणगर्भित परवेज खान निकला और परवेज ( पिरुज ) प्रतीहार, उसके समक्ष, उस प्रकार आया, जिस प्रकार राम[1] के समक्ष राम[2] ( परशुराम )।

अनभिज्ञतया युद्धे स्फुरन्तं वीक्ष्य तं द्रुतम् ।
स्वभटान् प्रैरयन् मद्रास्तत्तुरङ्गखुरच्छिदे ॥ २६९ ॥

२६९ उस युद्ध में अनभिज्ञतापूर्वक स्फुरित होते उसे देखकर, शीघ्र ही मद्रो ने उसके अश्व का खुरच्छेद करने के लिये, अपने भटो को प्रेरित किया।

---

पाद-टिप्पणी

२६५ (१) करवाल क्षेमेन्द्र ने खड्ग, असिपट्टम्, करवालम् को समानार्थक माना है ( लोक० पृष्ठ ५ )।

पाद-टिप्पणी :

२६७ 'समरे' पाठ—बम्बई।

२६७ श्रीवर ने गीता के निम्नलिखित श्लोक के भाव को प्रकट किया है—

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसेमहीम् ।
तस्मादुत्तिष्ट कौन्तेय युध्याय कृत निश्चय ॥२ ३७॥

पाद-टिप्पणी :

२६८ ( १ ) राम : यह शब्द श्लिष्ट है। इसका तात्पर्य दाशरथी राम तथा परशुराम दोनों से है। दोनों को राम शब्द से सम्बोधित करते हैं। द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : १ : २०।

( २ ) राम = परशुराम जमदग्निपुत्र परशुराम। जैन० : २ : १०२।

खड्गकृत्तखुराश्वोग्रत्प्लुतिनष्टरणक्रियम् ।
गक्काद्याः प्राहरन् सर्वे शक्त्या शक्तिसमन्वितम् ॥ २७० ॥

२७०. खंग ( तलवार ) से खुर काट दिये जाने पर, घोड़े के तीव्र उछाल के कारण, उसकी रण क्रिया नष्ट हो गयी, शक्ति[1] ( बर्छा ) समन्वित उसके ऊपर, गक्क आदि सब लोगों ने शक्ति से प्रहार किया।

तद्भृत्याः शाहिभङ्गीया भ्रमरा इव सारवाः ।
ददंशुः कटकं क्रुद्धा स्फुरन्तः खड्गकण्टकैः ॥ २७१ ॥

२७१. भ्रमरों सदृश शब्द युक्त उसके भृत्य शाहिभंगीय[1] क्रोधपूर्वक स्फुरित होते हुए, खड्ग कटकों[2] से सेना को डसने लगे।

पतितं संम्मुखं दृष्ट्वा त काश्मीरा रणाङ्गने ।
जयोऽद्य वर्ततेऽस्माकमित्युक्त्वोत्साहमादधुः ॥ २७२ ॥

२७२. काश्मीरियों ने रणप्रांगण में समक्ष उसे गिरा देखकर—'आज हमलोगों की विजय है'—यह कह कर, उत्साहित हुए।

व्याहन्यमानाः काश्मीरैर्भटैर्मद्रसमन्वितैः ।
भृत्यास्ते शाहिभङ्गियाः कृत्यं सत्त्वोचितं दधुः ॥ २७३ ॥

२७३. मद्रों सहित काश्मीरियों द्वारा आहत होनेवाले, वे भृत्य शाहिभङ्गीय, बलोचित कार्य किये।

एहि तिष्ठात्र युध्यस्व गच्छस्यधुना मम ।
इत्यन्योन्यं भटास्तत्रातजयन् रणगर्जितैः ॥ २७४ ॥

२७४. 'आओ', 'ठहरो', 'युद्ध करो', 'अब कहाँ जा रहे हो।' इस प्रकार वहाँ पर भटों ने रण-गर्जनाओं से एक-दूसरे को तर्जित किये।

---

पाद-टिप्पणी :

२७०. ( १ ) शक्ति : बर्छा, भाला, शूल। एक प्रकार का अस्त्र था। काश्मीर में उस समय यह किस अस्त्र-शस्त्र का नाम था, कहना कठिन है। शक्ति शब्द का प्रयोग पूर्व साहित्य में भाला या बर्छा-धारी से किया गया है—शक्ति खण्डार्पितेन गाण्डीविनोक्तम्। वेणी० ३,—ततो विभेद पौलस्त्यः शक्त्या वक्षसि लक्ष्मणम्।—रघु० : १२ : ७७।

पाद-टिप्पणी :

२७१. ( १ ) शाहिभंगीय : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : ३ : ११४; ४ : २११; २७२, ५५९। नामवाचक शब्द है। दत्त ने शाहिभंगीय गार्ड्स् (रक्षक) अनुवाद किया है। श्रीवर ने स्पष्टतया उनके लिए भृत्य शब्द का प्रयोग किया है।

( २ ) कटक : सेना। सैनिक दृष्टि से सुरक्षित स्थान, सैन्य शिविर, सैनिक छावनी राजधानी है। किन्तु कल्हण तथा राजतरंगिणी में कटक शब्द का प्रयोग सेना के लिए किया है। द्रष्टव्य : रा० : ४ : २९३; मंख ने भी सेना अर्थ किया है। मंख० : कोश० : ४५।

काश्मीरपृष्ठगः सूर्यः खड्गान्तःप्रतिबिम्बितः ।
जयोऽद्य युष्मास्वित्येव वक्तुं व्योम्नोऽवतीर्णवान् ॥ २७५ ॥

२७५. काश्मीर के पृष्ठभाग में गये सूर्य खड्ग[1] के अन्दर प्रतिबिम्बित होकर, ( आज ) तुम लोगों की विजय है, मानो यही कहने के लिये आकाश से अवतरित हो गये ।

अहंपूर्विकया सर्वे ते वीरभ्रमरास्तदा ।
रणोद्याने स्फुटं चेरुर्यशःकुसुमलम्पटाः ॥ २७६ ॥

२७६. उस समय यश-कुसुम के लोभी वे वीर भ्रमर रणोद्यान में स्पर्धापूर्वक, हम पहले जीतेंगे[1] कहते, विचार रहे थे ।

तद्रणाङ्गनरङ्गातःसङ्गतास्ते भटा नटाः ।
त्वङ्गदङ्गविभङ्गाढ्या नाट्यभङ्गिमदर्शयन् ॥ २७७ ॥

२७७ उस रणाङ्गण रूप रंगमंच[1] पर स्थित, वे भट रूप नट चलते अंग-विभंग से पूर्ण होकर, युद्ध करके, अपनी वीरता प्रदर्शित किये ।

---

पाद-टिप्पणी :

२७५ (१) खड्ग : तलवार, कृपाण, इसी का अपभ्रंश 'खाडा' है । चौडी फलवाली तलवार को खाडा या खग कहते है । तलवार का फल पतला होती है ।—

नरि खड्गो विजानाति कर्मकार स्वकारणम्—
उम्दट

पाद-टिप्पणी :

२७६ ( १ ) अहपूर्विकया हम पहले-हम पहले जीतेंगे-इस प्रकार की पारस्परिक स्पर्धा का भाव अहपूर्विकया में है ।

पाद-टिप्पणी

२७७ (१, रंगमंच और रणाङ्गण श्रीवर ने युद्ध की उपमा रंगमंच से दिया है । रंगमंच पर जिस प्रकार अनेक प्रकार के दृश्य दृष्टिगोचर होते हैं, उसी प्रकार समरभूमि में बहुरंगी दृश्य दिखायी पडते हैं । रंगमंच पर विविध घटना घटती दिखाई जाती है । युद्धभूमि म विविध घटनाओं का शीघ्रतापूर्वक दर्शन तथा पटाक्षेप होना है ।

नाट्य कला का विकास सर्वप्रथम भारत में हुआ था । ऋग्वेद में यम-यमी, पुरुरवा-उर्वशी आदि के संवादों से विद्वान नाटकों का विकास मानते है । भरतमुनि ने उसे शास्त्रीय रूप दिया । त्रेतायुग में पितामह ब्रह्मा से मनोरंजन का साधन माँगा गया । ब्रह्मा ने ऋग्वेद से कथनोपकथन, सामवेद से गायन, यजुर्वेद से अभिनय एवं अथर्ववेद से रस लेकर, नाटक का निर्माण किया । विश्वकर्मा ने नाटक के लिये रंग मंच बनाया ।

भरतमुनि ने तीन प्रकार के नाट्य मण्डप या मंच की कल्पना की है—(१) विकृष्ट—आयताकार, (२) चतुरस्र—वर्गाकार तथा (३) त्र्यस्र (त्रिभुजाकार) । उनमें (१) ज्येष्ठ देवता, (२) मध्यम राजा, (३) अवर को अन्य लोगों के लिये वर्गीकरण किया है । ज्येष्ठ की लम्बाई १५ मीटर, मध्य की २९ मीटर और अवर की १४॥ मीटर होती थी । चतुरस्र मंडप की लम्बाई और चौडाई बराबर, विकृष्ट की लम्बाई की आधी चौडाई होती थी । यूरोप तथा पश्चिमी एशिया में एम्फी थियेटर बनाने की प्रथा प्रचलित थी । यह एक प्रकार से अर्ध गोलाकार सोपानमय बैठने के लिये सोपानों से युक्त होता था ।

ज्यहाङ्गिराद्यास्तद्भृत्याः प्रविष्टाः संमुखे रणे ।
विधाय युद्धं संनद्धा वीरवृत्त्या विचक्रिरे ॥ २७८ ॥

२७८. उसके भृत्य जहाँगीर आदि रण में सम्मुख प्रविष्ट हुए और सन्नद्ध होकर, युद्ध करके, अपनी वीरता प्रदर्शित किये।

ववर्ष शरधाराभिः स सैन्यकटकाम्बुदः ।
स्फुरच्छस्त्रतडिज्ज्योतिर्युक्तो गम्भीरगर्जितः ॥ २७९ ॥

२७९. स्फुरित होते शस्त्र रूप, विद्युत ज्योति एवं गम्भीर गर्जनपूर्ण वह सैन्य रूप मेघ वाण धारा बरसाने लगा।

सैदेषु भाकरस्तत्र संमुखस्थविभाकरः ।
शौर्यशोभाकरः प्रापदग्रे भाःकरवालभृत् ॥ २८० ॥

२८०. शौर्यशोभाशाली, देदीप्यमान खड्गधारी सैय्यद श्रेष्ठ भाकर[1] ( वाकर ) वहाँ आगे आया, जिसके समक्ष सूर्य चमक रहे थे।

त्वङ्गत्तुङ्गतुरङ्गस्थो रणरङ्गान्तरे स्फुरन् ।
सोऽङ्गहारसमासङ्गो नाट्यभङ्गिमदर्शयत् ॥ २८१ ॥

२८१. रण रंगमंच पर दौड़ते, उन्नत अश्वों पर स्थित एवं स्फुरित होते, उसने अंगहार से युक्त होकर, नाट्य-भङ्गिमा[1] प्रदर्शित की।

प्रहारविक्षतं सर्वे मिलित्वापि रणान्तरे ।
शेकुः संनाहिताश्वस्थं चिरात् पातयितुं क्षितौ ॥ २८२ ॥

२८२. रण में सब लोग मिलकर भी, प्रहार से क्षत-विक्षत वर्म युक्त अश्वारूढ़, उसे बहुत देर से, पृथ्वी पर गिरा सके।

द्वित्रान् हत्वा भटान् वीरो विक्षितः श्लाघ्यविक्रमः ।
अभजद् वीरशय्यां स रक्तस्पन्दोत्तरच्छदाम् ॥ २८३ ॥

२८३. दो-तीन भटों को मारकर, प्रशंसनीय पराक्रमी वीर, रक्त-स्पन्द रूप उत्तरच्छद[1] ( चादर ) युक्त वीरशय्या का आश्रय ग्रहण किया।

---

रोम में रंगमंचों का सर्वाधिक विकास हुआ। एक-एक एम्पी थियेटर में ७० या ८० हजार व्यक्ति एक-साथ बैठकर नाटक देख सकते थे।

पाद-टिप्पणी :

२८०. (१) भाकर : प्रचलित नाम वाकर तथा शुद्ध अरबी शब्द 'वाकिर' है। द्र० : ४ : ३१८, ३३७।

पाद-टिप्पणी :

२८१. ( १ ) नाट्य-भंगिमा : हाथ, पैर एवं अवयवों द्वारा अनेक प्रकार के भावों एवं अंग-विन्यास नाटक के पात्रों के समान प्रकट करना है।

पाद-टिप्पणी :

२८३. (१) उत्तरच्छद : आवरण। विस्तर के

येषां प्राणपरित्यागे निर्णयं बध्नतामपि ।
रणयोग्ये क्षणेऽपेक्षा नास्ति किं तैः पशूपमैः ॥ २८४ ॥

२८४ रणोचित काल मे प्राण परित्याग का निर्णय करनेवालो की जिन्हे अपेक्षा नही होती, उन पशु सदृश लोगो से क्या लाभ ?

सैदहोसनमुख्या ये काश्मीरा सदपक्षगाः ।
भाकरादीन् हतान् दृष्ट्वा रणं त्यक्त्वा पलायिताः ॥ २८५ ॥

२८५ सैय्यिद पक्षगामी सैय्यिद हुसन प्रमुख. काश्मीरी बाकर आदि को मृत देखकर, रण त्यागकर पलायित हो गये ।

ततः काश्मीरसेनान्या वात्ययेव तटद्रुमाः ।
भग्नास्तन्नीडनिःसृता भृत्याः शावा इवाहताः ॥ २८६ ॥

२८६ तत्पश्चात काश्मीरो सेनानी ने उन लोगो को उसी प्रकार भग्न कर दिया, जिस प्रकार वायु तट वृक्ष को, और उन वृक्षो के नीडो से निकले पक्षिशावक सदृश, सब भृत्य मार डाले गये ।

न खड्गी न हयारोहो न चापि न च शक्तिमान् ।
व्यावृत्य प्रेक्षितुं कश्चिन्नाशकद् विद्रुताद् बलात् ॥ २८७ ॥

२८७ पलायित सैन्य मे से कोई भी खड्गी, अश्वारोही, चापधारी एव शक्तिमान (आदि) लौटकर, देखने मे समर्थ नही हुआ ।

हठलुण्ठितविध्वस्ताः समस्तास्ते विरोधिनः ।
वृक्षारूढानपि घ्नन्तः प्रापुस्ते नगरान्तरम् ॥ २८८ ॥

२८८ हठपूर्वक लूटे गये एव विध्वस्त वे सब विरोधी, वृक्ष पर चढे लोगो का भी वध करते हुए, नगर मे पहुँच गये ।

---

ऊपर बिछाई जाने वाली चादर । कल्हण का भाव श्रीवर ने लिया है । कल्हण ने देवी वाक्पुष्टा के सती होने के समय वर्णन करता अग्निज्वाला को 'नलिन-प्रच्छद' लिखा है । वही देवी वाक्पुष्टा की अन्तिम शय्या की चादर थी (रा० : २ : ५६) ।

पाद-टिप्पणी :

२८६ (१) बहरिस्तान शाही का यह मत है कि सैय्यिदों तथा काश्मीरियो में मुल्लाओ के कारण शान्ति स्थापित हुई और काश्मीरी अपने कार्यों पर पश्चाताप किये कि सैय्यिद मुहम्मद की हत्या की गयी (पाण्डु० : ६५ बी-६६ बी०) ।

पाद-टिप्पणी

२८७ "विद्रुताद्" पाठ–बम्बई ।

आ समुद्रमठात् पूर्वाधिष्ठानान्तं निरम्बराः ।
मार्गेष्विन्धनगण्डौघा इवासन्निहिताः शवाः ॥ २८९ ॥

२८९. समुद्रमठ[1] से लेकर पूर्वाधिष्ठान[2] तक, मार्गों में इन्धन[3] के गट्ठर समान, निर्वस्त्र शव पड़े हुए थे ।

केचित् कुल्यान्तरे मग्ना भग्नाः केऽपि रणान्तरे ।
केचित् प्रमुषिता नग्ना भयोद्विग्ना दिशोऽचलन् ॥ २९० ॥

२९०. कुछ कुल्या में डूब गये, कुछ रण में मारे ( भग्न हो ) गये, कुछ लूट लिये गये तथा नग्न एवं भयोद्विग्न होकर, दिशाओं में चले गये ।

तद्वीरावयवैः कृत्तैः पूरिता विपुलैर्मही ।
तद्ग्रासार्थं प्रवृत्तस्य मृत्योरिव महानसः ॥ २९१ ॥

२९१. उन वीरों के कटे विपुल अंगों से पूर्ण पृथ्वी, उन्हें ग्रास हेतु प्रवृत्त मृत्यु के रसोईं-घर[1] के सदृश हो गयी थी ।

ये सुन्दरा विपुलभोगपुरन्दराभा–
श्चेरुर्नरेशविभवप्रथितप्रपञ्चाः ।
नग्नान् विलोक्य भुवि तान् धृतदुष्टगन्धान्
कस्यापि शाम्यति न देहभवोऽभिमानः ॥ २९२ ॥

२९२. जो सुन्दर लोग विपुल भोग में पुरन्दर सदृश थे, और राजा के वैभव से ख्याति-प्राप्त कर, विचरण करते थे, उग्र गन्ध से युक्त, नग्न उन लोगों को भूमि पर पड़ा देख कर, किसका शरीर पर होनेवाला अभिमान शान्त नहीं हो जाता ?

वरं मरणमेवास्तु रणे स्वर्गसुखप्रदम् ।
न सहेऽद्यतनस्वामिवृत्तियाच्ञाकदर्थनाः ॥ २९३ ॥

२९३. 'रण में स्वर्ग सुखप्रद मरण ही हो, यह अच्छा है किन्तु आज के स्वामियों की वृत्ति याचना की कदर्थना[1] नहीं सह सकता ।'

---

पाद-टिप्पणी :

२८९. (१) समुद्रमठ : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० : ३ : १२०, १६८ ।

(२) पूर्वाधिष्ठान : पुराधिष्ठान होना चाहिए । वर्तमान पण्डरेथन स्थान है ।

(३) इन्धन : श्रीवर ने इन्धन की ही उपमा शव की ढेरियों से श्लोक जैन० : ४ : १८९ में दिया है । दोनों ही श्लोकों में 'इवा सन्निहिता:' शब्दों का प्रयोग एक जैसा किया है । इस उपमा को दुहरा देना श्रीवर के लिये साधारण बात है ।

पाद-टिप्पणी :

२९१. ( १ ) महानस = पाकशाला = रसोई-घर = महाकाल की पाकशाला में प्राणी पकते हैं । प्राणियों की रसोइयाँ बनती हैं ।

पाद-टिप्पणी :

२९३. 'कुत्सित प्रार्थना' पाठ–बम्बई ।

(१) कदर्थना = तिरस्कार = अपमान = अव-हेलना = दुर्दशा = दुर्गति ।

इत्युक्त्वा प्रविशन् युद्धे धीरास्वस्थोऽप्यकातरः ।
हमेभमेरः शस्त्रेण स श्लाघ्यमरणोऽभवत् ॥ २९४ ॥

२९४ यह कह कर, धीर अश्व पर स्थित हबीब मीर, युद्ध मे प्रवेश करते हुए, शस्त्र द्वारा प्रशसनीय मृत्यु वरण किया ।

अन्यान् प्रचलितान् दृष्ट्वापीक्षिताग्राप्तवैरिणः ।
पलायनेच्छा नैवाभूद् युयुत्सोर्यस्य मानसे ॥ २९५ ॥

२९५. सम्मुख आये शत्रुओ को देखकर, पीछे हटनेवाले लोगो को देखकर भी, जिस युद्धेच्छुक के मन मे भागने की इच्छा नही हुई ।

छिन्नाङ्गुलिकरोऽप्यश्वमारुह्य स्वसुतान्वितः ।
अकरोत् क्षणमात्रं यः शस्त्रप्रचारणं रणे ॥ २९६ ॥

२९६ हाथ की उँगलियो के कटने पर भी, घोडे पर चढकर, जिसने क्षण भर रण मे शस्त्र-चालन किया ।

स्थामस्थितः पुरस्यान्ते स राजानकहस्सनः ।
हतः सेरङ्गमेराद्यैर्मारीकुल्यातटान्तगः ॥ २९७ ॥

२९७ पुर के अन्त मे स्थाम स्थित, वह राजानक हस्सन, जोकि मारी[1] कुल्या के तट पर सेरग[2] मीर आदि लोगो द्वारा मारा गया ।

प्रच्छिन्नाङ्गुलिहस्तेन सममस्य शिरो भटैः ।
नीत्वा न्यदर्शि हर्षार्थं मार्गेशादिसभान्तरे ॥ २९८ ॥

२९८ भटो ने कटे उँगलियोवाले हाथ के साथ, इसके शिर को लाकर, हर्ष हेतु, मार्गेशादि की सभा मे दिखाया ।

किमाकारनिकारेण कुर्वन्त्वस्तात्यसत्क्रियाम् ।
इत्युक्त्वास्मै स मार्गेशः शवमुक्तिमकारयत् ॥ २९९ ॥

२९९ 'इस आकृति की निन्दा करने से क्या लाभ ? इसकी अन्तिम सत्क्रिया करो'— ऐसा कहकर, मार्गेश ने उसका शव मुक्त कराया ।

---

पाद-टिप्पणी

२९६. "सुता" "प्रचारण" पाठ—बम्बई ।

पाद-टिप्पणी :

"सेरङ्ग" पाठ—बम्बई ।

२९७. (१) मारी कुल्या : मर नहर । द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी जैन० . १ : ५ : ५४–५६; ३ : २७६, रा० ३ ३३९–३४९; ५ : ४६ ।

(२) सेरग फारसी शब्द 'सहरग' जिसका अर्थ सेनानायक, कोतवाल, सैनिक होता है उसका अपभ्रंश है ।

योऽभूच्चिरं नृपगृहेऽखिलमन्त्रिवर्यो
धुर्यः पदेषु विभवोचितदानमानः ।
शोच्यां दशामितरवत् स मतः किलान्ते
धिग् वासनां भविषु शाम्यति या न भोगैः ॥ ३०० ॥

३००. जो चिरकाल नृपति के घर सब मन्त्रियों में श्रेष्ठ और उन्नत पदों पर रहा, विभवोचित दान-मान से युक्त था, अन्त में सामान्य लोगों के समान उसकी भी शोचनीय दशा हुई। उस सांसारिक वासना को धिक्कार है, जो भोगों से शान्त नहीं होती।

स चेत् प्राप्तखलीकारस्तिष्ठेत् स्वसदने शमी ।
सर्वो मन्त्रिगणस्तस्य भवेच्चाटुपरो न किम् ॥ ३०१ ॥

३०१. व्रणप्राप्त एवं शान्त वह यदि अपने घर रहता, तो क्या सब मन्त्रीगण उसकी चाटुकारिता नहीं करते ?

पुनर्विभवलोभेन सैदपक्षं समाश्रयन् ।
आगामिकम्पनेशाधिकारतां प्रार्थयन् निजाम् ॥ ३०२ ॥

३०२. पुनः विभव-लोभ से सैय्यिद पक्ष का ग्रहण करते और अपने लिये आगामी कम्पनेशाधिकार[1] की प्रार्थना करते हुए—

अज्ञातदैववृत्तान्तो ययौ लोकेषु हास्यताम् ।
अथवा नाशकाले स्याद् बुद्धिः कुपथगामिनी ॥ ३०३ ॥

३०३. दैव वृत्तान्त से अनभिज्ञ, (वह) लोक में उपहास का पात्र बना, अथवा विनाश के समय बुद्धि, कुपथगामिनी हो जाती है।

कुर्वन्ति ये परशरीरनिकारमाजौ
दर्पान्धलोचनयुगाः स्वविचारबाह्याः ।
ते प्राप्नुवन्ति वधमाशु तथा यथामी
लोका वदन्ति नरकोचित एष मर्त्यः ॥ ३०४ ॥

३०४. दर्प से अन्धे युगल नैनवाले, जो लोग आचार-विचार त्याग कर, युद्ध में दूसरे के शरीर का अपमान करते हैं, वे लोग, उन लोगों के समान, शीघ्र वध प्राप्त करते हैं।

---

पाद-टिप्पणी :

३०२. (१) कम्पनेश = सेनापति = कम्पन = कम्पनाधिपति = कम्पनाधिप = कम्पनाधीश = कंपना पति समानार्थक शब्द है। रा० क० ५ : ४४७; ६ : २२८; ७ : १५४; ८ : १७७। क्षेमेन्द्र ने लोकप्रकाश में (पृष्ठ २९) में उल्लेख किया है :

प्रजानां परमः कम्पो मोहकम्पं निवारयेत् ।
गजाङ्क च समाख्यातं स ज्ञेयः कम्पनापतिः ॥२॥

क्षेमेन्द्र ने 'कम्पनाधिपतिः' शब्द का प्रयोग सैनिक अधिकारी के रूप में 'द्वारपति' के पश्चात तथा 'सेनाधिपतिः' के पूर्व किया है। लोक० पृष्ठ २।

धिग्धिग्धैभतखानन्तं वीरंमन्योऽपि यो रणात् ।
निर्गत्य सभयः प्राप्तः फाखुवाविषयान्तरम् ॥ ३०५ ॥

३०५ लोग कहते हैं—'उस हैबत खा को धिक्कार है, जो वीरमन्य होकर भी, रण से निकल कर, सभय फाखुवा[1] विषय चला गया।'

त्यक्तोत्तुङ्गतुरङ्ग स निःशस्त्रिर्भृतकोज्झितः ।
तत्र प्राकृतवेशेन जुगोप स्वं भयादटन् ॥ ३०६ ॥

३०६ उन्नत तुरग को त्याग कर, नि.शस्त्र भृत्य रहित, वह सामान्य जन के वेश मे, भय से घूमते हुए, वहाँ अपनी रक्षा की ।

क्रुद्धैर्दावोदमार्गेशवधात् मार्गपतेर्भटैः ।
स चौर इव वाट्यन्तर्हतोऽप्यात्तशिरोऽभवत् ॥ ३०७ ॥

३०७ दाऊद मार्गेश के वध से, मार्गपति के क्रुद्ध भटो द्वारा, चोर सदृश वह, वाटी[1] से मारा गया और उसका शिर भी लोगो ने प्राप्त कर लिया ।

छित्त्वोत्तमाङ्गंतस्याशु निन्युर्मन्युनिवृत्तये ।
मृतमार्गेशपुत्रस्य शवारात्रिकतां भटाः ॥ ३०८ ॥

३०८ भटो ने शीघ्र शिर काटकर, क्रोध निवृत्ति के लिये, मृत मार्गेश पुत्र के शव की उससे आरती[1] की ।

---

पाद-टिप्पणी

३०५ "फागुआ" पाठ—बम्बई ।

(१) फाखुवा यह फाख परगना है। इसका उल्लेख परगनों की तालिका में अबुल फजल, मूरक्राफ्ट, वान हुगेल, वाइन तथा वेट्स ने गजेटियर में किया है। यह शहर-ए-खास जिला सराज मण्डल में श्रीनगर के उत्तर-पर्वतमूल मे है।

पाद-टिप्पणी

३०७ (१) वाटी श्री दत्त ने वाटी का अनुवाद हाउस गार्डेन किया है। बंगला में वाड़ी का घर कहते हैं। वाटी का अर्थ घर तथा उद्यान दोनो होता है। वाटी का अर्थ यहाँ घिरे हुए भूभाग अर्थात् हाता या वह भूखण्ड जिस पर मकान बनाया गया होता है। उद्यान एवं उपवन प्रचलित अर्थ है।

—वाटी भुवि क्षिति भुजाम्—आश्व० ५ ।

चोर घर में छिपता है। सम्भावना यही है कि घर से उसे पकड कर मारा गया। सम्भव है कि मकान से निकालकर, उसकी हत्या वाटिका किंवा गृह उद्यान में कर दी गयी।

पाद-टिप्पणी

३०८ (१) आरती आरती ज्योति किंवा दीप से की जाती है। यहाँ पर सरल अर्थ यह है कि दाऊद के शव पर सैनिकों अर्थात भटों ने मस्तक को आरती के समान घुमाया।

आरती का विधान है। चार बार चरण, दो बार नाभि, एक बार मुख तथा सात बार सर्वाङ्ग के ऊपर घी अथवा कपूर की दीपशिखा घुमाते हैं। दीपक के वर्तियों की संख्या कई तक होती है।

स चेत् पलायितः सैदशिविरं प्राप्नुयान्निशि ।
तद्वत् तज्जीवरक्षा स्यात् सुबुद्धिः पापिनां कुतः ॥ ३०९ ॥

३०९. यदि वह भाग कर, रात्रि में ही, सैय्यिद शिविर पहुँच जाता, तो इस प्रकार इसकी जीवन रक्षा हो जाती—पापियों को सुबुद्धि कहाँ ?

तद्भृत्यर्लुण्ठितो देशो गोवधो यत् पुरे कृतः ।
जाने भृत्यापराधेन प्राप्तास्ते तादृशीं दशाम् ॥ ३१० ॥

३१०. उसके भृत्यों ने देश को लूटा, नगर में गोवध किया मानो भृत्यों के अपराध के कारण ही, अन्त में उसकी यह दशा हुई।

दौहित्रोऽपि महीभर्तुर्जातो वीरकुलादपि ।
तत्पापेनाभवत् तस्य चित्तं वीररसोज्झितम् ॥ ३११ ॥

३११. राजा का दौहित्र भी, जो वीर कुल में उत्पन्न हुआ था, उसका भी चित्त, उसके पाप के कारण, वीररस-रहित हो गया था।

विप्रा राजसुताः सैदाः काश्मीरा अपरेऽपि ये ।
सहस्रसङ्ख्याः समरे तद्दिने प्रलयं ययुः ॥ ३१२ ॥

३१२. विप्र, राजपुत्र, सैय्यिद, काश्मीरी और दूसरे लोग भी, हजार की संख्या में उस दिन, समर में मारे गये।

निहतानीकसुभटसमूहान्तरलक्षितान् ।
भूमिदाहाय निष्कष्टुं नाभूत् कस्यापि पौरुषम् ॥ ३१३ ॥

३१३. निहत सेना के सुभट समूहों के बीच, दिखाई देनेवाले, लोगों की भूमिदाह[1] हेतु खींचने का किसी ने साहस नहीं किया।

ये सर्वचङ्गाः पीनाङ्गा भोगैर्मण्डलवर्धिताः ।
याता घर्मोत्थदुर्गन्धास्ते श्ववायसभोज्यताम् ॥ ३१४ ॥

३१४. जो लोग पूर्ण रूप से चंगा[1] ( स्वस्थ ), पीतांग भोगों से मण्डल को वधित करनेवाले थे, वे धूप से उत्पन्न, दुर्गन्धित होकर, कुक्कुर और काकों के भोज बने।

---

पाद-टिप्पणी :

३१३. (१) भूमिदाह : चिता पर भस्म करने के लिए अग्निदाह संस्कार कहा जाता है। श्रीवर ने नवीन शब्द गढ़ा है। अग्निदाह के समान उसने भूमिदाह लिखा है। दाह का अर्थ जलाना होता है। भूमि से कोई जलाया नहीं जा सकता। अतएव उसका सरल अर्थ है—मिट्टी देना, भूमि में गाड़ देना। भाषा में अग्नि देना, आग देना, स्मशान में जलाने के अर्थ में प्रयोग किया जाता है। भूमि देना या मिट्टी देना कबर में दफ़न करने से तात्पर्य है।

पाद-टिप्पणी :

३१४. ( १ ) चंगा : यह शब्द संस्कृत है। इसका अर्थ स्वस्थ होना है। यद्यपि चंगा शब्द आन-

रक्ताक्तकर्तरीशक्तिमुद्गरद्रुघनादिभिः ।
शाल्मलिद्रुमवत् पुष्पैर्बभुर्युद्धगता भटाः ॥ ३१५ ॥

३१५. युद्ध मे गये भट लोग, रक्तरंजित, कर्तरी ( कटारी ), शक्ति, मुद्गर[1], द्रुघन[2] आदि से उसी प्रकार शोभित हो रहे थे, जिस प्रकार पुष्पो से शाल्मलि[3] वृक्ष ।

स्मृत्वा रुद्रविहाराग्निदाहं सैदकृतं क्रुधा ।
अलाभपुरदाहाय मार्गपोऽग्निमदापयत् ॥ ३१६ ॥

३१६ सैय्यिदो द्वारा किया गया, रुद्रविहार के अग्निदाह का स्मरण कर, क्रोध से मार्गपति ने अलाभपुर जलाने के लिये, आग लगा दिया ।

---

कल ग्रामीण भाषा में बहुत प्रचलित हो गया है और उसे लोग फारसी या उर्दू शब्द मान लेते हैं। पंजाब तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश में यह बोला जाता है।

पाद-टिप्पणी

३१५ (१) मुद्गर=गदा = गतका = मुगरी और लकडी की एक बडी लम्बी वजनी जोडी होती है। व्यायाम के समय दोनों हाथों से फेरी जाती है।

( २ ) द्रुघण . कुठार या कुल्हाडी। परसु या फरसा के आकार का एक अस्त्र जिसका सिरा मुडा होता था।

(३) शाल्मलि . मेरे बाग में शाल्मली किंवा सेमर का बहुत बडा वृक्ष था। बाल्यावस्था में उसके फूल से हमलोग खेलते थे। श्रीवर का यह श्लोक पढने पर मुझे उस पुष्प की स्मृति हरी हो गयी। शाल्मली की लकडी बडी हलकी होती है। उसका फूल बहुत बडा गाढ़ा लाल होता है। रक्त जम या सूख जाने पर लाल न होकर गाढा लाल होता है। उस लाली में कुछ मलिनता आ जाती है। शाल्मली का पुष्प भी इसी रंग का होता है। मैं फौजदारी का वकील हूँ। खून तथा मारपीट के बहुत मुकदमों को किया है। अमलहो अर्थात हथियारों तथा वस्त्रों पर खून लगा देखा है। मानव रक्त तथा अन्य रक्तों में अन्तर होता है। वैज्ञानिक जाँच से उसका पता लग जाता है। लोहे के हथियार पर खून जमकर सेमर किंवा शाल्मली वृक्ष के पुष्प के रंग का हो जाता है। श्रीवर की यह उपमा अनोखी है। उसकी पैनी दृष्टि तथा अनुभव की परिचायक है।

शाल्मली वृक्ष के फल से रुई निकलती है। उसे सेमल की रुई कहते है। इस रुई से तकिया भरी जाती है। साधारण रुई दबकर कडी हो जाती है परन्तु सेमल की रुई कडी न होकर, सर्वदा फूली और हलकी रहती है। सेमल का फल पक कर फूट जाता है। उससे रुई हवा में उड़ती अथवा भूमि पर गिरने लगती है। कवियों ने शाल्मली वृक्ष की प्राय उपमा दी है।

पाद-टिप्पणी :

३१६ ( १ ) अलाभपुर श्लोक ३१६ में अलाभदीन नगर का उल्लेख मिलता है। दोनों एक ही मालूम होते है। पाठभेद से प्रकट होता है कि अहला मठ के लिये अलाभपुर लिखा गया है। वर्णन क्रम से प्रकट होता है कि यह श्रीनगर में ही स्थान था क्योंकि इसके पश्चात ही हमदान अग्निकाण्ड का वर्णन किया गया है। दोनों ही स्थान नगर में थे। अग्नि ने उन्हें जला दिया था। एक की अग्नि फैलकर दूसरे तक पहुँच गयी थी।

ज्वालाजालकरालोऽसावग्निर्वेश्मोष्मदारुणः ।
अलाभदीननगरं दग्धारण्यमिवाकरोत् ॥ ३१७ ॥

३१७. ज्वाला जाल से कराल एवं गृह की उष्मा दारुण, उस अग्नि ने अलाभदीन नगर को दग्ध अरण्य सदृश कर दिया।

श्रीमत्सैदहमादानखानगाहोदितानलः ।
राजप्रजापचारोत्थतत्क्रोधाग्निरिवाद्युतत् ॥ ३१८ ॥

३१८. श्रीमत् सैय्यिद हमदान[1] के खानकाह में लगी आग, राजा एवं प्रजा के प्रति हुए, अत्याचार से उठी क्रोधाग्नि सदृश, प्रज्ज्वलित हो रही थी।

हतेषु भाकराद्येषु पलाय्यान्येषु यात्स्वपि ।
विदधुर्नगरे लुण्ठिं तद्भृत्याः श्वपचादयः ॥ ३१९ ॥

३१९. बाकर आदि लोगों को मार दिये जाने पर और अन्य लोगों के भाग कर चले जाने पर, उसके भृत्य चाण्डालादि नगर को लूटे।

आसञ् जन्मदरिद्रा ये ते महाढ्यत्वमाययुः ।
सदैवाढ्या दरिद्रत्वमुत्पिञ्जोपप्लवे तदा ॥ ३२० ॥

३२०. उस समय उत्पिजोद्रव में जो जन्म-दरिद्र थे, महाधनी हो गये, तथा जो सदैव धनी थे, वे दरिद्र हो गये।

---

पाद-टिप्पणी :

३१८. (१) सैय्यिद हमदान : सैय्यिद अली हमदानी का उल्लेख जोनराज नहीं करता। मुसलमान लोग उसका बड़ा आदर करते हैं और काश्मीर के इसलामीकरण का मुख्य प्रेरक मानते हैं। काश्मीर के प्राचीन तीर्थ लोक श्री को तोड़कर उसी स्थान पर शाह हमदान का खानकाह बनाया गया है। उसे अमीर कबीर या अलीसानी भी काश्मीर में कहते हैं। हमदानी का जन्म अक्तूबर बाईस सन् १३१४ ई० में हुआ था। उनका वंश सैय्यिदा अलवी था। पिता सैय्यिद शहाबुद्दीन हमदान के सूबेदार थे। काश्मीर में सर्वप्रथमबार सिकन्दर मास सन् १३७२ ई० में आये थे। चार मास काश्मीर में रहकर, मक्का चले गये। द्वितीयबार सन् १३७३ ई० में अपने सात सौ शिष्यों के साथ काश्मीर में आये। ढाई वर्ष काश्मीर में निवास करने के पश्चात् लद्दाख मार्ग से तुर्किस्तान लौट गये। तैमूरलंग से हमदानी की पटरी नहीं खाती थी। अतएव उससे भयभीत होकर, काश्मीर आया था। हमदानी की मृत्यु १९ जनवरी सन् १३८५ ई० में हो गयी। वह खतलान में दफन किया गया।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'नगर में आग लगा दी गयी। जिसमें मीर सैय्यिद अली हमदानी की खानकाह जल गयी। और उस स्थान पर अग्नि का अन्त हो गया। उस दिन मरे हुए लोगों की संख्या दस हजार थी (४५३ = ६८६)।'

फिरिश्ता भी यही लिखता है कि—'खानकाह तक आग न पहुँचकर बुझ गयी और खानकाह को किसी प्रकार की क्षति नहीं पहुँची।' 'फिरिश्ता और लिखता है कि—इस दिन मरे हुए लोगों की संख्या दस सहस्र से कम नहीं थी।'

केचिच्छवान् विचिन्वन्तो यत्र कुत्रापि तिष्ठतः ।
प्रीतिं प्राप्तैस्तदीयार्थैर्ययुः कापालिका इव ॥ ३२१ ॥

३२१. यत्र, तत्र पडे शवो को ढूंढनेवाले, कुछ लोग उनके अर्थ को पाकर, कापालिक[1] सदृश परम प्रसन्न हो गये ।

विरुद्धसञ्चयापूर्णगृहलुण्ठिविधायिनाम् ।
अभूत् परस्परं युद्धं समांसास्थ्नि शुनामिव ॥ ३२२ ॥

३२२ विरुद्ध सचय से घर के पूर्ण करनेवाले एव लूटनेवालो मे, उसी प्रकार परस्पर युद्ध हुआ, जिस प्रकार मास सहित हड्डी के लिये कुत्तो मे ।

आदावेकेन यन्नीतं तस्मादन्येन तद्धृतम् ।
तस्मादप्यपरेणेत्थ मात्स्यो न्याय इवोत्थितः ॥ ३२३ ॥

३२३ प्रारम्भ मे जिसको एक ने ले लिया, उससे अन्य ने उससे ले लिया और उससे भी दूसरे ने इस प्रकार मत्स्य न्याय[1] की स्थिति हो गयी ।

पाद-टिप्पणी

३२१ (१) कापालिक शैवमत के तान्त्रिक साधु कापालिक होते हैं । ये हाथ में मानव कपाल, त्रिशूल लिये रहते है । जटाजूटधारी होते हैं । भैरव के उपासक होते है । उसे बलि चढाते हैं । बगाल में कापालिक एक जाति थी ।

नकुलीश तथा लकुलीश को पाशुमत का प्रवर्तक माना जाता है । शैव सम्प्रदाय की शाखाएँ पाशुपत, कापालिक एव श्रीभाष्य में शैव, पाशुपत, कापाल और कालामुख चार प्रकार के शैव सम्प्रदाय का उल्लेख श्री रामानुजाचार्य ने किया है—'कपालेन, नृकपालेन, चरति अभ्यवहारादिक करोति कापालिक ।' यह उग्र शैव तान्त्रिक सम्प्रदाय है ( ब्रह्मा २ ३१ ६५, वायु ५८ ६४ ) । शाकर दिग्विजय के अनुसार कापालिक उच्छिष्ट गणपति अथवा हेरम्ब सम्प्रदाय के अन्तर्गत हैं । लगुड कालमुख हैं । इनका परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध है । कापालिक-मत समस्त भारत में फैल गया, जबकि कालमुख केवल नगरों तक ही सीमित रह गया । कापालिकों के देवता माहेश्वर हैं । गोरक्ष-सिद्धांत-सग्रह के अनुसार श्रीनाथ के दूतों ने जब विष्णु के चौबीस अवतारों के कपाल काट लिये, उस समय से उनकी सज्ञा कपाल काटने के कारण कापालिक हो गयी । शैव सम्प्रदाय की इस शाखा में वामाचार अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया है । कापालिक साधक नाथ-सम्प्रदायवादियो के समान चक्र एव नाडियों के यौगिक सिद्धात में विश्वास करते हैं । जीव एव शिव में अभिन्नता मानी गयी है । योग द्वारा ही शिव का साक्षात्कार सम्भव मानते हैं । शिव का शक्ति समन्वित रूप ही समर्थ एव प्रभावकारी माना गया है । शिव एव शक्ति के इस मिलन सुख को कापालिक अपनी कपालिनी के माध्यम से अनुभव करता है । उसे वह महासुख की सज्ञा देता है । मद्य, मास, मत्स्य, मुद्रा तथा मैथुन पच मकारों का साधन करते है । कापालिक हठयोगी होते हैं । 'ह' का अर्थ सूर्य तथा 'ठ' का चन्द्रमा है । यही इडा चन्द्र नाडी है । वाम नासिका छिद्र इसका स्थान है । पिङ्गला सूर्य नाडी है । इसका स्थान दक्षिण नासिका छिद्र है । दोनों नाडियाँ सम चलने लगती हैं, तो उसे ही सुषुम्णा कहते हैं । कापालिक स्वास साधना द्वारा योग करता है ।

पाद-टिप्पणी :

३२३. ( १ ) मत्स्य न्याय : मनुस्मृति एव

द्विधा जयप्रवाहो यस्तद्वाहिन्योरभूत् पुरा ।
एकपार्श्वगमात् सोऽत्र शाल्युन्मूलनमातनोत् ।। ३२४ ।।

३२४. पहले जो उन दोनों वाहिनियों[1] का जो प्रवाह द्विधा विभक्त था, वह यहाँ एक पार्श्वगत होकर, सैय्यिद पक्ष का उसी प्रकार उन्मूलन कर दिया, जिस प्रकार नदी का द्विधा प्रवाह, एक भाग में होकर, महान वृक्ष का उन्मूलन कर देता है ।

आढ्यान् द्विजवणिक्प्रायान् पौरान् नित्यसुखोर्जितान् ।
मुष्णन्तस्तद्भटाश्चक्रुर्दरिद्रान् दुःखभागिनः ।। ३२५ ।।

३२५ उसके भटों ने समृद्ध द्विज, वणिकप्राय लोगों को, तथा नित्य सुख से प्रसन्न पुरवासियों को लूटकर, दरिद्र एवं दुःखभागी बना दिया ।

दारुणोष्मचयात् तत्तद्वस्तुनाशार्दितान्यपि ।
पौराणां समदह्यन्त सदनानि मनांसि च ।। ३२६ ।।

३२६. दारुण अग्नि समूह से, तत्-तत् वस्तुओं के विनाश के कारण भी पुरवासियों के सदन एवं मन जल उठे ।

---

महाभारत में मत्स्य न्याय पर विशद चर्चा की गयी है । मत्स्य न्याय का रोकना राजा का प्रथम कर्तव्य माना गया है । छोटी मछली अकारण वड़ी मछली के क्षुधा शान्ति का साधन वन जाती है । वड़ी मछलियाँ विना विवेक अपनी ही जाति की छोटी मछलियों को निगल जाती हैं । दुर्वल पर सवल हावी हो जाता है । जिसकी लाठी उसकी भैंस वाली कहावत चरितार्थ होती है । सवलों से दुर्वलों की रक्षा करने के लिये राज्य तथा राजा का संघटन हुआ है । नारद का कहना है—मानव में नैतिकता एवं धर्म का ह्रास होने लगा तो धर्म एवं न्याय का प्रवर्तन हुआ । राजा विवादों को दूर करनेवाला दण्डधर घोपित किया गया ( नारद : १ : १ : २; स्मृति चन्द्रिका अ० २ ) । द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जोन० : श्लोक ७७५ । द्रष्टव्य : शतपथ ब्राह्मण : ३ : ९ : ३ : ७, ११ : १ : ६ : २४; मनु० : ७ : ३; १४ : २०; रामा० अयो० ६७; महाभारत शांति० : ६८ : ८५; १५ : ३०; ६७ : १६–१९; १८८ : १०–१४; ५९ : १०६ : १०८; १२३ : १६; अर्थ० : १ : १३, २२; नारद० : १८ : १५-१६; ऋग० : १० : ९०; याज्ञ० : १ : ३५५–३५६ ।

पाद-टिप्पणी :

३२४. ( १ ) वाहिनी : शव्द यहाँ श्लिष्ट है । सेना तथा नदी दोनों अर्थ है । कल्हण ने 'वाहिनी' का प्रयोग सरिता तथा सेना दोनों के लिये किया है । द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : रा० : ४ : ३०३. ३०६; द्र० लोक० पृष्ठ ५ ।

मंख ने भी इसी अर्थ में शव्द का प्रयोग किया है—

अब्जा करेब्जे नलिनी वाहिनी सिन्धु सेनयोः ।
।। ४६९ ।।

पाद-टिप्पणी :

३२६. पाठ : 'नाशार्दितानीः' वम्वई ।

नगरान्तः कुलीनानां पुण्याः कन्याश्च योषितः ।
विटाः केऽप्यघमाश्चक्रुर्हठसंभोगदूषिताः ॥ ३२७ ॥

३२७. नगर के कुछ विटो ने कुलीनो की पुण्य ( पवित्र ) कन्याओ एवं स्त्रियों को हठात् संभाग से दूषित कर दिया ।

व्यधायि यत्र निर्माणं कल्पान्तस्थिरताशया ।
कोटिकोटिघनं दत्त्वा दग्धं मृद् भस्मसादगात् ॥ ३२८ ॥

३२८. कल्पान्त ( प्रलय ) तक, स्थिरता की आशा से, कोटि-कोटि धन देकर, जो निर्माण किया गया था, वह जल कर मिट्टी ( भस्म ) हो गया ।

आसदन् केऽपि केऽप्युच्चैरनदन् केऽप्यलुण्ठयन् ।
दस्यवो दक्षिणे पारे क्षीबा इव जयोद्धताः ॥ ३२९ ॥

३२९. दक्षिण पार ( तट ) विजय से उद्धत, दस्यु[1] लोग मदमत्त से होकर, कुछ लोगो को सताने लगे, कुछ उन्नाद करने लगे, कुछ लूटने लगे ।

---

पाद-टिप्पणी :

३२८ पाठ 'तद्' बम्बई ।

पाद-टिप्पणी

३२९ ( १ ) दस्यु वैदिक काल से इस शब्द के अनेक अर्थ किये गये हैं । प्रचलित अर्थ—दुष्ट, उत्पातशील, आततायी, उद्धत, अत्याचारी, डाकू, चोर, लुटेरा, उचक्का आदि हैं । ऋग्वेद में शब्द अमानवीय शत्रुओं के लिये आया है ( ऋ० १, ३४, ७, १ १००, १८, २ १३ . ९ ) ।

दस्युओं को एक जाति रूप में चित्रित किया है । आर्यों एव दस्युओं में अन्तर का कारण धर्म था । दस्युओं को अयजनशील, अधार्मिक, शपथ खाने था आदी तथा देवताओं से घृणा करनेवाला बताया गया है ( ऋ० . १० २२ : ८ ) । दस्युओं को अनास कहा गया है । अनास का अर्थ अस्पष्ट है । परन्तु इतना मान सकते हैं कि वे चिपटी नाक वाले थे । ईरानी भाषा में दस्यु को दहु या वस्यु कहते हैं । यह एक प्रदेश का नाम है ।

मनुस्मृति के अनुसार ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों एवं शूद्रो में जो क्रियालुप्त और जाति बहिष्कृत हो गये थे, वे चाहे आर्य अथवा म्लेच्छभाषी ही क्यों न हों उन्हें दस्यु कहा जाता था । महाभारत में उल्लेख आता है कि अर्जुन ने दरदों सहित, कम्बोज तथा उत्तर-पूर्व के दस्यु जाति को परास्त किया था । दरद जातिकाश्मीर के उत्तर रहती थी । कम्बोज दक्षिण-पश्चिम रहते थे । अनास अर्थात चिपटी नाक वाले तिब्बती होते है, उनकी दिशा उत्तर-पूर्व है । काश्मीर के उत्तर-पूर्व दस्यु जाति का निवास स्थान महाभारत के अनुसार मान सकते हैं ।

पुराणो के अनुसार आभीर तथा म्लेच्छ हैं जिनके लिये श्राद्ध वर्जित है ( ब्रह्मा० ३ : १४, ४३, विष्णु० ५ : ३८ : १३; २५ : २७ : ४१७) । इनका मुख्य अस्त्र डण्डा था । अर्जुन ने इनका संहार किया था । इन लोगों ने १६००० स्त्रियों को बन्दी बनाया था ( विष्णु० ५ : ३८ : ५१, ७०, ८२, ८४ ) । मंख कोश में दस्यु के लिए लिखा गया है—

रिपुतस्करयोर्दस्युर्वर्यः प्राच्यप्रधानयो ॥ ६१५ ॥

**न शीधुचषकोऽप्यास्त येषामुत्सवतर्पणे ।**
**सहस्रसङ्ख्याः कुम्भानाम्भोवन्नगराद्धृताः॥ ३३० ॥**

३३०. जिन लोगों के पास उत्सव के समय एक शीधु चषक भी नहीं था, वे नगर से सहस्त्रों की संख्या से भरा कुम्भ हर लाये[२] ।

**केचिद् वन्धुवियोगार्ताः केचित् सञ्चयवञ्चिताः ।**
**विरुद्धत्वकृताक्षेपा जितरुद्धभुवः परे ॥ ३३१ ॥**

३३१. कुछ वन्धु वियोग से आर्त; कुछ संचित धन से वंचित होकर, कुछ विरोधियों के आक्षेप से, और कुछ भूमि ले लिये जाने से, दुःखी थे ।

**वहवो दुःखिताश्चेरुः शतैकीयोऽभवत् सुखी ।**
**तत्तद्रणविपन्नैश्च क्षतैः प्रेतैः स्ववेश्मनि ॥ ३३२ ॥**

३३२. इस प्रकार वहुत से लोग, दुःखित विचर रहे थे और सौ में कोई एक सुखी था, तत्-तत् रण में मृत तथा प्रहारों के कारण, अपने घर में मरे—

**उच्चावचैर्जनैः सार्धं सहस्रद्वितयी मृता ।**
**इत्थं षष्टितमे वर्षे श्रावणप्रतिपद्दिने ।**
**एकान्तविजयात् तेषां तत्तल्लोकक्षयोऽभवत् ॥ ३३३ ॥**

३३३. ऊँचे-नीचे[१] सव लोगों के साथ, दो सहस्त्र[२] लोग इस प्रकार, साठवें[३] वर्ष के श्रावण मास में प्रतिपद तिथि को, उनके एकान्त विजय से, तत्-तत् प्रकार से लोगों का विनाश हुआ ।

---

पाद-टिप्पणी :

३३०. ( १ ) शीधु : मदिरा = मद्य = सुरा, क्षेमेन्द्र ने लोकप्रकाश ( पृष्ठ ६ ) में अर्थ किया है। मुख्यतः अंगूर की शराव के लिये शब्द का प्रयोग होता रहा है। शीधुप का अर्थ शरावी होता है। इस वर्णन से प्रकट होता है कि जनता मुसलिम होने पर भी शराव पीती थी। शराव पीना वुरा नहीं माना जाता था।

( २ ) उक्त श्लोक का एक अर्थ और हो सकता है—जिन लोगों के पास उत्सव में देने के लिये एक प्याला सुरा भी नहीं थी, वे कुम्भ जल के समान सुरापूर्ण सहस्त्रों घड़े नगर से हर लाये।

उक्त श्लोक का एक अर्थ और हो सकता है—'जिनके पास उत्सव में देने के लिये एक प्याला शराव भी नहीं था, वे जल के समान सुरापूर्ण सहस्त्रों घड़े नगर से हर लाये'। भावार्थ होगा—जल के समान उस समय शराव का मूल्य नगण्य हो गया था, जवकि उत्सव में एक प्याला शराव भी नहीं दे सकते थे।

पाद-टिप्पणी :

३३३. ( १ ) उच्चावच : ऊँचे-नीचे, छोटे-वड़े, ऊँच-नीच ।

(२) दो सहस्र : फिरिश्ता लिखता है—'उन लोगों ने दो सहस्र सैय्यिदों के दल के लोगों को हत किया ( ४८४ )।'

तवक्काते अकवरी में उल्लेख है—'उस दिन दो हजार व्यक्ति मारे गये। यह घटना ८९२ हिजरी में घटी ( ४५३ = ६८६ )।'

( ३ ) साठवां वर्ष : सप्तर्षि सम्वत ४५६० = सन् १४८४ = विक्रमी १५४१ = शक १४०६ द्र० : ४ : ९२ ।

पूर्वमङ्कुरितः सैदवधात् पल्लवितः क्रमात् ।
परस्परं वैरतरुस्तद्दिने फलितोऽभवत् ॥ ३३४ ॥

३३४. सैय्यिद के वध से पहले अंकुरित, क्रम से पल्लवित[1], पारस्परिक वैर वृक्ष, उस दिन फलित हो गया ।

पौराणां वीरवर्गः प्रतिदिनमहरत् सञ्चय वञ्चयित्वा
दुःस्थावस्थः समस्तः कृषिफलहृतिभागास्त वास्तव्यलोकः ।
उच्छेद शाटवाटावनिसफलतरुष्विन्धनार्थं दुरन्तः
सैदद्वैधात् समुत्थः प्रवरपुरवरोपप्लवोऽभूत् समन्तात् ॥ ३३५ ॥

३३५ वीर ( सैनिक ) वर्ग प्रतिदिन ठग कर, पुरवासियो का संचित धन हरता रहा, पुरवासियो की दुरवस्था हो गयी और लोगो का कृषि फल हर लेते थे । शाटवाट[1] भूमि मे फलयुक्त वृक्षो का इन्धन के लिये दुरन्त उच्छेद किया गया । इस प्रकार सैय्यिदो के पारस्परिक द्वेष के कारण चारो ओर प्रवरपुर मे महान उपद्रव हुआ ।

अत्रान्तरे वधं श्रुत्वा सैदाः काश्मीरिकोज्झिताः ।
आलिखानमुखास्तस्थुर्दासमात्रावशेषिणः ॥ ३३६ ॥

३३६. काश्मीरियो द्वारा त्यक्त, अली खा प्रमुख सैय्यद, केवल कुछ दासो के साथ अवशिष्ट रह गये ।

द्वित्रान् निहत्य नगरे निवृत्तः सेत्वभावतः ।
मेयामहम्मदः प्रापत् तावत् स्वशिबिरान्तरम् ॥ ३३७ ॥

३३७ सेतु अभाव के कारण लौटकर, मीया मुहम्मद नगर मे दो-तीन लोगो को मारा, और अपने शिविर मे पहुँच गया ।

माकरादीन् हतान् श्रुत्वा सैदा भीता अपि व्यधुः ।
द्वितान् निहत्य नगरे पुनर्युद्धाय निश्चयम् ॥ ३३८ ॥

३३८. याकर आदि लोगो को मारा गया सुनकर, भयभीत भी सैय्यिद लोग, नगर मे दो-तीन आदमी को मारकर, पुन युद्ध के लिए निश्चय किये ।

---

पाद-टिप्पणी :

३३४ ( १ ) पल्लवित : श्रीवर के पल्लवित भाव को शुक ने ( शुक० : १ . १६२ ) व्यक्त किया है । द्र० : ४ : २३२ ।

पाद-टिप्पणी :

पाठ–'धाट' बम्बई ।

३३५. ( १ ) शाट वाट : अनुसन्धान अपेक्षित है । श्रीदत्त ने इस श्लोक का अनुवाद नहीं किया है ।

पाद-टिप्पणी :

३३६. 'काश्मीरिकोज्झिता' पाठ—बम्बई ।

पश्चात् प्रतीर्य मार्गेशो हन्यान्नस्तद्रणोऽस्त्विह ।
इत्युक्त्वा ताजभट्टस्तान् निन्ये त्रासविमुक्तताम् ॥ ३३९ ॥

३३९. 'पीछे से पार कर, मार्गेश हमलोगों का वध कर देगा, अतः रण यहीं पर हो'—ऐसा कहकर, ताजभट्ट ने उनलोगों का त्रास (भय) दूर कर दिया।

अस्मिन्नवसरे पारादागतो युक्तिपूर्वकम् ।
सैदानादाय रावत्रः स्वालयं तान् व्यसर्जयत् ॥ ३४० ॥

३४०. इसी अवसर पर सैय्यिदों को लेकर पार से आये हुये, रावत्र[1] ने युक्तिपूर्वक, उन्हें अपने घर भेज दिया।

कृत्वा बालनृपेन्दुं तं सैदाभ्रपटलोज्झितम् ।
पौरानानन्दयामासुर्मन्त्रिणो मरुतो यथा ॥ ३४१ ॥

३४१. मन्त्रियों ने मरुतों[1] के समान, उस बाल चन्द्र[2] को, सैय्यिद रूप मेघ पटल से रहित कर, पुरवासियों को आनन्दित किया।

---

पाद-टिप्पणी :

३४०. ( १ ) रावत्र : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : १ : ८६ तथा २ : १२।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'सैय्यिद मुहम्मद पुत्र सैय्यिद हसन ने गदाय नामक व्यक्ति, जो रावत्र जाति का था, उसके यहाँ शरण लेकर मोर्चेबन्दी कर ली ( ४५३–६८६ )।'

तवक्काते अकबरी के दोनों पाण्डुलिपियों में 'रावत' लिखा है। लीथो संस्करण में 'रावत' शब्द 'रावण' हो गया है। फिरिश्ता के लीथो संस्करण में 'रवात' लिखा है। द्र० : क्षेमेन्द्र : लोक० : पृ० : ४। 'रावत्र' का उल्लेख महाकवि, धनुर्विद्या पण्डित के साथ किया गया है। अतएव 'रावत्र' जाति एक प्रतिष्ठित जाति थी। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में रावत्र ( रावत ) प्रतिष्ठित ब्राह्मण जाति है। कुछ विद्वान रावत्र को राजपुत्र का अपभ्रंश मानते हैं।

पाद-टिप्पणी :

'नृपेन्दुं तं' पाठ—बम्बई।

३४१. ( १ ) मरुत : वैदिक साहित्य में सैन्य संघटन एवं सैनिक संचालन का प्रतीक देवता है। ऋग्वेद में तैंतीस सूक्त मरुत को समर्पित किया गया है। मरुत एक गण अथवा देव समूह रूप में चित्रित किये गये हैं। उनका निर्देश बहुवचन में ही सर्वत्र प्राप्त होता है। इनकी संख्या, सात, इक्कीस तथा साठ कही गयी है। इन्हें रुद्र का तथा पृश्नि का पुत्र कहा गया है। रुद्रिय गण, पृश्नि मातार—इनका नाम पिता एवं माता के कारण पड़ा है। सभी एक-दूसरे के भाई तथा समवयस्क हैं। उनका आवास एक है। इनकी पत्नी का नाम रोदसी है। इनका रथ स्वर्णिम है। वायु के समान वेगवान हैं। वायु की ध्वनि ही इनकी ध्वनि है। इनका कार्य पानी बरसाना है। झंझावात के देवता हैं। वैदिकोत्तर ग्रंथों में इन्हें 'वायु' माना गया है। मरुत ज्ञानी, दूरदर्शी, कवि, उत्तम सैनिक, उग्र तथा शत्रुहन्ता हैं। शत्रुओं को स्थानभ्रष्ट कर देते हैं। उनका शिरस्त्राण हिरण्यमय होता है। उनके स्कन्ध पर भाला, अग्नि, सदृश तेजस्वी अस्त्र रहता है। कुठार एवं धनुष धारण करते हैं। सात-सात सैनिक पंक्तियों में उनचास होते हैं। प्रत्येक पंक्ति के दोनों पार्श्वों में एक पार्श्वरक्षक होता है। इस प्रकार रक्षक चौदह होते हैं। उनचास एवं चौदह

दुर्योधनैकशरणाः कृतशल्ययोगा
ये धर्मजातिविरसाः कलिदत्तकर्णाः ।
अन्यायवृत्तिधृतराष्ट्रकृतावसादा-
स्ते कौरवा इव रणे न जयं लभन्ते ॥ ३४२ ॥

३४२ एकमात्र दुर्योधन[1] के शरणवाले ( दुष्ट लडाई लडनेवाले ) शल्य[2] द्वारा सहायता प्राप्त ( उत्पीडक ), धर्मराज[3] के प्रति विद्रोही (धर्म एव जाति के प्रति उदासीन), कलह के लिये कर्ण[4] का लगानेवाल ( कलह मे सर्वदा सावधान ), अन्याय वृत्ति से धृतराष्ट्र[5] वश का अवसान करनेवाल ( अन्याय वृत्ति से सम्पन्न राष्ट्र को नष्ट करनेवाले ), जो लोग हैं, कौरवो के समान युद्ध म विजय प्राप्त नही करते ।

---

का याग तिरसठ हाता है। मरुता का एक गण बिना मघ इम प्रकार तिरसठ सैनिको का होता है। श्रीवर न मरुतों क गुणों की तुलना मन्त्रियों म किया है। पुराणा में मरुत कश्यप एव दिति क पुत्र माने गये है। सात वात स्कन्धों के निवासी है ( वायु० १०१ २९ )। इनर अश्व का नाम पृषत है। वायुकोण के दिक्पाल है। वायु० ६७ १२९ )।

( २ ) बालचन्द्र बाग्र सुल्तान मुहम्मद। तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'समस्त विद्रोही एकत्र हाकर मुहम्मदशाह के अभिवादन हेतु पहुँचे ( ४५३–६८६ )।

फिरिश्ता लिखता है—'काश्मीरी एक गाल बना कर राजा के प्रासाद में पहुँच। उन्होंने बालक राजा को अपने हाथा स हिजरी ८९२ म ताज पहनाया ( ४८८ )।'

म्युनिख पाण्डुलिपी में उल्लेख है—'काश्मीरी अमारों नौशहर क किल में प्रवेश कर, सुल्तान का अभिवादन किया ( ८०–ए० बी० )।'

पाद-टिप्पणी .

३४२ (१) दुर्योधन कौरव वशीय, धृतराष्ट्र पुत्र, महाभारत का कारण दुर्योधन था ( द्र० १ १ १९८ )।

( २ ) शल्य मद्र का राजा था। पाण्डुपत्नी माद्री का भाई तथा माद्रीपुत्र नकुल एव सहदेव का सगा मामा था। कौरवपक्ष स युद्ध किया था। महाभारत युद्ध के सालहवें तथा सत्रहवें दिन कर्ण का सारथी बना था। कर्ण की मृत्यु पश्चात अट्ठारवें दिन कौरव सेनापति बना था। कौरवपक्ष स युद्ध करता था परन्तु विजय पाण्डवों की चाहता था। अर्जुन द्वारा युद्ध में मारा गया था ( आदि० १८५ १३-१४, १८९ २३–२९, कर्ण० ३१ ५८–६०, शल्य० ४६–२८।

( ३ ) धर्मराज पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर द्र० १ १ २३।

( ४ ) कर्ण कुन्ती का सूय द्वारा ज्येष्ठ पुत्र एव युधिष्ठिर का ज्येष्ठ भ्राता। दुर्योधन का पक्षपाती एव कौरवों का समर्थक ( द्र० १ : १ १९९ १ ७ १४०, १५५।

( ५ ) धृतराष्ट्र कौरव राजा और विचित्र वीय का पुत्र था। दुर्योधन आदि एक शत कौरव भ्राताओं का पिता था। वेदव्यास क नियोग स अम्बिका के गर्भ स जन्म लिया था। माता के शाप क कारण अन्धे हो गये थे। अम्बालिका के गर्भ स पाण्डु हुये थे। धृतराष्ट्र अन्धे थे अत पाण्डु राजा बने। पाण्डु की मृत्यु पश्चात धृतराष्ट्र राजा हुआ। गान्धारी उनकी धर्मपत्नी थी। गान्धारी क गर्भ स १०० पुत्र हुय। उनकी सज्ञा कौरव पड़ी।

राजधानीं समानीय नवां पद्मपुरान्तरात् ।
खानगाहं नवीचक्रुर्दग्धं श्रीनगरान्तरे ॥ ३४३ ॥

३४३. पद्मपुर[1] से लाकर, नवीन राजधानी ( नृपावास ) बनवाया और श्रीनगर में दग्ध खानक़ाह[2] को नवीन बना दिये ।

भाभसैदहमादानखानगाहो नदीतटे ।
पूर्णस्तत्पुण्यसंभारस्तदाकार इवोत्थितः ॥ ३४४ ॥

३४४. नदी के तट पर पूर्ण, भाभ ( बाबा ) सैय्यिद हमदान[1] खानक़ाह, इस प्रकार लग रहा था, जैसे उन मन्त्रियों का पुण्य ही खानक़ाह के आकार में खड़ा है ।

सर्वस्वमपहृत्याथ सैदास्ते सकुटुम्बकाः ।
मण्डलादालिखानाद्या निरवास्यन्त मन्त्रिभिः ॥ ३४५ ॥

३४५. मन्त्रियों ने सब सम्पत्ति अपहृत कर, कुटुम्ब सहित अली खांन आदि सैय्यिदों को मण्डल से निर्वासित कर दिया[1] ।

पाद-टिप्पणी :

३४३. ( १ ) पद्मपुर = पानपुर : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : ५ ६०; १ : ६ : १; ४ : १३१; जोन० : श्लोक ५५१ ।

( २ ) खानक़ाह : सैय्यिद अली हमदानी का खानक़ाह । द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : २ : १२२; ३ : १७७, १८४, १९३, १९७, २००; ४ : ११७ : ३१७ । पूर्व काल में अली हमदानी ने यहाँ नमाज पढ़ने का ऊँचा चबूतरा बनाया था । सिकन्दर बुतशिकन ने सन् १३९६-१३९७ ई० में एक खानकाह का निर्माण कराया । वह खानकाह मुअल्ला के नाम से प्रसिद्ध हुआ । उसने इसके व्यय के लिये तीन गाँव, वाची, थोरा तथा ननावानी वक्फ किया था । इसमें आग लग जाने पर, हसन शाह ने इसका पुनः निर्माण कराया । काष्ट निर्माण का यह दर्शनीय स्थान है ।

पाद-टिप्पणी :

३४४. ( १ ) हमदान : प्राचीन नाम इक्बेटना है । फारस में है । एक शहर है । यहाँ के निवासी मीर सैय्यिद मुहम्मद हमदानी थे । उन्होंने काश्मीर में मुसलिम धर्म का प्रचार किया था । काश्मीर में २२ वर्ष की आयु में आया था ( सन् १३९३–१३९४ ई० ) । सिकन्दर बुतशिकन उसका शिष्य बन गया था । उसने हमदानी के लिए खानकाह निर्माण कराया था । सिंहभट्ट ( सूहभट्ट ) को मुसलिम धर्म में दीक्षित कर उसका नाम सैफुद्दीन रखा था । सूहभट्ट की पुत्री से विवाह किया था । वह बीबी मार्जी के नाम से प्रसिद्ध हुई थी । द्र० : ४ : ३१७ ।

पाद-टिप्पणी :

३४५. ( १ ) सैय्यिद निर्वासन : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'सैय्यिद अली खां तथा अन्य सैय्यिदों को निर्वासित कर दिया गया ( ४५३–६८६ ) ।'

फ़िरिश्ता लिखता है—'उन लोगों (काश्मीरियों) ने जोर दिया कि सैय्यिद अली खां तथा अन्य सैय्यिदों को निर्वासित कर दिया जाय ( ४८८ ) ।'

म्युनिख पाण्डुलिपि में उल्लेख है—'सैय्यिद लोग पुनः एकबार निर्वासित कर दिये गये । उनकी सम्पत्ति जब्त कर ली गयी और काश्मीर के अमीरों

एकमत्येष्वमात्येषु काश्मीरेष्वविशङ्किताः ।
ययुः परशुरामाद्याः स्वदेशं प्राप्तसत्क्रियाः ॥ ३४६ ॥

३४६. काश्मीरी मन्त्रियों के एकमत हो जाने पर, अविशंकित परशुराम[1] सत्कार प्राप्त कर, अपने देश लौट गया।

शिशौ दत्त्वा राज्यं वयमिह भजामः सुखमिति
व्यधुः स्वार्थं शिष्टा गलितमतयः सैदपतयः ।
हतेष्वेवं तेषु प्रसभमभजन् मन्त्रिपदवीं
परे तत्तज्जुष्टां विधिरिह बलीयान् न पुरुषः॥ ३४७ ॥

३४७ शिशु को राज्य देकर, हमलोग सुख का भोग करेंगे, इस प्रकार शिष्ट एवं निर्बुद्धि, सैय्यिदपति स्वार्थ साधन में लग गये,—उन लोगों के मार दिये, जानेपर दूसरे लोग हठात् उनलोगों द्वारा प्राप्त मन्त्रि पदवी को ग्रहण कर लिये—विधाता बलवान[1] होता है, न कि पुरुष।

मेयाहस्सनसामग्रीं नाग्रामादिप्रमेयजाम् ।
ज्यल्लालठक्कुरोऽगृह्णात् तत्पुत्रो लहरादिकम् ॥ ३४८ ॥

३४८ जल्लाल ठाकुर ने नाग्राम[1] के मोया हस्सन की सामग्री तथा उसके पुत्र ने लहर[2] आदि को लिया।

गृहीत्वा वाङ्गिलं राष्ट्रं स्वकं मार्गेशमागतः ।
स सूयादिप्रमेयांश्चाभजच्छ्रीमान् ज्यहाङ्गिरः ॥ ३४९ ॥

३४९ श्रीमान् जहाँगीर ने अपना वागिल[1] राष्ट्र लेकर मर्गेश के पास आया और सूया[2] आदि प्रमेयों को भी प्राप्त कर लिया।

---

जिन्होंने विद्रोह में सफलता प्राप्त की थी उनकी जागीर परस्पर बाँट लिये ( ८० ए०-बी० )।'

पाद-टिप्पणी :

३४६. ( १ ) परशुराम : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'परशुराम को पर्याप्त धन देकर विदा किया ( ४५३-६८६ )।'

किन्तु फिरिश्ता कुछ और लिखता है—'काश्मीरियों ने राजा के मन्त्रि परिषद से जम्मू के राजा परशुराम को हटाने की माँग किया। उनकी माँगें मन्त्रियों को निर्वासित करने तथा परशुराम के हटाने की मान ली गयी ( ४८४ )।'

पाद-टिप्पणी :

३४७ ( १ ) बलवान : प्रसिद्ध पद है—
पुरुष बली नहिं होत है, बली होत भगवान।
भिल्लिन लूटी गोपिका वहि अर्जुन वहि बाण॥

पाद-टिप्पणी :

३४८. ( १ ) नाग्राम : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० : २ : १०, ३ : २४।

( २ ) लहर : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : ५ : १२ तथा जोन० : श्लोक १६७।

पाद-टिप्पणी :

३४९. ( १ ) वागिल : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० : २ : २०; ४ : १०७।

माक्षाश्रमादिराष्ट्रेषु स्वाम्यभूत् सैफडामरः ।
अन्यां च ग्रामसामग्रीं सोदरेषु यथोचिताम् ॥ ३५० ॥

३५०. सैफ डामर मक्षिका[1] आश्रम आदि, राष्ट्रों का स्वामी हुआ और सहोदर भाइयों में यथोचित अन्य ग्राम सामग्री आदि वितरित कर दिया ।

परिहासपुराधीशो जोनराजानकोऽभवत् ।
सैन्याधिकारनिर्दैन्यस्वातन्त्र्योज्झितयन्त्रणः ॥ ३५१ ॥

३५१. सैन्याधिकार प्राप्त, स्वतन्त्र एवं नियन्त्रण रहित, जोन राजानक परिहासपुर[1] का स्वामी बना ।

एब्राहिमश्च मार्गेशो द्वारपालाधिकारभाक् ।
चक्रे सैदादिभृत्यानां रक्षामक्षामपौरुषः ॥ ३५२ ॥

३५२. पराक्रमी एवं द्वारपालाधिकारी, मार्गेश इब्राहीम ने सैय्यिद भृत्यों की रक्षा की ।

राज्ञोऽधिकारसामग्रीं भूमेर्द्रव्यावलीमिव ।
महाभूता इवामात्याः संभूय व्यदधुर्नवाम् ॥ ३५३ ॥

३५३. भूमि की द्रव्यावली के समान, राजा के अधिकार सामग्री को महाभूतों[1] सदृश, अमात्यों ने मिलकर नवीन बना दिया ।

एको मार्गपतेः पक्षष्ठक्कुरो डामरोऽपरः ।
राजानकीयो दीप्तास्ते सर्वेऽग्नय इवाद्युतन् ॥ ३५४ ॥

३५४. मार्गपति का एक पक्ष ठाकुरों का, दूसरा पक्ष डामर और तीसरा राजानक का दीप्त में सब अग्नि[1] के समान चमक रहे थे ।

---

( २ ) खूया : खूय परगना है । अबुल फजल, मूरक्राफ्ट, वान हुगेल, वेट्स ने गजेटियर में उल्लेख किया है । पाटन तथा तिलग्राम के उत्तर में है । द० : १ : ४ : ३२ ।

पाद-टिप्पणी :

३५०. ( १ ) मक्षिका आश्रम : माक्षाश्रम : मांच होम परगना : पाटन जिला में है । श्रीनगर के दक्षिण-पश्चिम है । मूरक्राफ्ट : ट्रेवेल० : २ : ११३, वान हुगेल काश्मीर : २ : २०६, वाइन ट्रेवेल० : १ : २७२, वेट्स गजेटियर : २ । क्षेमेन्द्र ने माक्षाश्रम का उल्लेख किया है ( पृ० ३७ ) । इससे प्रकट होता है कि क्षेमेन्द्र काल में इस स्थान का अस्तित्व था और यह स्थान चार शताब्दियों तक अपने मूल नाम से ही अभिहित होता था ।

पाद-टिप्पणी :

३५१. (१) परिहासपुर : द्रष्टव्य परिशिष्ट : 'ख' पृष्ठ ५४१ । जोनराजतरंगिणी ।

पाद-टिप्पणी :

३५३. ( १ ) महाभूत : (१) पृथ्वी, (२) जल, (३) अग्नि, (४) वायु एवं (५) आकाश ।

पाद-टिप्पणी ।

३५४. ( १ ) अग्नि : यहाँ तीन पक्षों का

आत्मेव निष्क्रियः साक्षिमात्रं बालनृपोऽभवत् ।
सर्वं प्रकृतिनिष्पन्नं राज्यतन्त्रमभूत् तदा ॥ ३५५ ॥

३५५. वह बालक राजा आत्मा के समान, निष्क्रिय एवं साक्षी[1] मात्र था। उस समय सम्पूर्ण राजतन्त्र मन्त्रियो द्वारा सम्पन्न होता था।

विभजन्तो भुवं सर्वां यथेच्छं स्वेषु केवलम् ।
अलेखयन् नृपं पत्रे स्वाङ्गीकाराक्षरत्रयीम् ॥ ३५६ ॥

३५६ अपने लोगो मे स्वेच्छापूर्वक, पृथ्वी का विभाजन करते हुए, राजा द्वारा पत्र पर स्वीकार-सूचक, केवल तीन अक्षर ( स्वाङ्गीकार) लिखा लिये।

कष्टप्रदाः प्रजानिष्टा दुष्टभृत्यविचेष्टिताः ।
यथेष्टं समचेष्टन्त हृष्टास्तेऽरिष्टचेष्टया ॥ ३५७ ॥

३५७ कष्टप्रद, प्रजाओ के अनिष्ट, दुष्ट भृत्यो द्वारा दुष्कर्मी प्रसन्न वे सब, इच्छानुसार दुश्चेष्टा मे रत रहते थे।

स्वपक्षरक्षणे दक्षाः परपक्षेष्टखण्डनाः ।
तार्किका इव ते तस्थुर्वितण्डावादशिक्षिताः ॥ ३५८ ॥

३५८ स्वपक्ष रक्षण मे दक्ष, परपक्ष खण्डन मे रत, वितण्डावाद[1] मे, शिक्षित, वे लोग तार्किक[2] सदृश हो गये थे।

---

उल्लेख किया गया है। उनकी उपमा तीन प्रकार की अग्नियों—गार्हपत्य, आह्वनीय एवं दक्षिणाग्नि से दी गयी है।

पाद-टिप्पणी

३५५ ( १ ) साक्षी आत्मा को इस जगत में जीवन धारण करने और ईश्वर के साक्षी होने का प्रमाण माना गया है। जिस प्रकार आत्मा निष्क्रिय, निर्विकार आदि होती है, उसी प्रकार बालक राजा आत्मा के समान राजसत्ता का साक्षी मात्र था। अपनी आंखो से किसी घटना को देखनेवाला साक्षी होता है। परमात्मा भी साक्षी कहा गया है क्योंकि वह सब कुछ देखता है तथापि निरपेक्ष रहता है।

पाद-टिप्पणी :

३५६ 'स्वाङ्गी' पाठ—बम्बई।

पाद-टिप्पणी :

३५८. (१) वितण्डावाद गौतम ने वितण्डा की परिभाषा दिया है—'प्रतिपक्ष स्थापना हीनो वितण्डा।' सदोष आक्षेप, निराधार छिद्रान्वेषण, निरर्थक तर्क-वितर्क अथवा प्रचलित भाषा में तूँ-तूँ, मैं-मैं करना वितण्डावाद कहा गया है।

( २ ) तार्किक : नैयायिक, तर्कशास्त्र पारगत, वाद-विवाद निपुण व्यक्ति को तार्किक कहते है। किसी वस्तु के विषय में अज्ञात तत्व को कारणोपपत्ति द्वारा निश्चित करनेवाली उक्ति का बोध तर्क से होता है। न्याय के सोलह पदार्थों में एक तर्क है। प्राचीन भारतीय दर्शनशास्त्र में तर्कशास्त्र नामक कोई ग्रन्थ नही है। यह न्याय के अन्तर्गत है। पश्चिम के लोजिक शब्द का अनुवाद तर्क है।

मण्डलं तापयन्ति स्म सर्वे तीक्ष्णकरा न के ।
कल्पान्तकाले भुवनं द्वादशार्का इवोदिताः ॥ ३५९ ॥

३५९. कल्पान्त काल में उदित द्वादश सूर्य[1], जिस प्रकार भुवन को तप्त करता है, उसी प्रकार सब ही तीक्ष्ण करारोपण कर, कौन-से मण्डल को तप्त नहीं करते थे ?

श्वाक्रन्दितोल्कादाहैश्च भूरिभूकम्पसंपदा ।
वेपमानो जनो जज्ञे प्रत्यासन्नमुपद्रवम् ॥ ३६० ॥

३६० कुत्तों के आक्रन्दन[1], उल्का[2] दाहों एवं बार-बार भूकम्प[3] से लोग काँपते हुए, उपद्रव का आगमन जान लिये ।

शिशौ नृपे व्यधुः पीडां विशां चैतन्नियोगिनः ।
आमया इव देहानां वार्द्धके शक्तिवर्जिते ॥ ३६१ ॥

३६१. शिशु नृपति के काल में, नियोगियों[1] ने प्रजाओं को उसी प्रकार पीड़ित किया, जिस प्रकार शक्ति रहित वृद्धावस्था में रोग शरीर को ।

---

भारत में इस प्रकार का कोई स्वतन्त्र ग्रंथ नहीं है । न्यायदर्शन में 'प्रमाण' नाम का विषय या पदार्थ है । प्रमाण शास्त्र के अन्तर्गत ही तर्कशास्त्र को रखा जा सकता है । प्रमाण की संख्या चार—(१) प्रत्यक्ष, (२) अनुमान, (३) उपमान एवं (४) शब्द है । बौद्ध तर्कशास्त्री धर्म नीति के अनुसार तीन हेतु अनुमान के कारण हैं । उसके अनुसार पक्ष, सपक्ष और असपक्ष या विपक्ष हैं । श्रीवर ने स्वपक्ष अर्थात पक्ष, विपक्ष अर्थात परपक्ष का उल्लेख किया है ।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'प्रत्येक काश्मीरी नेतृत्व का दावा करता था । अतः अल्प समय में उनके मध्य विरोध उत्पन्न हो गया । और राज्य के कार्य अव्यवस्थित हो गये (४५३–३८६) ।'

फिरिश्ता लिखता है—'प्रत्येक काश्मीरी अपनी सेवा के बदले में कुछ माँग करता था, राज्य उन्हें देने में असमर्थ था । अतएव इससे गृहयुद्ध आसन्न प्रतीत होता था ( ४८४ ) ।'

पाद-टिप्पणी :

'तीक्ष्ण' पाठ—बम्बई ।

३५९. ( १ ) द्वादश सूर्य : द्वादश सूर्य के नाम महाभारत के अनुसार (१) दिवस्पुत्र, (२) बृहद्भानु, (३) चक्षु, (४) आत्मा, (५) विभावसु, (६) सवितृ, (७) ऋचीक, (८) अर्क, (९) भानु, (१०) आशावह, (११) रवि तथा (१२) विवस्वत (आ० : १ : ४०) हैं। वे द्वादश सूर्य वर्ष के १२ मासों के ही रूप हैं । सूर्य से बारह की संख्या का भी बोध होता है ।

मान्यता है कि प्रलय काल में द्वादश सूर्य अपनी पूर्ण गरिमा में तपते हैं, जिसमें संसार भस्म हो जाता है।

पाद-टिप्पणी :

३६०. ( १ ) कुत्ता का आक्रन्दन : कुत्तों का रोना घोर अशुभ सूचक है। मैंने स्वयं अनुभव किया है कि कुत्ता जब पास-पड़ोस में रोता है, तो महाल में किसी न किसी की मृत्यु हो जाती है अथवा दुर्घटना घटती है । यदि घर में रोता है, तो कुल में अशुभ घटना या किसी की मृत्यु होती है ।

( २ ) उल्का : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० ४ : २१४ ।

(३) भूकम्प : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : २ : ११४ ।

पाद-टिप्पणी :

३६१. (१) नियोगी : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी :

नृपतेर्यदि मत्सरात् सहाया
रचयन्ति प्रबला मिथो विरोधम् ।
कुपिता इव धातवः शरीरं
क्षपयन्ति प्रसभं महर्द्धि राज्यम् ।। ३६२ ।।

३६२. राजा के प्रबल सहायक, यदि मात्सर्यवश परस्पर विरोध करते हैं, तो हठात् समृद्ध राज्य को उसी प्रकार नष्ट कर देते हैं, जिस प्रकार कुपित धातु[1] शरीर को ।

ये सर्वकण्टकास्तीक्ष्णाः परेषां छिद्रकारिणः ।
करभाणामिवैतेषां ते तेऽप्यासन्नतिप्रियाः ।। ३६३ ।।

३६३ जो सब कण्टक, तीक्ष्ण एवं दूसरो के छिद्रकारी थे, वे ( कण्टकप्रिय ) ऊंटो[1] के समान उन लोगो को अति प्रिय हो गये ।

पैशुनोपायनाद् भेदं नयद्भिः प्रतिवासरम् ।
चाक्रिकैः कृतसञ्चारैर्वैरं प्रौढिमनीयत ।। ३६४ ।।

३६४ पैशनोपायन ( चुगुलखोरी ) द्वारा प्रतिदिन भेद उत्पन्न करनेवाले संचरणशील, षड्यन्त्रकारियो ने बैर को अत्यधिक बढा दिया ।

उक्तं यन्नैव केनापि स्वबुद्ध्या परिकल्पितम् ।
तेषां तद्भृत्यपैशुन्यं हृद्यं काव्यमिवाभवत् ।। ३६५ ।।

३६५ जिसको किसी ने नही कहा, अपनी बुद्धि से परिकल्पित, उनके भृत्यो का पैशुण्य, उन लोगो के लिये, काव्य के समान आल्हादक हो गया ।

---

जैन० २ : ३० ३०, राज० ६ ८ । मुसलिम काल में तहसीलदार थे ।

पाद-टिप्पणी :

३६२. ( १ ) धातु : धातु की उपमा श्रीवर ने श्लोक १ : ७ ६६, ११० तथा १८५ में दिया है । आयुर्वेद के अनुसार धातुयें ७ है—(१) रस, (२) रक्त, (३) मास, (४) मेद, (५) अस्थि, (६) मज्जा और (७) शुक्र । भोज्य एव पेय पदार्थ का पचकर रस बनता है । उसका स्थान हृदय है । धमनियो द्वारा समस्त शरीर में पहुँचता है । रक्त से मास बनता है । मास से मेद, मेद से अस्थि, अस्थि से मज्जा और मज्जा से शुक्र बनता है । बात, पित्त एवं कफ की सज्ञा धातु से दी गयी है । पचभूत (आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी) तथा पच पदार्थ (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गध) तन्मात्राओं को भी धातु कहते है ।

मख अपने कोश मे धातु के विषय में लिखता है—

श्लेष्मादिरस्थिरक्तादि महाभूतानि तद्गुणा ॥२६५॥
इन्द्रियाण्यश्मविकृति शब्द योनिश्च धातव ॥२६६॥

पाद-टिप्पणी

३६३ ( १ ) ऊँट करभ का अनुवाद ऊँट किया है । करभ हाथी के बच्चा को भी कहते है श्रीदत्त ने हाथी अनुवाद किया है परन्तु कांटा अर्थात

इत्थं मन्त्रिहृदादर्शवैपद्यान्योन्यबिम्बिताः ।
तद्भृत्यपैशुनश्वासैर्मालिन्यमभजन्त ते ॥ ३६६ ॥

३६६. इस प्रकार वैशद्य के कारण, अन्योन्य प्रतिबिम्बित, मन्त्रियों का हृदय रूप दर्पण, उन भृत्यों के पैशुन श्वासों से मलिन[1] हो गया ।

अथ मार्गपतेरुच्चपदवीं प्राक्क्रमागताम् ।
नासहन्तापरे रम्यां चक्रवाका इवैन्दवीम् ॥ ३६७ ॥

३६७. मार्गपति के पूर्व से क्रमागत, उन्नत एवं रम्य पदवी दूसरे लोगों को उसी प्रकार अभीष्टकर नहीं हुई, जिस प्रकार चक्रवाकों[1] को पूर्ण चान्दनी ।

---

कटीला घास या पादप हाथी को नहीं ऊंट को प्रिय होता है । बबूल की पत्ती जिसमें काँटा होता है, हाथी नहीं खाता है । परन्तु ऊंट बबूल की पत्ती प्रसन्नता से उसी प्रकार ग्रहण करता है, जिस प्रकार तीती नीम की पत्ती को । अतएव करभ का अनुवाद प्रसंग वर्णन से ऊंट ही बैठता है ।

पंच सहस सादी परे, करभ कट्टि सत पेत ।
डेठ अहन रण भुंम मह, वही श्रोण मिल रेत ॥
॥ परमाल रासो ॥

पाद-टिप्पणी :

३६६. (१) मलिन : दर्पण पर यदि श्वास पड़ता है तो उस पर भाप की परत बैठ जाती है । दर्पण साफ दिखाई नहीं पड़ता । उसमें प्रतिबिम्ब स्पष्ट नहीं होता । भाप साफ कर देने पर दर्पण शुद्ध हो जाता है । मलिनता न होने के कारण उसमें रूप एवं प्रतिबिम्ब स्पष्ट देखा जा सकता है ।

पाद-टिप्पणी :

३६७. (१) चक्रवाक : इसका उल्लेख ऋग्वेद, यजुर्वेद एवं अथर्व वेदों में मिलता है । ऋग्वेद एवं यजुर्वेद में अश्वमेध की बोलियों की तालिका में इसका नाम है । अथर्व वेद में चकवा एवं चकई के दाम्पत्य व्रत का विवरण मिलता है । ( ऋ० : २ : ३९ : ३; मै० सं० : ३ : १४ : ३; १३; वा० सं० : २४ : २२, ३२; २५ : ८; अथ० : १४ : २ : ६४ ) । हंस कुल का पक्षी है । शीत ऋतु के आरम्भ में उत्तर भारत में इसका आगमन होता है और ग्रीष्म आरम्भ होते ही चला जाता है । दक्षिणी पूर्वी यूरोप, मध्येशिया, उत्तरी अफ्रीका में मिलता है, दक्षिण भारत में यह नहीं जाता । उक्त प्रदेशों के सरोवरों, झीलों, नदियों के तट इनको प्रिय है । वहीं प्रायः निवास करते हैं । इनकी बोली कर्कश होती है । इसीलिय कवियों ने इनका नामकरण 'चर्कवाक्' रखा है । कवि कल्पना है कि रात्रि में वह अपनी पत्नी से विलग हो जाता है । चान्दनी रात उसके विरह की रात होती है, जबकि वह सबको प्रिय लगती है । उनका मिलन सूर्योदय के समय पुनः हो जाता है । चक्रवाक अपने जोड़े के साथ रहते है । समूह में भी चलते हैं । वह अण्डा देने के लिये घोसला नहीं बनाते । पर्वतीय गर्तो एवं छिद्रों में चकई अण्डा देती है । अण्ड फूटते ही बच्चे फुदकने लगते है । कवियों की संयोग एवं वियोग सम्बन्धी कोमल व्यंजनायें, इसके साथ सम्बन्धित है । चकवा लगभग एक हाथ लम्बा होता है । इसके शरीर पर विविध रंग के पर होते है । पीठ तथा छाती का रंग नारंगी तथा पीछे की ओर का खैरा होता है । बीच में काली और लाल धारियां भी होती हैं । पूँछ का रंग हरा होता है । पंखों पर अनेक रंगों का मिश्रण रहता है । यह पर्वतों पर रहना अधिक पसन्द करता है ।

शार्ङ्गधर पद्धति में उल्लेख मिलता है कि चन्द्र-किरणों को पीता जीवित रहता है (१ : २३) । इस-

इहास्माभिर्हताः सैदा यद्भीत्या विद्रुतोऽप्ययम् ।
नृपस्यास्य सभाज्येष्ठः स्थापितः कुरुते मदम् ॥ ३६८ ॥

३६८. हमलोगो ने सैय्यिदो को मार डाला, जिसके भय से भागा हुआ भी, इस राज्य का सभा ज्येष्ठ बनकर, गर्व कर रहा है।'

इत्यादि शृण्वस्तद्भृत्यवर्गान्मार्गपतिस्ततः ।
ताटस्थ्य राजकार्येषु विरक्तः सोऽभजद् रुषा ॥ ३६९ ॥

३६९ इत्यादि बातो को उसके भृत्य से सुनकर, मार्गपति विरक्त होकर, राजकार्यों म क्रोध से तटस्थ रहने लगा।

बहामखाननयनोत्पाटनेन निजं वपुः ।
विशामनाशिषां पात्रं जोनराजानकोऽनयत् ॥ ३७० ॥

३७० जोन राजानक बहराम खाँ के नेत्रोत्पाटन के कारण, अपने शरीर का प्रजा के शाप का पात्र बना लिया।

शस्त्राधिपत्यानौचित्यनिग्रहानुग्रहक्रमैः ।
ग्रहाणामिव तेषां स क्रूरो राहुरिवाभवत् ॥ ३७१ ॥

३७१ शस्त्राधिपत्य के अनुचित निग्रह एव अनुग्रहो के कारण, ग्रहो मे राहु[1] के समान, उन ( मन्त्रियो ) में वह क्रूर हो गया।

छुन्दानकादिदेशस्थग्राम्याणामनियन्त्रणः ।
लोद्रभूम्यपहारेण तद्देशेशोऽपि सोऽभवत् ॥ ३७२ ॥

३७२ अनियन्त्रित उसने छुन्दानक[1] आदि, देश के ग्रामीणो के लोद्र भूमि का अपहरण कर देश का मालिक भी बन गया।

---

लिये इसे चन्द्रिकाजीवन एव चन्द्रिकापायी कहत है। कवियो की मान्यता है कि वह अन्धेरी रात्रि में अग्निकण खाता है। परन्तु यह इसलिय कहा जाता है कि वह जुगनू को खाता है जो ज्योति तुल्य अन्धेरी रात्रि में चमकते हैं। एक यह भी मान्यता है कि विप देखत ही इसकी आँखें लाल हो जाती हैं।

चकोर ( चुकर ) काश्मीर के चट्टानी पहाडियो तथा पर्वतीय ढाल पर काश्मीर उपत्यका के चारों ओर मिलता है।

पाद-टिप्पणी.

३७१. ( १ ) राहु द्र० . पाद टिप्पणी जान० श्लोक १६४ तथा ८०९। जैन० ४ ५८५। राहु नवग्रहो एक पापग्रह है। सिंहिका के गर्भ से उत्पन्न विप्रचित्त का पुत्र था। देवताओं की पंक्ति में बैठ कर छल से अमृतपान कर लिया। सूर्य एव चन्द्रमा ने यह कपट विष्णु से कह दिया। चक्र द्वारा विष्णु ने मुण्ड छिन्न कर दिया। अमृतपान के कारण मर नही सका। मुण्ड राहु तथा धड केतु ग्रह हो गये। इसी वैर के कारण ग्रहण काल में राहु सूर्य एव चन्द्र को ग्रसता है ( वायु० २३ ९०, ५२ ३७, ९२ ९, विष्णु० १ ९०, ८० १११, मत्स्य० १ ९, अ० २५० तथा २५१)।

पाद टिप्पणी

३७२ ( १ ) छुन्दानक किस स्थान के लिय

सैदद्वैधान्तरे लब्धैः सर्वत्र मुषितप्रजः ।
तत्पदार्थैर्गृहे पूर्णां कोष्ठागारावलीं व्यधात् ॥ ३७३ ॥

३७३. सैय्यिदों के मतभेद के अवसर पर, सर्वत्र प्रजा को लूटकर, प्राप्त होनेवाले उनके पदार्थों से घर का कोष्टागार भर लिया ।

यत् कष्टेनार्जितं लोकैर्वलात्कारहृतं धृतम् ।
स्वं ब्रह्मदेयमिति तत् परस्वं वेत्ति लुब्धधीः ॥ ३७४ ॥

३७४. जिसे लोगों ने कष्टपूर्वक अर्जित किया था । उसे वलपूर्वक अपहृत कर लिया । वह लोभी व्रह्मदेय पराया धन अपना मानता था ।

संगृह्य वाहिनीः सर्वास्तदीयाहृतजीवनैः ।
और्वाग्निरिव तृप्तोऽसौ न वभूव कदाचन ॥ ३७५ ॥

३७५. वह सव वाहिनो ( नदी-सेना ) को संग्रहीत कर, उनके जीवन ( जल-प्राण ) को लेकर भी, वड़वाग्नि[1] सदृश, तृप्त नहीं हुआ ।

द्वेषान्निरर्थकाक्षेपे ग्रामे वा नगरान्तरे ।
नाशकद् रक्षितुं कश्चिद् वलिना तेन पीडितम् ॥ ३७६ ॥

३७६. द्वेपवश, अथवा निरर्थ आक्षेपपूर्वक, ग्राम अथवा नगर में उस वली के द्वारा पीड़ित ( व्यक्ति ) की कोई रक्षा नहीं कर सका ।

यदि धर्मधिया कश्चित् प्रवृत्तो दीनरक्षणे ।
स तन्महत्तरैं राजसदस्याप खलीकृतिम् ॥ ३७७ ॥

३७७. यदि धर्म वुद्धि से, कोई दीन रक्षा हेतु प्रवृत्त हुआ, तो राजसभा में ही, वह उसके अधिकारियों के अभद्रता का पात्र वना ।

स्वप्रमेयेषु वास्तव्यांल्लुब्धा निरपराधिनः ।
अन्येऽपि पीडयामासू रोगा इव नियोगिनः ॥ ३७८ ॥

३७८. अपने प्रमेयों ( साध्य ) में निरपरावी निवासियों को, दूसरे लोभी अधिकारियों ने भी, रोग की तरह पीड़ित किया ।

---

श्रीवर ने छुन्दानक लिखा है, निश्चित करना कठिन है । श्रीदत्त ने इसे स्थान तथा श्रीकण्ठ कौल ने नामवाचक शब्द माना है ।

पाद टिप्पणी :

३७५. ( १ ) वड़वाग्नि : द्रष्टव्य : पादटिप्पणी : जोन० : श्लोक : ५०६ । यह अग्नि समुद्र के गर्भ में रहती है । कालिकापुराण के अनुसार काम नाश हेतु शिव ने क्रोधानल उत्पन्न किया था । उसे व्रह्मा ने घोड़ी अथवा वड़वा रूप में समुद्र को दे दिया । वाल्मीकि रामायण के अनुसार वड़वाग्नि ऋषि का क्रोध स्वरूप तेज है । कल्पांत में विस्तृत होकर संसार को भस्म करता है ।

राजा शिशुर्गतवया बहवः सहाया
यत्रातिमत्सरभृताश्च मिथः स्वतन्त्राः ।
राज्याङ्गभङ्गमसमं नृपतेर्दिशन्त-
स्तत्राचिरात् समुदयन्ति न के ह्यनर्थाः ॥ ३७९ ॥

३७९ जहाँ राजा शिशु[1] हो, और बहुत से वृद्ध सहायक लोग परस्पर अति मात्सर्य युक्त, एव स्वतन्त्र हो, राजा के राज का अग-भग कर रहे हो, वहाँ शीघ्र ही कौन-से अनर्थ उठ खडे नही होते ?

अत्रान्तरे बाह्यदेशे यात्रार्थं यौ विसर्जितौ ।
एदराजानकष्ठक्कुराह्मदश्चापतुः पुरम् ॥ ३८० ॥

३८० इसी बीच बाह्य देश से, यात्रा के लिये भेजे गये, एद राजानक एव ठक्कुर अहमद मार्गेश के दर्शन के व्याज से, पुर मे प्रवेश किये ।

तद्दर्शनापदेशेन श्रुत्वा किमपि मन्त्रिणाम् ।
नगरे नागमद् दूतैर्मार्गेशः शङ्कितो भृशम् ॥ ३८१ ॥

३८१ दूतो द्वारा मन्त्रियो के ( षड्यन्त्र ) सुनकर, अत्यन्त शकित मार्गेश नगर मे नही गया ।

स सैफडामरेणाशु गत्वा स चकितो गृहे ।
वैदेशिकभटाह्वानात् साशङ्कः सोऽनयन्निशाम् ॥ ३८२ ॥

३८२ सैफ डामर सहित चकित वह घर जाकर, वैदेशिक[1] भटो को बुलाकर, सशंकित हो, उसने रात्रि व्यतीत किया ।

शङ्क्येषु सदनाप्तेषु प्रातस्तन्मतमास्थितः ।
अह्मदष्ठक्कुरो जोनराजानकमथावधीत् ॥ ३८३ ॥

३८३ शकनीय लोगो के प्रात सदन पहुँचने पर, उसकी सलाह मानकर, अहमद (अल्हाद) ठाकुर ने जोन राजानक का वध कर दिया ।

---

पाद-टिप्पणी

३७९ ( १ ) शिशु श्रीवर ने शिशु राजा के सम्बन्ध में तथा उससे होनेवाले परिणाम के विषय में एक राजनीतिक सिद्धान्त का प्रतिपादन जैन० ' ३ ४७३ में किया है ।

पाद-टिप्पणी

३८२ ( १ ) वैदेशिक भट काश्मीर की सेना में विदेशी सातवी शताब्दी से ही प्रश्रय पाते रहे हैं । सीमान्तवर्ती लडाकू जातियाँ काश्मीर की सेना में स्थान पाती रही है । सीमान्तवर्ती जातियो के हिन्दू से मुसलमान हो जाने पर नई स्थिति उत्पन्न हो गयी और विदेशी मुसलिम सैनिको पर सैय्यिद काश्मीरी सैनिको की अपेक्षा अधिक विश्वास करते थे ।

शस्त्रव्रणमुखोद्गच्छद्रक्तसंसिक्तमण्डपम् ।
तद्गृहे तं शवं दृष्ट्वा न को रोमाञ्चितोऽभवत् ॥ ३८४ ॥

३८४. शस्त्र के घाव से, शस्त्र व्रण युक्त मुख से निकलते रक्त से मण्डप सिक्त हो गया था और उससे घर उस शव को देखकर, कौन रोमांचित नहीं हो उठा ?

दत्तकन्यमयं जन्यमवधीद् गृहमागतम् ।
दिव्यं कृत्वापि साश्वस्तं धिग् भोगाभ्यासवासनाम् ॥ ३८५ ॥

३८५. इसने कन्या प्रदाता, गृहागत, एक आश्वस्त संबन्धी का, शपथ खाकर के भी, वध कर डाला—भोगाभ्यास वासना को धिक्कार है !

मिथोऽसहिष्णवो भेदान्मन्त्रिणः प्रभविष्णवः ।
विनश्यन्त्यचिरेणैवं द्रोहेणेत्यपि केचन ॥ ३८६ ॥

३८६. 'भेद के कारण परस्पर असहिष्णु एवं प्रभावशाली मन्त्री लोग इस प्रकार द्रोह से शीघ्र ही नष्ट हो जायगें'—ऐसा कुछ लोगों ने कहा ।

केऽप्यूचुः स यथा सैदानवधीन्मद्रपैः सह ।
वर्षेणैकेन तत्पापात् तद्वद् व्यापादितोऽरिभिः ॥ ३८७ ॥

३८७. कुछ लोगों ने कहा—'मद्रों के साथ उसने जिस प्रकार सैय्यिदों का वध कर दिया, उसी प्रकार एक वर्ष के भीतर उसी पाप से, वह भी शत्रुओं द्वारा मारा गया ।'

भृत्या वृथैव रक्ष्यन्ते पोषिता ये सहस्रशः ।
नैकोऽपि तेभ्यस्तस्यान्ते प्राणत्राणक्षमोऽभवत् ॥ ३८८ ॥

३८८. वृथा ही सहस्रों भृत्यों का पोषण कर, उनकी रक्षा की जाती है, उनमें से एक भी अन्त में उसकी प्राणरक्षा करने में समर्थ नहीं हुआ ।

अर्जितं यद् यथैवाशु तत् तथैव हृतं परैः ।
न तिष्ठन्ति चिरं गेहेष्वन्यायोपार्जिताः श्रियः ॥ ३८९ ॥

३८९. जो जिस प्रकार अर्जित किया गया, शीघ्र ही शत्रुओं ने उसी प्रकार (उसे) अपहृत कर लिया । पाप द्वारा अर्जित सम्पत्तियाँ चिरकाल तक घरों में नहीं रहतीं ।

पापं पुण्यं बलं दाक्ष्यं परं स्वं दूषणं स्तुतिम् ।
नो वेत्ति राजपुरुषः कदाचिद् विधुरे विधौ ॥ ३९० ॥

३९०. विधाता के प्रतिकूल होने पर, राजपुरुष पाप, पुण्य, बल, दक्षता, पर अपना दूषण-स्तुति कुछ नहीं समझता ।

वैदेशिकभटैः किं नस्त्याज्या सैन्याधिकारिता ।
इत्युक्तोऽपि स पुत्रेण नाग्रहीद् भाग्यवर्जितः ॥ ३९१ ॥

३९१ 'विदेशो भटो से क्या लाभ ? सैन्याधिकार त्यागिये,'—इस प्रकार पुत्र के कहने पर, भाग्यहीन उसने उसकी बात को ग्रहण नही किया ।

विपरीता मतिः पुत्रे विश्वासः परसेवके ।
जायते गतभाग्यानां विनाशे प्रत्युपस्थिते ॥ ३९२ ॥

३९२ विनाश उपस्थित होने पर, अभागो की पुत्र के प्रति विपरित एव पर-सेवक पर, विश्वास-बुद्धि हो जाती है ।

वैदेशिकभटान् मेने यत् सजातीनिवान्वहम् ।
अत्रत्यान् शस्त्रिणो वीरान् मेने भीरून् परानिव ॥ ३९३ ॥

३९३. (उसने) सर्वदा विदेशी भटो को सजातीय (सहबन्धु) सदृश माना और यहाँ के शस्त्रधारी वीरो को भी शत्रु तुल्य मानता था ।

स सैफडामरो वीरवरस्तच्छौर्यशङ्कितः ।
भीतः समार्पिपच्छस्त्रं वीरवृत्तेर्न निश्चयः ॥ ३९४ ॥

३९४ उसके शौर्य से शकित, वीरवर सैफ डामर डर कर, शस्त्र समर्पित कर दिया—वीर वृत्ति का भी कुछ निश्चय नही होता ।

ज्यल्लालठक्कुरस्तावद् राजधान्यङ्गनास्थितः ।
बद्धोऽन्तः स्वैर्द्वारपालैर्गतिः क्व विधुरे विधौ ॥ ३९५ ॥

३९५ तब तक जल्लाल ठाकुर जो राजप्रासाद के प्रागण मे था, अपने द्वारपालो द्वारा अन्त पुर म बाँध दिया गया—विधाता के विपरीत कहा गति है ?

भास्वानपि प्रतिदिनं मृदुतौष्ण्यभिन्न-
स्तां तां बिभर्ति गगनान्तरगोऽप्यवस्थाम् ।
नित्याकुलस्य मनुजस्य चलप्रभावे
को निश्चयो भवति तत्र विचित्रवृत्तौ ॥ ३९६ ॥

३९६ सूर्य भी प्रतिदिन मृदु एव उष्णता से भिन्न-भिन्न हाकर, आकाश मे गमन करते हुये, तत्-तत् अवस्था को धारण करता है, तो नित्य आकुल विचित्र वृत्तिवाले प्रभाव का, क्या निश्चय हो सकता है ?

मसोदडामराद्यास्ते छिन्ननौसेतु बन्धनाः ।
प्राग्वत् ते जालद्रगडें विदधुः सैन्यसङ्ग्रहम् ।। ३९७ ।।

३९७. वे मसूद डामर आदि नौ-सेतुबन्धन को काट दिये और पहले के समान जाल द्रगड़[1] में सैन्य संग्रह किये ।

शृंगारसीहनिकटं ययुः शूरपुराध्वना ।
ठक्कुराः सालियाद्यास्तेऽप्यसक्ताः स्वयमागताः ।
कारागारान्तरं प्रापुः कस्य स्युः सम्पदः स्थिराः ।। ३९८ ।।

३९८. शूरपुर[1] के मार्ग से शृंगार सींह[2] के निकट ठाकुर सालिय आदि चले गये थे, वे भी असक्त होकर आ गये—और कारागार में बन्द कर दिये गये—'किसकी सम्पत्तियाँ स्थिर रहती हैं ?'

जेराकनामा तद्भृत्यः साहसी नगरान्तरात् ।
ठक्कुराह्लादतुरगान् हृत्वा राजपुरीं ययौ ।। ३९९ ।।

३९९. उसका साहसी भृत्य जेराक[1] नगर से ठक्कुर अल्हाद (अहमद) के तुरंगों को अपहृत कर राजपुरी चला गया ।

इत्थं तत्सैदवधतो जोनराजावधोऽधिकः ।
पाददाहादिवासह्यो गलरोगो व्यथावहः ।। ४०० ।।

४००. इस प्रकार सैय्यिद वध[1] की अपेक्षा जोनराज का वध अधिक कष्टकर हुआ, जिस प्रकार कि पाददाह की अपेक्षा गले का रोग अधिक असह्य होता है ।

---

पाद-टिप्पणी :

'द्रगडें' पाठ—बम्बई ।

३९७. ( १ ) जाल द्रगड़ : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : ४ : १०४; शुक० : १ : ३५, १४५, २२८ तथा हैदर मल्लिक : पाण्डु० : २०२ बी० तथा २०३ ए० ।

पाद-टिप्पणी :

'सीह' पाठ—बम्बई ।

३९८. ( १ ) शूरपुर : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : १ : १०७, १६४; १ : ५ : २२; ३ : ४२७; ४ : ४४२, ५२६, ५३१, ५५८, ५८४, ६०६ तथा राज० : ५ : ३९ ।

( २ ) सीह = सिंह : ग्यारहवीं शताब्दी से ही सीह एवं सिंह समानार्थक शब्द हो गये थे। राजस्थान में अकबर के समय में राजस्थानी में राणाप्रताप सिंह को प्रताप सींह लिखा मिलता है ।

पाद-टिप्पणी :

३९९. ( १ ) जेराक : फारसी शब्द जीराक प्रतीत होता है । नामवाचक शब्द है । अर्थ प्रतिभाशील, चतुर तथा होशियार है ।

पाद-टिप्पणी :

४००. ( १ ) सैद वध : कलकत्ता में सैन्य वध तथा बम्बई में सैद वध पाठ है । परन्तु श्लोक ४४७ के सन्दर्भ से सैद पाठ ठीक किया गया है ।

यावन्नरस्त्यजति कार्यकृदेकचिन्तां
चिन्तान्तरं सृजति तावदमुत्य धाता।
याते कृशिम्नि शशिनः किल पूर्णिमाप्तौ
सञ्जायते द्युतिहरो ग्रहणप्रचारः ॥ ४०१ ॥

४०१ जब तक मनुष्य एक कार्य की चिन्ता त्यागता है तब तक विधाता उसके लिये दूसरी चिन्ता का विषय उपस्थित कर देता है। पूर्णिमा आने पर चन्द्रमा की कृषता, समाप्त होते ही, (पूर्ण होने पर) कान्ति के हरणकर्ता ग्रहण का भय उपस्थित हो जाता है। (अथवा पुन. ह्रास की स्थिति उपस्थित हो जाती है)।

निष्प्रतिद्वन्द्वि निश्चिन्त्यं मार्गेशो यावदाप सः।
तावच्छुश्राव सम्प्राप्तं पुत्रमादमखानजम् ॥ ४०२ ॥

४०२ जब तक, मार्गेश ने प्रतिद्वन्दिता रहित, निश्चिन्त्यता प्राप्त की, तब तक आदम खाँन के पुत्र (फतह खाँन) का आगमन सुना।

स यथाभ्यन्तरं प्राप्तो यथा राज्यं गृहीतवान्।
बाल्यात् प्रभृति वृत्तान्तं तत् खानस्य ब्रवीम्यहम् ॥ ४०३ ॥

४०३ वह जिस प्रकार (काश्मीर मे) भीतर आया, राज्य प्राप्त किया, बाल्यावस्था से लेकर, खाँन का वह वृत्तान्त कहता हू।

पितुः श्रीजैननृपतेः प्रमये निर्गतो बहिः।
आदामखानो वित्राणः प्रपेदे मद्रमण्डलम् ॥ ४०४ ॥

४०४ पिता जैन नृपति की मृत्यु पर, बिना रक्षक के, आदम खाँन बाहर निकल गया और मद्र[1] मण्डल मे पहुचा।

फतह खाँ का बाल्यकाल

भावीश्वरांशतैश्वर्यप्राप्तिसूचकपर्वणि।
शिवरात्र्यन्तरे तस्य तत्रस्थस्य सुतोऽजनि ॥ ४०५ ॥

४०५ भावी राज्य एव ऐश्वर्य प्राप्ति के सूचक पर्व शिवरात्रि की रात्रि मे वहाँ[1] पर स्थित आदम खाँन को उत्पन्न हुआ।

---

पाद-टिप्पणी

४०४ (१) मद्र परशियन इतिहासकारो का मत है कि बहराम खाँ का विवाह मद्र की राजकन्या से हुआ था। परशियन इतिहासकार मद्र को जम्मू मानते हैं। द्रष्टव्य पाद टिप्पणी जोन० ७१२–७१४, जैन० २ १४८–१५३, १ १ १ . ४७।

पाद-टिप्पणी

४०५ (१) जन्म स्थान : श्रीवर के वर्णन से प्रतीत होता है कि फतह खा का जन्म मद्र देश में हुआ था। शुक ने स्पष्ट लिखा है कि फतह का जन्म काश्मीर के बाहर हुआ और काश्मीर के बाहर ही मर भी गया (शुक० १ : १६५)।

जनकेऽस्य दिवं याते तुरुष्कसमरान्तरे ।
मातामहगृहे चन्द्रो ववृधेऽम्बुनिधाविव ।। ४०६ ।।

४०६. तुरुष्कों के समर[1] में इसके पिता के मरने पर, मातामह के घर उसी प्रकार प्रवृद्ध हुआ, जिस प्रकार चन्द्रमा[2] समुद्र में ।

काले तात्तारखानेन रक्षितः स गतः स्वयम् ।
जालन्धरमहीपीठे निनाय कतिचित् समाः ।। ४०७ ।।

४०७. समय पर तातार खाँ[1] द्वारा रक्षित, वह स्वयं जाकर, जालन्धर[2] भूमिपीठ में कुछ वर्ष व्यतीत किया ।

---

पाद-टिप्पणी :

४०६. ( १ ) समर : आदम खां राजा जम्मू श्री माणिक्य देव के पक्ष से लड़ता तुर्कों के युद्ध में मारा गया था ( म्युनिख० : एम० ७८ ए० ) ।

(२) चन्द्रमा : पौराणिक गाथा है कि चन्द्रमा समुद्र से उत्पन्न हुआ और वार्धक्य प्राप्त किया था ।

पाद-टिप्पणी :

४०७. ( १ ) तातार खाँ : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : ३ : ३१९; ४ : ३२, २१६ ।

( २ ) जालन्धर : भारतीय साहित्य में जालन्धर का बहुत उल्लेख मिलता है । यह अभिभक्त पूर्व पंजाव का एक जिला था और आज भी पंजाबी सूबा का एक जिला है । इसका क्षेत्रफल १९४१० वर्ग मील है । बाहरी हिमालय-कांगड़ा की पहाड़ियों के अतिरिक्त उपजाऊ मैदान भी है । इसमें ६४१५ ग्राम तथा ३७ नगर हैं । कांगड़ा तथा ज्वालामुखी धार्मिक केन्द्र है । व्यास एवं सतलज नदियों के मध्य स्थित है । गेहूँ मुख्य पैदावार है । जाट, खोखर और गूजर जिले की मुख्य जातियाँ है ।

स्कन्दपुराण की तालिका में इसकी क्रम संख्या चौदहवीं तथा ग्रामों की संख्या ९ लाख दी गयी है। मुसलिम आक्रमण तथा पंजाब उनके आधीन चले पर, जालन्धर राज्य मुख्यतः कांगड़ा में सीमित हो गया था । सातवीं शताब्दी में हुएन्त्सांग ने जालन्धर का उल्लेख किया है, जो १००० ली अर्थात् १६७ मील लम्बा तथा ८०० ली अर्थात् १३३ मील चौड़ा उत्तर से दक्षिण था । उसके समय में जालन्धर राजधानी था । नगर १२ या १३ ली अर्थात् दो वर्ग मील में विस्तृत था । पद्मपुराण के अनुसार जालन्धर नगर दैत्यराज जालन्धर की राजधानी था । अत्याचार के कारण शिव द्वारा दैत्य का वध किया गया । उसके शव को योगनियाँ भक्षण कर गयीं । उसके मृत्यु के सम्बन्ध में एक और कथा है । शिव ने उसे पर्वत से दवा दिया । जालन्धर के मुख से अग्निज्वाला निकलने लगी । वह ज्वालामुखी के अन्दर था । उसके शरीर का पीठ दोआब का ऊपरी भाग था । जालन्धरपीठ नाम से विख्यात था । उसका पैर नीचे की तरफ मुलतान तक फैला था । जालन्धर का राज्य प्राचीन काल से बहुत प्रसिद्ध रहा है । राजा वे सोमवंशी थे । महाभारत में यहाँ का राजा कौरवों की तरफ से युद्ध किया था । पाँचवीं शताब्दी में त्रिगर्त राजा काश्मीर के राजा द्वारा प्रवरेश को दिया गया था । सातवी शताब्दी में यहाँ के राजा ने हुएन्त्सांग का आतिथ्य किया था । सन् ८०४ ई० में जालन्धर राज का नाम जयचन्द्र मिलता है । जालन्धर तीर्थ है ( ब्रह्म० : ४ : ४४ : ९५ ) । सती देवी की एक मूर्ति विश्वमुखी का स्थान तथा पितरों के श्राद्धादि के लिये पवित्र माना गया है ( मत्स्य० : १३ : ४६; २२ : ६४ ) ।

ज्यहाङ्गरोऽस्य मार्गेशः सैद्भीत्या गतो बहिः ।
सोपधिं व्यसृजल्लेखं धर्तुं पैतामहं पदम् ॥ ४०८ ॥

४०८ सैय्यिदो के भय से बहिर्गत, मार्गेश जहाँगीर ने पैतामह पद प्राप्त करने के लिये, इसके पास छलपूर्ण पत्र भेजा ।

तत्तारखानप्रमये ततः खानमिमं पुनः ।
सुतो हस्सनखानोऽस्य कश्चित् कालमपालयत् ॥ ४०९ ॥

४०९ तातार खाँन की मृत्यु[1] हो जाने पर, उसके पुत्र हस्सन खाँ[1] ने पुन उस खाँन[2] का कुछ समय तक पालन-पोषण किया ।

तुरुष्कान् वञ्चयित्वाथ विहितोत्साहसाहसः ।
खानोऽमितपरीवारः प्रापद् ग्रहणमण्डलम् ॥ ४१० ॥

४१० तुरुष्कों को ठगकर, महान उत्साह करके, (फतह) खाँन अमित भृत्यो के साथ ग्रहण[1] मण्डल ने प्रविष्ट हुआ ।

फतह खाँ राजपुरी में :

इतः काश्मीरिका दूता मार्गेशेन विसर्जिताः ।
शृङ्गारसीहेनानीतस्तावद् राजपुरीं प्रति ॥ ४११ ॥

४११ वहाँ से जब तक, मार्गेश ने काश्मीरी दूतों को भेजा, तबतक शृंगार सीह उसे राजपुरी[2] लाया ।

---

पाद-टिप्पणी

४०९ (१) मृत्यु तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'फतह खाँ बिन आदम खाँ जो तातार खा की मृत्यु के पश्चात् पंजाब का हाकिम हो गया था, जालन्धर से अपने पैतृक राज्य के लिये राजोरी पहुँचा वहीं निवास करने लगा ( ४५४ ) ।'

(२) खान = फतह खान तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'फतह खा पुत्र आदम खा जो कि तातार खा की मृत्यु के पश्चात् पंजाब का सूबेदार हो गया था, वह जालन्धर से राजपुरी आया । वहाँ वह ठहर गया । ताकि वह अपना पैतृक राज्य प्राप्त करे ( ४५४-६८६ ) ।'

पाद-टिप्पणी

४१० (१) ग्रहण श्री कण्ठ कौल ने ग्रहण नामवाचक शब्द माना है । श्रीदत्त ने ग्रहण देश अनुवाद किया है ( ३ ३०९ ) । अनुसन्धान अपेक्षित है ।

यहाँ ग्रहण का अर्थ मैं साधारण ग्रहण लगाता हूँ । चन्द्रमा की उपमा फतह खान से दी गयी है । राहु ग्रहण काल में चन्द्रमण्डल को ग्रसता है । फतह खा भी उसी प्रकार कश्मीर स्वरूप ग्रहण-मण्डल में प्रवेश किया, जहाँ उसे सफलता के स्थान पर क्षति उठानी पडी थी ।

पाद-टिप्पणी

४११. (१) राजपुरी = राजौरी तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'फतह खा राजौरी में आ गया ( ४५४ ) ।' फिरिश्ता लिखता है—'इस समय फतह खा राजोरी आया और जलिन्दुर पहुँचा ताकि वह परिस्थियों का लाभ उठा सके (४८४) ।'

ततो राजपुरीनाथो मार्गेशद्वेषनिष्ठितः ।
फताहखानमानिन्ये स्वान्तिकं स्वाश्रयेच्छया ॥ ४१२ ॥

४१२. मार्गेश के द्वेषी, राजपुरी के स्वामी, अपने आश्रय की इच्छा से, फतह खाँन को अपने पास लाया ।

जोनराजानकवधात् कश्मीरेभ्यो विनिर्गतैः ।
डामरैरेधराजानठक्कुरदौलतादिभिः ॥ ४१३ ॥

४१३. जोन राजानक के वध पश्चात काश्मीर से निकले हुए, एद राजानक, ठक्कुर दौलत आदि डामर—

तत्रस्थैः शिश्रिये खानस्तरुर्मधुकरैरिव ।
प्रथां निन्ये यथा पूर्वं वुप्पेदेवात्मजोऽभवत् ॥ ४१४ ॥

४१४. जो कि वहां स्थित थे, खाँन का उसी प्रकार आश्रय[1] ग्रहण कर लिये, जिस प्रकार मधुकर वृक्ष का और पूर्वकालीन वुप्पेदेव[2], आतमज (जस्सक) के समान, उसे प्रख्यात किया ।

यौनसम्बन्धबद्धोऽपि मार्गरक्षाधिकारभाक् ।
मसोदनायकः सोऽपि खानपक्षं समाश्रयत् ॥ ४१५ ॥

४१५. मार्गरक्षाधिकारी मसोद नायक वैवाहिक सम्बन्ध से बद्ध होने पर भी, खांन का पक्ष ग्रहण किया ।

दीनो ग्राम्यजनो दुष्टबहुनायकतार्दितः ।
तदागमनवार्तां तां क्षते क्षारमिवाविदत् ॥ ४१६ ॥

४१६. दीन एवं बहुत से नायत्व[1] से पीड़ित ग्रामीण जन उसके आगमन की बात को कटे पर, नमक के समान जाने ।

---

पाद-टिप्पणी :

४१४. (१) आश्रय : फिरिश्ता लिखता है—'फतह खां से काश्मीर के बहुत से बिगड़े उमरे मिल गये और काश्मीर की तरफ बढ़े ( ४८४ ) ।'

( २ ) वुप्प देवात्मज : वुप्प देव काश्मीर का राजा ( सन् ११७१ से ११८१ ई० ) था । उसके भाई का नाम जस्सक था । वह काश्मीर का राजा ( सन् ११८१–११९९ ई० ) वोप्पदेव या वुप्पदेव की मृत्यु के पश्चात् हुआ था । फतह खान को जिस प्रकार सहायकगण राजा बनाना चाहते थे, उसी प्रकार लवन्यों ने वुप्पदेव की मृत्यु के पश्चात जस्सक का अभिषेक कर दिया था ( द्रष्टव्य : जोन० : श्लोक ५६–६५ ) । जोनराज जस्सक को अनुज लिखता है, जब कि श्रीवर उसे आत्मज लिखता है । जोनराज ही श्रीवर का स्रोत है अतएव जोनराज का ही मत ठीक है ।

पाद-टिप्पणी :

४१६. ( १ ) नायक : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : जैन० : ४ : ४४२, ४७३ ।

मापराधर्णिकन्यायप्रेष्यवद्बद्धसेवकाः ।
चोरा विटा दरिद्राश्च तुतुषुः खानवार्तया ॥ ४१७ ॥

४१७ अपराधी एवं ऋणी जो कि एक भृत्य के समान सेवक बना लिये गये थे, वे एवं चोर, विट, दरिद्र, लोग खान के आने की वार्ता से प्रसन्न हुए।

ग्रामे वा नगरे वापि त्यक्त्वा गृहकुटुम्बकम् ।
बद्धाशो राजविभवे न कः प्राप तदन्तिकम् ॥ ४१८ ॥

४१८ ग्रामो अथवा नगर मे, गृह एवं कुटुम्ब त्यागकर, राजवैभव मे आशा रखनेवाला कौन उसके साथ नही पहुँचा ?

तांस्तान् देशाद् विनिर्यातान् खानोऽगृह्णात् समृद्धिमान् ।
ऐच्छल्लब्धप्रतिष्ठः स राज्ञः प्रत्यभियोगिताम् ॥ ४१९ ॥

४१९ समृद्ध एवं लब्धप्रतिष्ठ, उस खान ने देश से निर्वासित, तत् तत् लोगो को साथ मे कर लिया और राजा से प्रतियोगिता की इच्छा की।

पौत्रः श्रीजैननृपतेर्योग्योऽयमिति सर्वतः ।
त्यक्त्वान्यान् सर्वराष्ट्रेभ्यस्तमेवाशिश्रियज्जनः ॥ ४२० ॥

४२० यह श्री जैन नृपति का पौत्र[1] योग्य है, अत सब राष्ट्रो से लोग उसका आश्रय ग्रहण किये।

तद्वार्ताश्रवणात् तुष्टाश्चौराद्याश्छन्नमास्थिताः ।
तत्कालमुत्प्लवन्ति स्म मत्स्या इव तडागगाः ॥ ४२१ ॥

४२१ उसके आगमन की बात सुनकर, छिपकर स्थित चोर आदि लोग, उसी समय तडाग-गत मछलियो के समान चचल हो (उछल) उठे।

न मम महती सेनैकोऽरिर्जितोऽस्त्यपरो महान्
क्षितिरतिबलै रुद्धा भिन्नाः परैश्चरसेवकाः ।
स वरतुरगोऽस्वस्थः कोशे न चाधिकृतो हित-
स्तरुमिव घुणास्तास्ताश्चिन्तास्तुदन्ति विभुं न कम् ॥ ४२२ ॥

४२२. मेरी सेना बडी नही है, एक शत्रु को जीत लिया, किन्तु दूसरा महान शत्रु है। पृथ्वी को अति प्रबल लोग आक्रान्त कर लिये हैं। शत्रुओ ने चर सेवको को फोड लिया है। वह श्रेष्ठ अश्व अस्वस्थ है, और कोश मे हित अधिकृत नही है, इस प्रकार वृक्ष को घुन के समान तत् तत् चिन्तायें किस राजा को व्यथित नही करती ?

---

पाद-टिप्पणी

४२० (१) पौत्र तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'क्योंकि वह जैनुल आबदीन का पौत्र था, अतएव वे लोग जो अमीरों में साहसी थे, वे उसके पास आये और सैय्यिद भी उसके पास बडी सख्या मे पहुँचे। एक एक को इनाम आदि देकर उन्हें भविष्य में और देने की आशा दिया (४५४-६८६)।'

तुष्टो ज्यहाङ्गिरो यावत् तत्प्राप्त्या प्रेषितोपधिः ।
तावत् तन्मतगं ज्ञात्वा सचिन्तः समपद्यत ॥ ४२३ ॥

४२३. छलपूर्ण पत्र भेजनेवाला जहाँगीर[1], उस (खाँन) के आने से, तबतक उसके मत में स्थित, जानकर सचिन्त हो गया ।

अहितोन्मूलनोद्भूतदेशैकविभवाप्तितः ।
सुखेच्छुः प्रत्युत प्रापद्दुःखमुद्भूतविप्लवः ॥ ४२४ ॥

४२४. शत्रुओं के उन्मूलन से, देश का सब वैभव प्राप्त करने के कारण सुखेच्छुक (जहाँगीर) विप्लवग्रस्त होने से उल्टे दुःख का भागी बना ।

प्रवर्धमानया नित्यं खानागमनवार्तया ।
वेपमानोऽभवल्लोको वात्ययेव वनावलिः ॥ ४२५ ॥

४२५. नित्य बढ़ती हुई, खांन आगमन की वार्ता से, लोग वात (अन्धड़) से, वन पंक्ति के समान काँप उठे ।

सन्धि वार्ता :

चाक्रिकाश्चतुराः खानमन्त्रिणोऽथ जिगीषवः ।
इत्थंलेखाङ्कितं दूतं व्यसृजन् मार्गपं प्रति ॥ ४२६ ॥

४२६. जीतने के लिये इच्छुक, चाक्रिक एवं चतुर खांन के मन्त्रियों ने मार्गपति[1] के पास इस प्रकार के लेख के साथ, दूत को भेजा—

भो भो मार्गपते सर्वसर्वखर्वितविक्रमः ।
काश्मीरान्तः सुपर्वेव भवांश्चर्चितसद्यशाः ॥ ४२७ ॥

४२७. 'भो ! भो !! मार्गपते !!! गर्वातिक्य से सब लोगों का पराक्रम दबा देनेवाले, और सर्वकीर्तिपात्र आप, काश्मीर के अन्य देवोपम हैं—

---

पाद-टिप्पणी :

४२३. ( १ ) जहाँगीर : तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'फतह खां इस बात की प्रतीक्षा किया करता था कि जहांगीर माकरी सबसे पहले, आकर उससे भेंट करेगा । जहांगीर माकरी इस भय से कि उसके विरोधियों ने सर्वप्रथम उससे भेंट की है, फतह खां के पास न गया, और उसको काश्मीर की विजय करने की इच्छा करने से मना किया ( ४५४-६८६ ) ।' फिरिश्ता लिखता है—'फतह खां को आशा थी कि जहांगीर माके, उसकी सहायता करेगा परन्तु राजा की सफलता देख कर, उसका दल राजा से मिल गया ( ४८४ ) ।'

पाद-टिप्पणी :

४२६. ( १ ) मार्गप : मार्गेशः जहांगीर ।

पाद-टिप्पणी :

श्लोक ४२६-४३० तक सन्देश-पत्र का वर्णन है ।

४२७. ( १ ) मार्गपति : मार्गेश इब्राहीम ।

सोऽयं खानस्त्वयानीतो लेखैस्तौरुष्कदेशतः ।
उपेक्ष्यते कुलस्वामी कथं मार्गपतेऽधुना ॥ ४२८ ॥

४२८ लेखो द्वारा तुरुष्क देश से इस खान को तुम्ही लाये हो, हे ! मार्गपति !! आप कुल स्वामी की उपेक्षा क्यो कर रहे हो ?

स्वयं कृतं कथं कार्यं पश्चात्तापाय जायते ।
शिशौ राज्यं परिस्थाप्य भुज्यते मण्डलं परैः ॥ ४२९ ॥

४२९ 'स्वयं किया हुआ कार्य पश्चाताप के लिये कैसे हो गया ? शिशु के ऊपर राज्यभार डालकर, दूसरे लोग मण्डल का भोग कर रहे हैं,—

व्यवहारोचितः शुद्धः सोऽयं किं तिष्ठते बहिः ।
अथवा पितृभागं चेत् प्रयच्छस्यस्य मण्डलात् ॥ ४३० ॥

४३० व्यवहारी चित एवं शुद्ध यह क्यो मण्डल के बाहर स्थित है ? अथवा यदि मण्डल (कश्मीर) से इसका पितृभाग दे देते हो तो—

बहिरेवास्त्वयं राजाप्ययमस्त्वन्तरे स्थितः ।
अथ किं बहुनोक्तेन मान्यो यदि न तेऽस्त्ययम् ॥ ४३१ ॥

४३१ यह बाहर ही स्थित रहे। भीतर यह बालक मुहम्मदशाह राजा बना रहे। अधिक कहने से क्या लाभ है ? यदि तुम्हे यह मान्य नही है, तो—

रणोभयबलवधात् पापं ते परिणस्यति ।
श्रुत्वेति लेखं मार्गेशः खानदूतोपदर्शितम् ॥ ४३२ ॥

४३२ युद्ध मे दोनो सेनाओ के वध का पाप तुम पर फलेगा।' खान के दूत द्वारा प्रदर्शित, इस प्रकार का लेख सुनकर,—

प्रत्युत्तरमयं पत्रं तस्मै दत्त्वाब्रवीदिति ।
भो भो मण्डलगोप्तारो भोक्तारो नृपसम्पदाम् ॥ ४३३ ॥

४३३ मार्गेश ने प्रत्युत्तर युक्त पत्र उसे देकर, इस प्रकार कहा—'भो ! भो !! मण्डल रक्षक नृप सम्पत्तियो के भोक्ता—

सर्वथा हितकर्तारः पुराणोक्तं विचार्यताम् ।
कश्मीराः पार्वती तत्र राजा ज्ञेयः शिवांशजः ॥ ४३४ ॥

४३४ 'एवं सर्वथा हितकर्तागण पुराणोक्त इस पर विचार करो— काश्मीर भूमि पार्वती[1] है, वहाँ का राजा शिवांशज है,—

---

पाद टिप्पणी

४२८ ( १ ) तुरुष्क देश पूर्वकालीन अविभाजित पंजाब से तात्पर्य है।

पाद टिप्पणी

४३४ ( १ ) काश्मीर पार्वती नीलमत का श्लोक क्षेमेन्द्र कल्हण, श्रीवर ने उद्धृत किया है।

**नावज्ञेयः स दुष्टोऽपि विदुषा भूतिमिच्छता ।**
**देशेऽस्मिंस्तपसा राज्यं प्राप्यते न पराक्रमैः ॥ ४३५ ॥**

४३५. 'कल्याणेच्छुक विद्वान को दुष्ट होने पर भी उसकी उपेक्षा अथवा अपमान नहीं करना चाहिए। इस देश में तपस्या द्वारा राज्य प्राप्त होता है, न कि पराक्रमों' से,—

**अन्यथादमखानाद्यैः किं नाप्तं स्वक्रमोचितम् ।**
**अन्यथाप्येतन्न चिरादनौचित्यार्चितं फलम् ॥ ४३६ ॥**

४३६. 'नहीं तो आदम खांन आदि लोगों ने अपने क्रमागत (राज्य) को क्यों नहीं प्राप्त किया ? चिरकाल तक अनौचित्य फलित नहीं होता।

**क्रमेण येनायातोऽसौ तं त्यक्त्वा त्वद्बलार्थिनः ।**
**सति राज्ञ्यस्य विघ्नाय प्रवेशो दीयते कथम् ॥ ४३७ ॥**

४३७. 'जिस क्रम से वह आया उसे त्यागकर, राजा के रहते विघ्न हेतु, उसे प्रवेश कैसे दिया जाय ?

**न मयायं धृतो राज्ये बालोऽप्यन्याभिषेचितः ।**
**कः शक्नोत्यधुना हन्तुं मयि सन्निहिते स्थिते ॥ ४३८ ॥**

४३८. 'मैंने इसे राज्यपर नहीं वैठाया है, वल्कि बालक (राजा) का अन्य लोगों ने अभिषेक कर दिया, अव इसे मेरे निकट स्थित रहते, कौन मार सकता है ?

---

नीलमतपुराण के इस सिद्धांत को जोन, श्रीवर ने भी अपने राजतरंगिणियों में उद्धरण देकर, इस सिद्धांत को स्वीकार किया है। नीलमतपुराण में श्लोक का निम्नलिखित रूप मिलता है—

कश्मीरायां तथा राजा त्वया ज्ञेयो हरांशजः ।
तस्यावज्ञा न कर्तव्या सततं भूतिमिच्छिता ॥
२४६

क्षेमेन्द्र ने लोकप्रकाश में निम्नलिखित रूप से दिया है—

सती च पार्वती ज्ञेया राजा ज्ञेयो हरांशजः ।
तेन नामांकिता यत्र कृताश्च नगरादयः ॥
पृष्ठ : ६१, श्लोक ३ ।

कल्हण ने भगवान श्री कृष्ण की वाणी उद्धृत किया है—

कश्मीराः पार्वती तत्र राजा ज्ञेयः शिवांशजः ।
नाऽवज्ञेयः स दुष्टोऽपि विदुषा भूतमिच्छिता ॥
१ : ७२ ।

जोनराज ने भी उक्त श्लोक कुछ भिन्न शब्दावली के साथ लिखा है—

काश्मीराः पार्वती तत्र राजा ज्ञेयो हरांशजः ।
इत्ये तत्प्रत्यमायेव यस्यासी च्चक्षुषां त्रयम् ॥ १३४

नीलमतपुराण में इसी मत का प्रतिपादन किया है, जिसे परवर्ती लेखकों ने अपने शब्दों में व्यक्त किया है—

यैव देवी उमा शैव कश्मीरा नृपसत्तम ।
आसीत सरपूर्ण जलं सुरम्यं सुमनोहरम् ॥ १२ ॥

पाद-टिप्पणी :

४३५. ( १ ) पराक्रम-पुण्य : श्रीवर ने उक्त श्लोक में रा० : १ : ३९ का भाव दुहराया है—

विजीयते पुण्य वलैर्वलैर्यत्तु न शास्त्रिणाम् ।
परलोकात् ततो भीतिर्यस्मिन निवसतां परम् ॥३९॥

[ उस पर पुण्य वल द्वारा ही विजय प्राप्त किया जा सकता है। अतएव वहाँ के निवासी केवल परलोक से भयभीत रहते हैं न कि शस्त्रधारियों से।]

खानोऽयं सर्वथा पूज्यो यद्यस्मन्मतमिच्छति ।
अग्रेसरारुणः सूर्यः पूज्यते ह्युदयोन्मुखः ॥ ४३९ ॥

४३९ 'यदि यह खान मेरा मत मानता है, तो सर्वथा पूजनीय है, अरुण को अग्रसर करके, उदयोन्मुख सूर्य पूजित होता है।

श्रियः कृतघ्नभावाप्ता न सुखाय चिरं नृणाम् ।
भोगा रोगाय देहानामपथ्याशनसंभृताः ॥ ४४० ॥

४४० 'कृतघ्नभाव प्राप्त, सम्पत्तियाँ चिरकाल तक मनुष्यों के सुख के लिये नहीं होतीं, अपथ्य-अशन युक्त भोग, शरीर के रोग के लिये ही होते हैं।

किं वान्यत् सैदहस्तस्थो यद्वद् राजा विमोचितः ।
तद्वत् तद्धस्तगः सोऽयं प्राप्यते तद् विधेर्मतम् ॥ ४४१ ॥

४४१ 'दूसरा क्या कहा जाय ? जिस प्रकार राजा सैय्यिदों के हाथों से मुक्त किया गया, उसी प्रकार उनके हस्तगत यह प्राप्त किया जाय—यही विधाता की इच्छा है ?'

फतह खां का आक्रमण

इति लेखं विसृज्यैतत्पक्षपातात् क्रुधान्वितः ।
रथ्याधिकारं जग्राह मसोदस्य ज्यहाङ्गिरः ॥ ४४२ ॥

४४२ इसके पक्षपात के कारण क्रोधान्वित जहाँगीर, इस प्रकार का लेख भेजकर, मसोद का रक्षाधिकार ले लिया।

बहामनायकादीनां दत्त्वा तन्मार्गरक्षणम् ।
शृङ्गारराजानकादीन् स्थामार्थं व्यसृजद् द्रुतम् ॥ ४४३ ॥

४४३ वह मार्ग रक्षाधिकार बहराम नायकादि को देकर, शीघ्र ही शृंगार राजानक आदि को स्थाम के लिये भेजा।

खान विप्लव

अथ खानं पुरस्कृत्य नायकोऽसुखदायकः ।
क्रुद्धः पथोऽपहरणात् आपच्छूरपुरान्तरम् ॥ ४४४ ॥

४४४ खान को आगे कर, क्रुद्ध एवं असुखदायक, वह नायक[1] मार्ग भ्रष्ट होने से शूरपुर[2] पहुँचा।

---

पाद-टिप्पणी

४४० 'सभृत' पाठ-बम्बई।

पाद-टिप्पणी

४४४ ( १ ) नायक प्राचीन काल में नायक दश ग्रामों के ऊपर अधिकारी होता था। कौटिल्य एवं शुक दोनों ने इसका उल्लेख किया है ( अर्थ० १ : १२ )। कौटिल्य ने बीस हाथियों या अश्वों के अध्यक्ष को नायक माना है।

तद्भृत्याः खशडोम्बाद्यास्तद्विसृष्टाः पदे पदे ।
देशे मडवराज्यान्तश्चक्रुरुत्पिञ्जमञ्जसा ॥ ४४५ ॥

४४५. पग-पग पर उसके द्वारा भेजे गये, उसके भृत्य, खश[1], डोम्बादि[2], देश में मडवराज[3] के अन्दर उत्पिजं (उपद्रव-षड्यन्त्र) करने लगे।

एकतो नृपतेः सेना कष्टा खानस्य चान्यतः ।
दंष्ट्राद्वयी यमस्येव लक्षिता सर्वभक्षिका ॥ ४४६ ॥

४४६. एक तरफ राजा की तथा दूसरी तरफ खांन की कष्टप्रद सेना थी। जो कि, सर्वभक्षिका यमराज की द्रंष्ट्र द्वैः[1] (दाँतों की दोनों पंक्तियों) तुल्य दिखायी दे रही थी।

---

अधिकृतो दश ग्रामे नायकः स च कीर्तितः ।
आशा पालोयुत ग्राम भागभाक् च स्वराऽपि ॥
( शु० नीति : १ : ९२ )

काश्मीर के प्रवेश मार्ग दर्रों अर्थात् पासों के रक्षक ( अकबरनामा : ८३० ) द्वारपति के समकक्ष थे। प्राचीन मान्यता के अनुसार नायक राजकीय अधिकारी अथवा एक प्रकार के छोटे-छोटे राजा या सामन्त थे। अर्थशास्त्र में दश ग्रामों का मुखिया माना गया है ( १ : १२ शुक्रनीति १ : १९२ )। विजयानगरम् राज्य में नायक उन्हे कहा जाता था, जो सैनिक सेवा के बदले में भूमि प्राप्त करते थे। तामिल में उन्हें जिले अर्थात नाडू का अधिकारी मानते हैं। उत्तर प्रदेश में गढ़वाल, कुमायूँ, अल्मोड़ा आदि में एक जाति है। उड़ीसा में भी यह जातिबोधक शब्द है। अकबरनामा में नायक का स्पष्ट उल्लेख तथा उनके कार्यों का वर्णन है। अकबर की सेना राजौरी से काश्मीर की ओर बढ़ी, तो राजौरी में बहराम नायक आदि सेनापति के पास गये थे ( अकबरनामा : ५०३ = ७६४, ५०५; ७६८; ५४० : ८२२ )। नायक लोगों का सैनिक पद आधुनिक काल के कर्नल के समकक्ष था।

( २ ) शूरपुर : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : १ : १ : १०७। तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'फतह खां हूरपुर के मार्ग से औदन (अडविन परगना) के समीप पहुँचा और जल के झरने को बीच में करके सुल्तान के बराबर पड़ाव किया (४५४)। 'फिरिश्ता लिखता है—'फतह खां इसी समय हूरपुर के मार्ग से आगे बढ़ा ( ४८४–६८७ )।'

पाद-टिप्पणी :

४४५. ( १ ) खश : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : ४ : ११३ : २१२, ९९४; ६५०।

( २ ) डोम्ब : वर्तमान डुम्ब जाति। द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : ४ : १६९, ४९४ जोन० : श्लोक ९५२; कल्हण : ५ : ३५४।

( ३ ) मडवराज : मराज।

पाद-टिप्पणी :

४४६. ( १ ) दंष्ट्र द्वैः दाँतों की दोनों ऊपरी और नीचे की पंक्तियों से तात्पर्य है। मनुष्य भोजन करता या कुछ खाता है, तो दाँतों की ऊपरी और निचली पंक्तियाँ दिखाई देती हैं। भक्ष्य पदार्थ उन पंक्तियों के नीचे दब कर चूर्ण हो जाता हैं। यमराज के दाँत खुले थे, जो भक्षण के लिये तत्पर थे। अत्यन्त क्रूर रूप दिखाने के लिये राक्षसों हृंश पशुओं को दाँत निकाले दिखाया जाता है।

प्राक्सैदविप्लवात् खानविप्लवः सोऽधिकोऽभवत् ।
पाददाहादिवासह्यो गलरोगो व्यथावहः ॥ ४४७ ॥

४४७ पूर्व के सैय्यिद विप्लव की अपेक्षा, खाँन का यह विप्लव बडा था । पाद-रोग[1] की अपेक्षा, गले का रोग अधिक व्यथावह होता है ।

तस्कराक्रान्तपथिको बलवन्निहताबलः ।
अराजक इवानीशो देशः कष्टां दशामगात् ॥ ४४८ ॥

४४८ पथिक, चोरो द्वारा आक्रान्त होते थे, बलवान द्वारा निर्बल सताये जाते थे, इस प्रकार नृप रहित के समान, देश मे अराजकता और कष्टकर दशा हो गयी थी ।

जग्मुर्दक्षिणपारादीन् प्रमेयांस्तद्दिगाश्रिताः ।
गृहीत्वा गोधनं सर्वं त्यक्त्वा स्ववसतीर्भयात् ॥ ४४९ ॥

४४९ उस दिशा के लोग भय से अपना निवास त्याग कर, तथा गोधन आदि सब कुछ लेकर, दक्षिण पार[1] आदि प्रमेयो मे चले गये ।

खेरीं चार्धवनं राष्ट्रं भ्राष्ट्रमग्निशिखेव सा ।
अतापयन्महोष्माढ्या प्रविष्टा कटकद्वयी ॥ ४५० ॥

४५० महोष्मापूर्ण दोनो सेनाये, खेरी[1] एव अर्धवन[2] राष्ट्र मे, प्रवेशकर, उसी प्रकार उसे प्रतापित करने लगी, जिस प्रकार अग्निशिखा भ्राष्ट्र[3] (भाड) को ।

---

पाद-टिप्पणी

४४७ (१) पाद दाह श्रीवर पाद-रोग की उपमा बहुत दुहराता है ।

पाद-टिप्पणी

४४९ (१) दक्षिण पार यह दक्षिण पोर परगना है । मराज में है । अबुल फजल ने आइने अकबरी तथा मूरक्राफ्ट, वाइन (ट्रेवेल्म) एव हुगेल न (काश्मीर) तथा बेट्स ने गजेटियर में उल्लेख किया है । अनन्तनाग जिला में है । झेलम के दक्षिण तट पर है । इसमें लिदर नदी बहती है । यहाँ क टट्टू अच्छे होते है ।

पाद-टिप्पणी

४५० (१) खेरी काश्मीर का एक प्रशासकीय विभाग है । खुरनरवाव कहते है । इसके प्रशासकीय विभाग को खेरी कहते थे । पीर पन्तमल से विशोका नदी के दक्षिण तटवर्ती कौसरनाग शिखर तथा मोही दर्रे के मध्य पडता है । इस क्षेत्र को खुरनरवाव कहते है । यह दो शब्दो से मिलकर बना है । खुर नामक एक बडा ग्राम है । वह विशोका से दो मील दूर है । इसे कूरी भी कहते है । कल्हण वर्णित (१ ३३५) खेरी वर्तमान खुर है । हिन्दू राज्यकाल मे राजवशवालो की यह जागीर रहा करती थी । सिख तथा डोगरा काल में भी, राजवशियो की जागीर थी ।

(२) अर्धवन दिवसर के उत्तर में जिला आडविन है । वह खुरनरवाव के पश्चिमी छोर से विशोका के अधोभाग तक फैला है । अडविन इस समय एक बडा ग्राम है ।

वह विशोका के वामतट पर विजयेश्वर से तीन मील दक्षिण-पश्चिम है । कथा है कि सर्वप्रथम

राजसैन्यं समालोच्य प्रसुप्तं चारचक्षुषा ।
एकदा जैरकाद्यास्ते स्वास्कन्दं शिविरे ददुः ॥ ४५१ ॥

४५१. एकबार राज सैन्य को प्रसुप्त जानकर, जैरक आदि लोगों ने शिविर पर, आक्रमण कर दिया।

प्रजागरचरन्यासशस्त्राभ्यासविवर्जिताः ।
सर्वे पशूपमास्त्रासाद् विद्रुः शिविरान्तरात् ॥ ४५२ ॥

४५२. जागरण, गुप्तचर एवं शस्त्राभ्यास से रहित, वे सब पशुओं के समान त्रस्त होकर, शिविर से भाग गये।

सेनापतेर्निजाः केऽपि युद्धादौ भेदिताः परैः ।
चक्रुस्तत्कटकं त्यक्त्वा द्रोहं वैरिसमाश्रयात् ॥ ४५३ ॥

४५३. शत्रुओं ने युद्ध के पूर्व ही सेनापति के कुछ निजी लोगों को फोड़ लिया और वे शत्रुओं का आश्रय ग्रहण करने से, उसका सैन्य त्यागकर विद्रोह कर दिये।

राज्यं नश्यति हृष्यति प्रतिदिनं बाह्या खशाली न का
लोकः क्लिश्यति लुण्ठदाहकरणैश्चौरः स्वकं पश्यति ।
सेना भ्रश्यति धीरवीरसहिताप्यन्विष्यति स्वं रिपुः
काश्मीरप्रभविष्णुषु प्रभवति द्वेषात् स्वभेदो यदा ॥ ४५४ ॥

४५४. काश्मीर के प्रभावशाली लोगों में जब अपना मतभेद हो जाता है, तो राज्य नष्ट हो जाता है, और बहिर्देशीय कौन से खश खुश नहीं होते ? लूट एवं दाह के कारण लोग दुःखी होते हैं, और धन देखते हैं। धीर एवं वीर युक्त होकर भी सेना नष्ट हो जाती है और शत्रु सम्पत्ति खोजता है।

द्रोग्धॄंस्तानवलोक्यैव त्रस्तां ज्ञात्वा स्ववाहिनीम् ।
सेनानीश्चकितः सैन्यात् पलायनपरोऽभवत् ॥ ४५५ ॥

४५५. उन्हें द्रोही देखकर और अपनी सेना को शिथिल जानकर, चकित सेनानायक, सैन्य से पलायित हो गया।

---

वहाँ परगना बनाया गया था। इसको प्राचीन काल में कराल विषय कहते थे। द्रष्टव्य कल्हण : १ : ९७। मराज का अडविन अर्थात् कमाज एक परगना है। इसका उल्लेख अबुल फजल, मूरक्राफ्ट, ह्यूगेल, वाइन तथा वेट्स ने किया है। तबक्काते अकबरी में नाम औडविन दिया गया है (४५४–६८७)। फिरिश्ता ने नाम 'उडवीन' दिया है (४८४)। तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'फतह खाँ अदवन पहुँचा ४५४–६८०)।' फिरिश्ता लिखता है—'फतह खाँ अडवीन पहुँचा और एक ऋषि मुनि के पीछे पड़ाव डाला (४८४)।'

(३) भ्राष्ट्र : दाना भूनने अथवा अनाज भूनने का भाड़। भाड़ में दाना भूननेवाले को कश्मीरी भड़भूजा कहते हैं। भूजा एक जाति ही

हतेऽथ विद्रुते तस्मिन् पश्चादेत्य महाभटैः ।
सर्वस्वाप्त्या जहर्षाथ खानस्तत्र प्रथम जयात् ॥ ४५६ ॥

४५६ उसके भागने पर पीछे से पहुँचकर, महाभटो ने उसे मार दिया और खान सवस्व प्राप्ति एव विजय[1] से परम प्रसन्न हुआ ।

तुरुष्कदेशाद् यद्बुद्ध्या खानः प्राप्तो निरर्गलः ।
स भागसीहस्तत्पक्षात् केनापि प्रचलन् हतः ॥ ४५७ ॥

४५७ जिसकी बुद्धि से विना अवरोध खान तुरुष्क देश से आया था, उस भागसीह को किसी ने मार दिया, जबकि उसक पक्ष से वह जा रहा था ।

अथ मल्लशिलास्थाने तुष्ट. खानो जयोन्मदः ।
स्वसैन्यसग्रह कुर्वन् जिगीषु शिविर व्यधात् ॥ ४५८ ॥

४५८ विजय मे उन्मत एव सन्तुष्ट खान जीतने की इच्छा से, सैन्य सग्रह करते हुए मल्लशिला[1] नामक स्थान पर शिविर लगाया ।

विकरालान् भटान् क्षिप्त्वा करालविषयावनौ ।
मुमुषुर्निष्करालम्भान् वास्तव्यान् तस्य शस्त्रिणः ॥ ४५९ ॥

४५९ उसके शस्त्रधारी सैनिको ने कराल[1] देश की भूमि मे विकराल भटो को पछाडकर, निरालम्ब, वहाँ के निवासियो को लूट लिया ।

अत्रान्तरे मार्गपतिर्गृहीत्वा बालभूपतिम् ।
तज्जयाय बलोद्युक्तो निर्ययौ नगरान्तरात् ॥ ४६० ॥

४६० इसी बीच बाल भूपति को लकर सेना सहित, मागपति उसके विजय के लिय निकल पडा ।

---

होती है उसे काश्मीरी भाषा म बरबूजा कहा जाता है । भ्राष्ट्र उस बतन को कहत है । जिसम भडभूजा अनाज रखकर भूनत ह ।

पाद टिप्पणी

४५६ ( १ ) विजय सवकात अकबरी म उल्लेख है—'सेना की पक्तिया ठीक करके फतह खा न युद्ध की अग्नि प्रज्वलित कर दी । सवप्रथम फतह खा को सफलता हुई । सुल्तान की सेना छिन्न भिन्न हो गयी ( ४५४ ) ।'

फिरिश्ता लिखता ह—फतह खा पर काश्मीरी सेना न आक्रमण किया। वह हरा कर पीछ खदड दी गयी ( ४८४-४८५ ) ।'

पाद टिप्पणी

४५८ ( १ ) मल्लशिला द्रष्टव्य पाद टिप्पणी जैन० १ १ ११५, १४७, ५७६ ।

पाद टिप्पणी

४५९ ( १ ) कराल यह अर्डविन परगना है । द्रष्टव्य पाद टिप्पणी जैन० ३ १९१, ४ ४४८, जान० श्लोक २५३, कल्हण १ ९७ ।

प्राक्सैदकदनाभ्यस्तन्यस्तवस्तुविलुण्ठनाः ।
पुराद् गृहरसां भीताः पौरा ग्रामेषु न्यक्षिपन् ॥ ४६१ ॥

४६१. पूर्वकाल में सैय्यिदों के कदन[1] के अभ्यस्त एवं रखे वस्तुओं के लूटे जाने के अनुभवी पुरवासी लोग भयभीत होकर, गृह सम्पत्ति (गृङिणी ?) को पुर से गावों में रख दिये।

निष्कृष्टवस्तुभावा सा मुषितेव वराङ्गना ।
अभवद् राजरहिता नगरी न गरीयसी ॥ ४६२ ॥

४६२. समस्त वस्तुभाव अपहृत कर लिये जाने पर, नृप रहित वह नगरी, मुषित वारांगना[1] सदृश उत्तम नहीं रह गयी।

वैदेशिकटकाटोपकोपोत्करस्टद्भटः ।
गुसिकोड्डारभूवाटे पाटवाच्छिबिरं व्यधात् ॥ ४६३ ॥

४६३. विदेशी सैन्य के गर्व से क्रोधपूर्वक जिसके भट शब्द कर रहे थे, उसने गुसिकोड्डार[1] भूवाट[2] में अतिचातुर्य से शिविर स्थापित किया।

---

पाद-टिप्पणी :

४६१. ( १ ) कदन : विनाश, हत्या, मरण, युद्ध।

पाद-टिप्पणी :

४६२. ( १ ) वारांगना : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : ३ : २५३ । स्त्री नामवाचक शब्द के पूर्व 'वार' शब्द लगाया जाता है। तो उसका अर्थ वेश्या, नर्तकी आदि पण्योपजीवी होता है। क्षेमेन्द्र में लोकप्रकाश ने वारंगना को रसा, मदना, महीषी, वेश्या, पण्यस्त्री के समकक्ष रखा है ( लोक : ५३ )।

पाद-टिप्पणी :

४६३. ( १ ) गुसिकोड्डार : एक करेवा का नाम है। तवक्काते अकवरी में उल्लेख है—'सुल्तान मुहम्मदशाह काश्मीर ( श्रीनगर ) के वाहर जहाँगीर माक्रे के समझाने पर आया और करसवार के मैदान में शिविर लगाया (४५४–६८६–८७)।'

तवक्काते अकवरी एक पाण्डुलिपि और फरिश्ता के लीथो संस्करण में 'करसवार' लिखा गया है। दूसरे पाण्डुलिपि में 'किस्तवार' लिखा गया है। और लीथो संस्करण में 'गिरसवार' लिखा गया है। कर्नल ब्रिग्गस तथा रोजर्स स्थान का नाम नहीं देते। मैं समझता हूँ कि 'गिरसवार' किंवा 'करसवार' ही गुसिकोड्डार है। उन दिनों कश्मीर शब्द का प्रयोग श्रीनगर के लिये किया जाता था। काश्मीर के वाहर का अर्थ काश्मीर के वाहर लगाया गया है। अतएव परशियन लेखक ने 'किस्तवार' अर्थ लगा लिया है। अर्थ होना चाहिए श्रीनगर के बाहर गुसिकोड्डार में सुल्तान का शिविर लगाया गया था।

गुसिकोडड्ार के भौगोलिक स्थिति तथा कथा प्रयोग से परशियन लेखकों का 'करसवार' 'किवां' 'गिरसवार' गुसिकोड्डार ही ठहरता है।

गुसिका नाम है। रामुह के उत्तर में एक अधित्यका उठती है। वह श्रीनगर जानेवाली सड़क से कटती है। यह गुस उदर नाम से प्रसिद्ध है। इसका नाम गुस गाँव के नाम पर पड़ा है। गाँव रामुह से दो मील पूर्व पर्वत पादमूल में है। श्रीवर वर्णित गुसिका यही है।

परन्तु यह वर्तमान गुस उदर रामुह और खानपुर सराय के मध्य पड़ता है।

मस्थाप्य तत्र भूपाल त्रिधा कृत्वा स्ववाहिनीम् ।
कल्याणपुरग श्रुत्वा खान योद्धुं विनिर्ययौ ॥ ४६४ ॥

४६४ वहाँ पर भूपाल को स्थापित कर तथा अपनी सेना को त्रिधा विभक्त कर, वह खान को लेकर कल्याणपुर[1] गया सुनकर, युद्ध के लिये निकल पड़ा ।

द्राभग्रामान्तसीमान्ते समासन्नोऽधिकार्तधीः ।
तस्थौ खानान्तिकं प्राप्य स खानमरुगान्तरे ॥ ४६५ ॥

४६५ द्राभ ग्राम[1] के समीप पहुचकर, अधिक दुःखित बुद्धिवाला वह, खान मरुग[2] में खान के पास जाकर, स्थित हो गया ।

क्रमराज्यस्फुरत्प्राज्यचक्रवाटादिदुःसहाम् ।
वैदूर्यभट्टः पाश्चात्यां जग्राह गिरिपद्धतीम् ॥ ४६६ ॥

४६६ वैदूर्य भट्ट ने क्रमराज्य के स्फुरित होते चक्रवाड[1] आदि से दुस्सह पश्चिम दिशा के गिरिमार्ग को पकड़ा ।

सपिर्वजप्रतीहारगक्कराजसुतादयः ।
चतुरङ्गोपमां लीलां क्षण चक्रुः पुरोगताः ॥ ४६७ ॥

४६७ पिर्वज[1] प्रतिहार सहित गक्कर[2] राजपुत्र आदि जो कि पुरागत थे, क्षणभर चतुरंग सदृश लीला किये ।

---

(२) भूवाट श्रीदत्त ने अर्थ बगावा लगाया है ।

पाद टिप्पणी

४६४ (१) कल्याणपुर कल्मपार स्थान है । जयापीड की रानी कल्याण देवी ने इस ग्राम की स्थापना किया था । कल्हण के समय वह डामरों का एक केन्द्र था । द्रष्टव्य पाद टिप्पणी राज० कल्हण ४ ४८३ तथा जैन० ४ ५०० ।

पाद-टिप्पणी

४६५ (१) द्राभ ग्राम वर्तमान ग्राम द्राब गाम है । कल्मपार अथवा प्राचीन कल्याणपुर से उत्तर तीन मील पर स्थित है । रामबू नदी के दाहिने तट पर है । दूर से गाँव दिखाई पड़ता है । यहाँ पुराने ध्वन्सावशेष के दो एक विशाल शिला-खण्ड पड़े हैं । गुनियान से ९ मील उत्तर, श्रीनगर सड़क के पश्चिम है ।

(२) खान मरुग यह स्थान ग्राम गाँव के समीप ही होना चाहिए ।

पाद टिप्पणी

४६६. (१) चक्रवाड श्री कण्ठकौल तथा दत्त ने इस स्थानवाचक शब्द माना है । श्रीदत्त ने नाम चक्रवाट दिया है । यह पाठभेद के कारण है (द० ३ ५८) ।

पाद टिप्पणी

४६७ (१) पिर्वज पर्वेज फारसी नामवाचक शब्द है । उसका अर्थ प्रतिष्ठित तथा सम्मानित होता है ।

(२) गक्कर द्रष्टव्य पाद टिप्पणी जैन० २ १४८, ४ ७५३ ।

व्यूहवद्ध युद्ध :

अथैकतः स्वकाश्मीरवैदेशिकबलान्विताः ।
मसोदनायकसुता योद्धुं व्यूहात् समाययुः ॥ ४६८ ॥

४६८. एक तरफ काश्मीरी एवं विदेशी सेना सहित मसोद नायक के पुत्र युद्ध करने के लिये व्यूह[1] से आ गये ।

फलकासिस्फुरत्पक्षा नदन्तोऽन्तिकमागताः ।
चेरुः पङ्क्तया भटास्तत्र हंसा इव नभोन्तरे ॥ ४६९ ॥

४६९. आकाश में हंसों के समान, ढाल एवं तलवार रूप पक्ष से स्फुरित होते, एवं शब्द करते, समीपागत भट वहाँ पर पंक्तिवद्ध होकर, विचर रहे थे ।

यावत् प्रवृत्तो योद्धुं तांस्तावद् वीक्ष्याग्रमागतान् ।
अह्लादठक्कुरव्यूहो निरीहः समपद्यत ॥ ४७० ॥

४७०. जवतक लड़ने के प्रवृत्त हुआ, तवतक उन्हें समक्ष आया देखकर, आल्हाद (अहमद) ठाकुर का व्यूह निरीह हो गया ।

चेलाह्निकाभुजः केऽपि गर्जन्तो जलदा इव ।
स्फुरच्छस्त्रतडिज्ज्वालाः सोत्फाला निर्ययुर्मृधे ॥ ४७१ ॥

४७१. मेघ सदृश कुछ तुच्छ दैनिक भोजी गरजते हुए, स्फुरित शस्त्र, विद्युत ज्वाला से युक्त होकर, छलांग मारते, ( ढाल सहित ) युद्ध में निकल पड़े ।

विषमा पङ्कसंकीर्णा जाड्यदुर्मार्गदूषिता ।
तेषामापततां साध्या वासनेव निजाजिभूः ॥ ४७२ ॥

४७२. उन आनेवालों के लिये वासना सदृश विषम पंकभूमि संकीर्ण एवं जाड्य ( जड़ ) दुर्मार्ग दूषित युद्धभूमि साध्य हो गयी थी ।

---

पाद-टिप्पणी :

४६८. ( १ ) व्यूह : मंख ने अर्थ किया है—वर्गविन्यासयोर्व्यूहो विस्तारे पृथुले त्रिषु ॥९५५॥ मनु ने सैन्य विन्यास अर्थ किया है। ७ : १८७—व्यूहावुभौ तावितरेतरस्मात् भङ्ग जयं चापतुरव्यवस्थम्—रघु० ७ : ५४ ।

अनेक प्रकार के व्यूहों का वर्णन मिलता है। यथा—दण्डव्यूह, शकटव्यूह, दराहव्यूह, मकरव्यूह, सूचीव्यूह, पद्मव्यूह, चक्रव्यूह, वज्र व्यूह, गरुड़-व्यूह, श्येनव्यूह, मण्डलव्यूह, दुर्व्यूह, सर्वतोभद्र-व्यूह आदि है । राजा या व्यूह का प्रधान मध्य में रहता है । उस पर सहसा आक्रमण नहीं हो सकता । किसी प्रकार के आक्रमण या विपत्ति आदि से रक्षा के लिये जो योजनायें वनायी जाती हैं, उनकी संज्ञा व्यूह-रचना से दी जाती है ।

व्यूहपांति, व्यूहपृष्ट सेना के पृष्ठभाग को कहते हैं । व्यूहभंग, व्यूहभेद का अर्थ सैनिकों की स्थिति का क्रम टूटना है ।

पाद-टिप्पणी :

४७२. पाठ : 'वासना' वम्बई ।

वैदेशिकभटान् दृष्ट्वा नटत्खेटकपीटकान् ।
चटका इव जग्मुस्ते विदूरं पाटवोज्झिताः ॥ ४७३ ॥

४७३ अश्वो को नचाते विदेशी भटो को देखकर, वे समस्त चतुराई भूलकर, गौरैया सदृश दूर चले गये ।

न सस्तम्भयितुं सेनामशकत् तां पलायिनीम् ।
अह्लादठक्कुरो दीर्णां सेतुभङ्गान्नदीमिव ॥ ४७४ ॥

४७४ आल्हाद ( अहमद ) ठाकुर भागनेवाली उस सेना को टूटी सेतुबन्ध वाली नदी[1] के समान रोकने मे समर्थ नही हुआ ।

अहमहमिकायातजातघातव्रणार्दिताः ।
प्राणत्यागेन ते केऽपि चक्रुर्वेतननिष्कृतिम् ॥ ४७५ ॥

४७५ स्पर्धापूर्वक आये और प्रहार के व्रण स पीडित होकर, कुछ लोगो ने प्राण त्याग कर, मूल्य चुकाये ।

स्रवच्छोणितसिक्ताङ्गाः शालिक्षेत्रगताः शवाः ।
यागोपहारपशुतां ययुः कार्षिकभूमिषु ॥ ४७६ ॥

४७६. कृषको की भूमि पर पडे, बहते रक्त से रंजित अंगवाले, शालि क्षेत्रगत शव, यज्ञ के ( बलि ) पशु सदृश हो गये थे ।

सेना खानस्य वात्येव सा नैर्ऋतदिगागता ।
तत्तल्लोकक्षयं चक्रे वेगभग्नभटद्रुमा ॥ ४७७ ॥

४७७ अन्धड सदृश नैऋत्य[1] दिशा से आयी, खान की सेना वेग से, भटद्रुमो का भंजन कर, तत्-तत् प्रकार से लोगो का विनाश किया ।

केऽपि काश्मीरिकास्तत्र वैदेशिकभटानले ।
शस्त्रज्वालावलीदीप्ते जुहुवुः श्रीफलं वपुः ॥ ४७८ ॥

४७८ वहाँ पर काश्मीरियो ने शस्त्र-ज्वालापुंज से दीप्त वैदेशिक भटाग्नि मे, श्रीफल[1] सदृश अपने शरीर की आहुति दिये ।

---

पाद-टिप्पणी

४७४ ( १ ) नदी नदी का बांध जब टूट जाता है, तो कोई भी शक्ति नदी को रोक रखन मे असमर्थ हो जाती है। समस्त पानी बह जाने पर ही नदी का जल पुन बांधकर रोका जा सकता है परन्तु टूटने की अवस्था में वह जल विप्लव करके ही रुकता है ।

पाद-टिप्पणी

४७७ ( १ ) नैऋत्य दिशा : काश्मीर में दक्षिण-पश्चिम की वायु के कारण अन्धड तथा तूफान आता है, उसमे वृक्षादि उखड जाते है। श्रीवर खान की सेना की उपमा नैऋत्य वायु के तूफान से देता है ।

पाद-टिप्पणी :

४७८. ( १ ) श्रीफल . बेल = बिल्व = नारि-

किं नामोदीरणैस्तेषां दृष्ट्वा व्यूहं समागतम् ।
तिर्यग्भिरिव पातुं स्वं भीत्या यैयैः पलायितम् ॥ ४७९ ॥

४७९. उन लोगों का नाम लेने से क्या लाभ, 'जो समागत व्यूह को देखकर, पक्षियों के समान भय से अपनी रक्षा के लिये, पलायित हो गये ।

प्रमेयभाजो मुख्या ये दृष्टा राजसभान्तरे ।
अदृष्टपूर्वं सन्त्रासं तेऽप्यशस्त्रिवदाययुः ।
वीरवृत्त्या त्यजन् प्राणान् केवलं श्लाघ्यतामगात् ॥ ४८० ॥

४८०. जो प्रमुख भागी लोग राजसभा में देखे गये थे, वे भी विना शस्त्र के लोगों के समान अपूर्व सन्त्रासपूर्वक आये । केवल वही वीरतापूर्वक प्राण त्याग कर प्रशंसनीय हुआ ।

तस्य त्रिचतुरास्त्यक्तप्राणा अनुचरा रणे ।
दिवं यियासोर्भोगार्थं बभूवुस्ते पुरःसराः ॥ ४८१ ॥

४८१. वही और रण में उसके तीन-चार अनुचर प्राण त्याग कर, स्वर्ग जानेवाले, उसके अग्रगामी बने ।

हतावशिष्टान् विद्राव्य ते खानस्य महाभटाः ।
निवृत्ता मार्गपत्यग्रे स्वीयभ्रान्त्या समाययुः ॥ ४८२ ॥

४८२. खांन के उन महाभटों ने हतावशिष्ट लोगों को भगा कर, लौटकर, अपने पक्ष की भ्रान्ति से, मार्गपति के समक्ष आ गये ।

आकस्मिक विजय :

मसोद्खानः क्वेत्येवं वदन्तो विजयोद्यताः ।
वीरा हस्सनमीराद्या ज्ञाता मार्गपतेर्भटैः ॥ ४८३ ॥

४८३. 'मसोद खान कहा है ?' इस प्रकार कहते हुए, विजयोद्यत वीर, हस्सन मेर आदि लोगों को मार्गपति के भटों ने जान लिया ।

पञ्चशस्तस्य सम्बन्धिभृत्यास्ते नौरुजादयः ।
सगौरभट्टाश्चान्ये च हता मार्गपतेः पुरः ॥ ४८४ ॥

४८४. उसके पाँच सम्बन्धी मृत नौरुज आदि तथा गौरभट्ट सहित अन्य लोग भी मार्गपति के समक्ष मार डाले गये ।

---

यल । हवन में श्रीफल की आहुति दी जाती है । कहीं वेल काट कर तथा कहीं समूचा हवनाग्नि में डाल दिया जाता है । श्रीवर श्रीफल की उपमा वहुत देता है । मंख श्रीफल का नाम वेल या विल्व देता है ।
—नीलिन्यां श्रीफली विल्वे नेभरोगे तु पाकलः ॥ ८४० ॥

विमुखोऽभूत् कियत्कालं यः स सांमुख्यमाययौ ।
बालभूभृत्प्रभावेण कश्मीरकटके विधिः ॥ ४८५ ॥

४८५ कुछ समय के लिये जो दैव ( भाग्य ) विमुख हो गया था, वह बाल-भूपति के प्रभाव से काश्मीर सेना के अनुकूल हो गया ।

मार्गेशस्याथवा स्तुत्यं धैर्यं तस्यात्र संयुगे ।
सन्नद्धः सबलस्तस्थौ जयस्तम्भ इवाचलः ॥ ४८६ ॥

४८६ इस युद्ध मे उस मार्गेश का धैर्य प्रशसनीय था और सेना सहित सन्नद्ध, वह अचल जयस्तम्भ तुल्य स्थिर रहा ।

पदैकमात्रं पश्चाच्चेदगमिष्यच्च तत्स्थलात् ।
काश्मीरकटकस्यास्य नावशिष्येत किञ्चन ॥ ४८७ ॥

४८७ यदि उस स्थान से एक पद मात्र भी पीछे जाता, तो काश्मीर सेना का कुछ भी अवशेष नही रहता ।

भिन्नप्रकृतिसन्धानकौशलं श्रीज्यहाङ्गिरे ।
भिषजीव तदा दृष्टं भैषज्यं सांनिपातिके ॥ ४८८ ॥

४८८ उस समय जहाँगीर में विभिन्न प्रकृति[1] का सन्धान कौशल उसी प्रकार देखा गया, जिस प्रकार सन्निपातग्रस्त मे प्रकृति अनुसन्धानपूर्वक औषध-कौशल भिषक मे देखा जाता है ।

प्रागल्भ्यमप्रतिहतं प्रतिभानमोज-
स्तत्तत्प्रयोगचतुरत्वमसंभ्रमश्च ।
एतानि यस्य समयेऽप्यतिसङ्कटे स्यु-
स्तुष्टेव तं प्रति समेति रणे जयश्रीः ॥ ४८९ ॥

४८९ अप्रतिहत प्रगल्भता, प्रतिभा, ओज, तत्-तत् प्रयोग की चतुरता, असभ्रम (घबडाहट) अति सकट काल मे भी, जिसके पास रहते हैं, युद्ध मे प्रसन्न-सी होकर, जयश्री, उसके पास आती है ।

---

पाद-टिप्पणी

४८६ (१) जयस्तम्भ विजयी राजा विजय-सूचक जयस्तम्भ लगाता है । किसी देश पर विजय के स्मारक स्वरूप, समुद्रगुप्त के प्रयाग स्तम्भ तथा अशोक के अनेक स्तम्भो का उदाहरण मिलता है। ललितादित्य आदि कश्मीर के दिग्विजयी राजाओ ने इस प्रकार के स्तम्भों को विजित क्षेत्रों में आरोपित किया था । रघुवश में भी जयस्तम्भ का उल्लेख मिलता है ।—निचखान जयस्तम्भान गङ्गा स्रोतोऽन्तरेषु स —रघु० ४ ३६, ६९ ।

पाद-टिप्पणी

४८८ ( १ ) प्रकृति प्रकृति शब्द यहाँ श्लिष्ट है । आयुर्वेद के वात, पित्त, कफ तथा राज्य की सप्त प्रकृतियो से तात्पर्य है ( द्र० , ३ , ३८ ) ।

खानोऽस्मत्करमाप्तोऽत्र मिथ्योद्घोष्यात्र संयुगे ।
रणात् प्रचलितान् दूरं युक्त्या सर्वानुपानयत् ॥ ४९० ॥

४९०. 'युद्ध में खांन[1] हमलोगों के हाथ आ गया है'—ऐसी मिथ्या घोषणा करके, रण से दूर चले गये लोगों को युक्तिपूर्वक समीप ले आया ।

मार्गेशमधुसान्निध्ये तद्रणोपवनान्तरे ।
ते वीरभ्रमराश्चेरुः स्फुरत्पक्षरवोद्धताः ॥ ४९१ ॥

४९१. मार्गेश रूप वसन्त के समीप आने पर, उस युद्धरूपी उपवन में, वे वीर रूपी भ्रमर, स्फुरित पक्ष एवं रव युक्त होकर विचरण करने लगे ।

अथ खानस्य शिविरे गक्काद्या जयदुर्मदाः ।
नीतावशिष्टां सामग्रीं हत्वा भूरीनलुण्ठयन् ॥ ४९२ ॥

४९२. जय से दुर्मति गक्क आदि लोग, खांन के शिविर में बहुत से लोगों को मार कर, ले जाने से बची सामग्री को लूट लिये ।

खान सेना का पलायन एवं दुर्गति :

एभराहिममार्गेशः सभृत्यः समराग्रगः ।
मसोदनायकमुखान् विमुखांस्तर्जनैर्व्यधात् ॥ ४९३ ॥

४९३. समर में अग्रगामी भृत्य सहित इब्राहीम मार्गेश के तर्जनों से मसोद नायक आदि लोगों को विमुख कर दिया ।

अन्ये शृङ्गारसीहाद्या दृष्ट्वा तत्सैन्यमद्भुतम् ।
भेडावनपथात् तूर्णं विद्रुताः स्वां भुवं ययुः ॥ ४९४ ॥

४९४. अन्य शृंगारसीह आदि, लोग उस अद्भुत सैन्य को देखकर, भेडावन[1] मार्ग से शीघ्र भाग कर अपनी भूमि को चले गये ।

---

पाद-टिप्पणी :

४९०. ( १ ) खांन : तवक्काते अकवरी मे खांन के स्थान पर मुहम्मदशाह का वन्दी होना लिखा—'फतह खां वन्दी वनाया जानेवाला ही था कि एक षड्यन्त्रकारी ने यह झूठा समाचार प्रसारित कर दिया कि सुल्तान मुहम्मदशाह विद्रोहियों द्वारा वन्दी वना लिया गया है (४५४–६८७) ।' फिरिश्ता लिखता है—'इसी वीच शिविर में यह वात फैल गयी कि सुल्तान को शत्रु ने पकड़ लिया है (४८५) ।

पाद-टिप्पणी :

४९४. ( १ ) भेडावन : विरानी उपत्यका में भेडावन है । मैं यहाँ की यात्रा कर चुका हूँ । द्रष्टव्य : परिशिष्ट : कल्हण : खण्ड : एक 'भेदा देवी' ।

सत्रे राजपुरीसैन्य सदैन्यं वेष्टितं भटैः ।
दत्त्वाभय ररक्षाजौ गक्को गणपतिर्यथा ॥ ४९५ ॥

४९५ भटो द्वारा घिरी हुई, दीनतापूर्ण राजपुरी को सेना को युद्ध मे अभयदान देकर, गणपति के समान गक्क ने रक्षित किया।

त्यक्त्वा सन्नाहसामग्रीं केऽप्येते विद्रुता द्रुतम् ।
मुषिताः सखशैर्डोम्बैः पृष्ठभग्नाः प्रशान्तयः ॥ ४९६ ॥

४९६ कुछ लोग वर्म सामग्री त्याग कर, शीघ्र पलायित हो गये और उनके पीछे सेना लग गयी, और खसो[1] और डोम्बो[2] द्वारा लूट लिये गये।

वृक्षानपि वने जज्ञु ररयोऽनुलगन्त्यमी ।
वैदेशिकैर्हृतं यत्तद् ग्रामेषु जनपीडया ।
काश्मीरिकेभ्यो मुषिता निक्षेपमिव ते ददुः ॥ ४९७ ॥

४९७. वन मे वृक्षो को भी पीछा करनेवाले शत्रु जान रहे थे। विदेशियो ने ग्रामो में लोगो को पोडित कर, जो अपहृत किया था, उसे लूटे जाने पर, निक्षेप[1] के समान उन लोगो ने काश्मीरियो को दे दिये।

---

पाद-टिप्पणी

४९५ ( १ ) गणपति गणेश की पूजा प्रत्येक कार्यारम्भ के पूर्व की जाती है। यह केवल महाभारत के लिपिक, महाविद्वान ही नही परन्तु सफल सेनानी भी रहे हैं। भण्ड के सैनिको का इन्होंने नाश किया था तथा शक्ति के अनुयाइयो को शक्ति प्रदान की जिससे विजय हुई थी ( ब्रह्मा० ३ ४१ ३७-४१, ४२ २ ३३, ४३ : १८ : ३१, ४४ : २४, ४ २७ ' ७२-१०४, ४४ ६७-७०, मत्स्य० १५४ ५०२-५, नील० १०३० )। हिन्दुओं के पाँच प्रधान देवताओं मे एक है। शास्त्रों में गणेश को ओंकारात्मक रूप माना गया है। ओंकार से ही गजमुख विकसित माना जाता है। पाँचवी शताब्दी के पूर्व की हाथीमुख, गजानन, अथवा हाथी के सूड के साथ मुख की मूर्ति अभी तक नही मिली है।

गणेश के हाथों में पाश, अंकुश, पद्म तथा परशु हैं। चार हाथ, एक दन्त, लम्बोदर, त्रिनेत्र तथा ललाट पर अर्धचन्द्र है।

मध्य अमेरिका तथा मेक्सिको के खनन कार्य में गणेश की पुराकालीन मूर्तिया मिली है। कोपन नामक स्थान में मूर्ति मिली थी। मैक्सिको में 'विराकोचा' नाम से गणेश की पूजा होती थी। 'विनायक' का यह अपभ्रंश प्रतीत होता है।

कृतयुग में कश्यपपुत्र विनायक सिंहारूढ थे और देवातक तथा नरातक का नाश किया था। त्रेतायुग में मयूरारूढ, शिवपुत्र मयूरेश्वर नाम से सिंधु का वध किया था। द्वापर में शिवपुत्र गजानन रूप से सिन्दूर का वध किया था तथा वरेण्य राजा को गणेश गीता सुनाया था। कलियुग में अश्वारूढ धूमकेतु रूप में अवतार लेकर म्लेच्छो का सहार करेंगे ( गणेश० २ १४९ )। गणेश को चतुर्थी कृष्ण एव शुक्लपक्ष दोनो प्रिय है।

पाद-टिप्पणी :

४९६ ( १ ) खस द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० ' ४ ११३, २१२, ६५०।

(२) डोम्ब द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी ' जैन० : ४ १६९, ४४३, जोन० श्लोक ९५२, कल्हण ' ३५४।

पाद-टिप्पणी

४९७ (१) निक्षेप ' द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० ' ३ . ४०५।

शीतज्वरार्दिताः केचित् केचिच्छ्रान्ता बुभुक्षया ।
वैदेशिकाश्च काश्मीराः शतसङ्ख्याः क्षयं ययुः ॥ ४९८ ॥

४९८. कुछ शीत एवं ज्वर से, कुछ श्रान्त एवं बुभुक्षा से, शत संख्यक काश्मीरी एवं विदेशी नष्ट हो गये ।

संरूढं कमपि निपातयत्यकाण्डे
पाताहं नयति च कञ्चन प्ररूढिम् ।
सङ्कल्पाविषयविचित्रकाकताली-
वायौघस्तरुमिव पूरुषं विधाता ॥ ४९९ ॥

४९९. कल्पना से परे, विचित्र काकताली[1]वत् वायुपुंज, जिस प्रकार से संरूढ़ किसी वृक्ष को गिरा देता है, और गिरने योग्य को उठा देता है, उसी प्रकार विधाता भी किसी प्रवृद्ध पुरुष को अनौसर ही अवनति के गर्त में गिरा देता है, और किसी गिरते योग्य को उन्नत कर देता है ।

यादृक् सुवामनः खानस्तादृशस्तस्य चेद् भटाः ।
भवेयुः किं न जायेत किं तु धर्मानुगो जयः ॥ ५०० ॥

५००. जिस प्रकार खांन उत्तम संस्कार ( विचार ) वाला था, यदि वैसे ही उसके भट होते, तो क्या नहीं हो सकता था ? जय धर्मानुगामी[1] होता है ।

इत्थं फतहखानेऽस्मिन् प्राप्ते कश्मीरमण्डलम् ।
एकषष्टितमे वर्षे परुद्वच्छ्रावणान्तरे ॥ ५०१ ॥

५०१. इस प्रकार इस फतह खांन के ६१वें वर्ष[1] श्रावण मास में काश्मीर मण्डल में प्रवेश करने पर गत वर्ष के समान—

कटकद्वयसंयोगे कल्याणपुरसन्निधौ ।
अत्रत्यानां च बाह्यानां तत्तल्लोकक्षयोऽभवत् ॥ ५०२ ॥युगलकम्॥

५०२. कल्याणपुर[1] के निकट दोनों सेनाओं का संयोग होने पर, यहाँ के तथा बाहर के लोगों का अनेक प्रकार से विनाश हुआ । युगलकम् ॥

---

पाद-टिप्पणी :

४९९. ( १ ) काकताली : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : ४ : १२९ ।

पाद-टिप्पणी :

५००. ( १ ) जय-धर्म : प्रचलित श्रुति है कि जहाँ धर्म होता है—वहाँ जय होती है—यतो धर्मस्ततो जयः ।

पाद-टिप्पणी :

५०१. (१) इकसठवें वर्ष : सप्तर्षि ४५६१ = सन् १४८५ ई० = विक्रमी : १५४२ = शक = १४०७ = कलि० ४५८६ । इसके ठीक १०० वर्ष पश्चात् १५८६ में कश्मीर पर मुगलों का शासन हो गया था ।

पाद-टिप्पणी :

५०२. ( १ ) कल्याणपुर : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : ४ : ४६२ ।

मैत्रर्क्षशनिसयोगं मीलापं शनिजीवयोः ।
भौमाब्दं तत्क्षये हेतुं देशे दैवविदो विदुः ॥ ५०३ ॥

५०३ ज्योतिषियो ने अनुराधा[1] शनि का सयोग, शनि और बृहस्पति[2] का मिलाप, मगल[3] का वर्ष का राजा होना, देश मे उसके क्षय का हेतु जान लिया था।

श्रीजैननृपते राज्ये षड्दर्शनरताः प्रजाः ।
दृष्टाः स्वधर्मनिरता निरातङ्का निरीतयः ॥ ५०४ ॥

५०४ जैन ( जैनुल आबदीन ) के राज्य मे प्रजा षड्दर्शन[1] रत, स्वधर्म निरत, आतक[2] ( भय ) रहित एव ईति[3] भयमुक्त थी।

तस्मिन् स्वर्गं गते राज्ञि नष्टाचारेऽत्र मण्डले ।
प्रजापचाराल्लोकानां क्षयोऽभूदिति मे मतम् ॥ ५०५ ॥

५०५ उस राजा के स्वर्गगत होने पर, इस मण्डल मे आचार, विचार नष्ट हो गया, और प्रजा[1] के दुराचार से ही लोगो का विनाश हुआ—यह मेरा मत है।

---

पाद-टिप्पणी

५०३ ( १ ) अनुराधा शनि : कुलूत देश के निवासी जन का और पर्वत निवासी कश्मीर जन, समस्त राष्ट्र का अग कुम्भकार आदि विशेष जाति सभी अशान्ति म पड जाते है। विशेषकर घण्ट बजानेवाले ( घण्टावादी ) और शिल्पीगण भी उपद्रवग्रस्त होते है। मित्रो में परस्पर भेद उत्पन्न होता है। वराहमिहिर बृहदसहिता अ० १० श्लोक० १२ ।

मैत्रे कुलूततङ्गणखसकाश्मीरा समन्त्रिचक्रचरा ।
उपताप यान्ति च घण्टिका विभेदश्च मित्राणाम् ॥

( २ ) शनि एव बृहस्पति शनि एव बृहस्पति के योग से गुरु-चाण्डाली योग बनता है। जिसमें देश के अन्दर धार्मिक भावना का ह्रास और अनैतिकता की वृद्धि तथा नौकरशाही का प्रभुत्व रहता है।

( ३ ) मगल राजा मगल के वर्षेश होने पर रक्तपात, दुर्घटना, प्रशासन की उग्रता, तानाशाही, रक्तदोष ( फोडा फुन्सी रक्त विकार ), परस्पर सघर्ष एव विवाद होता है।

पाद-टिप्पणी

५०४ षड्दर्शन : ( १ ) सांख्य, ( २ ) न्याय, ( ३ ) वैशेषिक, ( ४ ) योग, ( ५ ) मीमासा ( ६ ) एव वेदान्त।

( २ ) निरातक इसी अर्थ म कालिदास ने रघुवश में निरातक का प्रयोग किया है।

पुरुषायुष जीविन्यो निरातङ्का निरीतय ।
यन्मदीया प्रजस्तस्य हेतुस्त्वद् ब्रह्मवर्चसम् ॥
रघु० १ ६३

( ३ ) ईति अतिवृष्टिरनावृष्टिर्मूषिका शलभा खगा ।
प्रत्यासन्नाश्चराजान षडेता ईतय स्मृता ॥

अतिवृष्टि, अनावृष्टि, मूषको द्वारा कृषिनाश, शलभ, फतिंगियों टिड्डियों का आक्रमण, पक्षी, तथा विदेशी राजा का आना छह प्रकार की ईतियाँ कही गयी है ( द्र० ३ २२ )।

पाद-टिप्पणी :

'ससैद' पाठ—बम्बई।

५०५ ( १ ) प्रजा द्रष्टव्य पाद टिप्पणी जैन० ३ ४४, तथा जोन० : श्लोक ७२७, ८७६, शुक० १ ११९, २ ७४, ८८, ११४।

तथा हि वणिजः केचित् स्वाचारं हिन्दुकोचितम् ।
त्यक्त्वा पुरान्तरे चक्रुर्हत्वा गोमांसभक्षणम् ॥ ५०६ ॥

५०६. जैसा कि कुछ वणिकों ने हिन्दुओचित अपना आचार त्याग कर, पुर में मार कर, गो-भक्षण किये ।

येनैव पितरौ याता येन याताः पितामहाः ।
तद्दर्शनेऽत्र तत्पुत्रास्त्रपन्ते मौसुलप्रियाः ॥ ५०७ ॥

५०७. जिसका विश्वास कर, पिता एवं पितामह चले गये, उसी शास्त्र पर, मौसुल ( मुसलिम ) प्रिय उनके पुत्र लज्जित[1] होते थे ।

---

पाद-टिप्पणी :

५०६. ( १ ) गोमांस : वणिकों के गोवध का उल्लेख श्रीवर इसके पूर्व कर चुका है । मुसलमान हुए, जितना दिन बीतता जाता था, काश्मीरी अपना पूर्व आचार-विचार त्यागते जा रहे थे। उनमें कट्टरता तथा मुसलिम आचार-संहिता तथा खान-पान का प्रवेश विदेशी मुसलमानों तथा उन व्यापारियों किंवा वणिकों के द्वारा हो गया था, जो काश्मीर के बाहर पंजाब तथा अन्य स्थानों के मुसलिमों के सम्पर्क में आ गये थे और गोवध करना हिन्दू विरोधी कार्य के कारण, उसे करने में गर्व का बोध करते थे। द्र० : पाद-टिप्पणी : जैन० : ३ : २७० तथा ४ : ५०, १२४, २४५, ३०१ ।

पाद-टिप्पणी :

५०७. ( १ ) लज्जित : काश्मीरी हिन्दू से मुसलमान हुए थे । इसलाम पुरानी परम्परा तथा धर्म त्याग कर, पूर्णतया इस्लाम के प्रति निष्ठा चाहता है । वह इतिहास तथा प्राचीन रीति-रिवाज सबको भुलाकर, नव-मुसलिम समाज को कठोर इसलामी शृंखला में बद्ध कर देता है । फल यह होता है कि मुसलमान को अपने पूर्व धर्म, कर्म, आचार-विचार अथवा इतिहास में कोई आस्था अथवा आकर्षण नहीं रह जाता । वह एक नये धर्म तथा मिल्लत का अभिन्न अंग बन जाता है । वह इसलामी रीति-रिवाज परम्परा चलाने में रुचि रखता है न कि देशीय अथवा प्रदेशीय ।

श्रीवर स्पष्ट कहता है कि जो कल तक काश्मीरी थे, हिन्दू थे, अथवा मुसलमान हो जाने पर भी पूर्व संस्कार के कारण काश्मीरी परम्परा मानते थे, उनकी सन्तानें जिन्होंने शुद्ध मुसलिम संस्कार में जन्म प्राप्त-कर, कट्टर मुसलमान थे, उनके लिये काश्मीरी आचार-विचार का कोई मूल्य नहीं था । उनकी कट्टरता इतनी बढ़ गयी थी कि उन्हें काश्मीरी कहने में लज्जा का बोध होता था । काश्मीरी आचार-विचार मानना धर्म विरुद्ध कार्य था । भारत में मुसलमानों ने अपना नाम बदल दिया था । वे शिराजी, इराकी, अन्सार, मुगल, पठान, शेख, सैय्यिद, शमनानी आदि अपने नाम के साथ जोड़कर, अपनी वंश परम्परा विदेश से जोड़ने लगे । उन्हें यह कहने में लज्जा लगने लगी कि उनका कुल कभी ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य था, अथवा वे भारत के किसी भाग के निवासी थे और उनके पूर्वजों ने इसलाम कबूल किया था । इसी कठोर दृष्टिकोण के कारण भारत का विभाजन हुआ और भारतीय संस्कृति के स्थान पर, मुसलिम और हिन्दू संस्कृति और इतिहास की परंपरा खड़ी कर, दोनों जातियों में भेदभाव की दीवार खड़ी कर दी गयी । यही परिक्रिया श्रीवर के समय में होने लगी । पाकिस्तान के जनक मुहम्मद इकबाल के पूर्वज सप्रू ब्राह्मण थे, परन्तु उन्होंने इसमें न तो गर्व का अनुभव किया और न यह जताने की कोशिश की कि वे काश्मीरी थे ।

प्रत्यब्दं तिथिकार्याणि पुराणोक्तानि कानिचित् ।
विस्मृतानि दुराचारात् कथं न स्युर्दुरापदः ॥ ५०८ ॥

५०८ पुराणोक्त कुछ तिथि कार्यों[1] को दुराचार के कारण प्रतिवर्ष विस्मृत कर दिये—आपत्तियाँ क्यो न आये ?

मण्डलेऽस्मिन् दुराचारचातुर्वर्ण्यविराजते ।
प्रसङ्गपतिताचारविपर्यासादितीरितम् ॥ ५०९ ॥

५०९ इस मण्डल मे चारो वर्ण[1] धर्म ससर्ग मे दुराचार फैल जाने पर पतित एव आचार-विपर्यय सब ओर हो गया ।

पाद-टिप्पणी

५०८ ( १ ) तिथि कार्य कम से कम ५८ तिथियो पर पूजा आदि कार्य किये जाति थे । उन्हें मुसलमान हो जान पर शनै शनै नव-मुसलिम काश्मीरियो ने त्याग दिया, इसी ओर श्रीवर लक्ष्य करता है । नीलमत पुराण के अनुसार निम्नलिखित तिथियाँ भिन्न-भिन्न अवसरो पर मनायी जाती थी—(१) पूर्णमासी, असूज, (२) कार्तिक कृष्ण पन्द्रह, दीपावली (३) कार्तिक पूर्णिमा, (४) कार्तिक प्रथम दिन, (५) सूर्य पूजा माघ तथा आषाढ शुक्ल सप्तमी, (६) माघ पूर्णिमा, (७) प्रथम तुषार वर्षा दिन, (८) पौष कृष्ण अष्टमी, (९) पौष पूर्णिमा, (१०) उत्तरायण, (११) पौष कृष्ण द्वादशी, (१२) पौष कृष्ण चतुदशी, (१३) पौष कृष्ण अथवा श्रावण पचदशी, (१४) माघ शुक्ल चौथ-उमा पूजा, (१५) माघ पूर्णिमा, (१६) महिमान, अष्टमी नवमी तथा दशमी फाल्गुन, (१७) फाल्गुल कृष्ण द्वादशी विष्णु पूजा, (१८) फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी, शिवरात्रि, (१९) अष्टमी, नवमी, दशमी, फाल्गुन शुक्ल, (२०) फाल्गुन पूर्णिमा, (२१) पचमी तथा दशमी चैत्र कृष्ण, (२२) चैत्र कृष्ण एकादशी, (२३) चैत्र कृष्ण चतुर्दशी, (२४) चैत्र कृष्ण अमावस्या, (२५) परिवा शुक्ल, (२६) चैत्र शुक्ल पचमी, (२७) चैत्र शुदी षष्ठी, (२८) चैत्र शुक्ल नवमी, (२९) चैत्र शुदी एकादशी, (३०) चैत्र शुक्ल द्वादशी, (३१) चैत्र शुदी त्रयोदशी, (३२) पूर्णिमा, (३३) वैशाख शुक्ल तीज, (३४) वैशाख पूर्णिमा बुद्ध जन्मदिवस, (३५) ज्येष्ठ पूर्णिमा, (३६) यवाग्राग्य (यव पकने पर), (३७) आषाढ कृष्ण अष्टमी विनायक अष्टमी, (३८) आषाढ स्वाती योग-स्वाती नक्षत्र मिलने पर, (३९) एकादशी तथा पूर्णिमा शुक्लपक्ष आषाढ, (४०) दक्षिणायन, (४१) कश्यप पूजा श्रावण मास रोहिणी नक्षत्र सयोग, (४२) श्रावणी, (४३) जन्माष्टमी भाद्रपद, (४४) भाद्रपद अमावस्या, (४५) भाद्र शुक्ल चौथ धनद चतुर्थी, (४६) भाद्र शुक्ल पचमी नील-नाग पूजा आदि, (४७) षष्ठी, सप्तमी तथा अष्टमी भाद्र शुक्लपक्ष, (४८) भाद्र शुक्लपक्ष नवमी, (४९) भाद्र शुक्लपक्ष द्वादशी-महाद्वादशी, (५०) भाद्रपद शुक्ल त्रयोदशी वितस्ता जन्मोत्सव, (५१) असुज कृष्ण चतुर्थी दिक्पाल पूजा, (५२) असुज कृष्ण नवमी, (५३) प्रथम से पन्द्रह असुजकृष्ण पितृपक्ष, (५४) नवान्न विधान, (५५) असुज शुक्ल चतुर्दशी, (५६) असुजशुक्ल अष्टमी, (५७) प्रथम दिन कार्तिक, (५८) प्रथम से सप्तमी कृष्ण कार्तिक नववर्ष उत्सव ।

पाद टिप्पणी

५०९. ( १ ) चतुर्वर्ण : ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एव शूद्र ।

युद्ध पश्चात स्थिति :

राजाक्रान्तः परैर्मिथ्यावार्तयेति विसूत्रितः ।
मार्गेशस्ताजभट्टादीन् वृत्वा स्वशिविरं ययौ ॥ ५१० ॥

५१०. 'राजा शत्रुओं से आक्रान्त हो गया है'—इस मिथ्या वार्ता से, विसूत्रित (अस्तव्यस्त) होकर, मार्गेश ताजभट्ट आदि को रखकर, अपने शिविर चला गया ।

पश्चाच्चेदलगिष्यत् स नष्टांस्तान् बलवर्जितान् ।
न किञ्चिदवशिष्येत खानस्य चलतः पथि ॥ ५११ ॥

५११. नष्ट एवं सेना रहित, उन लोगों के पीछे लगा होता. तो मार्ग में जाते हुए, खांन (फतह) का कुछ भी शेष नहीं रह जाता ।

मार्गानभिज्ञो मार्गेशः सर्वेऽप्युभयवेतनाः ।
दायादुःस्थितिं लोके काङ्क्षन्तः स्वार्थलिप्सया ।
प्रैरयंस्तद्रणाद् गन्तुं मार्गेशं चाप्यदीदरन् ॥ ५१२ ॥

५१२. मार्गेश मार्ग से अनभिज्ञ था, उभयतः वेतन ग्रहण करने वाले लोग, स्वार्थलिप्सा के कारण, संसार में दायदों की बुरी स्थिति चाह रहे थे, अतः मार्गेश को रण से जाने की प्रेरणा दिये और स्वयं चले गये ।

सनृपं सैन्यमुत्थाप्य ततो जिष्णुर्ज्यहाङ्गिरः ।
ज्यमालमरुगास्थानं ययौ स विजयोर्जितः ॥ ५१३ ॥

५१३. विजयोर्जित एवं विजयी जहाँगीर नृप सहित सेना को वहाँ से लेकर, जमाल मरुग स्थान पर चला गया ।

किमेते मिलिताः खानमिति तेन विसर्जिताः ।
ददाह ताजभट्टः स ग्रामान् मङ्गल्यनादगान् ॥ ५१४ ॥

५१४. क्या ये लोग खांन (फतह) से मिल गये हैं ? यह सन्देह करके, उसने उन्हें विसर्जित कर दिया । उस ताजभट्ट ने मंगलनाद में स्थित ग्रामों को जला दिया ।

तत्तद्दग्धगृहोज्ज्वालधूमजालाकुलं नभः ।
घनकालोद्भवोद्दीप्ततडिदभ्रोपमां दधौ ॥ ५१५ ॥

५१५. उनके जलते घरों के ज्वाला एवं धूम-पुंज से व्याप्त आकाश, वर्षाकाल के चमकती बिजली एवं बादल की तरह लग रहा था ।

---

पाद-टिप्पणी :

५१३. ( १ ) जमाल मरुग : शुक ने भी इस स्थान का उल्लेख किया है ( २ : ३४ )। तवक्काते अकबरी में 'जहाल' नगरी नाम दिया है। कुछ प्रतियों में 'ज्यमा' का जंमा' पाठभेद और 'मरुग' का 'मड्गा' मिलता है। फिरिश्ता ने नाम 'जमाल' दिया है। ब्रिग्गस ने

लुण्ठन कार्य '

कृत यद् बाह्यदेशेषु काश्मीरैर्दिग्जयक्षणे ।
दाहलुण्ठ्यादिकं तद्वद् दृष्टमत्रैव मण्डले ॥ ५१६ ॥

५१६ दिग्विजय[1] के समय काश्मीरियो ने बाह्य देशो मे, जो दाह एव लुण्ठनादि कार्य किये, वैसा ही इस मण्डल मे भी देखा।

अकिञ्चनान् नग्नान् विज्ञप्त्यै समुपागतान् ।
अद्यैव जातान् दृष्ट्वा तान् न कोऽप्याच्छादन ददौ ॥ ५१७ ॥

५१७ विज्ञप्ति के लिये अकिंचन एव नग्न लोगो को जो आज ही, जैसे पैदा हुए लग रहे थे, देखकर, उन्हे किसी ने शरीर ढकने के लिये वस्त्र नही दिया।

तत्रत्यास्तद्धृतं कुप्यं रूप्यं धेनूः पशूनपि ।
दृष्ट्वोच्छ्वासाकुलाश्चक्रुराक्रन्दमुखरा दिशः ॥ ५१८ ॥

५१८. उन लोगो द्वारा कुप्य और रुप्य[1] एव पशुओ के अपहृत किया गया देखकर, वहाँ के लोग उच्छ्वास[2] से व्याकुल होकर, दिशाओ को आक्रन्दन से मुखरित कर दिया—

सर्वस्वहरणं यद्वत् कृतमस्मास्वहेतुकम् ।
युष्मास्वपि तथा भूयादचिरेण विरोधिभिः ॥ ५१९ ॥

५१९ 'जिस प्रकार हमलोगो का अकारण ही सर्वस्व हरण कर लिया, उसी प्रकार शीघ्र ही, तुम लोगो का भी विरोधियो द्वारा सर्वस्व अपहृत कर लिया जायगा।'

तत्पापफलमेतेषु त्रिषु तन्मरणक्षणम् ।
फताहशाहराज्याप्तौ दृष्टं लोकैर्विगर्हितम् ॥ ५२० ॥

५२० फतहशाह के राज्य प्राप्त करने पर निन्दित पाप का फल, इन तीनो[1] को मिला, यह उनके मरने के समय लोगो ने देखा।

---

'कहुलश्री' ( ४ ४९२ ) तथा रोजम ने 'जहल' ( जे० ए० एस बी० ५४ ११४ ) तथा फारसी में 'चहल' कही-कही लिखा मिलता है। पहाडी के ऊपर के समतल क्षेत्र को 'मरु' कहते है।

पाद-टिप्पणी

५१६. ( १ ) दिग्विजय श्रीवर ने जोनराज वर्णित सुल्तान शहाबुद्दीन के दिग्विजय यात्राकाल में अष्टनगर ( आसनगर ), पेशावर, नग्रहार आदि स्थानों के उत्पीडन आदि की ओर सकेत किया है। द्रष्टव्य : पाद टिप्पणी जोन० श्लोक ३७९-३८८।

पाद-टिप्पणी

५१८ ( १ ) कुप्य एव रुप्य श्रीवर ने कुप्य एव रुप्य का उल्लेख जैन० ४ ७१ में किया है। द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० ४ ७१, २ ४०१। मल ने रुप्य के सन्दर्भ में लिखा है—

आहते हेम्नि रजतो वा रुप्य रजतेपि च ॥६०५॥

( २ ) उच्छ्वास दुःख से निकलनेवाली ऊपर को खीची हुई साँस है। आह को श्वास या उसास का उच्छ्वास कहा जाता है—

मुखोच्छ्वास गन्धम्—विक्रम० ४ २२, ऋतु० १ : ३, मेघ० १०२।

उत्पिञ्जोत्पादनाद् देशे शृण्वन्नित्यादि दूषणम् ।
प्रजापापादसन्धित्सुमार्गेशः स न्यवर्तत ॥ ५२१ ॥

५२१. देश में उत्पिञ्ज (उपद्रव-षड्यन्त्र) उत्पन्न करने के कारण, इस प्रकार के दोष सुनकर भी, प्रजा पाप से सन्धि करने के लिये अनिच्छुक, मार्गेश लौट आया ।

सनृपो नगरं प्राप्तो विधाय विजयोत्सवम् ।
उच्चावचान् खानपक्षगतान् सर्वानदण्डयत् ॥ ५२२ ॥

५२२. नृप सहित नगर में पहुँचकर, विजयोत्सव करके, खान पक्ष में गये छोटे-बड़े सबको दण्डित[1] किया ।

एकं खानाग्रगं ज्ञात्वा शिष्टं तस्य कुटुम्बकम् ।
अबाधत न को देहे दुष्टरोग इवोल्बणः ॥ ५२३ ॥

५२३. एक खान के अग्रगामी व्यक्ति को अवशेष जानकर उसके परिवार को शरीर में उग्र दुष्ट रोग के समान किसने पीड़ित नहीं किया ?

कदाचिद् सुप्रीतो जनयति सुखं सार्वजनिकं
कदाचिद् वक्रेच्छुः सृजति जनतामीतिचकिताम् ।
फलं नीचं चोच्चं भविषु परिवृत्त्या विदधतो
ग्रहस्येवाकाशे गतिरिह विचित्रा बत विधेः ॥ ५२४ ॥

५२४. कभी प्रसन्न होकर, सार्वजनिक सुख पैदा करता है, कभी कुटिल होकर, जनता को ईति[1] भीति से चकित[2] कर देता है, इस प्रकार संसार को परिवर्तनपूर्वक नीचा-ऊँचा फल देनेवाले, ग्रह के आकाश गति[3] के समान, आश्चर्य है, विधि की गति, विचित्र होती है ।

कंचित्कालं दरत्रस्तः खानस्त्राणविवर्जितः ।
ययावकिञ्चित्करतां सावग्रह इवाम्बुदः ॥ ५२५ ॥

५२५. कुछ समय तक त्रस्त एवं त्राणरहित खान, अनावृष्टि काल के मेघ सदृश, अकिंचितकर[1] हो गया ।

---

पाद-टिप्पणी :

५२२. (१) दण्ड : तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'सुल्तान विजय कर काश्मीर (श्रीनगर) लौट आया और वारीभट्ट को भेजा कि उन ग्रामों को उत्पादित करे, जिन्होंने फतहशाह को आश्रय दिया था ( ४९४–६८७ )।'

पाद-टिप्पणी :

५२४. (१) ईति : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : ५०२ ।

( २ ) चकित : आतंक भीति से चकित होना यहाँ अभिप्रेत है ।

( ३ ) ग्रहगति : रात-दिन में जितना ग्रह चलता है, वह उसकी गति है । मंगल, बुध, बृहस्पति एवं शुक्र की गति मार्गी एवं वक्री दोनों होती है । सूर्य एवं चन्द्र सर्वदा मार्गी हैं । राहु एवं केतु सर्वदा वक्री हैं ।

पाद-टिप्पणी :

५२५. (१) अकिंचितकर : अशक्त =

फतहखा का पुन देश प्रवेश

अत्रान्तरे स्थितः खानः स भैरवगलान्तरे ।
अचिन्तयत् पुनर्देशप्रवेशं नायकोर्जितः ॥ ५२६ ॥

५२६ इसी बीच भैरवगल[1] मे स्थित, खान नायक से उर्जित होकर, पुन देश-प्रवेश के लिये विचार किया।

मासद्वयमतिक्रम्य कश्मीराभिमुखस्ततः ।
आययौ स पुनः खानः सत्राण उद्भटैर्भटैः ॥ ५२७ ॥

५२७ दो मास व्यतीत कर, रक्षक सहित खान, उद्भट भटो के साथ, काश्मीर की ओर पुन आया।

तस्मिन् शूरपुरं प्राप्ते सनृपोऽथ ज्यहाङ्गिरः ।
निर्ययौ नगरात् तूर्णं संपूर्णः सैन्यसम्पदा ॥ ५२८ ॥

५२८ उसके शूरपुर[1] पहुँचने पर, नृप सहित जहाँगीर, तुरन्त सैन्य-सम्पत्ति से पूर्ण होकर, नगर से निकल पडा।

---

तुच्छ = नितान्त निर्धन = अर्थहीन = परतत्र = कुछ करने में असमर्थ हो गया है–परतत्र मिदम् किञ्चित्-कर च—वेणी० . ३। तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'आदम खा एव फतह खा जो कुछ समय के लिये गायब हो गये थे, पुन बहरामगला के आस-पास सर उठाये ( ४५५ = ६८७ )।'

तवक्कात अकबरी का वर्णन भ्रामक है। दोनो पाण्डुलिपियो तथा लीथो सस्करण में आदम खा एव फतह खा दोनों नाम दिये गये हैं। किन्तु आदम खा पहले ही मर चुका था। फिरिश्ता के लीथो सस्करण में आदम खा का नाम नही है। यह ठीक है।

पाद-टिप्पणी

५२६ ( १ ) भैरवगल वर्तमान बहरामगल। पुशियान से मार्ग पश्चिम की ओर प्रन्तप्रदेशीय तौसी नदी अथवा तोही नदी के साथ जाता है। भैरवगल अथवा बहरामगल यही पर एक पर्वतीय ग्राम है। पुशियान के पश्चात् यह पडाव का स्थान था। बहरामगल से यह मार्ग दक्षिण की ओर मुड जाता है और रतनपीर पास जो आठ हजार दो सौ फीट की ऊँचाई पर है, जाता है। यह शिखर पीर पन्तशाल की ही एक शाखा है। मार्ग आगे चलकर, राजपुरी अथवा राजौरी उपत्यका में पहुँचता है। तवक्काते अकबरी में नाम 'बैरम कल्ला' अथवा 'भरम कल्ला' और फिरिश्ता ने 'पुरम गोला' लिखा है।

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'आदम खा तथा फतह खा बहुत समय तक गायब रहे और बैरम कल्ले के समय प्रकट हुए। दूसरी बार सेना एकत्रित करके काश्मीर पर चढाई कर ( ४५४-४५५ = ६८७ )।'

फिरिश्ता लिखता है—'फतहशाह कुछ समय के लिये गायब हो गया। कुछ समय पश्चात वह जिला पुरमगोला में सेना एकत्रित कर काश्मीर की तरफ बढा ( ४८५ )।' द्र० ४ ५८४।

पाद टिप्पणी.

५२८ ( १ ) शूरपुर द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० १ १ १०७।

प्राग्वत् स गुसिकास्थाने निषण्णः शिविरान्तरात् ।
गक्कराजसुतं रात्रौ सोऽशृणोद् विद्रुतं द्रुतम् ॥ ५२९ ॥

५२९. पूर्ववत् गुसिक[1] स्थान पर स्थित, उसने रात्रि में शिविर से गक्क[2] राजपुत्र को भागा हुआ सुना।

आरोहणक्षणे तस्य तुरङ्गस्त्रासमग्रहीत् ।
क्षणं स शकुनज्ञोऽपि नातिष्ठन्निष्ठुरः क्रुधा ॥ ५३० ॥

५३०. उसके अश्वारोहण के समय अश्व त्रस्त हो गया, क्रोध से निष्ठुर वह, शकुन का जानकार होने पर भी, क्षणभर[1] नहीं ठहरा।

गृहीतभूरिवित्तोऽपि यत्रैष द्रोहितामगात् ।
कोऽन्यस्तिष्ठति तत्रेति त्रस्तः प्रत्यागतोऽभवत् ॥ ५३१ ॥

५३१. प्रचुर सम्पत्ति लेने पर भी, जब यह द्रोही हो गया, तो वहाँ दूसरा कौन ठहरेगा ? इस प्रकार दुःखी होकर, वह लौट आया।

सुलग्ने निर्गतो भूयो मार्गेशः शिविरान्तरात् ।
उपायांश्चिन्तयाञ्चक्रे खानस्य बलभेदने ॥ ५३२ ॥

५३२. पुनः मार्गेश शुभ लग्न[1] में निकल पड़ा और खान के बल-भेदन का उपाय सोचने लगा।

---

पाद-टिप्पणी :

५२९. (१) गुसिक : यह वर्तमान ग्राम गुस है। रामुह स्थान से दो मील पर गुस उडर के पूर्वीय मूल में गुस ग्राम स्थित है। इस अधित्यका का नाम गुसिकोड्डार है। इस उडर से मार्ग श्रीनगर जाता है। तबक्काते अकबरी के पाण्डुलिपियों में 'कसर-वार' तथा 'केसवालाह' तथा लीथो संस्करण में 'गोसवार' लिखा गया है। फिरिश्ता के लीथो संस्करण में 'कहवाकह' लिखा मिलता है (द्र० : ४ : ९८)।

(२) गक्क : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० । २ : १६२।

पाद-टिप्पणी :

५३०. (१) क्षणभर : यदि अपशकुन हो जाता है, तो कुछ समय रुक कर पुनः यात्रा की जाती है। उससे अपशकुन दोष का परिमार्जन हो जाता है।

पाद-टिप्पणी :

५३२. (१) शुभ लग्न : मंगल घड़ी। सम्पर्क बिन्दु, मिथश्छेदन बिन्दु, वह बिन्दु जहाँ कि क्षितिज की क्रान्तिवृत्त या ग्रहपथ मिलते हैं। वह समय जिस समय सूर्य का प्रवेश किसी राशि-विशेष में होता है। वह समय जब क्रान्तिवृत्त का बिन्दु क्षितिज के अनुसार अथवा याम्योत्तर रेखा पर होता है। ज्योतिष दिन का उतना अंश जितने में किसी एक राशि का उदय होता है। पृथ्वी जितने समय तक एक राशि में रहती है, उतने समय तक का लग्न होता है। किसी राशि में कुछ समय कम और किसी में अधिक लगता है—मीन राशि में लगभग पौने चार दण्ड, कन्या में प्रायः साढ़े पाँच दण्ड, वृश्चिक में प्रायः पौने छः दण्ड।

अत्रान्तरे शूरपुराज् जेरकाद्या महाभटाः ।
प्रविश्य नगरं रात्रौ बन्धनस्थानमोचयन् ॥ ५३३ ॥

५३३ इसी बीच शूरपुर[1] से जेरक[2] आदि महाभट्ट, रात्रि मे नगर प्रवेश कर, बन्धन स्थान (कारागार) खोल दिये ।

ते सर्वे बन्धनान्मृत्युद्वारादिव विनिर्गताः ।
सैफडामरमुख्यास्ते संप्रापुर्विजयेश्वरम् ॥ ५३४ ॥

५३४ मृत्यु द्वार सदृश बन्धन से निकलकर, वे सब सैफ डामर प्रमुख लोग विजयेश्वर पहुँच गये ।

स सैफडामरः पूर्वं बन्धने स्वप्नमैक्षत ।
केनाप्येतत् पदद्वन्द्वं छिन्नं शस्त्रेण तन्निशि ॥ ५३५ ॥

५३५. उस सैफ डामर ने पहले ही बन्धन मे उसी रात यह स्वप्न देखा था—किसी ने शस्त्र से दोनो पैर काट[1] दिये ।

वीरस्य बन्धनं ह्यस्य स्फूर्जत्पक्षस्य रक्षणम् ।
सोष्मणः पतितं मेने वह्नेर्वस्त्रावगूहनम् ॥ ५३६ ॥

५३६ प्रबल पक्ष वाले इस वीर का बन्धन मे रखना, ज्वाला युक्त अग्नि को वस्त्र से ढकने के समान माना ।

तथापि रक्षणं वह्नेरिव वस्त्राव गूहनम् ।
जयापीडपुराद् दुर्गाद् बन्धनं नगरे कथम् ॥ ५३७ ॥

५३७ जयापीडपुर[1] के दुर्ग से लाकर, नगर बन्धन मे कैसे रखा गया ?

---

पाद-टिप्पणी .

५३३ ( १ ) शूरपुर . द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० १ १ १०७ ।

( २ ) जेरक : शुद्ध फारसी शब्द जीरक है । अर्थ प्रतिभाशाली = होशियार या चतुर होता है । तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'फतह खा का सेवक जीरक अवसर पाकर, नगर में चला गया । बहुत से अमीर जो वन्दी थे, उन्हें निकाला । उनमें सैफी दानकारी भी था ( ४५५-६८७ ) ।'

फिरिश्ता लिखता है—'किन्तु उसका ध्यान यह सुनने पर, पुन श्रीनगर की तरफ गया, जहाँ दो राजकीय वन्दी सफी और सगराम दूसरों के साथ जो श्रीनगर में वन्दी थे, मुक्त हो गये (४८५) ।'

पाद-टिप्पणी

५३५ ( १ ) पैर काटना अशुभ स्वप्न है ।

पाद-टिप्पणी .

५३७ ( १ ) जयापीडपुर · द्रष्टव्य . पाद-टिप्पणी : जैन० १ : ३ . ३३-४४, जोन० · श्लोक० ३००, कल्हण ४ . ५०६, ५११ ।

इत्यपायोऽप्युपायोऽस्य जातो मार्गपतेर्यतः ।
एब्राहिमः स मार्गेशस्तावत् पश्चाद्विनिर्गतः ॥ ५३८ ॥

५३८. इस प्रकार उनका अपकार भी इस मार्गपति के लिये उपकार हो गया। वह मार्गेश इब्राहिम, तब तक पीछे से आकर—

शंगनायकमुख्यानां बहूनां कदनं व्यधात् ।
ठक्कुराह्मदजेराकप्रतीहारान्वयादयः ।
इत्थं तत्साहसं चक्रुर्लङ्घितक्रोशषट्कयः ॥ ५३९ ॥

५३९. शंगनायक[1] प्रमुख बहुत से लोगों का वध कर दिया। ठक्कुर अहमद, जेराक[2] प्रतीहार-वंशीय आदि लोग सा : कोस पारकर, यह साहस किये।

विपदि समनुभूय कोऽपि कष्टं
भवति पदं नृपसम्पदां नितान्तम् ।
कनकमनलपातघातमाप्त्वा
शिरसि विभाति नृपस्य मौलिरूपम् ॥ ५४० ॥

५४०. विपत्ति में कष्ट का अनुभव कर, कोई सम्पत्ति का पात्र बनता है, सुवर्ण अग्निपात एवं आघात सहन कर, राजा के शिर पर मुकुट रूप शोभित होता है।

कारापञ्जरनिर्मुक्तः पक्षीवक्षतपक्षतिः ।
पुनर्जातमिवात्मानममन्यत स डामरः ॥ ५४१ ॥

५४१. अक्षत पंख वाले पक्षी के समान, कारापंजर[1] से मुक्त वह डामर, अपना पुनर्जन्म माना।

---

पाद-टिप्पणी :

५३९. ( १ ) शंग : शम्सुद्दीन के लिये पूर्व लेखकों ने व्यवहृत किया है। शुद्ध अरबी शब्द शम्स है जिसका अर्थ सूर्य होता है।

( २ ) जेराक = जीरक : तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'फतह खाँ का एक सेवक जीरक या जीराक अवसर पाकर, श्रीनगर में गया और बहुत अमीरों को जो बन्दी थे मुक्त कर दिया। उनमें सैफ डामर भी था ( ४९५-६८८ )।'

पाद-टिप्पणी :

५४१. ( १ ) कारापंजर : इसका यहाँ दो अर्थ है। पक्षी के लिये इसका अर्थ पिंजड़ा है, जिसमें पक्षी बन्दी बनाकर, रखा जाता है। मनुष्य के लिये शरीर है। शरीर पंजर में आत्मा बन्दी रहती है। आत्मा का शरीर त्याग मुक्ति है। इस शरीर के पश्चात आत्मा दूसरा शरीर धारण कर पुनर्जन्म लेती है। कारागार से मुक्त होकर, उसने अपना पुनर्जन्म अनुभव किया, क्योंकि बन्दीकाल में कभी भी वध कर देने की शंका तत्कालीन स्थिति को देखते हुए बनी रहती थी।

पूर्वं जयपुरे दुर्गे योऽभूद् बद्धः सहोदरः ।
काराप्राकारमुल्लङ्घ्य रज्जुनैकोऽपि निर्गतः ॥ ५४२ ॥

५४२ जो जयपुर दुर्ग[१] म बन्दी था, वह अकेल ही, जेल की चहारदिवारी, रस्सी द्वारा पार कर, निकल गया ।

रुद्धः सुप्तः पुनर्बद्धो नगरे बन्धनालये ।
निश्चिन्तिन्तो वधस्तत्र द्विष्टैर्द्वित्रदिनान्तरे ॥ ५४३ ॥

५४३ सोते समय घेर लिया गया, और नगर मे पुन बान्धकर, नगर के बन्धनालय (कारागार) मे रख दिया गया। वहाँ पर दो तीन दिनो म शत्रुओ द्वारा वध होना निश्चत-प्राय था ।

एव कष्टात् ततो मुक्तः प्राप्तः खानान्तिकक्रमात् ।
प्रधानपुरुपाख्याति प्रापत् प्रकृतिमध्यगः ।
स सैफडामरस्तत्र यथा सख्यमतास्थितः ॥ ५४४ ॥

५४४ इस प्रकार वडी कठिनाई से, वहाँ से छूटकर, खान के पास (सैफ डामर) पहुँचा और क्रम से मन्त्रियो म प्रधान पुरुप के समान ख्याति प्राप्त कर ली। वहाँ उस सैफ डामर को समर्थन मिला ।

रामो रावणवञ्चितो यदि गृहान्नैवागमिष्यद् वनं
सुग्रीवः स च वालिना हृतपदो नैवाघटिष्यद् रुपा ।
लङ्कां प्राप्य रिपून् निहत्य समरे जेताभविष्यत् कथ
सयोग सुखदुःखयोः प्रतनुते धातैव भूत्यै द्वयोः ॥ ५४५ ॥

५४५ राम[१] यदि घर से वन न गये होते, और बालि[२] द्वारा पद अपहृत कर लिये जाने पर, सुग्रीव[३] क्रोध से न लडता, तो रावण[४] द्वारा प्रतारित होकर (राम) लका पहुचकर, युद्ध म शत्रुओ को मारकर, विजेता कैसे होते ? विधाता ही कल्याण के लिये सुख एव दु ख दोनो सयोग उपस्थित करता है ।

---

पाद टिप्पणी

५४२ (१) जयपुर दुर्ग अन्दरकोट ।

श्रीदत्त ने हादरा नामवाचक शब्द मानकर अनुवाद किया है ।

पाद टिप्पणी

५४५ (१) राम अयोध्यापति राम द्र० पाद टिप्पणी १ १ २० ।

(२) बालि : सुग्रीव का ज्येष्ठ भ्राता था। सुग्रीव को इसने युवराज बनाया था। बाली महान पराक्रमी था। रावण को इसने पुष्कर क्षत्र में परास्त किया था (रा० उ० ३४)। गोलभ गन्धर्व से साथ पन्द्रह वर्षों तक युद्ध किया किया था। अन्त में उसका वध किया था (कि० २२ २९)। यह इतना पराक्रमी था कि एक ही बाण से सात साल का भेदन करता था (कि० ११ ६७)। दुदुभी

राज्यार्थी विच्युतो देशात् खानो वीराप्तिलम्पटः ।
डामरो मार्गपक्रुद्धः सर्वनाशात् पदच्युतः ॥ ५४६ ॥

५४६. राज्याकांक्षी खांन देश से निष्काशित कर दिया गया, और वीरों की प्राप्ति से लंपट हो गया, मार्गपति का क्रोधपात्र डामर सर्वनाशपूर्वक पदच्युत हो गया ।

एवमन्योन्यसापेक्षं नाभविष्यत् स्वयं यदि ।
प्रविश्य देशे राज्याप्तिः कथमस्य भविष्यति ॥ ५४७ ॥

५४७. इस प्रकार यदि स्वयं परस्पर की अपेक्षा न होती, तो देश में प्रवेशकर, इसे राज्य की प्राप्ति कैसे होती ?

राजा विभाति बहुवीरसमाश्रयेण
वीरा भजन्ति च तदाश्रयणेन शोभाम् ।
अन्योन्यसंगतिरभङ्गुरभङ्गिरेषां
बालाङ्गनाकनकभूषणवद् विभाति ॥ ५४८ ॥

५४८. राजा बहुवीरों के आश्रय से शोभित होता है, और वीर भी राजा के आश्रय से शोभित होते हैं, इनकी स्थायी एवं छल-छद्म-रहित, पारस्परिक संगति बालाङ्गना के स्वर्ण-भूषण सदृश, शोभित होती है ।

---

राक्षस का वालि ने वध किया था । राम ने वालि का वध किया था । वालि पराक्रमी एवं धर्मनिष्ठ राजा था । चारों वेदों का अध्ययन किया था । अनेक यज्ञों का अनुष्ठान किया था । नारद ने इसके धर्मपरायणता की स्तुति किया है ( ब्रह्माण्ड . ३ : ७ : २१४–२४८ ) ।

( ३ ) सुग्रीव : पिता का नाम महेन्द्र तथा माता का नाम ऋक्षकन्या विरजा था । महेन्द्र किष्किन्धा का राजा था । वाली का कनिष्ट भ्राता था । वाली एक समय राक्षसों से युद्ध करने गया था । एक वर्ष तक किष्किन्धा नगरी लौट कर नहीं आया । सुग्रीव किष्किन्धा का राजा बन गया । ज्येष्ठ भ्राता की पत्नी तारा को अपनी पत्नी रूप में स्वीकार कर लिया । वाली वापस लौट कर सुग्रीव को निष्कासित कर दिया । सुग्रीव ऋष्यमूक पर्वत पर निवास करने लगा । राम से सुग्रीव की मैत्री हो गयी । वाली का वध राम ने किया । सुग्रीव किष्किन्धा का राजा बन गया । वालीपुत्र अंगद किष्किन्धा का युवराज बनाया गया । सुग्रीव ने राम की सहायता किया । सुग्रीव का भौगोलिक ज्ञान अद्भुत था । वह कुशल सैन्य संचालक था । इसे कोई पुत्र नहीं था । इसकी पत्नियां तारा, रूमा तथा मोहना थीं । सुग्रीव के पश्चात् अंगद किष्किन्धा का राजा हुआ था । सुग्रीव ने लंका-विजय में राम की सर्वरूपेण सहायता किया था ।

( ४ ) रावण : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : १ : ३ : ३७ ।

तेन प्राप्तेन सा खानसभा तत्र व्यराजत ।
मुक्तालतेवाङ्गनाङ्गे नायकेन शुभात्मना ॥ ५४९ ॥

५४९ इसके वहाँ आने से खान की वह सभा, उसी प्रकार शोभित हुई, जिस प्रकार अगना के अगो पर शुभ नायक[1] मणि से मुक्तालता ।

सन्धि प्रयास :

अत्रान्तरे मार्गपतिश्चकितस्तत्समागमात् ।
सन्धित्सुः शिखवाहावमुखान् खान व्यसर्जयत् ॥ ५५० ॥

५५० इसी बीच उनके समागम से चकित, मार्गपति सन्धि करने की इच्छा से, शेख वाहाब[1] प्रमुख लोगो को खान के पास भेजा ।

एधराजानको रिगडामरः केशवो बुधः ।
राजाग्रमेत्य सन्ध्यर्थं निन्यू राजपुरीपतिम् ॥ ५५१ ॥

५५१ एद राजानक, रिग डामर, बुध ( विद्वान ) केशव, सन्धि[1] के लिये राजपुरीपति को राजा के समक्ष ले गये ।

तावद् गदायरावुत्रमुखादाश्वास्य मार्गपः ।
शृङ्गारसीह तं भेदमनयद् द्रविणार्पणैः ॥ ५५२ ॥

५५२ तब तक मार्गपति ने गदारावुत्र के द्वारा शृङ्गार सिह को आश्वासन एव धन देकर फोड लिया ।

---

पाद-टिप्पणी

५४९ ( १ ) नायक मणि : हार के मध्य की मणि । माला के मध्य का नग ।

पाद-टिप्पणी :

५५० ( १ ) वाहाब वहहाब नामवाचक अरबी शब्द है । वदान्य, अधिक दानशील अर्थ होता है ।

पाद-टिप्पणी

५५१ श्रीदत्त ने 'केशव बुध' नामवाचक शब्द माना है । बुध का अर्थ यहाँ पर विद्वान किया गया है ।

( १ ) सन्धि : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'जहागीर सँफी तथा अबकरी के मुक्त हो जाने से दुःखी हुआ और फतह खा से सन्धि करने का विचार किया । उसने राजौरी के राजा को जिसकी सहायता से फतह खा काश्मीर पर आक्रमण किया था, सन्देश भेजा कि वह फतह खा की सेना में विद्रोह करे ( ४५५ = ६८८ ) ।'

फिरिश्ता लिखता है—'इस समय जहागीर मार्गेश ने भेदनीति से काम लेने का विचार किया क्योंकि उसने विचार किया कि जो नीति से सफल हो सकता है और इमानदारी से युद्ध के द्वारा सम्भव नही था ( ४८५ ) ।'

तवक्काते अकबरी एव फिरिश्ता पाण्डुलिपि तथा तीनो सस्करणों में—'इरादह सुलह व फतह खान नमूदह' लिखा है । इससे प्रकट होता है कि सन्धि करना भी रणनीति का एक अंग मात्र था ।

**नीत्वा मार्गपतेः पुत्रं सन्धित्सुः स बलद्वये ।**
**न्यवारयद् रणक्षोभं यावद् राजपुरीपतिः ॥ ५५३ ॥**

५५३. जब तक राजपुरीपति सन्धि करने की इच्छा से मार्गपति के पुत्र को लेकर दोनों सेनाओं का रणक्षोभ निवारित कर रहा था—

**तावन्मार्गेशपुत्रं तं रोद्धुमन्यैर्विनिश्चितम् ।**
**नामन्यत स यत्तेन साशङ्का मन्त्रिणोऽभवन् ॥ ५५४ ॥**

५५४. तब तक अन्य लोगों ने उस मार्गेशपुत्र को अवरुद्ध करने का निश्चय किया, उस ( राजपुरीपति ) ने यह नहीं माना, जिससे मन्त्रि सशंकित हो उठे ।

**यावत् प्रजासु सनृपासु विधिर्विरुद्धो**
**दायाददुःस्थितिरुपायशतैर्न याति ।**
**देहे दुराधिनिहते भिषजां प्रयुक्त्या**
**रोगाः कथं प्रविगलन्ति कृताधिकाराः ॥ ५५५ ॥**

५५५. जब तक राजा एवं प्रजा पर विधाता प्रतिकूल रहता है, तब तक दायाद[1] (उत्तराधिकार ) से उत्पन्न दुःस्थिति सैकड़ों उपायों से दूर नहीं होती, दुष्ट आधि[2] द्वारा शरीर के विनष्ट कर दिये जाने पर, औषधियों के प्रयोग से जड़ जमाये रोग, कैसे दूर हो सकते हैं ?

खांन का पलायन :

**खानान्तरङ्गैराक्षिप्ते भिन्ने राजपुरीपतौ ।**
**अकस्मादुदभूत् क्षोभः सर्वसैन्यभयावहः ॥ ५५६ ॥**

५५६. खांन के अन्तरंगों द्वारा भेद पैदा कर, राजपुरीपति[1] के दूर कर दिये जाने पर, अकस्मात् सब सेनाओं को भयप्रद क्षोभ उठ खड़ा हुआ ।

---

पाद-टिप्पणी :

५५५. (१) दायाद : सम्बन्ध के कारण जिसकी चल एवं अचल सम्पत्ति में अधिकार होता है ।

( २ ) आधि : मानसिक व्यथा, चिन्ता = वेदना ।—न तेषामायदः सन्ति नाधयो व्याधयस्तथा–महा०; अनोगतमाधि हेतुम्–श० : ३ : ११, रघु० : ८ : २७; ९ : ५४ ।

पाद-टिप्पणी :

५५६. (१) राजपुरीपति : फिरिश्ता लिखता है—'इसलिये उसने ( मार्गेश ) राजपुरी के राजा को अनेक विश्वास दिलाया । प्रतिज्ञा किया और उसे सुल्तान की सेना में सम्मिलित होने के लिए फुसलाया ( ४८५ ) ।'

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'राजौरी के राजा को अन्य अमीर फतह खां से अलग होकर जहांगीर से मिल गये ( ४५५ = ६८८ ) ।'

गक्कभृङ्गारसीहाद्यास्त्रस्ता राजपुरीं ययुः ।
खानोऽपि सबलो भीतो ययौ प्राग्वद् यथागतम् ॥ ५५७ ॥

५५७ गक्क, भृगार सीह आदि त्रस्त होकर, राजपुरी चले गये और खान[1] भी पूर्ववत् डर कर, सेना सहित यथागत चला गया।

केचिज जेगकमेराद्याः प्रापुर्मार्गेशसन्निधौ ।
जय्ल्लालठक्कुरप्रेम्णा कृतमाध्यस्थ्यसंविदः ॥ ५५८ ॥

५५८ कुछ जराक मीर आदि लोग जल्लाल ठक्कुर के प्रेमवश मध्यस्थता की मन्त्रणा करके मार्गेश के समीप गये।

एवं क्षोभेण सा सेना खानस्याङ्गतरङ्गिता ।
ययौ सहस्रधा दीर्णा सेतुभङ्गादिवापगा ॥ ५५९ ॥

५५९ इस प्रकार क्षोभ से मद्य खान की वह तरङ्गित सेना सेतुभङ्ग से नदी के समान सहस्रधा दीर्ण[1] हो गयी।

अथ मार्गपतिः श्रुत्वा तद्वृत्तान्तमनुद्रुतः ।
युयुत्सया ससैन्यः स प्रापच्छूरपुरान्तरम् ॥ ५६० ॥

५६० यह वृत्तान्त सुनकर अनुद्रुत[1] मार्गपति युद्ध करने की इच्छा से सेना सहित शूरपुर[2] पहुँचा।

तत्र दूतमुखाच्छ्रुत्वा क्रमराज्यमुपद्रवम् ।
शाहिभङ्गबलप्राप्त्या चिन्ताद्वैगुण्यमादधे ॥ ५६१ ॥

५६१ वहाँ पर दूत के मुख से क्रमराज्य का उपद्रव सुनकर एवं शाहिभंग[1] की सेना आ जाने से उसकी चिन्ता दूनी हो गयी।

---

पाद टिप्पणी :

५५७ (१) खान : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'फतह खान परीशान होकर भाग गया। जहाँगीर ने हीरापुर तक उसका पीछा किया (४५५-६८८)।' फिरिस्ता लिखता है—फतह खा दक्षिण पलायन करने के लिये बाध्य कर दिया गया (४८५)।' तवक्काते अकबरी में फतह खा के जम्मू विजय करने की बात लिखी गयी है—'फतह खा ने जम्मू पहुँच कर उसे विजय कर लिया। (४५५-६८८)।' फिरिश्ता भी यही लिखता है—'फतह खा ने जम्मू का जिला जीत लिया (४८५)।'

पाद-टिप्पणी :

५५९ (१) दीर्ण : विदारित = भयभीत = टुकड़-टुकड़े।

पाद-टिप्पणी :

५६० (१) अनुद्रुत : अनुगत = अनुगमित = अनुधावित = जिसका जिसका पीछा गया हो।

(२) शूरपुर : द्रष्टव्य पाद टिप्पणी जैन० १ : १ : १०७।

पाद टिप्पणी :

५६१ (१) शाहिभंग : द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० ३ : ११४, ४ : २११, २७०, २७२।

निवृत्य स ततो राज्ञः प्राप्तः सुय्यपुरान्तरम् ।
बबन्ध नौरुजं खानं युक्त्या यत् साधु तद् व्यधात् ॥ ५६२ ॥

५६२. वहाँ से लौट कर, वह सुय्यपुर[1] पहुंचा और नौरुज खां को युक्तिपूर्वक बन्दी बना लिया और जो उचित था किया।

स हि तद्दिवसे प्राप्स्येन्मुष्णञ् श्रीगरं विटैः ।
किं तु तत्काङ्क्षितं क्रूरं न सिद्धं पौरपुण्यतः ॥ ५६३ ॥

५६३. उस दिन वह निश्चय ही श्रीनगर[1] को विटों द्वारा लूटते हुए, पहुँचा किन्तु पुरवासियों के पुण्य से उसकी यह क्रूर अभिलाषा पूर्ण सिद्ध नहीं हुई।

सोऽपेक्ष्य मार्गपं तत्र ढौकितं क्रमराज्यतः ।
पदार्थराशौ दत्वाग्निं तद्रुपा भस्मसाद् व्यधात् ॥ ५६४ ॥

५६४. वह क्रमराज्य ( कमराज ) से मार्गपति के यहाँ उपस्थित होने की सम्भावना करके, क्रोध से वस्तुओं के ढेर में आग लगाकर, भस्मसात कर दिया।

अन्यायतः प्रतिदिनं समुपार्ज्य वित्तं
यद्दानभोगरहितं निहितं गुहान्तः ।
तत् संप्रयाति कृपणेषु कृतानुतापं
भूपालसादनलसादरिदस्युसाच्च ॥ ५६५ ॥

५६५. अन्यायपूर्वक प्रतिदिन अर्जित करके, दान, भोगरहित, जो धन गुफा के अन्दर रख दिया जाता है, वह राजा, अग्नि, शत्रु एवं दस्युओं के अधीन होकर, कृपणों का सन्तापकारी होता है।

ततस्तत्सहितः प्राप्तो नगरं स ज्यहाङ्गिरः ।
जयेन तावन्मात्रेण नगरे स व्यजृम्भत ॥ ५६६ ॥

५६६. उसके सहित वह जहाँगीर (श्री) नगर में पहुँचा और उतने ही विजय से नगर में ( व्यजृम्भत् ) बड़ा प्रसन्न हुआ।

---

पाद-टिप्पणी :

५६२. ( १ ) सुय्यपुर : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी जैन० : १ : ३ : ९१, १०८; १ : ७ : ३४, ४३, २०७; ३ : ४३, १८१।

पाद-टिप्पणी :

५६३. ( १ ) श्रीनगर : द्र० : २ : ११९; ४ : १९४, ३४२।

सैदान् निष्कासितान् देशात् स्वपुत्रवधकानपि ।
लेखैरानाययामास सोपयोग्यतया स तान् ॥ ५६७ ॥

५६७ अपने पुत्र का वध करनेवाले, देश से निष्कासित[1] सैय्यिदो को लेखो द्वारा उन्हे उपयोगी समझकर, ले आया ।

तदन्तरे जम्भवाटे वसन् खानो बलोर्जितः ।
मृगानिव हरिस्तत्र विदधे दुर्दशान् खशान् ॥ ५६८ ॥

५६८ इसी बीच बलोर्जित खान जम्भवाट[1] मे रहते हुए, खशो की उसी प्रकार दुर्दशा की, जिस प्रकार सिंह मृगो की ।

सप्तविंशतिमह्वयान् स कश्मीरविषयान् यथा ।
तावतीः सिन्धुरीस्तत्र व्यधाद् दुःस्थः पराक्रमैः ॥ ५६९ ॥

५६९ उसने जिस प्रकार वहाँ पर पराक्रम से सत्ताईस काश्मीर विषयो[1] को पीडित किया, उसी प्रकार उतने ही सिन्धुरी[2] को दुःस्थ[3] कर दिया ।

सार्धं मल्हानहंसैस्तत्कटकः सुभटोत्कटः ।
मद्रमण्डलमुल्लुण्ठ्य तुरुष्कांश्चकितान् व्यधात् ॥ ५७० ॥

५७० सुभटो से उग्र उसकी सेना मल्हान हंसो[1] के साथ मद्रमण्डल को लूटकर तुरुष्को को चकित कर दिया ।

---

पाद-टिप्पणी :

५६७ (१) निष्कासित सैय्यिद : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'इसी बीच जहाँगीर ने सैय्यिदो को जिन्हें उसने इसके पूर्व निर्वासित कर दिया था प्रोत्साहन देकर बुलाया ( ४५५–६८८ ) ।' फिरिश्ता लिखता है—'इसी समय सुल्तान तथा जहाँगीर माक्रे ने निर्वासित सैय्यिदो को पुनः बुलाया ( ४८५–४८६ ) ।'

पाद-टिप्पणी :

५६८ (१) जम्भ-वाट : जम्मू प्रदेश । श्रीदत्त ने मूल जम्ब-वाट नाम ही अनुवाद में दिया है ।

पाद-टिप्पणी :

५६९ (१) विषय : श्रीवर ने क्षेमेन्द्र द्वारा उल्लिखित सत्ताईस विषयो का उल्लेख किया है । धर्मशास्त्र ६४३ । द्रष्टव्य लोकप्रकाश पृष्ठ ६० । 'काश्मीरेषु सप्तविंशति विषया' ।

(२) सिन्धूरी : हाथी-वनराज का भी नाम है ।

(३) दुःस्थ : दुर्दशाग्रस्त, दयनीय या गरीब ।

पाद-टिप्पणी :

५७० (१) मल्हान हंस : कल्हण ने भी 'मल्हण हंस' का प्रयोग किया है ( रा० ८ : १०८४ ) । दोनो स्थानो पर वह जातिवाचक शब्द है । हरिहद स्थान निवासी मल्हण हंस लोग थे । यदि मल्हन शब्द वंशवाचक हो तो इस माल्हण होना चाहिए । कल्हण का मल्हण एवं श्रीवर का मल्हान एक ही प्रतीत होता है । जैसे मल्हण का माल्हण एवं 'कल्हण' का 'काल्हण' प्रयोग मिलता है ।

स मद्रमण्डलं जित्वा दत्त्वा राजपुरीपतेः ।
जिष्णुश्चैत्रे पुनः प्राप तद्युतो नायकालयम् ॥ ५७१ ॥

५७१. वह विजेता मद्रमण्डल को जीत कर तथा राजपुरीपति को प्रदान कर, पुनः उसके साथ चैत्र मास में नायक के घर पहुँचा ।

गृहं दैवतवत् प्राप्तं खानं तं मानयन् गुणैः ।
मसोदनायकोऽमुष्मिन्नाभवद् भक्तिखण्डितः ॥ ५७२ ॥

५७२. गुणों के कारण घर आये खान को देव के समान सम्मानित करते हुए, मसोद नायक उसके प्रति भक्ति-रहित हो गया ।

सागरस्त्यजति चेन्निजां स्थितिं
पश्चिमोदयमुपैति चेद्रविः ।
क्षत्रियः शरणमागतेऽर्थिनी
प्रायशश्चलति न स्वधर्मतः ॥ ५७३ ॥

५७३. यदि सागर अपनी मर्यादा[1] त्याग दे, और यदि सूर्य पश्चिम उदय होने लगे, तो भी क्षत्री अर्थी के शरण[2] आने पर, प्रायः अपने धर्म से विचलित नहीं होता ।

स सैन्यसंग्रहं कृत्वा छयिल्लकटकान्वितः ।
तस्थौ खानो गिरिशृङ्गे वैरिभङ्गविधित्सया ॥ ५७४ ॥

५७४. सैन्य संग्रह कर, छयिल्ल[1] की सेना सहित, वह खान वैरियों का विनाश करने की इच्छा से पर्वतशृंग पर स्थित हो गया ।

रोगैरिव भटैर्ध्वस्तसमस्तगृहवस्तुभिः ।
वास्तव्यानां स्थितिर्दुःस्था गेहे देहे यथाभवत् ॥ ५७५ ॥

५७५. देह में रोगी के समान भटों ने समस्त गृह वस्तुओं को ध्वस्त करके, घर में निवासियों की दयनीय स्थिति कर दिया ।

---

पाद-टिप्पणी :

५७३. (१) मर्यादा : समुद्र अपने निश्चित बाढ़ पंक्ति से ऊपर तथा निम्नतर जलस्तर से नीचे नहीं जाता है । घोर वर्षा आदि का कोई प्रभाव उसपर नहीं पड़ता । सर्वदा अपनी मर्यादा के अन्दर रहता है । मर्यादा की उपमा समुद्र से दी जाती है ।

(२) शरण : रक्षा = आश्रय = पनाह । क्षत्रियों का धर्म शरणागत की रक्षा करना है । मंख ने शरण की परिभाषा किया है—शरणं गृहरक्षित्रोः प्रोक्षणं सेचने वधे ॥ २३० ॥

मेवाड़ के राणा कितने ही मुसलिम सामन्तों आदि को शरण देकर, मुसलिम बादशाहों तथा सूबेदारों से युद्ध करते हुए, बलिदान हो गये हैं परन्तु शरणागत की अन्तिम श्वास तक रक्षा की है ।

पाद-टिप्पणी :

५७४. ( १ ) छयिल्ल : छिड़ा स्थान है । इसका पुनः उल्लेख नहीं आता है ।

दौहित्रं हाज्यिखानस्य खानमेस्कन्दराभिधम् ।
कम्पनाधिपतिं कृत्वा स्वामार्थं स व्यसर्जयत् ॥ ५८३ ॥

५८३ उसने हाजी खां[1] के दौहित्र खान मीर सिकन्दर को कम्पनाधिपति[2] बनाकर, स्याम को भेज दिया ।

ममोदनायकीयं च राष्ट्रं दत्त्वा स्वगुप्तये ।
यश्शराजानकं चापि ससैन्य प्रत्यमुच्यत ॥ ५८४ ॥

५८४ अपनी रक्षा के लिये मसूद नायक के राष्ट्र को देकर, सेना सहित यश्श[1] राजानक को मुक्त कर दिया ( भेज दिया ) ।

सम देशसुखेनाथ प्रालेये तनुतां गते ।
स्वसैन्यसहितः खानो राजपुर्याः समाययौ ॥ ५८५ ॥

५८५ देश सुख के नाथ प्रालय[1] क्षीण हो जाने पर, अपने सेना सहित खान राजपुरी से चला गया ।

प्राप्तं खानं समाकर्ण्य तं भैरवगलान्तरे ।
मार्गं शूरपुरे रोद्धुं मार्गेशः सनृपो ययौ ॥ ५८६ ॥

५८६ उस खान को भैरवगल[1] मे पहुँचा सुनकर, नृपति सहित मार्गेश शूरपुर[2] मे उसका मार्ग रोकने के लिये आया ।

---

पाद टिप्पणी

५८३ ( १ ) हाजी खाँ शाहमीर वश का नवा सुल्तान हैदरशाह ( सन १४७०-१४७२ ई० ) नाम से गद्दी पर बैठा था । वह मुहम्मद शाह का पितामह था । सम्भव है, यह कोई दूसरा व्यक्ति रहा हो क्योंकि श्रीवर सुल्तान शब्द का प्रयोग नाम के साथ नही करता ।

(२) कम्पनाधिपति राजतरंगिणी में कम्पनापति, कम्पनश, कम्पनाधीश, कम्पनाधिपति समानार्थक शब्द है । इसका अर्थ सेनापति होता है (द्र० कल्हण ५ ४४७, ७ १३६२-१३६६ तथा जैन० ४ : ३०१ ) । फारसी में सिपहसालार कहा जायगा ।

पाद टिप्पणी

५८४ ( १ ) यश्श राजानक सम्भवत ईशा का अपभ्रश यश्श राजानक शब्द है, यदि यह मुसलिम था अन्यथा यश्श नाम भी काश्मीर हिन्दुओं का होता था । जस्सक या यशक ( सन ११८१-११९९ ई० ) काश्मीर का राजा हुआ है । नामों के अन्त में 'क' जोड देना काश्मीरी परम्परा है ।

पाद-टिप्पणी

५८५ ( १ ) प्रालेय हिम = तुषार = ईशाचलप्रालेय प्लवनेच्छया—गीत० १, -प्रालेयशीतमचलेश्वरमीश्वरोपि शि० ४ ६४, मेघ० ३९ ।

पाद टिप्पणी

५८६ ( १ ) भैरव गल . द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० ४ ५२४ ।

(२) शूरपुर . द्रष्टव्य पाद टिप्पणी जैन० १ १ १०७ ।

**प्रवेशरोधः खानस्य तदूर्ध्वगलवर्तिनः ।**
**राहुदेहेऽमृतस्येव देशेऽभूच्चक्रभीतितः ॥ ५८७ ॥**

५८७. चक्र भय से भैरवगल स्थित खांन का देश में प्रवेश उसी प्रकार अवरुद्ध हो गया, जिस प्रकार विष्णु भय से गले[1] में स्थित अमृत का राहु[2] के देह में प्रवेश अवरुद्ध हो गया था ।

फतह खां का तृतीय आगमन :

**पशुपादिष्टमार्गेण परुद्वच्छ्रावणान्तरे ।**
**ततोऽगाद् गिरिमुल्लङ्घ्य खानः काचगलान्तराद् ॥ ५८८ ॥**

५८८. पहले वर्ष के समान श्रावण में खांन पशुओं[1] के पैरों से बने मार्ग के द्वारा पर्वत पारकर, वहाँ से काचगल[2] के मध्य से चला आया ।

**ताजभट्टादिसैन्यौघो गुसिकोड्डारभूतले ।**
**क्षुब्धं वायुरिवागत्य चक्रे खानबलार्णवम् ॥ ५८९ ॥**

५८९ गुसिकोड्डार[1], भूमि पर ताजभट्ट आदि का सैनपुंज वायु के समान आकर, खांन के सैन्य-सागर को क्षुब्ध कर दिया ।

**ध्वनिदुन्दुभिनादेन तर्जयन् परितो जनान् ।**
**खानः सकटको भीत्या नगरं व्याकुलं कृतम् ॥ ५९० ॥**

५९०. सेना सहित खांन बजाते दुन्दुभी के शब्द से चारों ओर लोगों को तर्जित करते हुए, नगर को भय से व्याकुल कर दिया ।

**उड्डीयेवागतं श्रुत्वा साश्चर्यो मार्गपस्ततः ।**
**ससैन्यः सनृपस्तूर्णं तद्युद्धाय समाययौ ॥ ५९१ ॥**

५९१. उड़कर आने के समान, उसका शीघ्र गमन सुनकर, मार्गपति आश्चर्य में पड़ गया । वहाँ से तुरन्त सेना सहित राजा को साथ लेकर उससे युद्ध के लिये आया ।

---

पाद-टिप्पणी :

५८७. ( १ ) चक्र : शब्द श्लिष्ट है । चक्र का अर्थ षड्यन्त्र तथा छल और विष्णु का सुदर्शन चक्र है ।

( २ ) गल : गल शब्द श्लिष्ट है । इसका अर्थ स्थान, देश तथा कण्ठ भी होता है ।

( ३ ) राहु : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : ४ : ३७० विष्णु के चक्र से राहु का कण्ठोच्छेदन होकर मुण्ड राहु तथा धड़ केतु हो गया था ।

पाद-टिप्पणी :

५८८. पशुपादिष्ट : श्रीदत्त ने मूल शब्द रख कर 'खांन पुशुपदिष्ट सड़क से गत वर्ष के समान गया' अनुवाद किया है ( पृष्ठ : २ : ३२८ ) ।

( २ ) काचगल : इस समय इस स्थान को काच गुलमर्ग कहते हैं । यह पीर पन्तसाल के उत्तरीय ढाल पर है ।

पाद-टिप्पणी :

५८९. (१) गुसिक : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : ४ : ४६१, ५९३ । गुसिकोड्डार एक करेवा का नाम है ।

राजसेना एवं खान मध्य युद्ध

उड्डामरो डामरः स शौर्यश्रीगरुडामरः ।
रणे डामरयागेऽन्तर्बभावुच्छुष्मरुद्रवत् ॥ ५९२ ॥

५९२ शौर्य एवं शोभा में गरुड सदृश, अमर प्रचण्ड उड्ड डामर रण में उसी प्रकार शोभित हुआ, जिस प्रकार डामर याग[1] में उग्र रुद्र ।

केचित् सैदभटास्तत्र युध्यन्तः सुभटैः सह ।
अनिवर्तितया याता दिव्यस्त्रीसुखभागिताम् ॥ ५९३ ॥

५९३ वहाँ पर सुभटों के साथ युद्ध करते हुए, कुछ सैय्यिदभट पीछे छूटने के कारण स्वर्ग-स्त्री[2] सुख के भागी बने ।

श्वभ्रपातरणाघातक्षतानां तत्समागमे ।
शवानां राशयस्तत्र पतिताः समरान्तरे ॥ ५९४ ॥

५९४ उस युद्ध में गर्त में गिरे, और रणाघात से क्षत शवों के ढेर पड़े थे ।

---

पाद-टिप्पणी

५९२ (१) याग : यज्ञानुष्ठान जिसमें आहुति दी जाती है । श्रीदत्त ने नामवाचक शब्द माना है । उन्होंने याग डामर का नाम दिया है । शंकर ने सतीयज्ञ के समय उग्र रूप धारण किया था ।

(२) डामर : डामर शब्द श्लिष्ट है । डामर नामवाचक शब्द है । उसका दूसरा अर्थ भयानक भी होता है । इसी अर्थ में इसका निम्नलिखित प्रयोग मिलता है—पर्याप्त मपि रमणीय डामरत्व मधत्ते गगन तल प्रयाण वेग—मातंगलीला : ५ : ३ ।

पाद टिप्पणी

५९३ (१) सैय्यिद : तवकाते अकबरी में उल्लेख है—'सुल्तान तथा फतह खाँ में घोर युद्ध हुआ, सैयी दानक्री ने फतह खाँ के तरफ से वीरता-पूर्वक युद्ध किया तथा सुल्तान की ओर से सैय्यिदों ने घोर परिश्रम तथा वीरता प्रदर्शित किया, उनकी बहुत बड़ी सेना शहीद हो गयी और जो लोग बच गये थे सुल्तान तथा जहाँगीर के विश्वासपात्र हो गये ( ४५५-६८८ ) ।'

फिरिश्ता लिखता है—'फतह खाँ के आने पर सुल्तान तथा फतह खाँ की सेना में घोर युद्ध हुआ । दोनों तरफ लोग साहस से युद्ध किये, परन्तु फतहशाह हार गया ( ४८६ ) ।'

(२) स्वर्ग-स्त्री = अप्सरा । द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : ४ : १७८ । स्वर्गलोक सात लोकों में से तीसरा लोक है । उसका विस्तार सूर्यलोक से ध्रुवलोक तक माना गया है । देवताओं का निवास माना जाता है । सत्कर्मी एवं पुण्यात्माओं की आत्मा इसी लोक में निवास करती है । वीरगति प्राप्त मानव भी इसी स्वर्ग लोक में जाता है ।

न सैद्युद्धे नो खानागमप्रथमसङ्गरे ।
भटक्षयोऽभवद् यादृग् गुसिकोड्डारसङ्गरे ।। ५९५ ।।

५९५. न तो सैय्यिद के युद्ध में, और न खांन के प्रथम युद्ध में, वैसा भट-क्षय नहीं हुआ, जैसा कि गुसिक्कोड्डार[1] के युद्ध में भट-क्षय हुआ ।

प्रमेयभाजोऽप्यासन् ये रणे मुख्या निजोचितम् ।
शौर्यं नादर्शयन् केचित् साक्षिभूता इव स्थिताः ।। ५९६ ।।

५९६. युद्ध प्रमेयभागी जो प्रमुख लोग थे, वे भी अपने उचित शौर्य को प्रकट नहीं किये और साक्षी के समान स्थित रहे ।

पातनेनेव वृक्षस्य पक्षिशावा इव च्युताः ।
गता हताः क्षताश्चासन् यत्र तत्र शवव्रजाः ।। ५९७ ।।

५९७. वृक्ष के गिर जाने से च्युत, पक्षी-सावकों के समान, हत एवं क्षत शव, यत्र-तत्र पड़े थे ।

पूर्वापकारी यो यस्य ग्रामे वा नगरेऽभवत् ।
स तस्य बाधं कृतवान् दुर्बलस्य बली तदा ।। ५९८ ।।

५९८. उस समय गाँवों में अथवा नगर में जो जिसका पहले का अपकारी था, वह बली उस दुर्बल को पीड़ित किया ।

मसोदनायकस्तत्र सायकायुधवर्षणे ।
रुद्धाश्वो विजहौ प्राणान् भावि केन विलङ्घ्यते ।। ५९९ ।।

५९९. वाणवर्षा मध्य अश्व रोककर, मसोद नायक ने प्राण त्याग कर दिया । भावी कौन लाँघ सकता है ?

कृत्वान्यान् युद्धगान् यत्र मार्गेशोऽगात् स्वरक्षया ।
श्रीसैफडामरो वीरयुतस्तत्रैव सोऽभवत् ।। ६०० ।।

६००. मार्गेश अन्य लोगों को युद्ध में भेजकर, अपनी रक्षापूर्वक जहाँ पर गया, वहीं पर, वीरों सहित सैफ डामर भी था ।

यो गवेष्यः स चावाप्त इति तुष्टो भटावृतः ।
प्रथमं प्राहरत् तस्य मूर्ध्नि श्रीसैफडामरः ।। ६०१ ।।

६०१. 'अन्वेषण योग्य का वह प्राप्त हो गया',—इस प्रकार सन्तुष्ट, भटों के साथ सैफ डामर ने सर्वप्रथम उसके सिर पर प्रहार किया ।

---

पाद-टिप्पणी :

५९५. ( १ ) गुसिक्कोड्डार : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : ४ : ४६१ ।

अलिशेरो हैंधरश्च स च क्रूरा इव ग्रहाः ।
मुखे भुजे कपाले च घ्नन्तस्तं विवशं व्यधुः ॥ ६०२ ॥

६०२ क्रूर[1] ग्रह के समान अलीशेर और हैदर उसके मुख, बाहु एवं कपाल पर प्रहार किये और उसे विवश कर दिये।

अथ मार्गपतेः स्वर्णवर्णमङ्गलमालिकाम् ।
सचामरां डामरेशो जयश्रियमिवासदत् ॥ ६०३ ॥

६०३ डामरेश ने लक्ष्मी के समान, मार्गपति के चामर सहित, स्वर्णवर्ण मंगलमालिका[1] को ले लिया।

उपेक्षितं तं तत्रस्थैर्निजैराश्वस्तमानसम् ।
ररक्ष केवलं प्रीतो जात्यश्वः समराच्चलन् ॥ ६०४ ॥

---

६०४ वहाँ स्थित निजी लोगों ने आस्वस्य मन उस मार्गपति की उपेक्षा कर दी, केवल एक उत्तम अश्व[1] प्रसन्न होकर, युद्धभूमि में जाते हुए उसकी रक्षा की।

पाद-टिप्पणी

६०२ ( १ ) क्रूर ग्रह : शनि, मंगल एवं सूर्य क्रूर ग्रह हैं। राहु एवं केतु यदि क्रूर ग्रह के साथ होंगे तो क्रूर और शुभ के साथ शुभ होते हैं। गुरु एवं शुक्र शुभ ग्रह हैं। बुध सम ग्रह है। चन्द्रमा का क्रम उतार-चढाव का होता है।

पाद टिप्पणी

६०३ ( १ ) मंगलमालिका : यात्रा, रण-यात्रा अथवा शुभ कार्यों के प्रारम्भ काल में माल्यार्पण करने की प्रथा है। मन्त्रों के साथ रक्षाबन्धन तथा माला पहनाया जाता है। काश्मीर में यद्यपि जनता मुसलमान हो गयी थी परन्तु वह पुरातन संस्कारों को पूर्णतया त्याग नहीं सकी थी। मार्गपति को भी रणयात्रा के समय इस प्रकार की सुवर्णमयी मंगलमाला दी गयी थी। मुसलिम धर्म में सुवर्ण हराम है। मुसलिम बादशाहों तथा उमरावों के चित्रों में इसीलिये मोतियों की माला पहनी दिखाई जाती है। सोना यद्यपि धारण किया जाता था, जैसे शराब हराम होने पर भी खूब पान की जाती थी।

विवाह के समय गाये जानेवाले मंगल गीत को भी मंगलमालिका कहते हैं। यहाँ स्वर्णमयी विशेषण के कारण मंगल गीत से अभिप्राय नहीं है।

पाद-टिप्पणी

६०४ ( १ ) अश्व : अश्व तथा श्वान दोनों स्वामीभक्त होते हैं। उनके विषय में सभी देशों में अनेक प्रकार की गाथायें प्रचलित हैं। महाराणा प्रताप की भी प्राणरक्षा उनके अश्व चेतक के कारण हुई थी। अश्व स्वामी की रक्षा रणक्षेत्र में अपने प्राण की बाजी लगाकर करता है। स्वामी के गिर जाने पर, उसे मारने आते हुए सैनिकों पर आक्रमण करता है। श्वान भी अपने स्वामी पर आक्रमण होने के समय, उसकी रक्षा प्राणपन से करता है।

विहितारित्रप्रसराः सचिवाः सममेकपार्श्वगताः ।
यत्र सुशस्त्रप्रचिता मज्जति नौकेव राजश्रीः ॥ ६०५ ॥

६०५. सुशस्त्र संग्रही एवं शत्रु से रक्षार्थी व्यवस्था करनेवाले सचिव एक तरफ हो जाते हैं, तब राजश्री नौका के समान डूब जाती है।

वैदेशिकभटैर्द्रोहे विहिते समरागमे ।
तावत् ते कत्थवाडाद्या निन्युः खानं यथागतम् ॥ ६०६ ॥

६०६. युद्ध के समय विदेशी[1] भटों के द्रोह करने देने पर, वे कत्थवाड[2] आदि लोग खांन को जैसे आया था, वैसे ले गये।

खानो राजभटैर्बद्धो रणे मिथ्येति वार्तया ।
स सैफडामरो युद्धात् स्रस्तधैर्यो न्यवर्तत ॥ ६०७ ॥

६०७. 'खांन युद्ध में राजभटों द्वारा वन्दी वना लिया गया'—इस मिथ्या घोषणा से उस सैफ डामर का धैर्य पस्त हो गया और युद्ध से विमुख हो गया।

तत्तद्वराश्वसामग्रीं गृह्णन् शूरपुराध्वना ।
समरोड्डामरः सैफडामरः खानमासदत् ॥ ६०८ ॥

६०८. अनेक श्रेष्ठ अश्व आदि सामग्री ग्रहण कर, शूरपुर[1] मार्ग से युद्ध में भयावह सैफ डामर खांन के पास पहुँचा।

---

पाद-टिप्पणी :

६०५. ( १ ) नौका : श्रीवर ने उत्तम उपमा दिया है। नौका पर जब नौकारूढ़ लोग एक ही तरफ हो जाते हैं, तो उन्हीं के भार से नौका या तो उलट जाती है या करवट लेकर डूब जाती है। मनुष्य फाँसी के कैदी के समान अपने भार के ही कारण अपनी मृत्यु का कारण हो जाता है। नौका में खड़े होना या अन्वड़ में फँसने पर उस पर हिलना-डुलना अथवा आतंकित होकर हटना-बढ़ना खतरनाक हो जाता है।

अरित्र का अर्थ पतवार नौका का पतवार तथा शत्रु से रक्षा दोनों होता है। पतवार नौका का संचालन करती हैं, उसकी दिशा ठीक रखती है, रक्षा करती है। एकपार्श्व का अर्थ भी श्लिष्ट है। उसका अर्थ एक तरफ अथवा एकांगी हो जाना है। यदि सभी सचिव एक तरफ हो जाते हैं, तो राज्य का शक्ति सन्तुलन विगड़ जाता है। वे सब कुछ करने में समर्थ हो जाते हैं। राजा उनका कुछ अनिष्ट करने अथवा उनपर नियन्त्रण रखने में असमर्थ हो जाता है। इसी प्रकार नौका में एक तरफ भार पड़ते ही सन्तुलन विगड़ जाता है। पतवार रक्षा नहीं कर सकता। नाव डूव जाती है।

पाद-टिप्पणी :

६०६. ( १ ) विदेशी : काश्मीर तथा फतह खांन की दोनों सेनाओं में विदेशी अर्थात गैर-काश्मीरी सैनिक थे। उनकी ममता तथा निष्ठा किसी के साथ कभी नहीं रही है। यही काश्मीर का इतिहास रहा है। वे रुपयों के लिए लड़नेवाले भाड़े के सिपाही थे। जिधर पलड़ा भारी देखते थे, उसी तरफ झुक जाते थे। उनकी इस अर्थकरी नीति के कारण काश्मीर समृद्धि की ओर नहीं वढ़ सका।

(२) कत्थवाड : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'इस अवसर पर फतह खां पराजित हो गया। वापस लौट गया ( ५५५ = ६८८ )।' श्रीदत्त ने व्यक्तिवाचक नाम माना है।

पाद-टिप्पणी :

६०८. (१) शूरपुर : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जै० : १ : १ : १०७ ।

इत्थं तृतीयवारं स प्रविष्टो मण्डलान्तरात् ।
वधं कृत्वा विनिर्गत्य खानः पर्णोत्समागतः ॥ ६०९ ॥

६०९ इस प्रकार खान[1] तृतीय वार देश मे प्रवेश कर और वध करके मण्डल से पर्णोत्स[2] गया ।

मार्गेश का विषाद

अधर्मबहलः कालः सर्वे द्रोहपरायणाः ।
राजा शिशुतरश्चाय स्वतन्त्रं मन्त्रिमण्डलम् ॥ ६१० ॥

६१० 'समय अधर्म-बहुल हो गया है, सभी लोग द्रोहपरायण है, राजा बालक है, मन्त्रि-मण्डल स्वतन्त्र ( स्वेच्छाचारी ) है—

अविधेया निजाश्चामी खानपक्षप्रतीक्षिणः ।
पौरा निरनुरागाश्च निष्कोशं नृपमन्दिरम् ॥ ६११ ॥

६११ 'तथा अपने लोग नियन्त्रणहीन हैं, खानपक्ष मे जाने के लिये उत्सुक हैं, पुरवासी अनुराग तथा राजगृह कोशरहित हो गया है—

सत्ता नाम न वृद्धस्य सर्वसामर्थ्यवर्जिता ।
इति सञ्चिन्तयन् शस्त्राघातजातव्यथाकुलः ।
मासौ द्वौ गमयामास मार्गेशोऽपि स्ववेश्मनि ॥ ६१२ ॥

६१२ 'सर्व-सामर्थ्य-रहित सत्ता मुझ वृद्ध के लिये नही रह गयी है',—इस प्रकार स्वयं चिन्तन करते हुए शस्त्राघात के व्यथा से व्याकुल, मार्गेश भी अपने घर मे ही दो मास व्यतीत किया ।

दृष्ट्वा महार्घमणिमौक्तिकविद्रुमौघान्
रत्नाकरं श्रयतु सोऽपि सुलाभलोभात् ।
यस्तान् महाभयकरान् मकरांस्तदीयान्
वीर्येण वारयितुमुज्झितभीः समर्थः ॥ ६१३ ॥

६१३ बहुमूल्य मणि, मौक्तिक, विद्रुम समूहो को देखकर, सुन्दर लाभ के लोभ मे वही सागर का आश्रय लें, जो भय त्यागकर, उसके महाभयकारी, उन मकरो को अपने पराक्रम से, दूर कर सकने मे समर्थ हो—

पाद-टिप्पणी

६०९ ( १ ) खान तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'इस बार फतह खाँ पराजित हो गया । भाग गया ( ४५५ ) ।'

(२) पर्णोत्स = पूछ द्रष्टव्य पाद टिप्पणी जैन० १ : १ : ६७, ४ : १८४, कल्हण० १ : ३१७ ।

फतह का चतुर्थ आगमन :

अत्रान्तरे पुनः खानश्चटिकाशारपर्वतात् ।
इतो यातैर्भटैः सार्धं लब्धत्राणः समाययौ ॥ ६१४ ॥

६१४. इसी बीच पुन. लब्ध त्राण ( रक्षण प्राप्त ) खान चटिकासार[1] पर्वत से, यहाँ से गये भटों के साथ, लौट आया ।

तस्मिन्नभ्यन्तरे प्राप्ते मुदितैरिव पर्वतैः ।
तदह:पतितं नभ्रे तुषारं सुसिताम्बरम् ॥ ६१५ ॥

६१५. उसके अन्दर आने पर, मानों प्रसन्न होकर, पर्वतों ने उस दिन गिरे हुए, तुषार रूप श्वेत वस्त्र धारण किये ।

ग्रामान् प्रज्वलितान् दृष्ट्वा तद्वार्ताचकितस्ततः ।
मार्गेशो भाङ्गिलं त्यक्त्वा सबलो योद्धुमभ्यगात् ॥ ६१६ ॥

६१६. इस समाचार से चकित, मार्गेश गाँवों को प्रज्वलित देखकर, भांगिल त्यागकर, सेना सहित युद्ध के लिये आ गया ।

तावन्मितपरीवारो वहुरूपान्तराद् गतः ।
प्रापद् दामोदरोड्डारभूमिं डामरसंयुतः ॥ ६१७ ॥

६१७. तब तक थोड़े भृत्यों के साथ वहुरूप[1] से गया और दामोदरोड्डार भूमि पर पहुँचा ।

---

पाद-टिप्पणी :

६१४. ( १ ) चटिकासार : चरिहार है । द्र० : शुक० : १ : १३४ । तवक्काते अकवरी में उल्लेख है—'किन्तु उसने पुनः एक वड़ी सेना एकत्रित किया और काश्मीर पर आक्रमण किया ( ५५५ = ६८८ ) ।'

पाद-टिप्पणी :

'प्रज्वलितान्' पाठ—बम्बई ।

६१६. (१) भांगिल : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : २ : २२; ३ : ३८०, ४५८; जोन० : श्लोक २५१; शुक० : १ : ६८; १ : ११३; २ : १० तथा कल्हण० : ७ : ४९८ ।

पाद-टिप्पणी :

६१७. ( १ ) वहुरूप : वीरू परगना । द्र० : पाद-टिप्पणी : जैन० : २ : १९; ३ : १५७; जोन० : श्लोक : २५२; कल्हण० : ४ : ६७३ ।

( २ ) दामोदरोड्डार : दामोदर उदर = दामोदर सूद । इस समय वहाँ श्रीनगर का हवाई अड्डा है । श्रीनगर से ७ मील दक्षिण है । यह उदर ६ मील लम्बा तथा दो मील चौड़ा है । इसके दक्षिण में गुदनुय ग्राम है । उदर को फारसी में करेवा कहते हैं । उदर शब्द संस्कृत शब्द उद्र का अपभ्रंश है । द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : कल्हण० : १ : १५७ । सूद शब्द करेवा या अधित्यकता के लिए प्राचीन काल में प्रयोग किया जाता था—दामोदर सूद = दामोदरोड्डार । द्र० : १ : १५७ ।

सनृपो मार्गपः पश्चात्तनवायुरिवोर्जितः ।
सैन्यं न्यवेशयत् तत्र सातदैवतमन्निधो ॥ ६१८ ॥

६१८ पीछे से वायु की तरह उर्जित, नृप सहित मार्गपति, सात देवत[1] के समीप वहीं सेना को स्थित किया।

सव्यूहो जातयुद्धेहो निशान्ते सैफडामरः ।
बभञ्ज मार्गपानीकं दामोदर इवोत्थितः ॥ ६१९ ॥

६१९ रात्रि के अन्त मे दामोदर[1] ( विष्णु ) की तरह उठकर, व्यूह सहित युद्धाकाक्षी सैफ डामर, मार्गपति की सेना को तोड डाला।

चित्रं हैदरशाहस्य यन्न सिद्धं त्रिधागमैः ।
अहो हीनबलस्यापि सिद्धमस्य विधेर्वशात् ॥ ६२० ॥

६२० आश्चर्य है तीन बार आने से भी हैदरशाह[1], जो कार्य नही कर सका, वह विधिवश हीनबल होनेपर भी, इसने कर दिया।

किमन्यदल्पसैन्योऽपि खानः कश्मीरकुञ्जरान् ।
हतविद्रुतविध्वस्तयूथान् सिंह इव व्यधात् ॥ ६२१ ॥

६२१ अधिक क्या ?—थोडी सेनावाला होनेपर भी, खान ने सिंह के समान, काश्मीर कुजरो को हत, विद्रुत एव विध्वस्त कर दिया।

---

पाद-टिप्पणी

६१८ ( १ ) सात देवत स्थान का निश्चित पता अपेक्षित है।

पाद-टिप्पणी :

६१९ ( १ ) दामोदर श्रीकृष्ण = विष्णु। काश्मीर के दो दामोदर राजा हुए है। प्रथम दामोदर राजा गोनन्द का पुत्र था। गोनन्द भगवान् कृष्ण के भ्राता बलराम द्वारा मथुरा के युद्ध में मारा गया था। श्रीकृष्ण यादवी सेना के साथ जब गान्धार में स्वयवर में भाग लेने जा रहे थे, तो पिता की प्रतिहिंसा भावना से प्रेरित होकर यादवी सेना पर आक्रमण किया और युद्ध में श्रीकृष्ण द्वारा स्वर्गगामी हुआ। कल्हण० १ ६४–७०। द्वितीय राजा दामोदर काश्मीर का राजा जलौक के पश्चात हुआ था। कल्हण० १ १५६–१६७। किन्तु श्रीवर का तात्पर्य प्रथम दामादर से ही है, जिसने भगवान् कृष्ण से सघर्ष किया था।

पाद टिप्पणी

६२० ( १ ) हैदरशाह काश्मीर का नवाँ सुल्तान था। जैनुल आबदीन का पुत्र हाजी खाँ था। पिता की जीवित अवस्था में ही उत्तराधिकार एव राज्य सिंहासन प्राप्ति के लिये सघर्ष आरम्भ किया था। वह तीन बार काश्मीर प्रवेश सेना सहित किया था परन्तु उसे सफलता नही मिल सकी। पिता की मृत्यु के पश्चात हैदरशाह नाम धारण कर, वह काश्मीर का सुल्तान होकर सन १४७० से १४७२ ई० तक शासन किया था। श्रीवर ने द्वितीय तरग में हैदरशाह के राज्य का सविस्तार वर्णन किया है।

पाद टिप्पणी

६२१ (१) विध्वस्त तवक्काते अकबरी में

प्राग्वत् सोऽनिष्टमाशङ्क्य मार्गपः सैफडामरात् ।
अन्येषां वीक्ष्य ताटस्थ्यं प्रपेदे नगरान्तरम् ॥ ६२२ ॥

६२२. पूर्ववत् मार्गपति सैफ डामर से अनिष्ट की आशंका करके तथा अन्य लोगों की तटस्थता देखकर, नगर में चला गया।

छिन्नेषु सेतुबन्धेषु प्राक्सैदद्वैधवत् तदा ।
पारावारगताः पौरा द्वैराज्याकुलतां दधुः ॥ ६२३ ॥

६२३. पूर्व में सैय्यिदों के द्वैध समान, उस समय सेतुबन्ध काट दिये जाने पर, पारावार स्थित, पुरवासी द्वैराज्य[1] ( दुराज ) से आकुल हो गये।

पिर्वजप्रतिहाराद्याः प्राप्ता मडवराज्यतः ।
नृपपक्षं परित्यज्य खानपक्षं समाश्रयन् ॥ ६२४ ॥

६२४. पीरूज प्रतिहारादि मडवराज्य[1] से आये और राजा का पक्ष त्यागकर, खान पक्ष का आश्रय लिये।

स्वभेदजर्जरं ज्ञात्वा सैन्यं द्वित्रा निशोऽनयत् ।
सैदवत् स्कन्दभवने किंकर्तव्यतयाकुलः ॥ ६२५ ॥

६२५. स्वभेद से, सैन्य को जर्जर जानकर, सैय्यिदों की तरह, किंकर्तव्य-व्याकुल होकर, स्कन्द भवन[1] में दो-तीन रात्रि बिताया।

एकदा सर्वसैन्येशं कृत्वा मेयामहम्मदः ।
नोसराजानकयुतो द्रोहं स्वामिनि तद्व्यधात् ॥ ६२६ ॥

६२६ एकबार सर्व सेना का अधिकारी बनाकर, नोस राजानक सहित, मीयां मोहम्मद[1] ने स्वामी के प्रति द्रोह कर दिया।

---

उल्लेख है—'बहुत-सी लड़ाइयाँ लड़ने के पश्चात फतह खांन विजयी हो गया (५५५ = ६८८)।'

पाद-टिप्पणी :

६२३. (१) द्वैराज्य : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : १ : ३ : ८६, ३ : ५८, ३ : १०५।

पाद-टिप्पणी :

६२४. ( १ ) मडवराज्य = मराज। द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० : १ : १ : ४०; जोन : श्लोक ७८८। श्रीनगर मडवराज्य में था। लोकप्रकाश में मडवराज्य की सीमा दी गयी है (पृष्ठ : ८७)। मडवराज्य में चौबीस परगने थे।

पाद-टिप्पणी :

६२५. (१) स्कन्द भवन : इसका पूरा नाम स्कन्द भवन विहार था। काश्मीरराज युधिष्ठिर द्वितीय का मन्त्री स्कन्द था। उसी ने स्कन्द भवन विहार की स्थापना किया था। यह स्थान श्रीनगर में छठे पुल तथा ईदगाह के मध्य स्थित था। कल्हण ने स्वयं इसका आगे चलकर केवल स्कन्द भवन नाम से ही उल्लेख किया है। सकन्द भवन एवं स्कन्द भवन विहार एक ही स्थान है। कालान्तर में यह स्थान कब्रिस्तान में परिवर्तित हो गया। द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी : कल्हण : ३ : ३८०; तथा ८ : १४४२ एवं जैन० : ४ : १२२।

पाद-टिप्पणी :

६२६. (१) मीया मुहम्मद : तवक्काते अकबरी

यथा चित्तं तथा कायो यस्य स्यात् साहसक्षमः।
तस्यात्मनिरपेक्षस्य कर्तव्यं किं न सिध्यति ॥ ६२७ ॥

६२७ जिसका चित्त के समान शरीर, साहस करने मे सक्षम हो, उस आत्म-निरपेक्ष जन का, कौन-सा कार्य सिद्ध नही होगा ?

भागिनेयं नृपपदेऽप्युपेक्ष्य स्वार्थलुब्धधीः ।
द्रोग्धाभूद् यत् स तेनाभूत् सर्वनाशस्य कारणम् ॥ ६२८ ॥

६२८ यह स्वार्थ-बुद्धि नृप पद पर, भगिनी-पुत्र की उपेक्षा करके, जो वह द्रोही बन गया, वही उसके सर्वनाश का कारण हुआ।

नष्टसैन्यः सदैन्योऽथ मार्गेशः शरणं भयात् ।
ज्यल्लालठक्कुरं प्रायात् सर्वाश्रमस्थितं हितम् ॥ ६२९ ॥

६२९ सेना नष्ट हो जाने पर, दैन्य युक्त मार्गेश भय से हितकारी जल्लाल ठक्कुर के शरण मे गया, जो खूया ( खर्व ) आश्रम मे स्थित था।

यथैव स विरुद्धानामकरोच्छसनादिकम् ।
तादृशीं स दशां प्रापद् धिक् चला राजसम्पदः ॥ ६३० ॥

६३० जैसा कि उसने विरोधियो का वधादि किया था, वैसी ही दशा उसकी हुई,—धिक्कार है, चचल सम्पदाओ को।

---

में उल्लेख है— सैय्यिद मुहम्मद बिन सैय्यिद हसन भी फतह खा के पास पहुँचा (४५५)।'

पाद-टिप्पणी :

६२९ ( १ ) सर्वाश्रम = खूयाश्रम के लिये प्रयोग किया गया है। बम्बई सस्करण में पूर्वाश्रम मुद्रित है। वर्तमान परगना खुय होम है द्र० ३. ३४७, रा० क० ८ २६९८।

तबक्काते अकबरी में उल्लेख है—'जहाँगीर आहत होकर भाग गया (४५५)।' फिरिश्ता लिखता है—'जहाँगीर माक्रे जो घायल हो गया था। भागकर जान बचायी (४८९)।'

मुद्रण की गलती से खूयाश्रम का खर्वाश्रम छप गया है। खर्वट शब्द छोटे जन सन्निवेश के लिये प्रयोग किया जाता है। इसमें २०० ग्रामों के होने का उल्लेख मिलता है—द्विशतग्राम्या खार्वटिकम्—अर्थशास्त्र। अमरकोश के अनुसार—खर्वटश्चतु शत ग्रामाणा सग्रह स्थानम्। विष्णुपुराण में खार्वटिक के लिये खर्वट शब्द का प्रयोग किया गया है। विष्णु० अश १ अ० ६। वात्स्यायन ने खर्वट को सज्जनाश्रम लिखा है। बहुधा खर्वट पर्वत के सन्निकट होते थे। परन्तु यहाँ खूयाश्रम से ही तात्पर्य लगाना चाहिए। इसका बहुत उल्लेख राजतरंगिणियों में आया है।

सप्तग्रहानुगुणधारितसप्तवार-
वर्णांशुकोपचितवेशविशेषभूपः　　।
वहामभूप　इव　योऽभवदष्टभोगः
प्राप्तो दशामितरवत् स धिगस्तु लक्ष्मीम् ॥ ६३१ ॥

६३१. सप्तग्रहों[1] के अनुकूल सातो दिन उसी वर्ण के वस्त्र से शोभित होनेवाले, वहराम भूपति के समान अष्टयोग[2] प्राप्त करनेवाले, उसकी भी तुच्छ जन की दशा हुई—लक्ष्मी को धिक्कार है।

क्व नृपः क्व मदीयं तत्सर्वस्वं क्व परिच्छदः ।
नास्मरत् तद्दिने किञ्चित् प्राप्तो मुनिगुहान्तरम् ॥ ६३२ ॥

६३-. कहाँ नृप, कहाँ मेरा वह सर्वस्व, कहाँ परिकर ( परिच्छद ), उस दिन (एक) मुनि-गुहा में पहुँचकर, उसने कुछ भी स्मरण नहीं किया ?

राजदारापहारोत्थपापभारादिवार्दितः　　।
तद्भ्राता नाशकद्गन्तुं नावं स्त्रीसहितोऽविशत् ॥ ६३३ ॥

६३३. राज, दारा, परहरण से होनेवाले पापभार से मानों पीड़ित होकर, उसका भ्राता जाने में समर्थ नहीं हुआ।

अन्ये सैन्याः सदैन्या गिरिविलविगलद्वासरा धूसराभाः
तिष्ठन्तो दिष्टरिष्टोद्गतघनविलसद्वृष्टिनिर्नष्टचित्ताः ।
द्विष्टैर्दुष्टैर्गरिष्ठैः परिहृतवसनाः पृष्ठलग्नैर्निकृष्टाः
कारागारान्तराले पशव इव बलात् ते निरुद्धा विरुद्धाः ॥ ६३४ ॥

६३४. गिरि-गुफा में दिन व्यतीत करनेवाले, धूसरित कान्ति, दुर्भाग्यवश उसे मेघ की अतिवृष्टि से नष्ट चित्त-वृत्तिवाले वस्त्ररहित, जो अन्य दैन्य युक्त विरोधी सैनिक थे, उन्हें पीछे लगे दुष्ट एवं क्रूर शत्रुओं ने पशुओं के समान बलात् कारागार के अन्दर डाल दिया।

---

पाद-टिप्पणी :

६३१. (१) सप्तग्रह : (१) सूर्य, (२) चन्द्र, (३) मंगल, (४) बुध, (५) बृहस्पति, (६) शुक्र एवं (७) शनि, राहु-केतु की गणना नवग्रह में होती है। मूल सप्तग्रहों में राहु एवं केतु की गणना नहीं की जाती।

(२) अष्टयोग : राहु या केतु के साथ जब सातो ग्रह होते हैं, तो उसे अष्टयोग कहते हैं।

लूट-पाट

गर्जन्तो मुमुषुः परे जनपदान् दुष्टाः खशा दस्यव-
स्तद्भीत्या परिहृत्य सर्वमचलन् नग्ना नरा वा स्त्रियः ।
मार्गेष्वप्यबला हता बहुबलैः पूर्वापकारस्मृतेः
सोऽभूद् राज्यविपर्ययोऽतिभयदः कल्पान्तकालोपमः ॥ ६३५ ॥

६३५ गरजते हुए, दुष्ट खश[1] डाकुओ ने जनपदो[2] को लूट लिया और उनके भय से सब कुछ त्यागकर, नर या नारी नग्न ही चली गयी। मार्ग में भी पूर्वापकार स्मरण कर, बहुत से बली लोगो को अबलाओ को मार डाला—वह राज-विपर्यय कल्पान्त काल के सदृश अति भयकारी था।

सर्वस्वोल्लुण्ठने तस्मिन् धनिनां दुःसहे पुरे ।
आसन् दरिद्रा अत्याढ्या आढ्या दारिद्र्यभागिनः ॥ ६३६ ॥

६३६ नगर मे धनियो के उस दु सह सर्वस्व लुण्ठन के समय, दरिद्र अति धनी एव धनी दारिद्र्य के भागी हो गये थे।

ये स्युर्द्रुमाः सदलपुष्पफलाभिरामा
नद्यस्तरङ्गतरलाः सरवाः पिकाद्याः ।
ते शीर्णशुष्कजलमूकमुखा हिमर्तौ
किं तत्र यद् भवति कालविपर्ययेण ॥ ६३७ ॥

६३७ पत्र, पुष्प एव फल से सुन्दर वृक्ष एव तरल तरगो से युक्त नदियां, शब्द युक्त पिक[1] आदि जो होते हैं वे हिम ऋतु मे क्रमश शीर्ण, शुष्क एव मूक हो जाते हैं, काल-विपर्यय से क्या नही होता ?

---

पाद-टिप्पणी

६३५ ( १ ) खश द्रष्टव्य पाद-टिप्पणी जैन० ४ ११३, २१२, ४९४, ६५०, जोन० श्लोक ५२५, शुक० श्लोक १ ६२, कल्हण० १ ३१७।

( २ ) जनपद राज्य की वह सीमा जिसमें राजधानी सम्मिलित नही रहती। राजधानी के अतिरिक्त शेष राज्य। एव ही भाषा भाषियों की आबादी से तात्पर्य है।

पाद टिप्पणी

६३७ ( १ ) पिक कोयल। मीमासा के भाष्यकार शबरस्वामी ने पिक शब्द को म्लेच्छ भाषा का शब्द माना है। संस्कृत में पिक शब्द का प्रचुर प्रयोग सुदूर प्राचीन काल से हो रहा है—कुसुमशरासन शासनवदिनी पिक निकरे भज भावम्—गीत० ११ तथा—उन्मीलति मुहु मुहुरिति कलोत्ताला पिकाना गिर—गीत० १। द्र० ४ : १८

मुहम्मद राज्यभ्रंश :

ते राजवल्लभा रम्यास्ताः स्त्रियस्ते च सेवकाः ।
कथावशेषतां यातास्तस्मिन् नष्टदले नृपे ॥ ६३८ ॥

६३८. उस राजा के बल सहित नष्ट हो जाने पर, वे राजवल्लभ जन, वे सुन्दर स्त्रियाँ, तथा वे सेवक, कथावशेष हो गये।

इत्थं वर्षद्वयं सप्त मासान् भूत्वा नृपासने ।
नृपो द्वाषष्टिवर्षे स ह्याश्विने भ्रंशमाप्तवान् ॥ ६३९ ॥

६३९. इस प्रकार वह ( राजा ) दो वर्ष सात मास नृपासन पर रहकर, बासठवें[1] वर्ष आश्विन मास में राज्यच्युत[2] हो गया।

राजा महमदशाहः स विंशप्रस्थान्तरात् ततः ।
आनीय फिर्यपालेन शत्रुपक्षे समर्पितः ॥ ६४० ॥

६४०. तत्पश्चात फिर्यपाल[1] ने उस राजा मुहम्मदशाह को विंगप्रस्थ[2] से लाकर, शत्रुपक्ष को सर्मपित्त कर दिया।

राजधान्यङ्गने राजवासे तं मनुजैः सह ।
विधाय वृत्तिं संपूर्णां ररक्षुर्डामराधिपाः ॥ ६४१ ॥

६४१. राजधानी के प्रांगण में, राजगृह में, मनुजों के साथ, उसे सम्पूर्ण वृत्ति निश्चित कर, डामरादियों ने उसकी रक्षा की।

---

पाद-टिप्पणी :

६३८. (१) कथाशेष : तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'यहाँ तक कि सुल्तान के साथ कोई नहीं रहा। उसका समस्त खजाना नष्ट हो गया (४५५ = ६८९)।' फिरिस्ता लिखता है—'मुहम्मदशाह अपने सेवकों द्वारा भी त्याग दिया गया (४८६)।'

पाद-टिप्पणी :

६३९. (१) बासठवाँ वर्ष : सप्तर्षि ४५६२ – सन् १४८६ ई० = विक्रमी १५४३ = शक १४०८।

(२) राज्यच्युत : फिरिश्ता लिखता है–'तथापि वह पुनः रणक्षेत्र में लौट आया। उसने राजसेना पर आक्रमण कर पराजित कर दिया (४८६)।' फिरिश्ता राजा का राज्यकाल देता है—'लगभग ग्यारह वर्ष के राज्य के पश्चात, राज्यच्युत हुआ (४८६)।'

तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'उस समय उसके राज्य के दश वर्ष सात मास व्यतीत हो चुके थे (४५६ = ६८९)।'

पाद-टिप्पणी :

६४०. (१) फिर्यपाल : श्रीदत्त तथा श्रीकण्ठ कौल दोनों ने फिर्यपाल को नामवाचक शब्द माना है।

(२) विंगप्रस्थ : द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० ४ : ९७। तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'कुछ समय पश्चात जमीन्दारों ने सुल्तान मुहम्मदशाह को बन्दी बनाकर फतह खाँ को सौंप दिया (४५५–४५६ = ६८९)।' फिरिश्ता लिखता है–'मुहम्मदशाह को काश्मीर के जमीन्दारों ने बन्दी बना लिया और श्रीनगर पहुँचने पर, उसे मुहम्मद शाह सुल्तान के सुपुर्द कर दिया (४८६)।'

राज्यप्राप्त्या सुखं तादृक् तस्य नासीत् सुदुःस्थितेः ।
यादृक् तद्भ्रंशतस्तस्य नृपमन्त्रिप्रसादतः ॥ ६४२ ॥

६४२ उस सुदु स्थिति वाले राज्य प्राप्ति से उसे ( मुहम्मदशाह )[1] वैसा सुख नही मिला था, जैसा कि उस राज्यभ्रंश के पश्चात नृप-मन्त्रियो की कृपा से प्राप्त हुआ।

लूट-पाट

सैदद्वैघवधेलुण्ठिः पुरेऽभूत् त्रिगुणा तदा ।
खशैः कृता दाहवर्जं तस्मिन् राजविपर्यये ॥ ६४३ ॥

६४३ उस राज्य-विपयय के समय, उस समय नगर मे खशो ने दाह के अतिरिक्त सैय्यिदोपद्रव काल मे वध होने की अपेक्षा तीन गुनी लूट की।

प्रधानवणिजः केचित् कोटिमञ्चयवञ्चिताः ।
तृणमात्रावृताङ्गैस्तस्थुस्ते रक्षितासवः ॥ ६४४ ॥

६४४ कुछ प्रधान वणिक, जो करोडो के सग्रह से वचित हो गये थे, वे तृणमात्र से अगो को ढककर, प्राणो की रक्षा कर स्थित रहे।

दिनत्रय ददामो वो मोपण यदि जायते ।
इति वैदेशिकोत्कोचे सापेक्षा मन्त्रिणोऽभवन् ॥ ६४५ ॥

६४५ 'यदि तीन दिन तक लूट की छूट हो तो तुम्हे देंगे' इस प्रकार विदेशियो द्वारा उत्कोच ( घूस ) प्रलोभन देने पर मन्त्री लोग सापेक्ष हो गये।

काश्मीरिका यथा लुण्ठि बहिर्यात्रागता व्यधुः ।
तथा वैदेशिकाश्चक्रुः काले किं किं न दृश्यते ॥ ६४६ ॥

६४६ जिस प्रकार काश्मीरी बाहर जाकर लूट[1] किये थे, उसी प्रकार यहाँ विदेशियो ने किया। समय पर क्या-क्या देखा नही जाता ?

---

फिरिश्ता लिखता है— सुल्तान मुहम्मदशाह के बन्दी बन जाने पर फतह खान ने राज्य शासन ग्रहण किया। उसका औपचारिक रूप मे राज्याभिषेक किया गया और हिजरी ९०२ में काश्मीर का सुल्तान स्वीकार किया गया ( ४८६ )।'

पाद टिप्पणी

६४२ (१) मुहम्मदशाह तबकाते अकबरी में उल्लेख है— फतह खा ने उसे तथा उसके भाइयो को दीवानखाने में बन्दी बना लिया और आदेश दे दिया कि उसके भोजन तथा अन्य आवश्यकताओ का पूरा प्रबन्ध रखा जाय ( ४५६ = ६८९ )।'

फिरिश्ता लिखता है—'उस समय से वह समीप ही बन्दी रहा, वह इतना उदार व्यवहार पाता रहा जितना उसके अनुरूप था ( ४८६ )।'

पाद-टिप्पणी

६४३ 'लुण्ठि ' पाठ—बम्बई।

पाद टिप्पणी

६४५ 'मापण' पाठ बम्बई।

पाद टिप्पणी

६४६ (१) लूट जैन० ४ ५१४ म

प्रतिपद्भ्रमणैः सपरिश्रमा
मधुकरी तनुते मधुगोलकम् ।
निहितधूमतया विनिवार्य तां
तमुपलभ्य परः सुखमश्नुते ॥ ६४७ ॥

६४७. पद-पद पर भ्रमण करके, बड़े परिश्रम के साथ मधुकरी, मधुगोलक[1] को तैयार करती है, और रखे धुआँ के द्वारा उसे निवारित करके, उस मधु को लेकर, दूसरा सुख भोगता है।

कष्टैः षण्मासपर्यन्तं महद्भिः सञ्चितं गृहे ।
अयत्नसपरैर्भुक्तं सर्वं तत् खानसंश्रितैः ॥ ६४८ ॥

६४८. बड़े कष्ट से घर में संचित, उन सब वस्तु का पराये खानाश्रित, तीसरों ने छह मास तक अनायास भोग किया।

---

श्रीवर ने काश्मीरियों के वाहरी लूट-पाट का उल्लेख किया है। उसे पुनः दुहराता है। द्रष्टव्य : पाद-टिप्पणी : जैन० : ४ : ५१४ तथा जोन० : श्लोक ३३९।

पाद-टिप्पणी :

६४७ (१) मधुगोलक : मधुमक्खी या शहद का छत्ता। मधु प्रथम मधुर पदार्थ था, जिसका ज्ञान मानव जगत को हुआ था। मधु का व्यवहार यूरोप आदि देशों में शर्करा के पूर्व होता रहा है। मधु भारतीय संस्कारों में श्राद्ध से लेकर चरणामृत तक में व्यवहार किया जाता है। पुष्पों के मकरंद को मधुमक्खियाँ लाती हैं। छत्ता मे रखकर, उनका परिपाक एवं संचय करती हैं। उसे भोजन व्यवस्था के काम में भी लाती हैं। पुष्पों के अभाव में तो मधुमक्खियाँ कुछ कीड़ों से मधु द्रव्य एकत्रित करती हैं। उन्हें मधुरस कहते हैं।

आयुर्वेद की औषधियों में मधु का प्रयोग सर्वत्र होता है। वह ग्लूको का काम करता है। कफ का नाश करता है। उसके साथ औषधि का सेवन करने से औषधि की प्रतिक्रिया वहुत शीघ्र शरीर पर होती है। उत्तम पुष्पों के मकरन्द से वना मधु उत्तम होता है। पद्म-मधु श्रेष्ठ माना जाता है। काश्मीर में कमल दल प्रत्येक सरोवरों तथा जलाशयों में वहुत होते हैं। काश्मीर का मधु पद्म-मधु होने के कारण बहुत श्रेष्ठ माना जाता है। उसे नेत्र की वीमारियों में लगाया जाता है। छत्ता से हाथ से गार कर मधु निकालने की पुरानी व्यवस्था है। पहले मधु छत्ता के नीचे धुँआ करते हैं। उनसे मक्खियाँ भाग जाती हैं। तत्पश्चात् छत्ता काट लिया जाता है। छत्ता ऊँचे स्थान पर, वृक्षों, पहाड़ी के निकले पत्थर, ऊँचे मकानों के वरामदों तथा छज्जों में मधुमक्खी छाता लगाती है। फलवाले पुष्पों में मकरन्द अधिक होता है। पद्म मधु कुछ स्वेत तथा अन्य मधु विभिन्न रंगों के पुष्पों के रंग पर आधारित होते हैं।

मधु-मक्खी के छाते में केवल एक मधु-मक्खी रानी ही अण्डा देनेवाली होती है। वह स्वतः मधु-संचय नहीं करती। उसे अन्य मक्खियाँ भोजन लाकर देती है। आजकल कृत्रिम ढंग से मधुमक्खी पालन एक व्यवसाय हो गया है। काश्मीर में मधु वहुत मिलता है। आजकल कृत्रिम ढंग से वड़े पैमाने पर काश्मीर में मधु का उद्योग फैल गया है। जम्मू से वनिहाल तक के मार्ग में कई स्थानों पर मधु के केन्द्र मैंने देखे हैं। उसे यात्री अपने गाड़ी में ही वैठ-वैठा देख सकता है। श्री गांधी आश्रम का व्यवसाय मधु का सवसे वड़ा काश्मीर में है।

रक्ताक्ततृणपूगान्तः क्षिप्तं कैरपि यद्धनम् ।
न नीतमशुचिस्थानसूतिकास्तरणभ्रमात् ॥ ६४९ ॥

६४९ जो धन रक्त से लथ-पथ तृणपुज मे फेक ( छिपा ? ) दिया गया था, उसे अपवित्र स्थान एव प्रसूती के वस्त्र के भ्रम से किसी ने नही लिया ।

सद्युम्ननिम्नकुम्भाम्भःपक्षिपुष्करिणीकृतैः ।
रक्षितं कैरपि द्रव्यं नीतं ताडितदर्शनात् ॥ ६५० ॥

६५० कुछ लोगो ने धन सहित कुम्भो को पक्षियो के तालाबो मे जो द्रव्य रक्षित किया था, उसे भी ताडना दिखाकर ले लिया ।

सत्यं ब्रवीमि धनिकाः शृणुतास्मदुक्तं
यत् सञ्चितं वसु गृहे परवञ्चनाद्यैः ।
तद् भोगदानसफलं कुरुताविलम्बं
नो चेद् वृथा स्मरत राज्यविपर्ययेऽस्मिन् ॥ ६५१ ॥

६५१ 'हे ! धनिको !! सुनो—मैं सत्य कहता हूँ, दूसरे के प्रतारण आदि द्वारा घर मे सचित जो धन है, उसे अविलम्ब दान-भोग द्वारा सफल करो, नही तो इस राज-विपर्यय मे वृथा हो जायगा ।'

भग्नभाण्डकरण्डालीः प्रसार्य परितो गृहे ।
मुषिताः स्म इति व्याजात् खशाः कैरपि वञ्चिताः ॥ ६५२ ॥

६५२ कुछ लोगो ने टूटे-फूटे भाण्ड एव करण्ड[1] आदि को घर मे चारो ओर फैलाकर—'लुट गया हूँ'—इस व्याज से खशो को भी ठग लिया ।

जलान्तरशवागारान् शून्यानापूर्य वस्तुभिः ।
ररक्षुर्नागराः केऽपि शून्यीकृतगृहा धनम् ॥ ६५३ ॥

६५३ कुछ नागरिको ने घर खाली कर, जल के बाहर स्थित, शून्य शवागारो[1] को वस्तुओ से भर कर धन की रक्षा की ।

---

पाद-टिप्पणी

६५२. ( १ ) करण्ड बाँस की बनी टोकरी या पिटारी । कालान्तर में किसी चीज की बनी टोकरी या पिटारी के लिये शब्द प्रयुक्त होने लगा ।

पाद-टिप्पणी

६५३ (१) शवागार कब्रिस्तान = तकिया = शवाजिर = मृतागण । द्रष्टव्य पाद टिप्पणी जैन० १ ७ २५६, १ ७ २२६, २ ८५, ८९, ९२, ३ ३५५ ४ ८७ ।

तैर्निर्वर्तितगर्तान्तः क्षिप्तैः पौरधनैर्घनैः ।
तस्मिन् काले प्रतिपदं सत्यार्थाभूद् वसुन्धरा ॥ ६५४ ॥

६५४. नगर में उन धनिकों द्वारा गर्त में हर कदम पर रखे गये धनों से, उस समय वसुन्धरा[1] वास्तव में ( वसुन्धरा ) धन को धारण करने वाली हो गयी ।

मार्गरोधोद्यतैः सर्वैः क्षेपणीयाश्मवर्षिभिः ।
राजानवाटिकीयैस्तैस्तत्कालं साहसं कृतम् ॥ ६५५ ॥

६५५. मार्गावरोध के लिये उद्यत, राजान वाटिका[1] के सब लोगों ने ढेल वास द्वारा पत्थरों की वर्षा करके, उस समय साहस का काम किया ।

कर्मस्थाननिधानसर्पसदृशप्रोत्सारणाडिण्डिमो
द्विष्टप्राक्तनसेवकाम्बुजघटाहेमन्तकालोदयः ।
भूपक्ष्मामधुगोलकस्थसरघासङ्घातधूमोद्गमः
सोऽभूद् राज्यविपर्ययो नवसभोद्यानद्रुमालीमधुः ॥ ६५६ ॥

६५६. वह राज-विपर्यय सार्वजनिक कोश रूप सर्प को दूर करने के लिये डिण्डिम[1] ( नगाड़ा-डुग्गी ), द्वेषी प्राचीन सेवक रूप कमलवन के लिये हेमन्त काल का उदय, भूपति के पृथ्वी रूप मधुगोलक[2] ( छत्ता ) पर स्थित सरघा ( मधुमक्खी ) समूह के लिये धूमोद्गम तथा नवसभा रूप उद्यान द्रुमावली के लिये वसन्त ऋतु था ।

किं स्वाचारविपर्ययात् किमु धनस्यान्यायतोपार्जनात्
किं वा द्रोहितया सतां किमथवा सद्वर्णसाङ्कर्यतः ।
निःसामर्थ्यतया यथा शिशुविभोर्द्वेषेण वा मन्त्रिणां
राज्ये सुस्सलभूपतेरिव बभूवायं प्रजोपद्रवः ॥ ६५७ ॥

६५७. अपने आचार-विपर्यय या अन्याय से धनोपार्जन के कारण, सज्जनों के साथ द्रोह करने, अथवा अच्छे लोगों के वर्णसंकरता के कारण, शिशु राजा के असामर्थ्य अथवा मन्त्रियों के द्वेष के कारण, सुस्सल[1] भूपति के राज्यकाल के समान राज्य में प्रजा का यह उपद्रव हुआ ।

---

पाद-टिप्पणी :

६५४. (१) वसुन्धरा : नानारत्ना वसुन्धरा—रघु० : ४ : ७ । पृथ्वी रत्नों से भरी है । लोगों ने धन भूमि में गाड़ कर पृथ्वी का वसुन्धरा नाम सार्थक कर दिया था ।

पाद-टिप्पणी :

६५५. ( १ ) राजानक वाटिका : राजवोर डल के दक्षिण-पूर्व एक भाग है । श्रीनगर में ही है । वोर शब्द वाटिका के लिये कश्मीर में प्रयोग किया जाता है । द्र० : रा०क० : १ : ३४२; ६ : ११७; ८ : ७५६, ७६८, ८९१ ।

पाद-टिप्पणी :

६५६. ( १ ) डिण्डिम : छोटा ढोल, नगाड़ा, डग्गी ।—इति घोषयतीव डिण्डिमः—हि० २ : ८६ ।

( २ ) मधुगोलक : द्र० : पाद-टिप्पणी : ४ : ६४५ ।

पाद-टिप्पणी :

६५७. ( १ ) सुस्सल : सुस्सल द्वितीय लोहर

येनादौ सैद्वैरे रणरसिकतया मोचिता बन्धनस्थाः
सिद्धादेशाधिकारी व्यवित जितरिपुः स्फूर्जितं च प्रयातः ।
प्राज्यं राज्य व्यधाद् यः फतिह्नरपतेर्नाशयित्वारिचक्रं
जीयाच्छ्रीडामरेन्द्रो वरसचिवपतिः सैफमल्लेक एकः ॥ ६५८ ॥

६५८ जिसने पहले सैय्यिदो के सघर्ष मे रण-रसिकता के कारण, बन्धन मे स्थित लोगो को मुक्त कर दिया और जिस सिद्धादेश अधिकारी ने शत्रुओ को जीतकर प्रसिद्धि प्राप्त की, जिसने शत्रु समुदाय का नाश करके, राजा फतह के राज्य को विस्तृत कर दिया, डामरेन्द्रश्रेष्ठ सचिवपति, वह अद्वितीय सैफ[1] मल्लिक विजयी हो।

इति श्रीजैनराजतरङ्गिण्या पण्डितश्रीवरविरचिताया फतिहशाहराज्यप्राप्तिर्नाम
चतुर्थस्तरङ्ग ।
समाप्तेय श्रीवर राजतरङ्गिणी ॥

इस प्रकार पण्डित श्रीवर विरचित राजतरगिणी मे फतहशाह राज्य प्राप्ति नामक
चतुर्थ तरग समाप्त हुआ।
श्रीवरकृत राजतरगिणी समाप्त हुई।

---

वश का चौथा राजा काश्मीर का हुआ है। प्रथम समय वह सप्तर्षि सम्वत ४१८८ वैसाख शुक्ल ३ सन ११९२ ई० सप्तर्षि ४१८८ मार्गशीर्ष बदी षष्टमी = सन् ११२० तक राजा था। भिक्षाचर द्वारा राज्य-च्युत होने पर दूसरी बार पुन सप्तर्षि ४१९७ ज्येष्ठ सुदी ३ = सन् ११२१ ई० तक राजा बना। सुस्सल के पश्चात जयसिंह अथवा सिंहदेव राजा हुआ। जयसिंह के समय के उत्तरार्ध राज्यकाल से जोन-राज ने द्वितीय राजतरगिणी का प्रणयन किया है। सुस्सल राज्यकाल गृहयुद्धों एव सघर्षों से भरा पडा है। अत उसका षड्यन्त्र द्वारा वध कर दिया गया था ( द्रष्टव्य कल्हण ८ ४९७–१३४८।

पाद टिप्पणी

६५८ (१) सैफ डामार तवक्काते अकबरी में उल्लेख है—'सैफी तथा अनकरी सर्वदा उस ( सुलतान ) का सम्मान करता रहा और उसकी सेवा में उपस्थित रहा ( ४५६ )।'

फिरिश्ता में उल्लेख है— फतहशाह ने सफी और सगराम दोनो को अपना मन्त्री बनाया जो बन्दीगृह से छूटे थे ( ४८६ )।'

---

रघुनाथ सिंह पुत्र बटुकनाथ सिंह जन्म स्थान पचक्रोशी अन्तर्गत वरुणातीर स्थित
ग्राम खेवली रामेश्वर स्थान समीप निवासी मुहल्ला औरगावाद
( धौहट्टा ) काशी नगरी वाराणसी के उत्तर प्रदेश ने
श्रीवर कृत राजतरगिणी का अनुवाद
एव भाष्य सन् १९७६ ई० में
लिखकर समाप्त किया।

# उपसंहार

'राजतरंगिणी' भाष्य-रचना क्रम में 'श्रीवर' मेरी अन्तिम रचना है। कल्हण के पश्चात् जोनराज, श्रीवर, प्राज्यभट्ट एवं शुक ने राजतरंगिणियों का प्रणयन किया है।

आजकल मौलिक एवं गम्भीर ग्रन्थों का प्रकाशन एक समस्या है। प्रकाशक की दृष्टि अर्थ लाभ की होती है। रचनाकार की दृष्टि सर्वथा भिन्न होती है। वह अपना विचार प्रख्यात करना चाहता है। इसलिए अनेक पाण्डुलिपियों की अज्ञात अवस्था में ही कथा शेष हो जाती है।

श्री जोनराज के मुद्रण में तीन वर्ष लग गये। श्रीवर की पाण्डुलिपी सन् १९७१ ई० में तैयार हो गयी थी। उसे छपने में पाँच वर्ष लगे हैं। शुक के मुद्रण में भी ६ वर्ष लगा है। कल्हण राजतरंगिणी भाष्य का प्रथम खण्ड भी ढाई वर्ष में छप पाया। द्वितीय खण्ड ने तीन वर्ष का समय लिया। तृतीय एक वर्ष, ६ मास में छपा है चतुर्थ खण्ड की पाण्डुलिपी वर्षों से लिखी पड़ी है। देखें वह कब छपती है। कितना लम्बा समय इस प्रकार नष्ट हुआ है ?

राज्य द्वारा संस्तुत, एवं प्रश्रय के अभाव के कारण अनेक अमूल्य ग्रन्थों का प्रकाशन नहीं हो पाता। प्रकाशन के अभाव में वे प्रकाश में नहीं आते। स्वाभिमान एवं आत्म सम्मानी रचनाकार, प्रकाशन के लिए दर-दर भटकने की अपेक्षा, अपमानित होने की अपेक्षा, संतोष के साथ, भाग्य के साथ, आशा के साथ, ग्रन्थ की गठरी सजोये रखता है।

कल्हण राजाश्रय प्राप्त कवि नहीं था। वह मुक्त चिन्तक था। अर्थ उसकी मार्गाविरोध नहीं कर सका। गीतकार की वाणी, संगीतज्ञ का स्वर, वक्ता की जिह्वा, लेखक की लेखनी, यदि अर्थ की मुखापेक्षी हो जाती है, तो प्रेरक शक्ति खो देती है, शुद्ध अनुभूति उदास हो जाती है। वह उड़ने लगती है, मुद्रा पंख पर। उसे नभस्थ मुक्त विचरणशील पक्षी का न तो पंख मिलता है और न वाणी। उसकी वाणी स्वर्ण पिंजरे में बन्द पक्षी की कृत्रिम वाणी बन जाती है। वाणी मधुर लगती है, अच्छी लगती है, किन्तु उसमें कूक नहीं होती; प्राण नहीं होता; स्फूर्ति नहीं होती। उनमें वही अन्तर होता है, जो स्वर्ण पुष्प एवं स्वर्णाभ चम्पा में। धन मुखापेक्षी वाणी, सरस, अलंकृत होने पर भी प्रेरणा प्रद नहीं होती। काव्य कृत्रिम तड़ाग में, मर्यादित सरोवर में, पुष्पित पुष्प सदृश होता है। मौलिक लेखक विकसित पद्मसर का दर्शन करना चाहता है, जो विशाल सरोवर में, प्रकृति की गोद में, निर्मल नीर में, शुद्ध मुक्त वायु में, विहँसकर खिलता है। मन से झूमता है। मन से गुंजन सुनता है। मन से सुरभि दान करता है। नव-जीवन के लिए, प्रेरणा के लिए, जीवन के लिए, किसी का क्षाश्रित नहीं होता।

जब लक्ष्मी का मुखापेक्षी रचनाकार हो जाता है, तो दर्शन करता है—लक्ष्मीवाहन का। उसे नसीब नहीं होता—उज्ज्वल हंस का दर्शन। लक्ष्मीवाहन, जीवन प्रद उषा की लाली से डरता है—भागता है। बनता है—अन्धकार का वासी। शुभ जगत त्यागकर, बनता है–रजनीचर। उसकी बोली होती है–अशुभ। किन्तु हंस निर्मल जल में, विकसित कमल दल में, निवास करता है। निशा काल में कमल के साथ, नेत्र मूँद लेता है। अन्धकार उसे उदास बना देती है। उषा काल में जागृत होता है और दर्शन करता है–अरुण रश्मि का।

अर्थदास की वाणी नियन्त्रित होती है। स्वतन्त्र विचार व्यक्त नही करती, आभार भार से दबी रहती है। उसकी वाणी गुंजन करती है—सुन्दर, सुवर्ण पिंजर बद्ध, पक्षी की बोली। वह अच्छी लगती है, जबतक सुनी जाती है। कुछ नवीन, कुछ मौलिक नही होती।

अर्थदास स्वाभिमान खोता है। स्वतन्त्रता खोता है। मुक्त चिन्तन खोता है। अपने को खोता है। जोनराज, श्रीवर एव शुक राजकवि थे। उनकी राजतरगिणियों में कल्हण राजतरगिणी की ओजमयी भाषा, अभिव्यक्ति एव दृष्टिकोण में इन कारणो से स्पष्ट अन्तर मिलना स्वाभाविक है।

आजकल रचना व्यवसाय एवं अन्य विशेष कर्मो तुल्य धन्धा हो गयी है। किसी सिद्धहस्त सम्पादक से सम्पादित कराकर अथवा किसी सुयोग्य अर्थदास लेखक से परिष्कृत भाषा में लिखवा कर, अपने नाम की मुहर लगा देना, आजकल एक प्रथा बन गयी है।

मैंने पाण्डुलिपियों को किसी सम्पादक अथवा सिद्धहस्त लेखक की दया पर नही छोडी, उस पर दूसरा रग चढा कर गदला नही किया है। भाष्यों को उस तरह नही सजाया है, जैसे कोई नाटक-पात्र अपना मेकअप करता है। जिस प्रकार जैसे शब्द तथा भाव आते गये—लिखता गया। उसी रूप में रखा, जो उसका वास्तविक रूप है। यह रूप चाहे बेढगा है, परन्तु है, अपना न नकल है और न छाया। जो अपना है, उसे दिया है। दूसरे का श्रम, दूसरे का भाव, दूसरे का विचार, दूसरे की शैली लेकर, ग्रन्थ सौष्ठव बढाने का प्रयास नही किया है।

मेरा उद्देश्य लोक तक सुबोध राष्ट्रभाषा हिन्दी में राजतरगिणी भाष्यो को पहुँचाना है। कल्हण के के अतिरिक्त अन्य राजतरगिणियों पर कुछ कार्य अथवा अनुसन्धान नही हुआ है। श्री स्तीन की रचना से मुझे प्रेरणा मिली है। वही मेरा आदर्श है। उसे आधार मानकर, रचना किया है। यह कार्य उस अव्यक्त शक्ति की कृपा के बिना सम्भव नहीं था, जिसकी वन्दना जोनराज करता है। अनजाने जो मार्ग प्रशस्त, सकुचित एव नियन्त्रित करता रहता है।

रचना काल में अनेक मानसिक एव आर्थिक कठिनाइयाँ आयी हैं। भूतकालीन स्मृतियाँ, सुखद थी—दुखद भी थी। राजनीति उत्कर्ष से ढलते समय भयावनी लगती है। प्राय राजनीतिज्ञ इस विषय परिस्थिति में सन्तुलन खो बैठते हैं।

चारो राजतरगिणी पाँच सहस्र वर्षो की इतिहास है, एक प्रदेश तथा जाति के उत्कर्ष एव अपकर्ष की गाथा है, महान् व्यक्तियों के जीवन के उतार-चढाव है, उत्थान-पतन का झझावात है। आता है, तो सब कुछ साथ उडाता लाता है। जाता है, तो सब कुछ लेता जाता है। शान्त होता है, तो जहाँ पडा रहता है, वही पडा रह जाता है।

राजतरगिणी इन झझावातो की कहानी है। महाभारत काल से सन् १५३८ ई० तक की घटनाओं को ग्रथित करती है। पढकर उत्साह-विराग, सुख-दुख, आनन्द एव विषाद होता है। दुर्बल मन सन्तुलन खाता है। सबल मन, स्वाभिमानी मन, इन परिस्थितिया में अपने विचारों पर, सकल्पों पर, निश्चयों पर दृढ रहता है। अनादर अपमान, साथियों की आँखें फिरने पर, निराश नहीं होता। समझ लेता है—क्षणभगुर ससार, चचल ससार, अस्थिर ससार का यह भी एक रूप है।

विपन्नावस्था में साथ त्याग देना आश्चर्य नही है। उपकार भूल जाना आश्चर्य नही है। उपेक्षा करना आश्चर्य नही है। विरुद्ध हो जाना आश्चर्य नहीं है। तथापि इस अवस्था में भी मन उस समय भर

उठता है, जब किसी अपरिचित से, किसी अज्ञात से, किसी निरपेक्ष से, किंचित मात्र आदर मिलता है। मन स्मृति सागर में गोता लगाता है, मन्थन करता है, पूछता है। यह क्यों होता है ? मनुष्य क्यों बदल जाता है ? क्यों कृतघ्न होता है ? क्यों आँखें फिर जाती हैं ? राजतरंगिणि सन्तुलित भाषा में इनका उत्तर उपस्थित करती है।

मानव में भी सुर एवं असुर दोनों प्रकृतियाँ कार्य करती हैं। असुर माया है। माया मीठी लगती है। गुणों को तिलांजलि देती है। बिछलती चलती है। संघर्ष नहीं करती। परिस्थितियों से नहीं लड़ती। प्रवाह में बहती जाती है, चलती जाती है। वैभवों के चकाचौंध में, यात्रा अकस्मात् यदि कहीं बिगड़ी, तो बिगड़ती जाती है। बिगड़ते-बिगड़ते विगलित हो जाती है, रह जाती है, स्मृति मात्र।

महान् सम्राटों के स्मारक, स्मारकों की खिसकती ईंटें, उनमें बसेरा लेते चमगादड़ों का समूह, उनमें कबूतर के बीट की दुर्गन्धि, कहती हैं—अहमन्यता, अहंकार, क्रूरता, विडम्बना, आडम्बर एवं ऐश्वर्य की निस्सारता। जयघोष से प्रसन्न, पुष्पवर्षा से प्रसन्न, आरती ज्योति से मुदित क्या कभी सोचता है ? वे दिन भी आ सकते हैं, जब एक पुष्प के लिये, एक मुसकान के लिये, किंचित सहानुभूति के लिये, तरसता बैठा रहेगा ? क्रामवेल की कब्र से निकालकर फाँसी पर लटकाना, नेपोलियन का सेण्ट हेलेना में दुःखान्त अन्त, किसे नहीं रुला देगा ? बिस्मार्क का अपमान, मुसोलिनी के मृत्यु पश्चात मृत शव की दुर्गति, हिटलर का विषाक्त शव दाह, स्मारिकों द्वारा जीवित रहने की उत्कट कामना वाले स्टालिन की हटती तस्वीरें, गिरती पाषाण प्रतिमायें, आधुनिक जगत के सम्मुख विचित्र दर्शन उपस्थित करती है। उस दर्शन का दर्शन राजतरंगिणी के पदों में झलकता है। परन्तु चंचल मानव, स्वार्थरत मानव, दुराग्रही मानव, भूल जाता है,—उन्हें स्मशान वैराग्य के समान।

दो महत्वाकांक्षी एक आसन पर नहीं बैठ सकते। एक सुल्तान के दो पुत्र विशाल साम्राज्य में नहीं रह सकते। परन्तु दस फकीर, दस गरीब, एक साथ एक टाट पर सुख की नींद सो लेते हैं।

राजनीति में उठकर, गिरना, भगवान किसी को न दिखाये। वह दुःखद मरने से भी बुरा है। इस दुःख का पात्र वहीं होता है, जो हवा में तिनके की तरह ऊँचा उड़ता रहता है, सोचता है—कभी गिरेगा नहीं। परन्तु जब गिरता है, तो पता नहीं चलता, कहाँ उड़कर चला गया।

राज मद सुरा से भी मादक है। सुरा शरीर को कष्ट पहुँचाती है। सुरा का शिकार सुरा सेवी स्वयं होता है। राज मद का शिकार दूसरा बनता है, जनता बनती है, देश बनता है, न पीने वाला बनता है, मित्र बनते हैं, साथी बनते हैं। वे चाहे अपना नाश न करें, परन्तु दूसरों के विनाश का मार्ग प्रशस्त करने में कुछ उठा नहीं रखते।

राज मद का न पान करने वाला, देश नायक है, राष्ट्र-नायक है, निर्माणकर्ता है। राजयंत्र योजित करता है। यन्त्र चलता है। शताब्दियों चलता रहता है और बन जाता है—दैनिक जीवन का अंग। अमेरिका में वाशिंगटन ने, अब्राहम लिंकन ने, भारत में चाणक्य ने, गान्धी ने, जापान में ईतों ने, जर्मनी में बिस्मार्क ने, चीन में माओ तुसंग ने, रूस में लेनिन ने, यूनान में पेरीक्लीज ने, वही किया, जिसे काश्मीर में, जलौक ने, मेघवाहन ने, ललितादित्य ने, जयापीड ने, जैनुल आबदीन ने किया था।

विलासी, भोगी भोगते हैं,—भोग। भोग के नमस्कार कर्ता की विरदावलियाँ, शताब्दियाँ गाती नहीं थकती। प्रशस्ति सृजन करती है, धातुओं में, पत्थरों में, यन्त्रों में नहीं, लोगों के मन में। मूक नहीं होती, लोप नहीं होती, बनती है—अमर।

कुछ नीव पत्थर है, कुछ मेखला के पत्थर हैं, कुछ खण्ड के पत्थर हैं, कुछ शिखर के पत्थर हैं, कुछ कलश के पत्थर हैं। मिलकर करते हैं—मन्दिर रचना। शिखरस्थ भासुर कलश मुस्कराता है—अपनी ऊँचायी देखकर। भूकम्प आता है। पहले कलश लुढकता है, शिखर गिरता है, खण्ड खसकता है, मेखला बिखरती है, बन जाते हैं—ध्वसावशेष। बन जाते हैं—खडहर बन जाते है—कथा शेष।

लेकिन मन्दिर भार वाहक नीव की इटें, नीव के पत्थर, सहस्त्रों वर्ष, लाखो वर्ष, अज्ञात शान्त, पडे रहते हैं। वे बताते है। वे स्मरण दिलाते हैं। मन्दिर कभी भव्य था। उत्तु ग था। इतिहास से, स्मृति मे जुडी थी। यह तपस्या है। उन ईंटों की, जो प्रशस्ति नही सुनती। जिन पर पुष्प नही चढते। जो दिखायी नही देती।

उत्तु ग कलश भार वहन नही करता, स्वय भार बनता हैं। तूफान आता है। भूकम्प आता है। पहले वही लडखडाता है। सीधा गिरता है। लुण्ठित होता है। कही रुकता नही। कोई सहारा नही देता। धराशायी होने पर, उठता नही। ढोका बनता है। जीवन श्री खोता है। गिट्टी बनता है। रोडा बनता है। धूल बनता है। उडता है। अस्तित्व खोकर पैरें तले दबता, रोकर उठता है। उसे पैरो पर भी शरण नही मिलती। वस्त्र मे उसे लोग फटकारते है। उडता है। गिरता है। न छूटने पर धुलता है। जल प्रवाह होता है। कीचड में मिलकर बनता है पंकिल।

कुछ राजा नीव की ईंट बने। कुछ मेखला बने। कुछ खण्ड बने। कुछ शिखर बने। कुछ बने कलश। राजतरंगिणी में, इस राज कथा में, इस राजावली पिटक में, उनकी कहानी गुम्फित है।

राज प्रकृति मनुष्य के क्रूर-करुण, सदय-निर्दय, परमार्थ-स्वार्थ एव मित्र-अमित्र प्रकृति से परे नही हैं। जड नही है। राष्ट्र की बोधात्मा नागरिको को आत्मा है। शरीर भौगोलिक सीमाएँ है, पर आत्मा जब गिरती है, राष्ट्र गिरता है। उठती है, राष्ट्र उठता है। अतएव राष्ट्र में गति है। जीवन है। विकास है। ह्रास है। उत्कर्ष है–अपकर्ष है, विवेक है–मूढता है। अहिंसा है। प्रतिहिंसा है। क्षमा है। क्रोध है। सकीर्णता है। उदारता है।

मनुष्य राष्ट्र निर्माण करता है। उसे चलाता है। गति देता है। उत्थान की ओर ले जाता है। पतन की ओर खीचता है। शक्ति देता है। अशक्ति देता है। केन्द्र बिन्दु मानव है।

मानव का विचार, राष्ट्र नायको का विचार, राजा का विचार है, राष्ट्र का विचार। उनका आचरण है, राष्ट्र का आचरण। उनका अनुशासन है। राष्ट्र का अनुशासन। दर्शन इस विचार का प्रेरक है। प्रवृत्तियों का नियन्त्रक है। मानवता से परे चलता है, तो स्वार्थ पर आरूढ होता है, राष्ट्र की सुखद स्थिति दु खद हो जाती है। घिनौनी हो जाती है। राज भवन, जब त्याग के स्थान पर, व्यसन का केन्द्र बन जाता है तो उसमें लिप्सा, लोभ मात्सर्य, छल-कपट के, विषैले कीटाणु लग जाते है। राज्य पंजर गलाने लगता है। बाहर से राष्ट्र किवा राज्य शरीर स्वस्थ दिखायी देता है। सुन्दर दिखायी देता है। किन्तु कीटाणु भीतर ही भीतर, उसे चाल डालते है। शरीर उपचार से परे हो जाता है।

भारतीय दर्शन एव शामी या सेमेटिक दर्शन में, उनके विचारधारा में, आचरण में, जितना अन्तर है, उतना ही अन्तर दोनो की राज सहिता में है। यदि मुसलमान ने जिहाद का नारा बुलन्द किया है और करता है तो, इसाई क्रुसेड, यहूदी अपनी मातृ-भूमि, भगवान् द्वारा प्रतिश्रुत देश की दुहाई देता है। इसमें उनका दोष नही है। मनुष्य जब जन्मजात दर्शन का दास बन जाता है, तो उसकी बुद्धि उसका साथ

नहीं देती। वह हो जाता है—अन्धविश्वासी। दूसरे क्या करते हैं, क्या कहते हैं, उनका क्या अधिकार है, क्या कर्तव्य है, भूल जाता है, मोहित हो जाता है। संस्कार एवं कुसंस्कार का बन जाता है, दास। झण्डा उठाता है, दर्शन विशेष का। प्रवर्तक बनता है, चलता है, केवल एक दिशा की ओर। अन्य दिशाओं से आँखें बन्द कर। बिना दूसरे की अपेक्षा किये। बिना दूसरे की चिन्ता किये। सम्मुख जो आता है, जो टकराता है, उसे नष्ट करने में भगवान् का कार्य मानता है। विश्वास करता है। उसका मार्ग ठीक दूसरों का गलत है। दूसरे पथ भ्रष्ट हैं। वह सुपथ गामी है। दूसरे नरकगामी हैं। वह स्वर्गगामी है। नरकगामियों को दण्ड देना कर्तव्य है।

उन्हें उनके दर्शन से हटाकर, अपने दर्शन में सम्मिलित कर, ईश्वर के आदेश का पालन करना है। उसके प्रति पावन कर्तव्य है। दूसरों को जबर्दस्ती बल से, छल से, कपट से, भय से, लोभ से, अपना पथ-गामी बनाने में ईश्वर के आशीर्वाद की प्राप्ति है। दूसरों को पाप से, ईश्वर के कोप से, दोजख की भयंकर आग से बचाना है। यह अन्ध विश्वास धार्मिक क्रान्तियों की जननी है। रक्तपात हुआ है। आत्मोत्सर्ग कर्ता, सन्त, महात्मा, दरवेश, सूफी तथा फकीरों की लम्बी पंक्ति बन गयी है।

मनुष्य विवेक त्याग कर, जब केवल कर्म काण्ड का साधन मात्र रह जाता है, तो कर्मकाण्ड साधन न होकर, साध्य बन जाता है। भूल जाता है। मनुष्य साध्य है। धर्म मनुष्य के लिये है, मनुष्य धर्म के लिये नहीं है। एक ही मनुष्य आज हिन्दू कल मुसलमान, परसों बौद्ध और चौथे दिन इसाई बनता है। एक ही मनुष्य अनेक धर्म, वस्त्रों के समान, ग्रहण करता और त्यागता है। धर्म मनुष्य का निदेशक है। मार्ग दर्शक है। अनिवार्य नहीं है। बिना धर्म माने मनुष्य जीवित रहता है। बिना धर्म माने पशु-पक्षी, प्राणी जीवित रहते हैं। मनुष्य स्वयं साध्य है। इस विवेक के ह्रास के कारण भयंकर रक्तपात तथा क्रूर गाथाओं का सृजन हुआ है।

सिकन्दर बुत शिकन सुल्तान काश्मीर में ईमान और तलवार का विकल्प काश्मीरियों के सम्मुख रखा। जीवन भय से अनेक कायरों ने, लोभियों ने, पद लोलुपों ने इस्लाम ग्रहण किया। पुण्यार्जन हेतु खंगधार पर इस्लाम ग्रहण कराया। अनेकशः इस विकल्प से बचने के लिये, आत्म हत्या कर लिये। कुछ ने देश त्याग दिये। हिन्दू धर्म उनकी रक्षा नहीं कर सका। कोई देवी-देवता, उनकी रक्षा नहीं कर सका। कोई जन्त्र-तन्त्र-मन्त्र उन्हें बचा नहीं सका। वे लोप होते गये, मरते गये। कश्मीर हो गया हिन्दू से मुसलमान। योगियों का योग, ईश्वर के माध्यम मनुष्यों की शक्ति, जहाँ-की-तहाँ पड़ी रह गयी।

जगत् का कोई धर्म किसी साधु, सन्त, महात्मा, नबी, पैगम्बर, योगी एवं अवतार ने काल से अपनी रक्षा नहीं कर सका है और न करा सका है। धर्म स्वतः किसी की रक्षा करने में समर्थ नहीं हुआ है। इस्लाम की तलवार की शक्ति के सम्मुख मोरक्को से लाहौर तक के विशाल भू-भाग ने घुटना टेक दिया। यदि कहीं किसी ने उनकी रक्षा की तो स्वयं उनके कर्म ने, उनके साहस, उत्साह एवं उत्सर्ग ने। जिनकी वे उपासना करते रहे। जिनका नाम रटते-रटते जन्म बिता दिये थे। वे भूलकर भी अपने उपासकों की रक्षा करने नहीं आये।

किसी दिन के काश्मीरी हिन्दू हो गये मुसलमान। नाम बदल गया। काश्मीर की हवा नहीं बदली। पानी नहीं बदला। कृषि वही थी। भूख वही थी। प्यास वही थी। माता वही थी। पिता वही थे। सब कुछ वही था। केवल, जो मुख काश्मीर के मन्दिरों की ओर, गृह देवता की ओर, तुषार लिंगों की ओर, हरित वन श्रीयुक्त, तीर्थों की ओर कलकल बहते उज्ज्वल जल-मग्न नागों की ओर घूमता

वे बातें जो भारत में मात शताब्दियों तक गलत थी। वे आज कैसे ठीक हो गयी। सन् १९४७ ई० के पूर्व भूपाल आदि भारत स्थित मुसलिम रियासतो में हिन्दू नवीन मन्दिर निर्माण नही करा सकते थे। वही स्थिति आज पाकिस्तान में है। अन्य मुसलिम देवाधिराज तन्त्रो में है। ईश्वर इन सबका मूक द्रष्टा है सन्तानो को परस्पर एक दूसरे पर दमन करने से रोका नही। पिता कहे जाने वाले ईश्वर की विचित्र दशा है। उनकी सन्तानें परस्पर लडती है। मरती है। वह सर्व सत्ता सम्पन्न होते, जैसे अपने पुत्रों का वध देखता है। उनका बहता रक्त देखकर, उस कारुणिक को करूणा नही आयी। ऐसा है, तो नि सन्देह यह पिता क्रूर है। नृशस है। वह पिता नही है, जो अपनी सन्तानों का वध कराता है। मन्दिर, मठ, विहार, गिरजा, मस्जिद पवित्र स्थान अपनी सन्तानों से निर्माण कराकर, उन्ही से उन्हें नष्ट कराता है। एक बार एक को उठाता है। दूसरो को दूसरी बार, यह है, पिता ईश्वर की निरपेक्ष दृष्टि?

जापान में हीरोशिमा एव नागाशाकी नगर एटम बम्ब से नष्ट हो गये। अबोध शिशु, जिन्होंने पाप जाना ही नही था, नष्ट हो गये। केवल इसलिये नष्ट हुए कि वे वहाँ जन्म लिये थे। ईश्वर की इच्छा से वहाँ जन्म लिये थे। स्वय जन्म लेने के लिये स्वतत्र नही थे। उनकी मातायें मरी, वे निस्वार्थ भाव से सन्तानो को कोख मे लिये थी। अपने घरो में ईश्वर की प्रार्थना कर सोयी थी। परन्तु वे नष्ट हुयी। नगर नष्ट हुये। पशु, पक्षी नष्ट हुए। जो निर्दोष थे। किस अपराध के कारण वे नष्ट हुये? क्या कोई धर्मगुरु, ईश्वर और मनुष्य के बीच माध्यम बननेवाला कोई अपने ईश्वर से पूछकर, बता सकेगा?

द्वितीय विश्व युद्ध में पाँच करोड व्यक्ति हताहत हुये। यह सब हुआ, सर्वज्ञ ईश्वर की जानकारी में। ईश्वर के सब विशेषण, जैसे मिथ्या प्रमाणित हुये।

विचित्र स्थिति है। मानव की हत्या कर मानव रक्षा की कल्पना करता है। ईश्वर की पूजाकर, प्रार्थना कर बलि देकर, मन्नत मानकर, नरसहार करता है। मारता है। ईश्वर का नाम लेकर। मरता है, ईश्वर का नाम लेकर। दोनों कहते हैं—ईश्वर की इच्छा।

मुसलमानों का भारत में प्रवेश हुआ। वे अल्पसख्यक थे। उन्हें भय था। बहुसख्यक हिन्दू उन्हें आत्मसात कर जायेंगे। उनका नवविजित राज्य समाप्त कर देंगे। अपनी सल्तनत मजबूत करने के लिये, अपनी आबादी बढाकर, स्थिति सुरक्षित करने के लिये, ईश्वर के नाम का आश्रय लिया। धर्म का आश्रय लिया। धर्म बिना दर्शन बन गया, उनका साधन। उनके राजनीतिक ध्येयपूर्ति का एक मार्ग।

दारा शिकोह दार्शनिक था। धर्मनिरपेक्ष था। औरगजेब उसके स्थान पर राज्य चाहता था। उसने ईश्वर के नाम पर, धर्म की रक्षा के नाम पर, दारा शिकोह के नास्तिकवाद से सल्तनत की रक्षा के नाम पर, कट्टर पन्थियो का समर्थन प्राप्त किया। कट्टरता उग्र होती गयी। दारा की हत्या की गयी, धर्म के नाम पर। शाहजहाँ धर्म के नाम पर बन्दी बनाया गया। भाइयो की हत्या, भतीजो की हत्या धर्म के नाम पर हुई। आगरा के किला में दस वर्ष बन्दी बना शाहजहाँ आहें लेता मर गया। पिता एव भाई की मृत्यु पर औरगजेब के कट्टर पन्थी अनुयाइयों ने हर्ष मनाया।

फिरोज तुगलक ने भारत को मुस्लिम बनाने की कल्पना किया। क्योंकि उसमें स्वय एक जाट का रक्त था। मूल मुस्लिमो से भी ऊँचा उठना चाहता था। स्थिति सदृढ करने के लिए। कट्टर पन्थी वर्ग का समर्थन प्राप्त किया। कट्टरता की बलि वेदी पर लाखों हिन्दू बलिदान हो गये। मन्दिरों के शिखर, उनके कलश, मानवीय कला, मानवीय श्रद्धा के प्रतीक, घोर निनाद करते गिरे। परन्तु उनकी आवाज ईश्वर के कानों तक नही पहुँची। लेकिन अजाँ की आवाज कानों तक पहुँचती है। जैसे उसे दो कान थे।

एक से सुनता था, केवल अपने एक वर्ग की, और दूसरा कान रखता था बन्द। यह है, विचित्र एकेश्वरवाद ?

मुगल किसी दिन के बौद्ध थे। अपनी सत्ता, अपनी स्थिति, अपना राज्य सुदृढ़ करने के लिये, मुसलमान बन गये। राज्य की जनता मुसलमान थी। बिना जन समर्थन उनका राज्य, सुदृढ़ नहीं रह सकता था।

पाकिस्तान भारत से निकलकर बना। हिन्दू मुसलमान के नाम पर बना। इस कल्पना पर बना कि दो धर्मानुयायी एक साथ नहीं रह सकते। उनका अलग अल्लाह हैं। अलग इबादत का तरीका हैं। अलग आचार-विचार है। अतएव अलग राज्य होना चाहिए, राष्ट्र होना चाहिये, भाषा होनी चाहिए। बात थी राजनीतिक। उस पर चढ़ाया गया, साम्प्रदायिक रंग। बना दिया दो जातियों को पागल। धर्म का नारा, सम्प्रदाय का नारा, पाकिस्तान को एक सूत्र में पिरोकर नहीं रख सका। पाकिस्तान बिखर गया। बंगला देश में, मुसलिम जाति ने, मुसलिम जाति के एक वर्ग ने, दस लाख से ऊपर व्यक्तियों को मार डाला। दोनों पाकिस्तान ईकाइयाँ थी मुसलिम। दोनों मिलकर बनाये थे, पाकिस्तान। किन्तु उन्हें धर्म एक साथ नहीं रख सका। भाषा का प्रश्न उठा, वित्त का प्रश्न उठा, स्वायत्त शासन का प्रश्न उठा, शोषण का प्रश्न उठा, शोषित-शोषक का प्रश्न उठा। रक्त रंजित क्रान्ति हुयी। बन गया, बंगला देश—पाकिस्तान से अलग।

यह सब हुआ। होता रहेगा। जब कभी धर्म साधन बनेगा, माध्यम बनेगा, तो देश किंवां राष्ट्र रक्त की लाली से लाल हो उठेगा। विदेशी शत्रु भगाया जा सकता है। परन्तु यह शत्रु देश शरीर को दूषित कर देता है, गला देता है, क्षीण कर देता है। यूरोप में शताब्दियों चलता रोमन कैथोलिकों तथा प्रेटिस्टेण्टों का संघर्ष इसका ज्वलन्त उदाहरण है।

मुसलिम जगत का इतिहास साक्षी है। जिन्हें सहाबा कहते हैं। हज़रत अबूबकर, उमर, उसमान तथा अली चारों खलीफा शहीद किये गये। वे पैगम्बर के साथ कार्य किये थे। इस्लाम का प्रचार किये थे। वे ही एक के पश्चात दूसरे शहीद होते रहे। इस रक्त-पात की पूर्ण आहुति, जैसे पैगम्बर के नाती इमाम हुसैन की शहादत में हुई थी।

यूनान तथा रोम मूर्ति पूजक थे, इसाई धर्म के विरोधी नहीं थे, निरपेक्ष थे। मूर्ति के विरुद्ध जेहाद बोला गया, मूर्तियाँ खण्डित की गयीं, कुछ समुद्र में फेंक दी गयीं, कुछ गाड़ दी गयीं। कालान्तर में पुनः पुरातन यूनानी धर्म के स्थान पर, नवीन धर्म का उदय हुआ। जिसने देश को, जगत को, एक नवीन दिशा दिया। आज उसने पुराने समय से अधिक, मूर्ति पूजकों से अधिक, मूर्तियों का निर्माण किया है। प्रत्येक ग्रामों के चर्चों में, प्रभु ईशा की क्रास पर, माता मरियम की गोद में, बाइबिल सम्बन्धी गाथाओं, सन्तों के उत्सर्ग की मूर्तिकला, भित्तियों पर, स्तम्भों पर, लगी हैं। उनकी मूर्तियाँ सार्वजनिक स्थानों पर, महत्त्वपूर्ण स्थानों पर, लगायी जाने लगी। इसाई जगत के साधु सन्तों, देवियों के बलिदानों को स्मरण कराती, प्रस्तरों, धातुओं में अगणित छोटी-बड़ी मूर्तियों की शृंखलाएँ बन गयी। धर्म था मूर्ति विरोधी परन्तु बन गया मूर्ति समर्थक। मूर्तियों ने मूर्तियों का स्थान लिया, केवल नाम बदल कर।

उन मुसलमानों, उन ईसाइयों, उन मनुष्यों को कैसे दोष दिया जा सकता है ? वे एक विश्वास, एक दर्शन की निष्ठा पर उठते थे। यदि यह दर्शन, यह मूढ़ता, यह कुसंस्कार, मानव को असुर बनाता है, पशु बनाता है, प्रतिहिंसक बनाता है, तो वह दर्शन कैसे जगत में शान्ति स्थापित कर सकेगा ? यही है, भेद का कारण, यही है विषमता का कारण। इसका धर्म से सम्बन्ध नहीं है। इसका धर्म प्रवर्तकों से

सम्बन्ध नही है। इसका सम्बन्ध है, उन लोगों मे जिन्होंने धर्म को अपनी महत्त्वाकाक्षा का साधन बना लिया है। बुरी परम्परा की बेल, स्वार्थ दृष्टि से लगायी गयी है। लिप्सा से सिंचित हुयी है। वासना से पल्लवित हुयी है। प्रमाद से पुष्पित हुयी है और लद गयी है, उन्माद विष फल से।

इस परम्परा, इस दर्शन का शिकार बन गया, दुर्बल मनुष्य। विषमताओं में पिस गया, कुसंस्कारों में घिस गया, शोषणों में लुट गया। अपनी रक्षा, सुख कामना, भविष्य की आशा, मृत्युपरान्त स्वर्ग की आशा में, काल्पनिक जगत के झूले में झूलता रहा। इस दर्शन प्रवाह में, इस कुसंस्कार में, इस मोह में, बहता रहा। उस धारा में बहता गया, जहाँ से लौटना कठिन था। वह कहाँ से चला था, किसलिये चला था, भूल गया। प्रवाह उसका दर्शन बन गया। इस प्रवाह से निकलना चाहा। गति निश्चित करना चाहा। लौटना चाहा। किन्तु उसकी वह दिशा, दूसरों को पसन्द नही आयी। अतएव एक नवीन दर्शन बना। जो विरोध करेगा, मत से बाहर जाना चाहेगा, उसकी सजा होगी मौत—समाज उसे दण्ड देगा। राज्य उसे दण्ड देगा। उसे शक्ति के सम्मुख, भय के सम्मुख, झुकना पडेगा।

अपनी ही बनायी बेडी मानव के पैरो में पड गयी। वह बाध्य हो गया। दास हो गया। बन गया। एक बडी मशीन का पुरजा। जो चलता ही रहता है, रुकता नही। नियन्त्रित होता है, अपने ही कुसस्कारों से, कठोर परम्पराओं से।

दुर्बल मानव भयभीत हुआ, मृत्यु से। मृत्यु के भय में, कातर बन गया। उसका यह भय, उसकी यह कातरता, किसी अव्यक्त शक्ति पर, विश्वास करने के लिये, प्रेरित करती है। उसने मृत्यु का भयकर रूप देखा। शरीर का जड होना देखा। स्तब्ध होना देखा। यह सोच कर—उसकी वही दशा एक दिन होगी। इस स्थिति से बचना चाहता है। दूर भागना चाहता है। उसका मन अपनी विवशता पर, कातर हो जाता है। उस अव्यक्त शक्ति से भयभीत होता है, जिसके कारण मृत्यु होती है।

वह शरीर से, जीवित अवस्था में, उतना भयभीत नही होता, जितना मरने पर। सोचते ही काप उठता है। मृतक होगा। हिल डोल न सकेगा। मिट्टी में गाड दिया जायगा। राख बन कर उड जायगा। उस अव्यक्त शक्ति के सम्मुख होगा, जिसके कारण उसकी मृत्यु हुयी है। इस दुखद परिस्थिति से, बचने का विश्वास दिलाने वाले, आश्वासन देने वाले, मृत्यु को भगाने वाले ज्योतिषियों इन्द्रजालिकों पर विश्वास कर बैठा। इस विचित्र दर्शन की ओर अनायास आकर्षित हो गया। उन पर उसी प्रकार विश्वास किया, जिस प्रकार एक सरल चित्त व्यक्ति, ज्योतिषी या इन्द्रजालिक पर विश्वास कर बैठता है।

चिन्तन होता है। आत्म शरीर त्याग कर, कहां गयी ? आत्मा है या नही ? इसकी खोज मानव कर रहा है। इस यात्रा में वह, कही का कही पहुँच जाता है। जब उसे कोई मार्ग नही मिलता, कोई अन्त नही मिलता, दुख, व्याधि, जन्म, जरा, मृत्यु का कोई कारण नही मिलता, वह किसी अव्यक्त शक्ति पर, अपनी बुद्धि के स्थान पर, विवेक के स्थान पर, विश्वास के लिये, आशा के लिये, सन्तोष के लिये, कही न कही विवश हो जाता है। उसकी विवशता का लाभ उठाकर, दुर्बलता का लाभ उठाकर, भय का लाभ उठाकर, समाज उससे वह सब कार्य कराता है, जो स्वतन्त्र होने पर, मुक्त विचारक होने पर, न करता। इस प्रकार, एक प्रकार से कार्य करने की, एक प्रकार से सोचने की, परम्परा का क्रम रूढ हो जाता है। कल्पना की, चिन्तन की, कर्म की, सीमा सकुचित हो जाती है। वह स्वनिर्मित वातावरण का बन्दी बन जाता है। बाहर झांकना पाप समझता है, अपनी सीमा में फँस जाता है। विवेक जागृत होने पर, तडपता है। सद्बुद्धि उदय होने पर, घबडाता है। बाहर निकलना चाहता है। किन्तु कठोर सीमा बन्धन

से निकल नहीं पाता। अचेतन मन पर, प्रतिक्रिया होती है। बन जाता है। अपनी सीमा, अपने वातावरण का संकुचित, अनुदार प्राणी।

जोनराज ने अपनी आँखों से मन्दिर टूटना देखा। कलशों का गिरना देखा। भग्न प्रतिमाओं का रथ्या पर घसीटना देखा। ग्रन्थों की जल समाधि देखा। पुस्तकों की होली देखा। काश्मीर का हिन्दू से मुसलमान होना देखा। उसने देखा पुरातन का मृत स्वरूप एवं नये काश्मीर का उदय। देखते-देखते आँखों के समक्ष एक परम्परा लुप्त हुई, दूसरी उठी, आरती बुती, चिराग जले।

तथापि जोनराज सिकन्दर बुतशिकन को दोष नहीं देता, अलीशाह को दोष नहीं देता, सूहभट्ट को दोष नहीं देता। वह दोष देता है—उस दर्शन को, जिसकी प्रेरणा पर मानव बदल जाता है। वह महात्मा गांधी के उस दर्शन में विश्वास करता है, जो मानव की मानवता में विश्वास करता है। महात्मा जी भारत की आजादी के लिए संघर्ष किये। परन्तु अंग्रेज जाति के विरुद्ध नहीं थे। जो दर्शन मानव को दास बनाने में विश्वास करता था, साम्राज्यवाद में विश्वास करता था, उपनिवेशवाद में विश्वास करता था, शोषण में विश्वास करता था, उसके परिवर्तन होते ही, अंग्रेज बन गये—भारत के मित्र। आजादी देकर चले गये, अपने घर। आज वे हैं, उन्हीं भारतीयों के मित्र, जिनके कारण, उनका साम्राज्य टूटा था। जिनके कारण, उनका आर्थिक ढाँचा टूटा था। इसीलिये जोनराज दर्शन को दोष देता है, न कि किसी सुल्तान को, अथवा किसी व्यक्ति को।

प्रकृति क्रुद्ध होती है। तुषारपात होता है। तूफान आता है। जलप्लावन होता है। तुषारपात तुषार को नष्ट नहीं करता। वे आते हैं। अपने गोत्र में मिल जाते हैं।

परन्तु क्रुद्ध होने पर मनुष्य मारता है, मनुष्य को। मारता है, अपने गोत्र को। मारता है, अपनी जाति को। मारता है, राष्ट्र को। मनुष्य से अच्छे पशु हैं, पक्षी हैं।

पक्षी अपने गोत्र का नाश नहीं करते, उनमें मिल जाते हैं। साथ उड़ते हैं—एक साथ चारा चुगते हैं। साथ कलरव करते हैं। साथ बसेरा लेते हैं। पशु समूह वन में रहते हैं। साथ चरते हैं, साथ जलाशय जाते हैं, साथ लौटते हैं, साथ विश्राम करते हैं।

धर्मोन्माद में देश जला है। जाति जली है। पुराना समाज टूटा है, नया समाज बना है। नया दर्शन स्वीकार तथा पुराना भूला गया है। यदि नवीन दर्शन ग्रहण कर्ता को समाज बहिष्कृत, जातिच्युत करता है, विधर्मी करार देता है, उपेक्षा करता है, तो वह पुराने समाज को नष्ट कर, नवीन साँचे में समाज को ढालना चाहता है। इसलिये कि कोई समाजच्युत, जाति बहिष्कृत, अजाती, विधर्मी, कहने वाला न रह जाय।

सूह ( सिंह ) भट्ट ब्राह्मण था। उसने अपने बहन का विवाह विदेशी मुसलमान मीर अली हमदानी से किया। धर्म परिवर्तन किया। सत्ता लोलुप था। उनके दल में मिला, जो सत्ताधारी थे। मन्त्रित्व पद उसे प्रिय था। मुस्लिम सत्ताधारियों से भी श्रेष्ठ मुसलिम, अपने को प्रमाणित करना चाहा। उसके साथ जो ब्राह्मण नहीं आये, उन्हें तलवार की नोक पर, मुसलिम समाज में मिलाया। जबर्दस्ती मुसलमान बनाया। जिन देवताओं की पूजा करता था, उन्हें पाषाण खण्ड मात्र समझ कर, भंग किया। उसे मूर्ति भंग, मन्दिर भंग, जाति भंग में रस मिलने लगा। नवीन दर्शन के उत्साह में उसने दर्शन किया, उस दर्शन का, जो काश्मीर को केवल एक ही दर्शन में ढालना चाहता था। किन्तु वह दर्शन नहीं था।

वह था, दर्शन का विकृत रूप। खट्टे दूध की तरह था। अमृत नही था, विष था। इस दर्शनविष ने सर्वस्व नाश किया, जो उसका अपना था, काश्मीर का था।

काश्मीर एव अन्य देशो के धार्मिक उन्माद की प्रक्रियाओ में अन्तर है। दूसरे देश में, दूसरे देश के लोग, दूसरी जाति के लोग विजय करते है, तो वे उस देश में अपना समर्थक, अपना सहायक, अपना साथी खोजते है। एक दल बनाते है। एक गोल बनाते है। यह दल, यह गोल लोकतन्त्रीय साँचे में नही ढला होता, जो देश को शक्ति देता है, जो लोक को सन्तुलित रखता है। उसका ढाँचा देवाधिराज तन्त्रीय सदृश निरकुश होता है। पूर्व काल में राजा का धर्म राष्ट्र का धम बन जाता था। जहाँ धर्म लादा नही जा सकता था, वहाँ राजकीय साधनो का प्रयोग होता था। अधिक से अधिक लोगों को अपने मत में लाना गौरव की बात थी। व्यक्ति के समान राष्ट्र का एक धर्म बन जाता था। दूसरे धर्म के विकास अथवा रक्षा की गुजाइश कम हो जाती थी। राजधर्म देश का धर्म बन जाता था। जनता पुरातन धर्म त्याग कर, शासको के धर्म का अनुकरण करती थी।

ईशाइयों ने यही किया। जहाँ राज्य का झण्डा गया, वहाँ उनका धर्म गया। मुसलमानों ने इस प्रक्रिया को अपरिष्कृत रूप में और ईशाइयों ने सुसस्कृत रूप में किया। परिणाम दोनो का एक ही था—धर्म प्रवर्तन। मुसलमान जहाँ गये, वहाँ उनका धर्म राज्य प्रश्रय में, शस्त्र छाया में, प्रशासन छाया में, पल्लवित हुआ। इस प्रक्रिया से हिन्दू, यहूदी, पारसी दूर रहे। उनका दर्शन प्रवर्तक नही था। वे प्रवर्तक वादी नही थे। सख्या में विश्वास नही करते थे। सीमा विस्तार में विश्वास नही करते थे।

प्रवर्तक दर्शनवादी अन्ध-विश्वास करते है। विश्वास से कार्य करते है। समझते है। उनका ही एकमात्र विश्वास है। जिस पर विश्वास किया जा सकता है। वही सच्चा है। वही ईमान है। उसे जो मानता है, मित्र है। जो अस्वीकार करता है, पापी है। गुनहगार है। ईश्वर का सान्निध्य प्राप्त करने का अधिकारी नही है। इस दर्शन ने इस विश्वास ने सख्या बढाने मे होड लगा दी।

उसने प्रत्येक व्यक्ति को मिल्लत का, चर्च का, सघ का अग मान लिया। इस मिल्लत से, इस चर्च से, इस सघ से जो अलग था, उसकी स्थिति शून्यवत थी। उन्हें अस्तित्व का अधिकार नही था। उनका स्थान दोजख था, जहन्नुम था। हेल था। जहाँ वे अनन्तकाल तक यातना भोगते रहेंगे, जलते रहेंगे।

इस जगत में पशु, पक्षी, जीव-जन्तु रह सकते थे, परन्तु मनुष्य नही रह सकते थे, जो उसके समर्थक नही थे। इस दर्शन ने मानव की स्थिति, पशु, पक्षी एव जन्तुओं से भी हेय बना दी।

हिन्दू किसी को अपने धर्म में स्वीकार नही करते। मिलाते नही, अपना मत लादते नहीं, अपना विश्वास दूसरे पर थोपते नही, अपनी सख्या बढाने की चिन्ता नही करते। तथापि उन्हें रहने देना, उनका अस्तित्व किसी प्रकार रहने देना, दण्डनीय माना गया। उनसे भी भय किया गया। यह भय भविष्य का था। भविष्य में जो सन्ताने होंगी, उनसे वर्ग विशेष की सख्या बढेगी। अतएव उन्हें समूल नष्ट करना, उचित समझा गया। भविष्य की सन्तानो का भाग्य उन पर, भविष्य पर, न छोडकर, तात्कालिक निर्णय ले लिया गया। उन्हें किसी एक दर्शन मे भविष्य की अगणित शताब्दियो तक के लिये बन्धक रख दिया।

गैर मुसलिमो को हारने का मूल्य जजिया से चुकाना पडता था। हिन्दू अपवित्र माना जाता था। काफिर माना जाता था। यदि वह धर्म परिवर्तन कर, अपना नाम बदलकर, कहने के लिये विश्वास कर, लेता था, तो पवित्र था। जीने का अधिकारी था। मरने पर उसकी तरफ से ईश्वर के समीप, कोई वकालत कर सकता था। उसके गुनाह माफ करा सकता था।

यह विचित्र दर्शन था। उसे तर्क की तुला पर तौलना कठिन था। विश्वास की बात थी। विश्वास, तर्क एवं विवेक की दिशायें भिन्न होती हैं। आजन्म पुण्यकर्मा, आजन्म सत्यवादी, आजन्म त्यागी, आजन्म उपकारी, कर्मशील व्यक्ति होने पर भी, उसे उस समय तक मुक्ति नहीं मिल सकती थी, जब तक वह विश्वास नहीं लाता था। इस दर्शन का विश्वासी, परधर्मी को, चाहे अत्याचार कर, चाहे दमन कर, चाहे प्रलोभित कर, चाहे फुसलाकर, चाहे जबरदस्ती कर, अपने दर्शन में सम्मिलित करता है, तो वह ईमानदारी से विश्वास करता है। एक कुपथ गामी, एक नास्तिक, एक काफिर, एक गुमराह को ईमान पर लाया है। धर्म पर लाया है, सुपथ पर लाया है, उसके गुनाहों को माफ कराया है। स्वर्ग का द्वार खुलवाया है। उपकार किया है। नरकाग्नि से रक्षा किया है। लोक-परलोक दोनों बनाया है। इस विश्वास के कारण, परधर्मी की पुकार, चीत्कार, करुण क्रन्दन, विधवाओं की सिसकियाँ, अवलाओं की कातरता का, उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। क्या इसमें मनुष्य का दोष है? अथवा उसका दोष है, जो उसके दिमाग में इस तरह की बातें भर दी है?

धर्म को आर्थिक लाभ का साधन बनाने वाले अधम हैं। आर्थिक लाभ की दृष्टि से बहुतों ने ईसाई एवं मुसलिम धर्म स्वीकार किया है। लाभ उठाया है। ऐश्वर्य प्राप्त किया है। आज भी अनेक कारखानों चायबागानों, तथा केरल में मुसलिम या ईसाई होने पर कारखानों एवं सेवा में स्थान मिल जाता है। काशी में बुनकरों के यहाँ प्रायः यह होता रहता है। छोटे गरीब लड़के काम पर रख लिये जाते हैं, बड़े होने पर विवाहादि कर, उन्हें मुसलमान बना लिया जाता है। उन्हें अपने ही घर में रख लेते हैं। छोटे-छोटे बच्चों को खरीदकर, अथवा गुलाम बनाकर, अथवा विवाह कर, मुसलिम किंवा ईसाई बनाने की प्रथा प्रारम्भ से ही प्रचलित रही है। महिलायें इस प्रक्रिया की सबसे अधिक शिकार हुयी हैं। उन्हें बेचना, उनसे हरम भर देना, उनसे बाँदी का काम लेना, साधारण बातें थी। सम्पूर्ण मुसलिम जगत में, पूर्वकालीन ईसाई जगत में, दास प्रथा प्रचलित थी। भारत तथा विश्व के अनेक सुल्तान किसी समय के गुलाम थे।

गुलामों की स्थिति दयनीय थी। गुलाम जब किसी प्रकार शक्ति में आये, तो प्रतिकार की दृष्टि से, प्रतिहिंसा की दृष्टि से, अपने नवीन धर्म, स्वामी के प्रति, पूर्ण निष्ठा, प्रकट करने के लिये, विजातियों पर अत्याचार किये हैं। उसी प्रकार या उससे बढ़कर अत्याचार किये हैं, जैसा अत्याचार, उनके कुल, जाति पर कभी किया गया था।

उन्होंने देखा था, स्त्रियों का अपहरण, उन्होंने देखा था, जबरदस्ती धर्म परिवर्तन। उन्होंने देखा था, लूट-पाट। उन्होंने देखा था, मूर्ति भंग। उन पर वही संस्कार पड़ा था। शक्ति में आते ही, अवसर पाते ही, अदम्य उत्साह के साथ, उन्होंने उन्हीं पर उसका प्रयोग किया, जिनके वे कभी अंग थे। वे ईर्ष्या करने लगे, अपनी जाति-बन्धुओं से, जो कठिनाइयों के बावजूद अपनी जाति में थे, उन्हें उनकी यह स्थिति पसन्द न आयी। वे उन सभी साधनों को स्वीकार किये, जो उन्हें उनके धर्म से विरत कर, नवीन समाज में सम्मिलित करने में सहायक थे।

कुछ इस प्रकार की बातें काश्मीर में हुई। विदेशी मुसलमान, अपने देशों से उत्पाटित, उद्वासित होकर, काश्मीर में शरण लिये थे। स्थिति सुदृढ़, एवं सुखद होते ही, वे वही अत्याचार काश्मीरियों पर करने लगे, जिनके वे शिकार बन चुके थे। सैय्यदों के अत्याचार का, उनकी क्रूरता का, आँखों देखा जो वर्णन जोनराज एवं श्रीवर करता है, उन्हें पढ़कर, रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

काश्मीर के मुसलिम हो जाने पर, स्थिति सुधारने के स्थान पर, बिगड़ गयी। आशा की गयी

थी। एक मिल्लत में हो जाने पर, पारस्परिक द्वेष, ईर्ष्या तथा संघर्ष बन्द हो जायगे। परन्तु बात उलटी हुयी। काश्मीर में जब तक हिन्दू थे, सुल्तानो की निरंकुशता पर, स्वेच्छाचारिता पर, अंकुश था। वे हिन्दुओ का आदर करते थे। उनका सहयोग प्राप्त करते थे।

तथापि उन्हे भय था। हिन्दू उठ सकते थे। राज्य उलट सकता था। यह भय व्याप्त था, विदेशी मुसलिम प्रशासकीय अधिकारियो मे। जिनकी परम्परा गैर काश्मीरी थी। जिनकी संस्कृति, सभ्यता एवं इतिहास काश्मीरी नही था। अतएव सबको मुसलमान बनाने का कार्य सुयोजित रूप से किया गया। इसी प्रकार योजनाबद्ध प्रयास तुर्किस्तान, अफगानिस्तान, फारस तथा अरब देशो मे हो चुका था। इण्डोनेशिया में पूर्णतया तथा मलेशिया में आंशिक रूप से हुआ था।

सबके मुसलिम धर्म मे दीक्षित होने पर भी स्थिति में सुधार नही हुआ। स्थिति बिगड़ती गयी। शाहमीर वंशज सुल्तानो का हाथ अपने वंशजो एवं बन्धुओ के रक्तो से रंजित हुआ हैं। उनमें वह संघर्ष हुआ, वह रक्तपात हुआ, वह नृशंस हत्यायें हुई, क्रूरता की वे सीमायें पार की गयी, जो काश्मीर के लिये नवीन थी। जिन्हें न किसी ने सुना था और न देखा। एक ही दर्शन के अनुयायी बनने पर भी समस्यायें उलझती गयी। जो अत्याचार, अन्याय, क्रूरता एवं कठोर व्यवहार हिन्दुओ के साथ किया गया था, वही मुसलमान सत्ताधारी दूसरे मुसलमानो पर करने लगे।

एक ही दर्शन मे अनेक शाखायें, उपशाखायें निकली। वे परस्पर विरोधी थी। जो गति ईसाई जाति की यूरोप में हुयी, वही एशिया एवं अफ्रीका मे मुसलमानो की हुयी। मुसलमान सुल्तान अपने ही सहधर्मी सुल्तान एवं शासको से लडने लगे। पैगम्बर ने एक मुसलिम जगत की कल्पना की थी। परन्तु उन्ही के अनुयायी मुसलिम वर्गो में बंट गये। सल्तनत के लिये, शक्ति के लिये, पिता ने पुत्र की, पुत्र ने पिता की, भाई ने भाई की हत्या की। आँख फोडा। अंग-भंग किया और क्या नृशंस कर्म नही किये, यह याद करना होगा।

मुसलिम देशों में लोकतन्त्र का अभाव, आये दिन होते रक्त-पात, प्रासादीय विप्लव, साधारण बातें हो गयी है। यही भूतकाल में हुआ था। गजनी, गोरी, गुलाम, खिलजी, सैय्यद, तुगलक, लोदी, पठान, मुगल वंशो का लोप हो गया। उनके गोत्र का लोप हो गया। एक वंश से सत्ता प्राप्त करने के साथ ही दूसरे का वंशबीज लोप कर देता था। कतिपय मुगलवंशीय एवं नबाब वंशीय आज इसलिये बिखरे दिखायी देते हैं कि मुगलो तथा नवाबों के पश्चात सत्ता अंग्रेजों के हाथो में आयी। अंग्रेजो को मुगलो और नवाबों से भय नही था। उन्हे पेन्शन या जागीर देकर, उनकी शक्ति समाप्त कर दी गयी। अंग्रेजो की परम्परा लोकतन्त्रीय थी। उन्होंने संहारक नीति का आश्रय नही लिया।

आश्चर्य है। इन हत्याओ, इन अन्यायों, इन रक्तपातो को देखती हुयी, जनता निरपेक्ष शताब्दियों तक बैठी रही। उसने कभी हत्याओं के विरुद्ध, विप्लव के विरुद्ध, आवाज नही उठायी। कारण स्पष्ट था। उनके करने वाले एक दर्शन का आड लेते थे। पश्चिम पाकिस्तान में चालीस प्रतिशत हिन्दू थे, इस समय वहाँ दो प्रतिशत हिन्दू कठिनाई से रह गये। बहुसंख्यक मुस्लिम जनता ने कभी आवाज नही उठायी। अल्पसंख्यकों पर क्यो अत्याचार किया जा रहा था? उन्हें निर्मूल करने की नीति क्यों राज्य ने स्वीकार किया था?

मुझे स्मरण है। पाकिस्तान बनते ही, मरने या मुसलिम धर्म स्वीकार करने का विकल्प हिन्दुओं के समक्ष रखा गया। मैं शरणार्थी शिविर काशी का संयोजक था। काश्मीर के हजारो शरणार्थी काशी तथा काशी के समीप चुनार के प्रसिद्ध किले में रखे गये थे। मैं वहाँ प्रायः जाया करता था। उनसे बातें करता

था। मुझे वहाँ छपे फार्म तवलीग के मिले। उस पर लिखा था। अमुक व्यक्ति का हिन्दू नाम अमुक था और मुसलिम मजहब स्वीकार करने पर अमुक नाम रखा गया है। उसमें हिदायत छपी थी। सर्टिफिकेट प्राप्त व्यक्ति मुसलिम हो गया है, इसलिये उसके जान माल की हिफाजत करना, हर मुसलमान का फर्ज था। हर तरह की मदद दी जाय। किन्तु भारत में यही वात मुसलमानों के साथ नहीं की गयी। हिन्दू धर्म परिवर्तन में विश्वास नहीं करता। भारत में आवास, रक्षा, सहायता का आश्वासन सवको दिया गया था। यही कारण है कि भारत में मुसलमान नौ करोड़ रह गये। परन्तु पश्चिमी पाकिस्तान में समाप्त हो गये। वंगला देश में करोड़ों से घटकर कुछ लाख रह गये। वे भी प्रायः समाप्ति के कगार पर हैं।

पाकिस्तान में जवर्दस्ती धर्म परिवर्तन के विरुद्ध आवाज न उठने का कारण था। मुसलिम जनता ने सोचा। उसके जमाअत की संख्या वढ़ी। इसलिए उसने अत्याचार नहीं माना। किसी स्त्री को जवर्दस्ती मुसलमान वना कर, उसके साथ विवाह कर लिया गया, तो उसे मान्यता दे दी गयी। ईमान यदि जवर्दस्ती भी मनवाया जाय, तो ईश्वर के सम्मुख ठीक है। पाप नहीं पुण्य है। भारत तथा पाकिस्तान में इस प्रकार अपहृत महिलाओं की खोज के लिये, उन्हें उनके घर पहुँचाने के लिये, समिति वनी। भारत से मुसलिम महिलायें तो पाकिस्तान खोजकर भेजी गयीं परन्तु पाकिस्तान में कुछ प्रगति नहीं हुई। समिति तोड़ दी गयी।

प्रतिरोध के अभाव का एक कारण और है। जो कुछ होता है। किसी अव्यक्त शक्ति के संकेत से होता है। एक सुल्तान या एक शासक किसी को मारकर, सत्ता हस्तगत करता है, तो उसे उसी शक्ति की इच्छा समझी जाती है। जिसके संकेत पर जगत चलता है। एक सुल्तान की हत्या होती है। दूसरा गद्दी पर वैठता है। उसकी हत्या होती है। तीसरा वैठता है। यह सव पूर्व निश्चित मान लिया गया है। किस्मत है। इस दृढ़ विश्वास के कारण रक्तपात, उत्तराधिकार, हत्याओं के विरुद्ध आवाज नहीं उठाया, विप्लव नहीं किया। यह काम समझ लिया गया, एक वर्ग का। जिसका पेशा शासन था। वे ही परस्पर लड़ते थे, झगड़ते थे, उलझते थे। जनता निरपेक्ष उनका तमाशा देखती थी। काश्मीर के सन्दर्भ में यह अक्षरशः सत्य सिद्ध होता है। किन्तु इस निरपेक्ष नीति के कारण, सवसे अधिक किसी ने कष्ट उठाया है तो वह जनता है। वही उजड़ती थी। वही भस्म होती थी। वही लुटती थी। शोषण होता था। विकसित नही होती थी। मुसलिम देशों में भयंकर गरीवी का यह एक कारण है। वहाँ या तो वहुत अमीर हैं या अत्यन्त गरीव। मध्यम वर्ग नगण्य है। जहाँ मध्यम वर्ग नहीं होता, वहाँ लोकतन्त्र पनपता नहीं।

काश्मीर में अन्तिम हिन्दू रानी एवं शासिका कोटा रानी की निर्मम हत्या हुयी। जनता निरपेक्ष वैठी रही। परिणाम हुआ। वही उजड़ी। वही नष्ट हुयी। पुरातन कश्मीर नष्ट हुआ। हिन्दुओं के लिये यदि यह दुःखान्त घटना थी, तो शाहमीर एवं मुसलिम जगत के लिये मंगल दिन था। शुभ घड़ी थी। हर्षोल्लास मय, उत्साह मय, उमंग मय अवसर था। दारुल हरव से दारुल इसलाम वनते, काश्मीर का नव-जीवन था। कुफ्र का अन्त था। ईमान का उदय था।

सिकन्दर वुतशिकन, अलीशाह एवं नव मुसलिम सूह भट्ट के जुल्मों के खिलाफ जनता उठी नहीं। वलिदान नहीं की। उसे कीमत भयंकर अत्याचारों के सहन से अदा करनी पड़ी। इस अत्याचार के विरोध में तत्कालीन सीमान्त देश अथवा भारत के किसी राज्य से आवाज नहीं उठी। जनता जवर्दस्ती मुसलिम धर्म में दीक्षित की जा रही थी। पुण्य कार्य था। ईश्वर का कार्य था। सवाव का कार्य था। दीन का कार्य था। इसी दर्शन में भारत विभाजन के समय हिन्दुस्तान-पाकिस्तान के एक वर्ग को धर्मोन्मादी वना

दिया था। अत्याचार हुआ। लूट पाट हुई। पडोसी बेगाने बने। शरणार्थियो का वह कारवाँ चला, जिसकी कल्पना विश्व में नही किया था।

जनता में प्रतिरोध की शक्ति क्षीण होने पर, जनता नत मस्तक होकर, अन्याय एव अत्याचार सह लेती है, चुप रहती है, वह सब कुछ स्वीकार कर लेती है, जो उससे मनवाया जाता है। मेवाड तथा राजस्थान में जनता सघर्ष करती रही। सस्कृति एव सम्यता की रक्षा अपने घर बार के साथ करती रही। काश्मीर में शाहमीर का शासन घापित हुआ। जनता ने प्रतिरोध नही किया। मूक बन गयी। दबती गयी। दमन सहती गयी। उठने का नाम नही लिया। राज्य अपना दर्शन उस पर लादने लगा। धीरे-धीरे आवादी का अनुपात उलट गया। काश्मीर उपत्यका में मुसलमान ९० और हिन्दू १० प्रतिशत रह गये।

*अन्याय एव दमन की अभ्यस्त जनता घास की तरह कटती है।* उसके प्रति कोई सहानुभूति प्रकट नही करता। उसके लिये कोई आवाज नही उठाता। क्योकि उसकी आवाज स्वय बन्द हो जाती है, उस पर एक के पश्चात दूसरे शासक आते हैं। सबका शासन वह नत मस्तक स्वीकार करती है।

काश्मीर में हिन्दू राज, चार हजार चार सौ पन्द्रह वर्षों तक स्थित रहा। परन्तु पाँच शताब्दियो में शाहमीर, चक, मुगल, अफगान, सिख तथा डोगरा वशो ने अपना अध्याय खोला और बन्द किया। जनता निरपेक्ष बैठी रही। उसने समझ लिया। शासन करना कुछ लोगो का पेशा था। उनका व्यवसाय था, जो तलवार उठाते थे। तलवार पर भरोसा करते थे। तलवार का उत्तर तलवार से जनता जब नही देती, अन्याय के विरुद्ध तलवार नही उठाती, तो दूसरे ही तलवार का उत्तर तलवार से देने लगते हैं। काश्मीर में एक पेशेवर शासक तलवार झुकाता जाता था। दूसरा नगी तलवार लिये आता था। तलवारो की खनखनाहट में जनता तिलमिला कर रह गयी। कुछ कर न सकी।

भारत में यही हुआ। मुसलिम शासन स्थापित होने पर, दिल्ली की गद्दी के लिये, मुसलमान परस्पर लडते रहे। गजनी, गोरी, गुलाम, सैय्यद, तुगलक, लोदी, पठान, मुगल सब मुसलमान थे। सबने एक दूसरे के खून से हाथ रगा था। उनका धर्म, उनका कर्म, उनका दर्शन उन्हें युद्ध से, रक्तपात से, विरत नही कर सका। वे हिंसक पशु सदृश, आततायी सदृश, प्रतिशोध एव प्रतिहिंसा की मूर्ति बनकर, परस्पर जूझते रहे। सुल्तानो ने जिन सूबेदारो को नियुक्त किया। वे उनके विरुद्ध तलवार खीचते थे। खुद मुख्तार बनते थे।

आन्तरिक एव बाह्य युद्धो में शताब्दियो तक भारत झुलसता रहा। जो दर्शन काफिरो, जिम्मियो गुमराहों और गैर मुसलिमो के खिलाफ हथियार उठाने की इजाजत देता था, वही परस्पर एक दूसरे के विरुद्ध हथियार उठाने की इजाजत देने लगा। फतह पर तख्त, हारने पर मिलता था तख्या। इस दर्शन की कठोरता ने, प्रतिहिंसक प्रवृत्ति ने, मनुष्य को कठोर बना दिया। उसके जो अनुकूल था, वह क्षम्य था। जो प्रतिकूल था, विरोधी था, उसे अस्तित्व का भी अधिकार नही था।

इस दर्शन ने विवेक पर परदा डाल दिया। विश्वास सीमित कर दिया। निष्ठा को सकुचित बना दिया। बुद्धि की सीमा बना दी। सीमा सकुचित होते होते स्व पर केन्द्रित हो गयी। इस स्वार्थ परता ने मानव की नैतिकता का हरण किया। उसके सम्मुख रह गया—वह और उसका स्वार्थ। इस स्वार्थ से जो भी टकराया, उसे चकनाचूर करने का सकल्प कर लिया।

जैनुल आबदीन आदर्श सुल्तान था। मानव था। परन्तु उसके पुत्र, उसके खून के प्यासे थे। ममता को तिलाजलि, राज्यपद प्राप्ति लाभ में दे दिये थे। एक गरीब अपने पिता के लिये अपने प्राण की

वाजी लगाता है, सर्वस्व वलिदान करता है। परन्तु भारत में अनेक सुल्तानों एवं वादशाहों के शाहजादों ने अपने पिता को, भाइयों को, पुत्रों को, शान्ति पूर्वक जीने नहीं दिया है। जीवन के अन्तिम चरण में सुल्तान जैनुल आवदीन देश से, जाति से, स्वयं अपने से, जीवन से, खिन्न हो गया, विरक्त हो गया। विवेकशील हिन्दू, उदार मुसलमान, उसकी प्रशंसा करते थे। परन्तु रक्त सम्वन्ध से सम्वन्धित, सैय्यद उसके विरुद्ध षडयंत्र करते थे।

सैय्यद और काश्मीरी दोनों दल मुसलमान थे। सैय्यद कट्टर मुसलमान थे। मुसलिम काश्मीरी भी कट्टर मुसलमान थे। उनकी धार्मिक कट्टरता, उन्हें संघर्ष से नहीं वचा सकी। हिन्दुओं के निरपेक्ष होने पर, शक्तिहीन होने पर, राजनीति में स्थान न होने पर, सैय्यद दल काश्मीरी मुसलमानों से लड़ने लगा, उनकी रही-सही ताकत भी खतम करने पर तुल गया।

वात और आगे वढ़ी। काश्मीरी मुसलिम समाज में शिया हो गये, नूरवख्शी हो गये, उनमें अनेक मत-मतान्तर हो गये। वे परस्पर मिल न सके, संघर्ष हुआ, खून वहा। दुनियाँ की कोई ताकत उन्हें साम्प्रदायिक खूरेजी से रोक न सकी। शिया चकों ने सुन्नी शाहमीर वंश से राज्य प्राप्त किया। काश्मीर में चक वंश स्थापित हुआ। शिया चकों से राजसत्ता सुन्नी मुगलों ने लिया। औरंगजेव ने शिया सम्प्रदाय के विरुद्ध आवाज वुलन्द किया। यह अशुभ आवाज समस्त भारत में गूँज उठी। जनता आवाज सुनती रही। चुप रही। शियों का, गैर सुन्नियों का, दमन होता रहा।

अफगानों का आगमन हुआ। इन्होंने काश्मीर को खूव लूटा। मुसलमान होने पर भी उन्हें काश्मीरी मुसलमानों पर दया नहीं आयी। उनका धर्म, सधर्मियों को लूटने से विरत नहीं कर सका। उनका उत्पीड़न उनका दमन, नहीं रोक सका। उत्पीड़क एवं उत्पीड़ित सधर्मी थे। परन्तु उनका दर्शन उनमें ममता, सौहार्द, भ्रातृत्व उत्पन्न नहीं कर सका।

मिल्लत का भाई चारा का, एक सम्प्रदाय का, नारा गैर मुसलिमों के उत्पीड़न तक सीमित रह गया, मसजिद और नमाजों तक सीमित रह गया। राजनीति में, सयासत में, प्रवेश नहीं किया। एक मिल्लत ने, उनमें परस्पर करुण एवं स्नेह सृजन नहीं किया। स्वार्थों के टक्कर में, भौतिक लाभों में, राज लिप्सा में, वह केवल आदर्श मात्र वनकर रह गया। उन्हें क्रूरता से लोग विरत नहीं कर सके।

जनता के क्षोभ से वचने के लिये, मुसलिम शासकों ने सर्वदा जनता का ध्यान एक ओर से हटाकर दूसरी ओर मोड़ा है। मुसलिम देशों में असन्तोष वढ़ता है, तो अल्प संख्यकों तथा गैर मुसलमानों के दमन, जिहाद, खतरे का नारा वुलन्द कर, वास्तविकता पर परदा डाला जाता है। जनता की भावनाओं का फायदा उठाकर, स्थिति सुदृढ़ की जाती है। कट्टर पन्थी खुलकर उठते हैं। गैर मुसलिमों को परेशान करते हैं। जनता खामोश रहती है। वह धर्म के, दर्शन के, आशाप्रद नारे में, विवेक त्याग देती है।

यूरोप विकसित है। प्रगतिशील है। महाद्वीप है। इस अणु युग में, द्वितीय महायुद्ध के पश्चात्, चन्द्रलोक पहुँचने के पश्चात्, जर्मनी इटली, फ्रान्स आदि देशों में क्रिश्चियन नाम पर, राजनीतिक दल वने हैं। जर्मनी में क्रिश्चियन डिमोक्रिटिक पार्टी की सत्ता है। यहीं अवस्था इटली तथा अन्य देशों की है। धर्म के नाम पर दल वने हैं। उनके नाम पर मत माँगा गया है। समर्थन प्राप्त किया गया है। लोकतन्त्र में धर्म घसीटा गया है। अल्प संख्यकों की स्थिति दुःखद वना दी गयी है। रूस जैसे कम्युनिस्ट देश से भी यहूदियों को भागना पड़ा है। जहाँ धर्म का राजनीति में, सामाजिक जीवन में, कोई स्थान नहीं है।

अल्पसंख्यक यहूदी यूरोप से भागकर, फिलस्तीन में आवाद हुये। फिलस्तीन उदीयमान राष्ट्र

बन गया। यहूदी जिनका कोई देश नही था। उन्हें एक देश मिला। धर्म के नाम पर राष्ट्र बना। लोकतन्त्रीय राज्य न होकर, देवाधि तन्त्र बना। अरब राज्यो तथा इसराइल में सर्वदा सघर्ष की स्थिति बनी रहती है। एक दूसरे को नष्ट करने की योजना बनाते रहते है।

राजनीति एव धर्म का जब एकाकार होता है, तो उसका परिणाम उदार न होकर होता है— सकीर्ण। वह इतना सकीर्ण होता है कि स्व केन्द्रित हो जाता है। उसमें सहिष्णुता का स्थान नही रहता। राज्य केवल एक सम्प्रदाय के अनुशासन से अनुशासित होता है। राष्ट्र का एक धर्म बन जाता है। दुनियाँ के ९९ प्रतिशत मुसलिम देशो ने अपने राष्ट्र को इस्लामी राज्य घोषित किया है। जब दूसरा देश उनका अनुकरण कर, अपने राष्ट्र को बौद्ध, यहूदी या ईसाई घोषित करता है, तो मुसलमानो को बुरा लगता है, वे विरोध करते है। प्रत्येक राष्ट्र धर्म विशेष को वरीयता देता है, उसमें दूसरे धर्मों की स्थिति सहयोगी की नही रहती।

मुसलिम देवाधिराज के प्रतिमान पर, ईसाइयों ने यूरोप में कुछ उदार नीति चलायी। परिणाम हुआ। यूरोप से यहूदी निष्कामित किये गये। मुसलिम राष्ट्र यूरोप से समाप्त किये गये। केवल तुर्की में मुसलिम राष्ट्र, एक कोने में बच गया। ईसाइयो में भी सम्प्रदाय बनते गये। रोमन कैथोलिक, ग्रीक अर्थो डाक्स चर्च तथा प्रोटेस्टेण्ट में ईसाई जगत बढ गया। प्रोटेस्टेण्ट भी अनेक उप वर्गों में विभाजित होते गये। प्रोटेस्टेण्ट तथा अन्य रोमन कैथालिकों में भयकर सघर्ष हुआ। उन सघर्षों में राज्य ने सक्रिय भाग लिया। विभिन्न सम्प्रदायो में भयकर सघर्ष हुआ। ब्रिटेन में कानून बन गया। राष्ट्र का राजा या रानी केवल प्रोटेस्टेण्ट होगी। अमेरिका उपनिवेश बनने का कारण है। प्रोटेस्टेण्ट मतानुयायी यूरोप में सघर्ष बिना नही रह सकते थे। उन्होंने अपने मत के लिए, स्वतन्त्र जीवन निर्वाह के लिए, अमेरिका को उपनिवेश बना लिया।

आयरलैण्ड का ही एक भूभाग अलस्टर है। आयरलैण्ड के निवासी रोमन कैथोलिक तथा अलस्टर के प्रोटेस्टेण्ट है। दोनो एक ही भूखण्ड के भाग है। दोनो की प्राकृतिक सीमा, एक है। एक ही द्वीप निवासी है। एक राष्ट्र नही बन सके। अलस्टर में प्रोटेस्टेण्ट तथा आयरलैण्ड में रोमन कैथोलिकों का बहुमत है। उनमें सर्वदा सघर्ष एव तनाव की स्थिति बनी रहती है। साम्प्रदायिकता बढती गयी। परिस्थिति यहाँ तक बिगडी कि फ्रान्स, आस्ट्रेलिया आदि राज्यों ने कानून बना दिया कि राजकीय विद्यालयो में शिक्षा धर्म निरपेक्ष किवा लौकिक होगी।

शिया सम्प्रदाय में बोहरा, खोजा, इस्माइली, आगाखानी आदि अनेक सम्प्रदाय बने। उनमें भी धर्म के नाम पर फातिमी, किरमानी, अलामुत, इमामो का विद्रोह हुआ। सुन्नियो में बहाबी, अल हदीस, हनीफी सम्प्रदाय विचार विभिन्नता के आधार पर बने। स्थानो के नाम पर भी सम्प्रदाय ब्रैल्वी, देवनन्दी आदि बन गये। सूफी सम्प्रदाय की शाखाएँ-उपशाखाएँ निकली। उन्हे अनेक स्थानो पर नास्तिक मान लिया गया। उनका दमन किया गया। बात और आगे बढी। शिया में इमाम हुये। पीरी मुरीदी चल निकली। सूफी, फकीर, दरवेशों का शिष्य वर्ग बनता गया। वे विशाल मुसलिम समुद्र में वे बून्द मात्र थे। किन्तु बून्दों को ही लोग समुद्र समझने लगे। बन गये कूप मण्डूक। एकाकी दर्शन ने, सकुचित भावना ने, सीमित विचारों ने, उन्हें विशृखलित कर दिया।

मानव बढता गया, आगे चलता गया। भूल गया। वह एक ही आदम की सन्तान है। उसका एक ही गोत्र है, एक ही वर्ग है, एक ही जाति है। विशाल जगत का एक प्राणी है। मानव समुद्र का एक बिन्दु है। मानव ने मुक्त जन्म लिया था। परन्तु प्रौढ मानव को बेडियों ने जकड लिया। जितना ही वयस्क होता गया, उतना ही उसकी सीमा सकीर्ण होती गयी। दास बन गया। एक संकीर्ण दर्शन का।

और छोर हीन भूमण्डल का प्राणी, मानव बन गया, अन्धेरी कोठरी का निवासी। इस कोठरी का द्वार बन्द होने लगा। मुक्त प्रकाश, मुक्त जल वायु, से वह हो गया, रहित। प्रकाश में रहना पसन्द नहीं किया—कोठरी के अन्धेरे में दम घुटने लगा। इस दम घुटने को उसने समझा सुख। उसमें ही देखा, अपना त्राण। उसे लगने लगा, अपने ही जैसों से भय। उसमें अधिक भयभीत हो गया मृतकों से। जिन्न भूत, प्रेत से डरता, मजार पूजने लगा। वृक्ष पूजने लगा। पशु-पक्षी पूजने लगा।

एक वर्ग और बन गया। ईश्वर और मनुष्य के बीच माध्यम। उठाने लगा, मानवीय दुर्बलता का लाभ। पुरोहित वर्ग, पादरी वर्ग, रबी वर्ग, मुल्ला वर्ग ने ईश्वर की कृपा, ईश्वर का आशीर्वाद की आशा दिलाकर, मनुष्य की स्थिति सुखद बनाने का विश्वास दिलाया। दुर्बल मनुष्य कामना पूर्ति के लिये, स्वार्थ सिद्धि के लिये, लगा उनका भरने पेट। दुर्बल मनुष्य लगा बनाने उनका आवास। वे भी पूजा-पाठ में, इबादत में, प्रार्थना में, लग गये, उसकी ओर से। विश्व के अन्य व्यवसायों की भाँति यह भी एक व्यवसाय चल निकला। होने लगा दुर्बल जनता का शोषण, परलोक दिलाने की आशा में मुक्ति दिलाने की आशा में, विपत्तियों से बचाने की आशा में।

विज्ञान अहंकार करता है। रासायनिकों, वैद्यों, हकीमों और डाक्टरों पर। उनका भी अहंकार टूटा। धर्म के नाम पर, एक वर्ग पैदा हो गया: वह झाड़-फूक, जादू-टोना करता था। कवच, जन्तर, गंडा, तावीजों से मनुष्य का शरीर जकड़ दिया। दवा का रूप ले लिया। मन्त्रों की अलौकिक शक्ति पर मनुष्यों का विश्वास जमा दिया। दुर्बल मनुष्य ने, कातर मनुष्य ने, जहाँ भी कहीं आशा दिखायी दी, वहीं आश्रय लिया। एक बड़ी जमाअत पैदा हो गयी। मजारों पर, जियारतों पर, समाधियों पर, पूजा करने और कराने वालों की। काश्मीर का सुल्तान हसनशाह, इन कुसंस्कारों के चक्कर में मर गया। उसकी दवा भी न हो सकी।

इससे भी समस्या हल नहीं हुयी। ईश्वर तक किसी को पहुँचना था, उसका आशीर्वाद प्राप्त करना था, उसकी कृपा दिलाना था, मनुष्य इस माध्यम के लिये सर्वोत्तम थे। परन्तु स्वयं मर कर, ईश्वर के पास पहुँचने के लिये तैयार नहीं थे।

इसके माध्यम अन्य प्राणी बने। पशु, पक्षियों की बलि होने लगी। उनकी आत्मा ईश्वर तक यजमान का सन्देश लेकर पहुँची या नहीं, नहीं कहा जा सकता। क्योंकि बलि प्राणी लौटकर, आया नहीं। लेकिन बलि चढ़े पशु-पक्षी के मांस भक्षण से मोटा होने लगा—एक वर्ग और ग्रहण करने लगा, महाप्रसाद देवता के नाम पर, देवी के नाम पर, ईश्वर के नाम पर।

पुरोहितों का रक्त अधिक पवित्र था। वे ईश्वर के अधिक समीप थे। परन्तु स्वयं भगवान तक न पहुँचकर, उन पशु एवं पक्षियों को संदेश वाहक बनाया, जो बलि कर्ता किंवा बलिदाता की भाषा नहीं समझते थे। स्वयं ईश्वर को बनाया प्राणी था। सन्तान था। पिता पुत्र की बलि पाकर, प्रसन्न नहीं होता। परन्तु ईश्वर के सन्तानों की बलि देकर, पिता को प्रसन्न करने का प्रयास जगत के आदि काल से किया गया है।

लोग कहते हैं। बलि प्रदत्त पशु, पक्षी, प्राणी स्वर्ग जाता है। यदि यह विश्वास सत्य है, तो मनुष्य ही, पुरोहित ही, स्वयं बलि चढ़कर, इतने आसानी से मिलने वाले स्वर्ग में क्यों नहीं पहुँच जाते? क्यों नहीं धर्म के ठेकेदार, स्वयं अपनी कुर्बानी कर, अपने मुरीदों, अपने शिष्यों का सन्देश, उनकी प्रार्थना ईश्वर तक पहुँचाने का कष्ट उठाते? वे यदि विश्वास करते हैं, इस दर्शन में तो अपने विश्वास के अनुसार स्वयं

उसे क्यों नही करते ? वे स्वय मानव एवं ईश्वर के बीच माध्यम न बनकर पशु-पक्षी को क्यों बनाते हैं ? पशु-पक्षी की अपेक्षा पुरोहित धर्म गुरु ईश्वर तक पहुँच कर, अपने शिष्यों, साथियों की बात अच्छी तरह ईश्वर के सम्मुख उनकी ही भाषा में रख सकता है, समझा सकता है।

कितनी मूढता है। अज्ञ पशु-पक्षी, मनुष्य एव ईश्वर के बीच माध्यम बन गया, न कि दर्शन पटु, विज्ञान विद्, धर्म प्राण पुरोहित आदि ? क्या वलिकर्त्ता एव बलि दाता वलि होते पशु की भाषा समझता है ? क्या बलि मानव वाणी समझता है ? ईश्वर की वाणी समझता है ? वह वाणी समझता है ? जिसे धर्म गुरु ईश्वर की, देव वाणी कहते है ? सस्कृत वाणी कहते हैं। इबरानी वाणी कहते है। अरबी वाणी कहते हैं। यदि यह विश्वास सत्य है, तो मानव के समान पशु-पक्षी भी बहुभाषी होगे। अन्यथा वे कैसे वलि कर्त्ता की, वलिदाता की, वाणी समझकर, ईश्वर को समझा सकेंगे ?

यदि अपने सुख के लिये मनुष्य की हत्या मनुष्य करे करें तो इसमें क्या आश्चर्य है ? यदि एक जाति दूसरी जाति, यदि एक देश दूसरे देश, एक सम्प्रदाय दूसरे सम्प्रदायवादियों की हत्या, अपने कल्पित किंवा वास्तविक स्वार्थ के लिये करें, तो इसमें क्या आश्चर्य है ? हिंस पशु अपनी भूख के लिये मनुष्य की हत्या करें, तो इसमें क्या आश्चर्य है ? इस हत्या ने, राष्ट्र स्वार्थ, जाति स्वार्थ, वर्ग स्वार्थ, धर्म स्वार्थ का रूप ले लिया है। हत्या न होकर, हो गया है युद्ध, हो गया है सघर्ष। वही जब सम्प्रदाय एव धर्म के स्वार्थ का रूप ले लिया, तो हो गया धर्म के नाम पर, सम्प्रदाय के नाम पर, होने वाला वलिदान। उसका नाम दे दिया गया, धर्म युद्ध-जेहाद। इस हत्या का रूप सिकन्दर बुतशिकन, अलीशाह एव सूहभट्ट द्वारा किये गये, भयकर नर सहार मे मिलेगा, जो उनके विश्वास पर, ईमान पर, स्वय नही आते थे, वे शैतान थे। ईश्वर विरोधी थे। वे बन गये, ईश्वर के अल्लम बरदार। उसके एकमात्र हिमायती। वे एक क्षण के लिये नही विचार किये। जो सर्व शक्तिमान है। सर्वसत्ता सम्पन्न है। सर्वज्ञ है। उसी पर इस कार्य का भार क्यो न छोड़ दिया जाय ?

परलोक में पुण्यार्जन से सुख मिलेगा। स्वर्ग मिलेगा। इस विश्वास के कारण, विधर्मी की हत्या, नर हत्या, उसी प्रकार पुण्य माना गया, जिस प्रकार पशु की वलि देकर, पक्षी की वलि देकर, कुर्बानी देकर, मनुष्य पुण्यार्ज, की कल्पना करता है। यह कुसस्कार था, मानवीय दुर्बलता थी, यह एक दर्शन का पाखण्ड था। यह था—स्वार्थ के प्रति अत्यधिक निष्ठा। यह था—दर्शन का आड लेकर घोर जघन्य क्रूर कर्म। उन्हें मानव सामान्य स्थिति में कभी करने की कल्पना नही कर सकता था। प्रदर्शन है, केवल शक्ति का, केवल कल्पित पुण्यार्जन की प्रवृत्ति का।

सिंह की कोई वलि चढाने की कल्पना नही करता। सब भेडा-भेडी, बकरा-बकरी, आदि मासूम प्राणियों, शाकाहारी पशु-पक्षियों की वलि करते हैं। सबल उन्हें बलि देकर मारकर, अपनी क्षुधा तृप्ति के साथ, परलोक सुख की कामना करता है। सिंह शक्तिशाली है। उसका दर्शन शक्ति है। दुनियाँ के न्याय की गुहार, उसके सम्मुख बेकार होगी। न्याय दुर्बलों की रक्षा करता है, शक्तिमान तथा शक्तिहीन को एक तुला पर तौलता, है, यह सिद्धान्त सिंह के सम्मुख गलत ठहरेगा।

दिल्ली के लाल किला में, मुगलों की राजधानी में, मुगल साम्राज्य का राजचिह्न तलवार की नोक पर तुला पत्थर में खुदा है। लेकिन शाहजहाँ, औरगजेब आदि गैर मुसलमानो को उसी तुला पर नही तौल सके। उनकी तुला मुसलमानों के लिये एक और गैर मुसलमानों के दूसरी थी। एक अपने दर्शन में रहने की कीमत जजिया से अदा करता था। द्वितीय श्रेणी का नागरिक था, गुलाम था, दूसरा शासक

होने का दावा करता था, बड़ा होने का दावा करता था, स्वामी होने का दावा करता था। यदि शक्ति ही दर्शन है, तो दुनियाँ में उसी का धर्म, उसी का दर्शन, उसी का अस्तित्व वांछित है, जो अपनी बात दूसरों से मनवा सके।

आज से लगभग डेढ़ हजार वर्ष पूर्व अफगानिस्तान, तुर्किस्तान, बलूचिस्तान, सीमान्त प्रदेश, पंजाब, बंगाल तथा दक्षिण पूर्व एशिया की जनता हिन्दू थी, गो रक्षक थी, वे ही इसाई हुये, मुसलमान हुये। धर्म परिवर्तन पश्चात वही धर्म, वही दर्शन, जिसमें उनके पूर्वज सहस्र वर्षों से थे, जिनका उन्हें गर्व था, वही बन गये शत्रु, वही बन गये बेगाने, बन गये गो भक्षक।

यह कटु सत्य है। हम हिन्दू, ईसाई, मुसलमान केवल इसलिये हैं कि हम उन कुलों में जन्म लिये हैं। हमारा लालन-पालन धर्म विशेष प्रभावित वातावरण में हुआ है। एक दर्शन का, एक धर्म का, रंग चढ़ाया गया है, जिसके हम अभ्यस्त थे और हो गये हैं। इसी अभ्यास का परिणाम हमारा धर्म है ? जीवन संहिता है। एक प्रकार के साँचे में ढाल दिये गये हैं। एक प्रकार के रीति-रिवाज, खान-पान, आचार-विचार, अभ्यास के कारण, उनका त्यागना कठिन हो गया है।

अच्छा या बुरा होने पर भी संस्कार पकड़ लेते हैं। जड़ जमा लेते हैं। उनका त्यागना होता है कठिन, त्याग की बात सुनते ही, उत्पन्न होती है, झिझक। सड़े जल, परनाले के कीटाणु की तरह स्थिति हो जाता है। यदि कीटाणु को निकाल कर अलग रखा जाय, शुद्ध जल में रखा जाय, तो भी वे गन्दे जल की ओर भागते हैं। ईसाई, मुसलमान आदि का अनाथ शिशु यदि कोई हिन्दू पालता है, तो वह हिन्दू कुटुम्ब के संस्कार के कारण हिन्दू हो जाता है। वह अपने माता-पिता अथवा पूर्व कुल को नहीं जानता। अभिभावक को पिता मानता है। अबोध शिशु जिस वातावरण में, जिस धर्म में, जिस दर्शन में पलता है, उसी दर्शन, धर्म, सम्प्रदाय का हो जाता है। उसका जीवन, उसका धर्म, उसका आचरण, उसकी परिस्थितियों का परिणाम होता है। एक क्रिया, एक व्यवहार, एक ही परिस्थितियों का अभ्यस्त व्यक्ति अपनी स्थिति, अपने अभ्यास के कारण श्रेष्ठ समझता है, ग्राह्य समझता है, दूसरा उसे बुरा लगता है। उसी प्रकार जैसे एक शाकाहारी किसी मांसाहारी को मांस खाते देखकर, बुरा मानता है, मांस की बात से ही, उसे झिझक होता है।

व्यवहार एवं परिस्थिति विशेष का अभ्यस्त व्यक्ति, अपनी सीमा बनाता है, कुण्ठित हो जाता है, अपना व्यवहार, अपना रहन-सहन दूसरे से अच्छा समझता है। उसमें अहमन्यता आ जाती है। अपना कल्पित जगत बना लेता है। उस कल्पना के अन्दर जो है, वह ग्राह्य और बाहर अग्राह्य था, त्याज्य मान लेता है। निषेधात्मक कर्मों की संहिता बना लेता है। इस संहिता, इस दर्शन के विरुद्ध जब कुछ होता देखता है, तो क्रुद्ध हो जाता है। प्रमादी हो जाता है, बुद्धि भ्रष्ट हो जाता है। विनाश की ओर बढ़ता है। अपने ही सृजन का दास बना, दुनियाँ को अपने अनुरूप बनाना चाहता है। अपने साँचे में ढालना चाहता है।

जिस प्रकार एक पिता अपने सन्तानों की संख्या बढ़ाकर, उन्हें कौटुम्बिक साँचे में ढालकर, अपने कुल का प्रतीक बनाना चाहता है, उसी प्रकार मूढ़ग्राही अपने, वर्ग, अपने समाज, अपने दर्शन, अपने व्यवहार, अपने संस्कार में दूसरों को अपनी जनसंख्या बढ़ाकर, अपना गोत्र, अपना समाज, अपनी जाति, विस्तृत करना चाहता है। यह है, रहस्य दर्शन प्रवर्तकों का, यह है रहस्य—मत मतान्तारों के विस्तार का। और यह है रहस्य—उनके पारस्परिक स्पर्धा जनित संघर्षों का।

अपनी इस अन्तर्दशा के कारण मनुष्य अनायास हो जाता है विरोधी, उन सबका, जो उसके अनुकूल नही होते। वह रूढ वादी हो जाता है। उसका मूढाग्रह, उसे मूढता की ओर घसीटता है। सिसिकता विवेक, घिसटता विवेक, उसका साथ छोडकर, उदास हो जाता है।

मूढाग्रह त्यागी जब व्यक्ति मुक्त वातावरण मे विचरण करता है, खुले दिमाग से सोचता है, समझता है, तो उसकी विवेक दृष्टि उदार होती है, आँखें खुलती है। अभ्यस्त समाज के प्रति, कुरीतियो के प्रति, जागरुक होता है। समाज उसे विद्रोही समझता है। परम्परा विरोधी, धम विरोधी, ईश्वर विरोधी मानता है। दण्ड देता है। समय बीतता है। समाज जिसे दण्ड देता है, उसे सुधारक मान बैठता है। सन्त मान बैठना है। ईश्वर दूत मान बैठता है। आचार्य मान बैठता है। उसकी पूजा करने लगता है।

ईसामसीह को क्रास पर चढाने वाले, एक ऐसे दर्शन में विश्वास करते थे, जिसने ईसा को अपराधी माना था। शूली चढाया था। वे समझते थे। वही धर्म था। सकीर्ण मनोवृत्ति, परम्परा विशेष के अभ्यस्त, ईसा को क्रास पर चढाकर, सन्तोष किये। उन्हे दृढ विश्वास था। उन्होंने भगवान का कार्य किया। पुण्य किया। यहूदी इस अपराध के कारण, ईसाई जगत द्वारा अपने पूर्व पुरुषो के अपराध के कारण, घृणा की दृष्टि से देखे जाते हैं। सनातनी ईसाइयो द्वारा अपराधी समझे जाते है। एक दिन के अपराधी, क्रास पर चढने वाले की, विश्व आज पूजा करता है। वन्दना करता है। उसका जीवन लेकर, उसी से जीवन भिक्षा चाहता है।

अपने विचारों के लिये, अपने मत के लिये, तात्कालीन अति विकसित यूनानी समाज ने सुकरात को मृत्यु दण्ड दिया। समझा समाज की रक्षा हो गयी। परन्तु वही सुकरात बन गये, मानव के आदर्श। प्रवर्तक। मुक्त विचार धारा के प्रतीक।

महात्मा गान्धी को गोली लगी। मारने वाले ने समझा, हिन्दू धर्म बचा लिया। जाति बचा लिया, देश बचा लिया। आज क्या हिन्दू जाति, उस हत्यारे के लिये लज्जित नही है? क्या मानवता इस क्रूर हत्या के कारण, रो नही उठी है? विचित्र विडम्बना है। हम जिसे, उसके मत के कारण, उसके विश्वास के कारण, उसके धर्म के कारण, उसके दर्शन के कारण, आज मारते है, कल उसी की पूजा करते है।

काश्मीर का इतिहास इन दर्शनो के परिप्रेक्ष में समझना होगा। राजतरगिणी लगभग साढ़े चार सहस्र वर्षों का प्रामाणिक इतिहास प्रस्तुत करती है। इस इतिहास में हिन्दू, बौद्ध, शैव, वैष्णव, आर्य, पिशाच, नाग, गुह्यक, भोट्ट, मुसलमान, शिया, सुन्नी, सैय्यद, चक, मुगल, पठान, सिख, डोगरा, ईसाई एव काश्मीरी जनता का अद्भुत योगदान है। सभी दर्शनो से प्रभावित, शासन पद्धतियों द्वारा, काश्मीर का शासन हुआ है। परस्पर विरोधी तन्त्रो, परस्पर विरोधी दर्शनों, परस्पर विरोधी मत-मतान्तरों के विश्लेषणात्मक अध्ययन के लिये काश्मीर एक पूर्ण सज्जित प्रयोगशाला है।

सुल्तान पूर्ववर्ती काश्मीर एक ऐसे दर्शन में विश्वास करता था, जो साम्यवादी था। मानव की उदार भावनाओं का आदर किया था। मनुष्य को साध्य माना था। आचरण एव अनुशासन पर जोर दिया था। अनेक मत-मतान्तरों का उदय हुआ। विचारधाराओं का उदय हुआ। तन्त्र-मन्त्र प्रकट हुये। दर्शनों की कल्पना की गयी। किन्तु काश्मीरियों को कभी विरोधी दृष्टि नही हुई। किसी को अनादर की दृष्टि से नही देखा। सब में गुण देखा। उसके चिन्तन में गुण देखा। गुण उसका दर्शन बन गया। विश्वास किया, धर्म में। विश्वास किया, मानव में बैठे भगवान में। मानव में बैठे शैतान को नही जगाया। आसुरी प्रवृत्ति में आस्था नही दिखायी। गिरने या गिराने की कल्पना नही की।

अशोक एवं कनिष्क जैसे महान विभूतियों का काश्मीर ने दर्शन किया है। काश्मीर ने उन्हें प्रभावित किया है। उनकी विचारधाराओं में मोड़ दिया है। मानव बनने की ओर प्रवृत्त किया। उन्हें सम्राट की अपेक्षा, मानव रूप में देखा।

दोनों सम्राट धार्मिक थे। राजनीतिज्ञ थे। कुशल शासक थे। धर्म एवं राजनीति को अलग रखे। दोनों की दो दिशाएँ माना। एक का सम्बन्ध मनुष्य के अध्यात्म और दूसरे का उसके भौतिक जीवन से माना। धर्म एवं राजनीति को एक में मिलाकर उलझन नहीं पैदा की। नवीन समस्याएँ नहीं खड़ी किया। उनके दर्शन की दिशा पुरातन धारा से विपरीत नहीं थी। वह पूर्वधारा के साथ गतिशील हुई। उसी में मिल गयीं। सनातन धारा से विपरीत नहीं बही। उससे पृथक नहीं हुयी।

बौद्ध एवं पौराणिक दर्शनों में जो उत्तम था, जो उपयोगी था, काश्मीर ने उसे ग्रहण किया। उसके द्वारा मानव चरित्र, मानव जीवन, उठाने का प्रयास किया। उदार प्रवृत्ति, सहिष्णुता, एवं लौकिक सिद्धांतों से विरत नहीं हुआ। उनके माध्यम से ही आगे बढ़ा।

जलौक ने, मिहिरकुल ने, आचरण पर, अनुशासन पर, जोर दिया, उन्होंने स्वयं आचरण, चरित्र एवं अनुशासन को जीवन में उतारा। उन्हें जीवन दर्शन बनाया। मिहिर कुल ने दुराचारियों को दण्ड दिया। आततायियों का दमन किया। चरित्र उठाने के लिये शक्ति का प्रयोग किया। समय आने पर अपने शरीर पर भी दया नहीं किया। उसकी क्रूरता सर्वोत्थान के लिये थी। उसने अपने को भी अपवाद नहीं माना।

वह इस सीमा तक गया। उसका शरीर, उसका साथ नहीं देने लगा, उसके अनुकूल कार्य करने में असफल होने लगा, उसने उस निरर्थक शरीर को स्वतः अग्निसात कर शरीर से छुट्टी ली। मिहिर कुल के क्रूरता की कहानी कल्हण कहता है। किन्तु मिहिर कुल ने किसी धर्म विशेष, दर्शन विशेष, मत विशेष को किसी पर थोपा नहीं। इस दिशा में वह सहिष्णु था। उदार था। उसके धर्म, उसके दर्शन का सम्बन्ध व्यक्तिगत जीवन से था।

मेघ वाहन जैसे महान दिग्विजयी सम्राट का उदय हुआ। भगवान् बुद्ध की करुणा से प्रभावित था। प्राणिहिंसा पाप समझता था। अहिंसा प्रचार का व्रत लिया। उसकी वाहिनी इसी उद्देश्य से काश्मीर के बाहर निकली। देशों, प्रदेशों को विजय किया। विजितों का राज्य वापस किया, केवल एक शर्त पर, प्राणि हिंसा उनके क्षेत्र में बन्द रहेगी। वह काश्मीर लौटा। उपनिवेश बनाकर, साम्राज्य बनाकर, नहीं। प्राणियों को मुक्त जीवन का अभयदान देकर-दिलाकर। तथापि उसने हिंसा शस्त्र के आधार पर नहीं रोका। उसने अपने विचार का प्रचार किया। जब कोई मांस भक्षी उसके सन्मुख आया, जब कोई बलि-कर्ता उसके सन्मुख आया, तो उसने अपना शरीर अर्पित किया। स्वयं बलि होने के लिये तत्पर हो गया। यह थी महान भावना। यह था आदर्श। जिसने काश्मीर ऊपर उठाया।

काश्मीर के राजा भारत के अन्तिम दिग्विजयी राजा थे। उन्होंने दिग्विजय परम्परा जारी रखी थी, जब शेष भारत भूल गया था। किन्तु दिग्विजय कर्ताओं ने साम्राज्य नहीं स्थापित किया। साम्राज्यवाद में विश्वास नहीं किया। शोषण में विश्वास नहीं किया।

ललितादित्य अथक परिश्रमी था। कर्मी था। वह एक क्षण जीवन आलस्य में नहीं व्यतीत करना चाहता था। उसने राज शक्ति का उपयोग, धन का व्यय विलास के लिये नहीं किया। वह सर्वदा अपनी सेना के साथ अभियान करता रहा। काश्मीर विजय पताका विदेशों में फहराता रहा। उसने दिग्विजय

करते करते काश्मीर के बाहर विदेश में प्राण त्याग किया। वह सुखमय, विलासमय, जीवन व्यतीत करने के लिये काश्मीरियों के बुलाने, प्रार्थना करने पर, भी नही लौटा।

काश्मीर में जात-पात का बन्धन कठोर नही था, लचीला था, उदार था। वहाँ के राजा क्षत्री हुये। ब्राह्मण हुये, कल्यपाल हुये। उनकी राज महिषियाँ वणिक कन्या हुयी, डोम कन्या हुयी। समाज ने इसे बुरा नही माना।

धर्म एव दर्शन प्रगतिशील था। धर्म केवल कर्म काण्ड एवं सस्कार मात्र नही था। जड नही था। उसमें ग्रहण करने एव देने की शक्ति थी। उसकी शक्ति बनी रही। सीमान्त स्थित होने पर भी, विदेशी विजेताओ, दर्शनों एव शक्तियो का सफलतापूर्वक सामना करता रहा।

काश्मीर में यूनान के दार्शनिकों, इटली के सम्राटो तुल्य महान विभूतियो का दर्शन मिलता है। उनका चरित, उनकी गाथा, अद्भुत है। दुख है। जगत उन्हें जानता नही।

काश्मीर के सम्राट, कवि हुये है। काव्यकार हुये है। गीतकार हुये है। गायक हुये है। अभिनेता हुये है। *वक्ता हुये है जयापीड यदि दिग्विजयी राजा था, तो सफल कवि भी था। हर्ष राजा था तो महान* गीतकार था। सगीतज्ञ था। नाट्यकार था। काश्मीर के अनेक सुल्तान कवि थे। लेखक थे। गीतकार थे। वादक थे। गायक थ। स्वय सगीतशास्त्र की शिक्षा देते थे।

काश्मीर के राजाओ ने विलास हेतु राजप्रासादो का निर्माण नही किया। हरम नही बनाया। जनता का धन जनता के मानसिक, आध्यात्मिक एव भौतिक विकास में लगाया। जनता का आर्थिक स्तर उठाने में लगाया। काश्मीर में मन्दिरों, मठो, शालाओ, विहारो, देवस्थानो के भग्नावशेष, प्रत्येक ग्रामो में मिलेंगे। परन्तु राजप्रासादो, राजभवनो के ध्वसावशेष कही नही मिलते।

सम्राट एव राजा अन्य नागरिकों के समान श्रीनगर में निवास करते थे। उनका राजभवन सामान्य भवनों से कुछ अच्छा था। सामाजिक, जीवन, उत्सव ज्ञान विज्ञान चर्चा आदि का केन्द्र होता था।

काश्मीर धार्मिक था। उसमें धार्मिक कुरीतियों का अभाव मिलता है। देवदासी प्रथा तथा दास प्रथा का विकृत रूप काश्मीर में नही मिलता। उत्तर कालीन काश्मीर में दासो का कुछ वर्णन मिलता है। परन्तु वह विदेशी जगत, विदेशी जातियों की देन थी। मुसलमान दास प्रथा को मान्यता देते थे।

काश्मरी मानव को साधन, स्वार्थ सिद्धि का माध्यम, बनाने का कभी प्रयास नही किये। मानव मूल्य गिरने नही दिये। उठाते ही रहे। दासता शासन तत्र एव समाज के परे की बात थी। कश्मीर ने *मानव को पवित्र समझा। मानव को अर्थदास, विलास दास, ऐश्वर्य दास, मास, मज्जा एव अस्थि का सग्रह* मात्र नही समझा। उसने मनुष्य को मनुष्य माना। प्रत्येक प्राणी को ईश्वर कृत माना। अर्थ आधिक्य, राज सत्ता, वश, कुल मनुष्य को अन्य मनुष्यों से भिन्न नही मान सका।

जात-पात, ऊँच-नीच, स्पश्या-स्पृश्य की जो विभीषिका भारत में थी, जिसने हिन्दू समाज को खोखला बना दिया था, आन्तरिक ढाँचा शिथिल कर दिया था, उनका दर्शन काश्मीरी समाज में नही होता। कश्मीरी रूढिवादी नही बने। वे मूढाग्रही नही बने। कुसंस्कार पाशा में फँसकर जड नही बने। जो ग्राह्य था ग्रहण किया, अग्राह्य की ओर फिरकर देखा नही।

भारतीय राजाओं के समान काश्मीर के राजाओं की दृष्टि सकीर्ण नही थी। वे परस्पर, हिंस्र पशुओं के समान लडे नही। सहस्रों वर्षों में विरल गोत्रवध नही हुआ है। कुलों को उत्पादित न कर उनकी

रक्षा किया राज्य के लिये उन्हें उपयोगी बनाया। उत्तराधिकार के लिये हुये थे। अन्य देशों के इतिहासों को देखते हुए कहना पड़ेगा कि यह अपवाद मात्र है। मुसलिम काल में स्थिति बदल गयी। प्रत्येक सुल्तान को अपने उत्तराधिकार के लिये संघर्ष करना पड़ा है।

राजाओं ने अपने विलास पर धन अपव्यय नहीं किया। शोषण नहीं किया। अपने सुख के लिये जनता के सुख का अपहरण नहीं किया। जनता से अपनी स्थिति भिन्न नहीं मानी। जनता का सुख उनका सुख एवं दुःख उनका दुःख था। राजा तुजींन एवं रानी वाकपुष्टा का संवाद इस प्रसंग में विश्व इतिहास में अतुलनीय है। राजाओं ने प्रजा को सर्वदा सन्तान माना है। उनके साथ सन्तानवत् व्यवहार किया है। कुछ अपवाद मिलते हैं। परन्तु वे नगण्य हैं।

राजाओं ने, जनता ने, काश्मीर को सती देश माना है। काश्मीर मण्डल को कष्ट पहुँचाना भगवती सती को कष्ट पहुँचाना था। यह इतना प्रभावशाली नैतिक अंकुश था। जिसने राज प्रथा का मर्यादित रखा। प्रजा का अराजक एवं राजा को निरंकुश नहीं होने दिया। इस दर्शन के कारण देश के सुख को, अपने सुख पर, राजा एवं प्रजा दोनों ने प्राथमिकता दिया है।

काश्मीर ने आध्यात्म एवं भौतिकता का समन्वय देश एवं मानव विकास के लिये किया था। उन्होंने दैहिक एवं दैविक गुणों का समन्वय किया था। उन्होंने कला को विकास, मनोविनोद की सामग्री न समझ-कर, उसे देवार्पित किया था। दैवी गुण समझा था।

देव स्थान उनके दैनिक जीवन का केन्द्र था। अध्ययन, अध्यापन, नाटक, नृत्य एवं गान का केन्द्र था। सब कुछ उस देव को अर्पित था, जो व्यापक था। सबका था। संकीर्ण नहीं था। वह देव नहीं था, जिसने कुछ मनुष्यों को ही अपनी चुनी जाति, कुछ धर्मो को अपना धर्म बनाया था। वह देव उदार था। सहिष्णु था। मानव में किसी सम्प्रदाय, किसी, मत अथवा धर्म के कारण भेद नहीं माना था। किसी एक दर्शन को, किसी एक भाषा को, किसी एक वर्ग को, किसी एक मत को, अपना अन्तिम एक मात्र नहीं घोषित किया था। वह देव भय कारक नहीं था। उससे प्रेम किया जा सकता था। उसका सान्निध्य प्राप्त किया जा सकता था। वह देव प्रतिहिंसा से दूर, भक्त वत्सल था।

देव प्रतिमाओं को लोग सुसज्जित करते हैं। उसकी पूजा करते हैं। उसे प्रसन्न करने का प्रयास करते है। काश्मीर के राजा सतीस्वरूप सती देश को समृद्ध करने, सुन्दर बनाने का भरसक प्रयास करते थे। विलास एवं भोगों को कभी प्राथमिकता नहीं दी गयी। सती देश में पशु-पक्षियों की स्थिति सुखद थी। उन्हें अपने प्राणों का भय नहीं था। देश की दुखावस्था का कारण, किसी दुर्भिक्ष का कारण, तुषार पात का कारण, तूफान का कारण, राजा एवं प्रजा अपने किसी पाप का, किसी पूर्व जन्म के कर्म का फल मानती थी।

राजाओं का राज्य न्यायिक था। राज सत्ता विधि में, स्मृतियों में निहित थी। राजा की शक्ति एवं अधिकार मर्यादित थे। सदाचार से, स्मृतियों से, धर्म संहिताओं से तथा अर्थशास्त्र से, नियन्त्रित थे।

विप्लव एवं राज्य क्रान्तियों का अभाव हिन्दू कालीन काश्मीर में मिलता है। जनता विप्लव एवं राज्य क्रान्ति में विश्वास नहीं करती थी। उनके करने की कभी समस्या नहीं उपस्थित हुई। राज्य क्रान्ति एवं विप्लव यूरोप की देन है। जहाँ राज्य की शक्ति अनियन्त्रित थी। बन्धन हीन थी। अनियन्त्रित थी। निरंकुश थी। परन्तु काश्मीर में बात ऐसी नहीं थी। आध्यात्मिक नियन्त्रण था। नैतिक नियन्त्रण था।

राजा नीति, शास्त्रों द्वारा अनुशासित था। विधियाँ उसका कार्य निर्धारण करती थी। राजा का कार्य विधि मर्यादित था। मनमाने ढग से उनमें सशोधन, परिवर्तन करने का अधिकार नही था।

राजा के पथ भ्रष्ट होते ही, अनियन्त्रित होते ही, द्विज प्रायवेशन करते थे। वैसे ही करते थे, जैसे महात्मा गान्धी अन्याय के विरुद्ध अनशन कर, न्याय पाने की अपेक्षा करते थे। राजा पर नैतिक प्रभाव डालते थे। शक्ति एव शस्त्र का आश्रय लेकर राजा का सुधार करते थे। सुधरने का अवसर देते थे। आध्यात्म तथा नीति के प्रति यह आदर, नीति शास्त्र के प्रति निष्ठा, राजा को अनुशासित रखता था।

राजा के ऊपर द्विज परिषद थी। पुरोहित परिषद थी। परिषदें महाभारत काल से कोटारानी के समय तक प्रभावकारी सक्रिय सस्थायें थी। वे विश्व की सबसे प्राचीन जीवित सक्रिय संस्थायें थी। राजा परिषदों के आदेशों की अवहेलना नही कर सकता था। उपेक्षा नही कर सकता था। यह एक ऐसा दर्शन था। जिसके कारण महाभारत काल से तेरहवी शताब्दी तक वे अक्षुण्ण बनी रही। काश्मीर समृद्धि शाली राष्ट्र बना रहा। प्रजा अपने कर्तव्यों एव अधिकारो के प्रति जागरूक थी। ब्राह्मण अपने अधिकारों एव कर्तव्यों के प्रति जागरूक थे। प्रजा एवं राजा दोनों नैतिक बन्धनों से नियन्त्रित थे। इस नियन्त्रण के पीछे, राज्य की शस्त्र शक्ति नही थी। इस नियन्त्रण को राजा एव प्रजा दोनो ने स्वेच्छा से स्वीकार किया था। नैतिक राज्य एवं नैतिक विधि के कारण ऐसी व्यवस्था कश्मीर में स्थापित हुई, जिसने मनुष्यो में भेद नही किया। विचारों के कारण दमन नही किया।

काश्मीर में विदेशी एवं काश्मीरियों के भेद एव प्रतिभेद नही था। राजाओं ने विदेशियों को आश्रय दिया है। वित्त दिया है। आदर किया है। वे अपने धर्म के साथ, कर्म के साथ फलते रहे। किसी सम्प्रदाय के प्रति द्वेष नही था। वैर नही था। दुख नही था। उनके व्यवहारो के कारण घृणा नही थी। विधर्मी होने के कारण, विपरीत आचरण होने के कारण, रहन-सहन भिन्न होने के कारण, उनसे विरोध नही था। अनादर नही था। काश्मीर में बौद्ध एव हिन्दू धर्म चौदहवी शताब्दी तक एक साथ थे, मान्यता प्राप्त करते चले आ रहे थे। उनमें परस्पर कभी विरोध नही हुआ। संघर्ष नही हुआ। बौद्ध संघ ने काश्मीर की राज व्यवस्था में हस्तक्षेप नही किया। षड्यन्त्र नही किया।

विदेशी मुसलमान बहुत बडी सख्या में काश्मीर में प्रवेश किये। उनका विरोध नही हुआ। वे सेना में, प्रशासन में, स्थान पाये। व्यापार करने लगे। काश्मीर में आवाद हो गये। उनका स्थान-स्थान पर, उपनिवेश बन गया। किन्तु उनका दर्शन वह नही था, जो बौद्धों का था। हिन्दुओं का था। उनका दर्शन उनकी सीमा के अन्दर था। उस सीमा में एक बार प्रवेश करने पर, बाहर निकलने की गुंजाइश नही थी। उसके अन्दर जो पहुँचा, वह वही का हो गया। अन्य धर्म के प्रति आदर, स्वतन्त्र विचार, धर्म निरपेक्ष एव सर्वधर्म सम भाव में विश्वास कर्ता, वहाँ स्थान नही पा सकता था। वह केवल एक ही फूलों की क्यारी थी। एक ही फल फलते थे। वह उपवन नही था, बन नही था, उद्यान नही था, वाटिका नही थी। वहाँ विविध पुष्प, विविध सुरभि, विविध फलों, विविध रगों, विविध रसों का स्थान नही था।

हिन्दू जगत इस प्रकार के दर्शन से अनभिज्ञ था। उसने अपने जैसा दूसरे धर्मों को समझा। सबको ईश्वर की सन्तान माना। उसने कल्पना नही की। एक ही ईश्वर अपनी सन्तानो में दुराव करेगा, भेद करेगा, एक को दूसरे का शत्रु घोषित करेगा, एक को अपनी चुनी सन्तान कहकर, दूसरे का निरादर करेगा। उसने सब धर्मों का एक ही ध्येय माना। अनेकता में एक ईश्वर की कल्पना की। अनेक नामों को एक ही नाम का पर्याय माना। बहुदेव वाद में एक ही शक्ति का प्रकाश देखा। नाम उसके लिये गौण था। सब

धर्मों के सन्तों, नबियों, पैगम्बरों को महात्मा माना। उनका आदर किया, उनके विचारों का आदर किया।

विरोधियों द्वारा जो दर्शन काश्मीर में अंकुरित हो रहा था, एकांगी था। धर्मों का केन्द्र विन्दु एक ही ईश्वर को नहीं माना। अन्य धर्मों के सन्तों, अवतारों, नबियों, पैगम्बरों को महात्मा नहीं माना। उसने केवल अपने ईश्वर में, अपने धर्म में, विश्वास किया। शेष विश्वास के पात्र नहीं थे। उनका समय बीत चुका था। भगवान ने नवीन धर्म, नवीन पैगाम भेजा था। पुराने पाखन्ड थे। ईश्वर कृत नहीं थे। कुफ्र थे। दूसरे धर्मों, दर्शनों की सत्ता स्वीकार करना, उनके ईश्वर की सत्ता में अविश्वास था। उनके ईश्वर की घोषणा के प्रति विद्रोह था, अनादर था। इस अविश्वास, इस अनादर, इस विद्रोह का दन्ड स्वयं ईश्वर प्रकट होकर दे नहीं सकता था। उसे दण्डित करने का भार उठाया, मनुष्यों ने। वे बन गये, ईश्वर की सेना। धर्म युद्ध के सैनिक, मुजाहिद।

इस नवीन दर्शन के अनुयायी, एक गोत्र में विश्वास करते थे। ईश्वर के साथ किसी अन्य दैविक शक्ति का होना, उनके अस्तित्व की कल्पना, वे कर नहीं सकते थे। यह था—ईश्वर के प्रति कृतज्ञता, यह था ईश्वर के प्रति विश्वास। अतएव उनके दर्शन का अविश्वासी दन्ड का पात्र था। उसे दन्ड देना कर्त्तव्य था। संहार करना पुन्य था।

इस वर्ग में, इस गोत्र में, जो नहीं था, वह था, उसका विरोधी। वह था, उसका शत्रु। उनका संघर्ष उस समय तक जारी रहना स्वीकार किया गया, जब तक दूसरों का अस्तित्व समाप्त होकर, सबका एक मिल्लत में एकाकार न हो जाय। सब पर एक मुहर न लग जाय। सबका मुख एक दिशा की ओर न फिर जाये। सब एक तरह की बोली न बोलने लग जाये। आचरण एक तरह का न हो जाये। और जब तक सब एक संहिता द्वारा अनुशासित न हो जाय।

काश्मीरियों ने इस दर्शन को नहीं समझा। उसके रहस्य को नहीं समझा। उन्होंने विश्वास किया—मनुष्य की मानवता पर, उसकी आन्तरिक शक्ति, नैतिकता पर। कल्पना नहीं कर सकते थे। शरणार्थी, वित्त भोगी, राज सेवक, शाहमीर जिसे राजा ने आश्रय दिया था, आदर किया था, पद दिया था, उसी के वंश को समाप्त कर, उसकी रानी कोटा से विवाह का प्रस्ताव रखेगा। न मानने पर उसी की हत्याकर, स्वयं काश्मीर का राजा बन जायगा। उसके निर्दोष पुत्रों की हत्या कर देगा, जिनका वह अभिभावक था। जिन्हें पुत्रवत पाला था।

काश्मीरियों ने जब यह घटना सुनी, देखी, तो स्तब्ध हो गये। किंकर्तव्य विमूढ़ हो गये। कुछ निश्चय न कर सके। इस अनिश्चित स्थिति का लाभ उठाकर, काश्मीर की लाल पताका उतरी, हरी पताका उठी। घड़ी, घन्टे बन्द हुये। मुअज्जिन की आवाज बुलन्द हुयी। वेद ध्वनि शान्त हुयी। यज्ञ वेदियाँ बुझी। शिखर गिरे, कंगूरे उठे।

हिन्दुओं के लिए, यह अन्याय था। विश्वासघात था। अनैतिकता थी। मुसलिमों के लिए ईश्वरीय न्याय था। कुफ्र का गड़ढहना था। बुतखानों का गिरना था। उस दर्शन का फैलाना था, जिसके लिए जिन्दगी पायी थी। जो फर्ज था। यह थी, उसके ईश्वर की, उसके दर्शन की, उसके धर्म की विजय। शाहमीर बन गया, अपनी जाति का नेता, मुसलिम राज्य का संस्थापक। दारुल हरब बन गया, दारुल इस्लाम। ईश्वर की अभीप्सित कार्य सम्पन्न हुआ। पुन्य हुआ। लाखों-लाखों प्राणी दोजख की आग से बचा लिए गये। मैंने आज तक एक मुसलिम लेखक नहीं पाया, जिसने शाहमीर के विश्वासघात की भर्त्सना प्रत्यक्ष अथवा गौण रूप से किया है।

शाहमीर को कोटारानी, उसके पुत्रों की हत्या के लिए, विश्वासघात के लिए ग्लानि नही हुई। पश्चाताप नही हुआ। उसने वही किया, जो उसके गोत्र से अपेक्षित था। चाहे हिन्दुओ की दृष्टि स उसने पाप किया, विश्वासघात किया, हत्या किया। परन्तु अपनी दृष्टि मे पुण्यार्जन किया। ईश्वर की घोषणा का पालन किया। ईमान न लाने वालों को, ईमान पर, लाने का शुभारम्भ किया।

अनैतिकता, पाप के आधार पर किया गया पुण्य, नष्ट करता है, पुण्य के मूल को। विस्तृत करता है, पाप क्षेत्र को। कोटारानी तथा उसके पुत्रो की हत्या का परिणाम शाहमीर के वशजों को अपने रक्तों से चुकाना पडा। उसकी सन्तानें परस्पर लडती रही। मरती रही। वश वृक्ष रक्त वर्षा से सिंचित होता रहा। आँख फोडना, अग भग करना, बिना न्याय कारागार में ठूस देना, लूट पाट करना, दरिद्र बना देना, हो गयी, साधारण घटनायें। हिन्दुओं ने अपनी उदारता, सहिष्णुता, रूढवादिता की महँगी कीमत अदा की। अपने देवस्थानो को नष्ट कराकर और स्वय नष्ट होकर।

नैतिकता सहिष्णुता, उदारता, लौकिकता एव न्याय का, आदर वह करता है, जो उनके मूल्य को समझता है। हीरा का वही कदर करता है, जो हीरा का पारखी है। दूसरे के लिए वह चमकता काँच है। गाधी जी के सिद्धन्तों का, उनके आन्दोलन का महत्व लोकतन्त्रवादी अग्रेज जानते थे अतएव उन्होंने महात्मा जी का आदर किया। किन्तु कायदे आजम जिन्ना तथा पाकिस्तान बनाने वाले, उसका मूल्याकन नही कर सके। गाधी जी का दर्शन, उन्हें अपनी ओर आकर्षित नही कर सका। गाधीजी के अर्ध शताब्दी के प्रयासों के पश्चात भी सर्वधर्म समभाव का सिद्धान्त मुसलमानो को प्रभावित नही कर सका। वे एक ऐसी मजबूत दीवाल के अन्दर बैठे थ, जहाँ आवाज टक्कर मारकर लौट आती थी। गाधी एव जिन्ना एक भापाभापी थे। एक प्रदेश के निवासी थे। वे मिल नही सके। उनके बीच बाधक था, एक प्रति निविष्ट दर्शन। जिसकी अपनी सकीर्णता थी। सीमा थी।

यह प्रक्रिया काश्मीर में हुई। हिन्दू या तो मुसलमान हुए, या भाग गये, या दबकर, अपने धर्म मानने को कीमत जज्जिया से देने लगे।

जहाँ भी इस सकीर्ण दर्शन का अनुकरण किया गया है, वहाँ क्षणिक शान्ति, स्मशान शान्ति दिखाई पडी है। कालान्तर में उस सकीर्णता ने शान्ति का नाश किया है। जैनुल आबदीन ने इस दर्शन से हटकर, इस सकीर्णता से हटकर, अपना राज्य अर्ध शताब्दी शान्ति पूर्वक चलाने में समर्थ रहा। जनता साथ देती रही। अकबर ने इस नीति का अनुकरण कर, अर्ध शताब्दी तक शासन किया था। उत्तराधिकारियों के लिए अनुशासित साम्राज्य की नीव रखा। सकीर्ण औरगजेब ने भी अर्ध शताब्दी शासन किया था। किन्तु औरगजेब के शासन की शान्ति स्थायी नही थी। उसके शान्त होते ही, साम्राज्य शान्त हो गया।

व्यष्टि वादी एव समष्टि वादी दर्शनों की दिशायें भिन्न होती है। उनके चिन्तन का प्रकार भिन्न होता है। उनका दृष्टिकोण भिन्न होता है। इसे बिना समझे, इतिहास एव राजनीति समझना कठिन है।

व्यष्टिवादी, व्यष्टि किंवा मनुष्य के विकास, उसकी उदात्त सद्वृत्तियों को विकसित करने का प्रयास करता है। मानव को साधन नही, साध्य मानता है। किन्तु समष्टिवादी दर्शन के सम्मुख मूल्य होता है, समष्टि का, एक वर्ग का। एक गोल का। एक गोत्र का। एक जाति का।

समष्टिवाद एक साचा है। एक ठप्पा है। उसमें एक ही प्रकार का रूप ढलता है। एक ही प्रकार का आकार टकित होता है। व्यष्टिवाद का प्रत्येक साँचा भिन्न है। प्रत्येक टक भिन्न है। प्रत्येक व्यष्टि

विशेषता रखता है। उसका अपना कुछ होता है। स्वावलम्बी एवं पूर्ण होने का प्रयास करता है। किन्तु समष्टिवादी, एक ही रूप, एक ही साँचे का प्रति रूप है। प्रतिकृति है। उसमें मौलिकता नहीं होती। उसकी मौलिकता समष्टि में विलीन हो जाती है। समष्टि हेतु मानव बलिदान कर दिया जाता है।

व्यष्टिवादी कहीं भी रह सकता है। किसी में मिल सकता है। किसी भी परिस्थिति में ढल सकता है। समष्टिवादी समष्टि से अलग होते हैं, विच्छिन्न हो जाता है। वह व्यष्टिवादी के आत्म-विश्वास एवं स्थिरता के सम्मुख ठहर नहीं सकता। किन्तु संगठित भौतिक समष्टिवादी शक्ति के सम्मुख व्यष्टि-वादी भी ठहर नहीं सका है। समष्टिवाद वर्षा जल है। वह उमड़ कर आता है। बढ़ आता है। नदी के कगार गिर जाते हैं। पाषाणशिलायें टूटकर गिर पड़ती हैं। प्राणी बह जाता है। परन्तु व्यष्टिवाद शीत-कालीन, ग्रीष्मकालीन शीतल गंगाजल है।

प्रवर्तक धर्म, प्रवर्तक दर्शन, समष्टिवादी है। निवर्तक धर्म व्यष्टिवादी। है प्रवर्तक संख्या पर, विस्तार पर, जोर देता है। निवर्तक व्यष्टि के गुण पर, विकास पर, चरित्र पर एवं पूर्णता पर जोर देता है।

बौद्ध धर्म समष्टिवादी है, प्रवर्तक धर्म है। प्रवर्तक धर्म होने पर भी, बौद्ध एवं हिन्दू, एक साथ रह सके हैं। बौद्धों के प्रवर्तक दर्शन एवं ईसाई और मुसलमानों के प्रवर्तक दर्शन में अन्तर है। ईसाई एवं मुसलमानों का ग्रन्थ एकेश्वर वादी है। किताबिया हैं। परन्तु बौद्ध धर्म अनीश्वर वादी है। निर्ग्रन्थ है। बुद्धि को प्राथमिकता देता है। कर्म में विश्वास करता है। संकीर्ण नहीं है। उदार है। बुद्धिवादी है। परन्तु ईसाई एवं मुस्लिम धर्म विश्वास वादी हैं। उनमें स्वतंत्र विश्वास, विवेक का स्थान नहीं होता। तर्क का स्थान नहीं होता। वह पूर्ण आत्मसमर्पण चाहता है।

बौद्ध दर्शन इस आत्मसमर्पण में विश्वास नहीं करता। भक्ति में विश्वास नहीं करता। बौद्ध धर्म समष्टिवादी एवं प्रवर्तक धर्म होने पर भी, कट्टरता, संकीर्णता, मूढ़ता एवं जड़ता के साथ गुँथ नहीं सका। शस्त्र के आधार पर, राजाश्रय के आधार पर, धर्म प्रवर्तन की कल्पना नहीं कर सका।

यही कारण है, किसी समष्टिवादी दर्शन देश में, ईसाई या मुस्लिम धर्म पनप नहीं सके। इसी प्रकार ईसाई जगत में, मुस्लिम जगत में, अन्य सम्प्रदाय फैल नहीं सके। जहाँ हिन्दू थे, जहाँ यहूदी थे, जहाँ पारसी थे, वहाँ वे पनप सके। इन्डोनेशिया, मलेशिया, हिन्दुस्तान, अफगानिस्तान, काश्मीर आदि हिन्दू देश थे। वहाँ मुस्लिम धर्म फैल सका। श्री लंका, बर्मा, थाइलैण्ड, कम्बोडिया, वीतनाम, लाओस, चीन एवं जापान में पैर नहीं जमा सका। वे देश प्रवर्तक धर्म के अनुयायी थे। समष्टिवादी थे। किन्तु थे कर्मवादी। कर्मवाद उन्हें मूढ़, जड़ एवं असहिष्णु नहीं बना सका। उन्हें दिया प्रगति। वे जीवित हैं। धर्म शक्ति के कारण।

भारत में मुस्लिम धर्म ने पैर जमाया। मुस्लिम शासन स्थापित हुआ। परन्तु समस्त भारत को अफगानिस्तान एवं काश्मीर के समान मुस्लिम धर्म में दीक्षित नहीं कर सका। कारण, भौगोलिक स्थिति है। भारत चारों ओर हिमालय के अतिरिक्त खुला है। काश्मीर की स्थिति भिन्न है। वह चारों ओर पर्वत मालाओं से दुर्ग के आकार सदृश घिरा है। उसकी स्थिति, उस कोठरी में बन्द व्यक्ति के समान थी, जो ताड़ित किया जाता है। चिल्लाता है। रोता है। आह भरता है। परन्तु आवाज बाहर नहीं जा सकती। कोई सुन नहीं सकता। कोई सहायता कर नहीं सकता। यही अवस्था बलूचिस्तान एवं सीमान्त प्रदेश की थी। भारत खुला मैदान था। उत्पीड़ित हिन्दू एक स्थान से दूसरे स्थान जा सकते थे। उनकी

रक्षा के लिए उत्तर म पर्वतीय क्षेत्र था, दक्षिण में पहाडियों की शृंखला थी। पश्चिम में रेगिस्तान था। मध्य में अरण्य था। वे कही भी जाकर रह मकते थे। कही से सहायता प्राप्त कर सकते थे। उनकी रक्षा सम्भव थी।

भारत में मुसलमान इतने सघर्ष रत थे। उनकी शक्ति एव समय स्वरक्षा चिन्तन मे ही व्यतीत हो जाता था। उनके शत्रु उनके ही भाई मुसलिम थे। भारत पर बाहर से आक्रमण करने वाले मुसलिम थे। मुसलिम धर्म भारत में मुगल काल में खूब फैला। मुगल काल में शान्ति थी। आर्थिक दशा ठीक थी। विदेशी आक्रमणो का भय नही था। हिन्दुओ को प्रताडित कर, विपन्न कर, उन्हें सघर्ष शील, जागरूक बनाने की अपेक्षा निर्जीव शान्त नागरिक बनाने का प्रयास किया गया। उन्हें मिलाकर, राजपद, राज सम्मान दकर, उनका मुख बन्द कर दिया गया। औरगजेब ने इसके विपरीत नीति का वरण किया, तो भारत भभक उठा।

प्रवर्तक वादी सुल्तानों ने धर्म परिवर्तन को प्रोत्साहित किया। नव मुसलिमो को राजसेवा, प्रश्रय, वित्त एव अर्थलाभ का लोभ दिया। जिज्जिया लगाकर, दुर्बलों गरीबों को धर्म परिवर्तन के लिए बाध्य किया। युद्ध में पराजितों, विजीतो को दास बनाकर, उन्हें मुसलमान बनाया गया। हिन्दू सामन्त कौटुम्बिक सघर्ष में, उत्तराधिकार सघर्ष में, पारस्परिक सघर्ष में, अपना पक्ष प्रबल करने के लिए, मुसलिम धर्म स्वीकार कर, शत्रुओ पर विजय पाते थे। विरोधियों को पद दलित करते थे। उच्च वर्ण के अत्याचार एव शोषण से बचने के लिए, सामाजिक विषमता के कारण, कठोर जाति बन्धन के कारण, ऐश्वर्य, अर्थ-लाभ अथवा स्त्री रस के कारण, दरबार में प्रतिष्ठा मिलने के कारण, एव कुछ निम्न कार्य, धर्म परिवर्तन कर लिए।

मुसलिम राज्य विभाजित होते गये। तुर्की साम्राज्य टूटा। अल्जीरिया, ट्यूनिशिया, साइप्रस, और मिश्र तुर्कों से अलग हो गये। त्रिपोली को तुर्की से अलग कर, इटली ने अधिकार कर लिया। क्रीमिया तथा जार्जिया रूस ने लिया। सर्विया, बल्गेरिया, यूनान तथा रूमानिया तुर्क प्रभाव से निकलकर, स्वतन्त्र हो गये।

तुर्की साम्राज्य टूटने पर, ईराक, जार्डन, लेबनान, सीरिया, सौदी अरबिया का राज्य बना। सेखों के अनेक लघु राज्य फारस की खाडी के तटों पर बने। फिलिस्तीन बँट गया। मिश्र बँट गया, सूडान अलग हो गया।

यमन, अदन की भी यही कहानी है। किन्तु इन सबमें एक साम्य था। वे परस्पर लडते थे, कटते थे, मरते थे। क्रूरता की सीमा पार करते थे। किन्तु गैर मुसलिम शक्ति के सम्मुख लौह दीवाल बन जाते थे।

इसराइल के प्रश्न पर, सब मुसलिम राष्ट्रो की एक आवाज है। हिन्दुस्तान-पाकिस्तान के साथ हुए तीनों युद्धों में मुसलिम देशों की एक आवाज थी। किसी ने भारत का समर्थन नही किया। मुसलिम प्रश्न उपस्थित होने पर, न्याय एव अन्याय पर, वे विचार नही करते। वे देखते हैं—अपना गोत्र। वे देखते हैं—अपना दर्शन, धर्म एव व्यवहार सहिता। उस समय वे राष्ट्रों का किया उपकार, व्यक्तियों का किया उपकार, भूल जाते हैं। मिश्र की भारत ने शस्त्रादि द्वारा सहायता की। रक्षा की। परन्तु वह भी भारत के साथ हुए, पाकिस्तान युद्ध में भारत का समर्थन नही कर सका।

यह मनोवृत्ति हल्दीघाटी के युद्ध में स्पष्ट रूपेण प्रकट हुई थी। मानसिंह और महाराणा प्रताप दोनों की सेना में राजपूत थे। दोनों की वेशभूषा समान थी। उन्हें पहचानना कठिन था। मानसिंह की

सेना अकबर के पक्ष में लड़ रही थी। मुसलिम सिपहसालार से पूछा गया। इस परिस्थिति में क्या किया जाय? उत्तर मिला, सब पर बाण वर्षा की जाय। मरेगा काफिर, वह चाहे स्वपक्षी हो या विपक्षी।

राजरस एवं स्त्री रस दोनों घातक हैं। स्त्री रस प्रवाह में मनुष्य अपना नैतिक एवं शारीरिक सन्तुलन खो देता है। उसका प्रभाव उसके कुल तथा शरीर तक सीमित रहता है। राजरस में मनुष्य नैतिक, शारीरिक शक्ति के साथ विवेक भी खो बैठता है। राजरस द्वारा प्रभावित व्यक्ति का प्रभाव, समस्त समाज, समस्त राष्ट्र एवं समस्त जनता पर पड़कर उसे दूषित बना देता है।

राज रस समष्टिवादी एवं स्त्री रस व्यष्टिवादी है। इन दोनों रसों का समावेश, जिस राजा अथवा राज पुरुष में होता है, वह अपने राज को ले डूबता है। किन्तु जब स्त्री रस भी समष्टि का रूप धारण करता है, तो देश का नैतिक स्तर गिरने लगता है। हिन्दू राजा बहु विवाह करते थे। परन्तु विवाह विधि द्वारा नियन्त्रित था। सुल्तानों के समय हरम का उदय हुआ। हरम बनने लगे। देश की सुन्दर से सुन्दर स्त्रियाँ सुल्तानों की सम्पत्ति समझी जाने लगीं। नव युवतियाँ सुल्तानों को भेंट दी जाती थीं। भारत से नव युवतियाँ तथा सुन्दर स्त्रियाँ फारस, अफगानिस्तान आदि मुसलिम देशों में भेंट रूप में भेजी जाती थीं। स्त्रियों की इस स्थिति के कारण देश का विवेक, नैतिक एवं सामाजिक स्तर गिरने लगा। दासी प्रथा प्रचलित हो गयी। सुल्तान तथा कुलीन मुस्लिम वर्ग बान्दियाँ रखने लगा। वे भोग्य सामग्री थीं। उनके बच्चे घृणा की दृष्टि से, त्याज्य दृष्टि से, नहीं देखे जाते थे। उनकी सन्ताने जारज नहीं मानी जाती थीं।

युद्ध में पराजित पुरुष वर्ग दास तथा स्त्रियाँ दासी बना ली जाती थीं। उनका धर्म स्वामी का धर्म होता था। स्त्रियाँ तथा दास सार्वजनिक रूप से बेचे और खरीदे जाते थे। सुन्दर कन्यायें नीलाम की जाती थीं। उनसे उत्पन्न सन्ताने अवैध नहीं मानी जाती थीं। वे एक मिल्लत के अंग बन जाते थे। इस प्रकार की सन्तानों से, जो गृह विहीन थे, उनका घर बसा। मुस्लिम संख्या बढ़ने लगी। उन्हें हिन्दू लेने के लिये तैयार नहीं थे। समाज में अपना स्तर ऊँचा बनाये रखने के लिये, वे सत्तारूढ़ मुस्लिम समाज में मिल गये।

बाबर के साथ आने वाले सभी मुगल सैनिक मुसलमान नहीं थे। हिन्दू उन्हें स्वीकार करने के लिये उद्यत नहीं थे। वे मुस्लिम धर्म स्वीकार कर, नव मुसलिम कन्याओं से विवाह कर, उनमें मिल गये। उनके समाज में मिल गये। वे हिन्दुओं के कट्टर विरोधी हो गये। हिन्दुओं ने उन्हें स्वीकार नहीं किया था। मुसलमानों ने उन्हें अपनाया था। इसकी प्रतिक्रिया होना स्वाभाविक है। नव मुस्लिम, मूल मुस्लिमों की अपेक्षा अधिक कट्टर हो गये। मुस्लिम समाज में ही, नव मुस्लिम तथा मुस्लिमों के दो वर्ग बन गये। नव मुसलिम वर्ग, अपना गोत्र, अपना समाज बढ़ाकर, शक्तिशाली होने का प्रयास करता था। नव मुसलिम नव उत्साह के साथ, मुसलिम धर्म का प्रचारक हो गया। यह वर्ग कालान्तर में दिल्ली के सुल्तानों के लिये समस्या बन गया। इसका प्रभाव राज्य तथा राज्य प्रासादों में पड़ा। वहाँ सन्तानों की वृद्धि के साथ ही साथ प्रासादीय षड्यन्त्र बढ़ने लगे। रक्तपात एवं हत्याएँ साधारण बातें हो गयीं।

कश्मीर में इस प्रकार के समाज का उदय हुआ। रिंचन बौद्ध था। काश्मीर का प्रथम विदेशी भोट्ट राजा था। उसने काश्मीर विजय किया। हिन्दू होना चाहता था। परन्तु तत्कालीन हिन्दू समाज ने उसे स्वीकार नहीं किया। क्या है। उसे मुसलमानों ने स्वीकार किया। उसे मुसलिम अल्प संख्यकों का समर्थन प्राप्त हुआ। हिन्दुओं की मूढ़ ग्राहिता के कारण, काश्मीर में विदेशी, गैर काश्मीरी शासन स्थापित होने की भूमिका बनने लगी।

गोत्र वृद्धि के इस दर्शन से हिन्दू समाज अनभिज्ञ था। इसके रहस्य से अनभिज्ञ था। हिन्दुओं की सख्या क्षीण होने लगी। विरोधी दर्शनावलम्बियो की सख्या बढने लगी। हिन्दू जाति उस दिवालिये वैंक के समान हो गयी, जिसमें कुछ जमा नही होता था। निकलता ही जात था। यह प्रक्रिया मुहम्मद विन कासिम के आक्रमण काल मे आरम्भ हो गयी थी। इस पर अकुश लगा एक हजार वर्ष पश्चात्। आर्य समाज एव ब्रह्म समाज के उदय के साथ। आर्य समाज के शुद्धि आन्दोलन का मुसलिम जनता विरोध करने लगी। शुद्धि तथा तवलीग ने राजनीतिक आन्दोलनो का रूप पकड लिया। बहुसख्यक हिन्दू अल्पसख्यक मुसलिमो को आतमसात कर जायँगे। यह भ्रान्ति फैल गयी। भारत विभाजन की नीव पडने लगी।

काश्मीर मुसलिम बहुल प्रदेश था। वहाँ प्रजा परिषद अथवा काग्रेस का सघटन नही हो सका। काश्मीर में डोगरा हिन्दू राज था। मुसलिम कान्फरेन्स की स्थापना हुई। मुसलिम कान्फरेन्स ने डोगरा राज के विरुद्ध आन्दोलन आरम्भ किया। हिन्दू अल्प सख्यक थे। काश्मीर उपत्यका में कठिनता से दश प्रतिशत थे। उनसे मुसलिम जनता को भय नही था। ग्रामों में, पर्वतो में, जहाँ कुछ हिन्दू थे, वे भी मुसलमान बना लिये गये। काश्मीर में आजादी का आन्दोलन मुसलिम कान्फरेन्स द्वारा आरम्भ किया गया। उसने कालान्तर में नेशनल कान्फरेन्स का रूप ले लिया। भारत से काश्मीर की अलग स्थिति है। यह आन्दोलन मुस्लिम सम्प्रदायवादियो ने आरम्भ किया। वे काश्मीर में मुस्लिम दर्शन समर्थित राज्य चाहते थे। एक वर्ग पाकिस्तान द्वारा प्रेरित पाकिस्तान समर्थक था, दूसरा सम्प्रदाय काश्मीर की स्थिति बगला देश जैसी करना चाहता था। वह काश्मीर को स्विट्जरलैंण्ड बनाना चाहता था। इस प्रकार के पक्ष, विपक्ष मुस्लिम काश्मीरी जनता में हो गये। उन्हें भारतीय तन्त्रीय शासन से अरुचि थी। उनके उस दर्शन के विरुद्ध पडता था, जिसमे दूसरे मत का स्थान होता था।

यह दर्शन देश की सीमा में विश्वास नही करता था। राष्ट्रवादी नही था। मिल्लते इस्लाम का अविभाज्य अग था। वह एक था। उसके खुदा और इस्लाम के बीच कोई माध्यम नही था। वह खुदा उसका था। खुदा की मेहरवानी, बरकत, क्षमा, उसे, प्राप्त थी। देश भक्ति खुदा की भक्ति मे हिस्सेदार होती, अतएव देश के लिये त्याग की भावना का उदय मुसलिम जगत में नही हुआ। उसकी निष्ठा केवल मिल्लत के प्रति थी। उस निष्ठा को किसी प्रकार विभाजित नही करना चाहता था।

देश की सीमा बनती है, विगडती है। अफगानिस्तान, ईराक सीरिया, लेवनान, जार्डन कभी एक राष्ट्र बनकर, विकसित नही हो सके। ईरान की भाषा भिन्न थी, सम्प्रदाय भिन्न था, ईरानी शिया थे, उनके चारों ओर सुन्नी थे। इस सम्प्रदाय एव भाषा वैभिन्य के कारण उसका व्यक्तित्व भिन्न रहा। एक देश बना रहा। देश की इकाई का आधार राष्ट्रीयता नही थी। सम्प्रदाय एव भाषा थी। इतिहास एव परम्परा थी। उसका अपना दर्शन था। सुन्नियों के विरोध के कारण, रक्षा भावना के कारण सघटित था। उसमें भावात्मक एकता थी।

तुर्किस्तान के तुर्कों में भी राष्ट्रीयता आ नही सकी। राष्ट्रीयता के लिये पुरानी परम्परा एव इतिहास की पीठिका होना आवश्यक है। उनके कारण भावात्मक एकता होती है। मुसलिम बनने के पश्चात पुरातन अध्याय बन्द होता है। मर जाता है। नवीन अध्याय खुलता है। पुरातन के प्रति निष्ठा एव स्नेह का अभाव होता है। सीरिया, अफगानिस्तान, ईराक आदि के सम्बन्ध में भी यही बात कही जायगी। उनमें राष्ट्रीयता का उदय नही हुआ। इस समय जो राष्ट्रीयता की छाया दिखायी देती है। वह पश्चिमी देशों का प्रभाव है। बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध तक राष्ट्रीयता गौण एव मिल्लत प्रधान थी। इस मिल्लत की

केन्द्र मानकर मुस्लिम जगत की समस्त प्रक्रियायें चक्कर मारती रहती थीं। उसके परे उनके लिये कुछ नहीं था।

अटलांटिक महासागर से रावीतट का विस्तृत भूखण्ड, विशाल जन समुदाय का प्रेरणा स्रोत पवित्र कावा था, कार्यक्षेत्र मिल्लत था, विचारक्षेत्र कुरान शरीफ था। उनके अतिरिक्त और किसी का महत्व नहीं था। वे एक अन्तर्राष्ट्रीय मुसलिम जगत के प्राणी थे। उनकी जाति एक थी, धर्म एक था, दर्शन एक था, ईश्वर एक था, देवस्थान एक था। इस एकत्व की कठोर सीमा में, द्वैत का, दूसरे का, स्थान नहीं था। अतएव एक देश की कल्पना नहीं उठ सकी। मुसलिम देशों में देशभक्ति के आधार पर संघर्ष नहीं हुआ है। संघर्ष होता था, सुल्तानों में, शासकों में, राज्य के लिये। संघर्ष हुआ, एक कबीला का दूसरे कबीला के साथ। एक वंश का दूसरे वंश के साथ। एक शासक का दूसरे शासक के साथ। जिनका आधार पारस्परिक स्वार्थ एवं स्पर्धा थी।

दूसरी अप्रैल सन् १९७२ ई० को वाशिंगटन में जार्डन के सुल्तान हुसेन के वक्तव्य से इसका दर्शन होता है—'मैं विश्वास करता हूँ कि जरुशलम, महात्मन इब्राहीम, ईसा तथा मुहम्मद का है। सेमेटिक लोगों का है। एक ही परम्परा के मानने वालों का है। अतएव वह यहूदी, ईसाई और मुसलमानों की एकता का केन्द्र हो सकता है।' यहाँ भी अपील की गयी है। एक दर्शन के नामपर न कि देश एवं जाति के नाम पर।

देश किंवां राष्ट्र की आत्मा संस्कृति है। वह एक सूत्र में बाँधकर राष्ट्र का रूप देती है। उसे सांस्कृतिक राज्य कह सकते हैं। मुस्लिम दर्शन में देश की इस संस्कृति का कोई स्थान नहीं है। उनकी एक ही संस्कृति थी। वह थी आधारित, उनके दर्शन पर। भारत के मुसलमान भारतीय जाति एवं भारतीय रक्त वंशज होते हुए भी भारतीय संस्कृति में विश्वास नहीं कर सके। उनके लिये भारतीय संस्कृति मर चुकी थी। इन दो विचारों के कारण दो नेशन सिद्धान्त का प्रतिपादन जिन्ना ने, मुसलिम लोगों ने किया। उन्होंने निश्चय किया। हिन्दू एवं मुसलमान एक साथ नहीं रह सकते। वे दो भिन्न हैं। अतएव दो भिन्न देश पाकिस्तान एवं हिन्दुस्तान बन गये। यह कृत्रिम राष्ट्रीयता थी। यह राष्ट्रीयता पश्चिमी और पूर्वी पाकिस्तान को एक साथ नहीं रख सकी। भाषा के नाम पर, सिन्ध, बलूचिस्तान, पख्तूनिस्तान का नारा बुलन्द होने लगा। देशभक्ति की भावना जड़ नहीं जमा सकी। वह उनकी प्रकृति के विरुद्ध पड़ता था।

ज्येष्ठ पुत्र के उत्तराधिकार का सिद्धान्त आर्यों में मान्य था। मुस्लिम दर्शन में इसका कोई स्थान नहीं था। उनका दर्शन विभाजन में विश्वास करता था। सम्पति के उत्तराधिकार में उसका भाग निश्चित था। मृतक की सम्पति बँट जाना चाहिये। पूँजीवाद एवं शोषण की समाप्ति का एक उपाय निकाल लिया गया था। संग्रह नही, विभाजन आदर्श था। एक के पास विशाल भूखण्ड, विशाल राज्य नहीं रहना चाहिये। वह सब मिल्लत का है। उसका विभाजन अपेक्षित है। किन्तु यह दर्शन मानव प्रकृति एवं व्यवहार के विरुद्ध था। सम्पति बचाने के लिये मुसलमानों में परस्पर, एक ही गोत्र, एक ही कुल में विवाह सम्बन्ध होने लगे। सुल्तान अपनी कन्याओं का विवाह कर, बाहरी तत्वों को अपने कुल में प्रवेश यथासम्भव नहीं करने दिये। मानव प्रकृति संग्रही होती है। वह अपने कुल, वंश, गोत्र एवं जाति की वृद्धि चाहती है। अपनी परम्परा स्थिर रखना चाहती है। सुख एवं सुरक्षा की दृष्टि से संचय करना चाहती है। असंग्रही एवं संग्रही दोनों प्रकृतियों में द्वन्द्व होता रहा है।

इस द्वन्द्व का रक्तरंजित इतिहास उत्तराधिकार के लिये होने वाले रक्तपात एवं संघर्ष में है। उत्तराधिकार हेतु अगणित संघर्ष हुए हैं। वह इतिहास इतना रक्तरंजित हैं, क्रूर है कि उसने पढ़ने की, उसके जानने की, इच्छा नही होती, मन विरक्त होता है।

राज्य की शक्ति उसकी एकता में है। विशालता में है। यदि उत्तराधिकार सिद्धान्त के अनुसार राज्य भी पुत्रों किंवा हिस्सेदारों में विभाजित किया जाय, तो राज्य की इकाई टूट जायगी। राज्य विभाजित हो जायगा। सुल्तानों ने धर्मादेश के विरुद्ध सर्वदा एक पुत्र को उत्तराधिकारी बनाने का प्रयास किया है। उत्तर प्रदेश में मुसलिम तथा हिन्दू ताल्लुकदारों ने उत्तराधिकार ताल्लुकेदारी कानून के अनुसार मानते हैं। ज्येष्ठ पुत्र को ही ताल्लुक किंवा रियासत दी जाने लगी।

साम्य सिद्धान्त मुस्लिम दर्शन का केन्द्रविन्दु है। सबका अधिकार समान है। इसलिये खलीफा का प्रारम्भ में निर्वाचन होता था। वहाँ दास या स्वतन्त्र कोई भी खलीफा हो सकता है। कोई भी सुल्तान चुना जा सकता था। परन्तु यह निर्वाचन प्रथा चल नही सकी। परिणाम हुआ है। वंशगत षड्यन्त्रों, सैनिक कूपो, वंशीय कूपों, दलगत कूपों, गोत्रीय कूपों द्वारा मुसलिम जगत त्रस्त हो गया है।

राष्ट्रीयता होने पर, मनुष्य राष्ट्र के लिये मरता है। उसकी निष्ठा राष्ट्र एवं राष्ट्र नेता के साथ होती है। राष्ट्रजनों के साथ होती है। वह उन सब के लिये मरता है, जो उसके नागरिक हैं। उसका स्वार्थ समष्टिवादी होता है। स्वार्थ एकाकी न होकर उदार होता है। स्वार्थ-व्यक्ति, कबीला, कुटुम्ब, गोत्र से हटकर, समष्टि में निहित होता है। वह स्वार्थ, राष्ट्र का स्वार्थ, राष्ट्रहित का प्रतीक होता है। किन्तु मुस्लिम जगत में प्रतीक है मिल्लत। उनके दर्शन का प्रतीक है, उनकी अन्तर्राष्ट्रीयता। वे मरते है, धर्म, दर्शन, सम्प्रदाय, गोत्र तथा कुटुम्ब के लिये। वे दूसरी जाति, दूसरे धर्म, दूसरे मत, दूसरे सम्प्रदाय, दूसरे दर्शन के लिये उत्सर्ग करना नही सीखें। उनके लिये वे महत्वहीन होते थे।

मुस्लिम राजशास्त्र राज्यों का केवल तीन वर्गीकरण करता है। दारुल इस्लाम, ( मुस्लिम देश ), दारुल हर्ब ( विधर्मियों ) का देश तथा दरुल सुलह या अमन। दारुल हर्ब को दारुल इस्लाम में परिणत करना मुस्लिम राजशास्त्र का केन्द्रविन्दु है। देवाधि राजतन्त्र मानने के लिये वाध्य हो जाता है। वह विश्वास करता है कि दारुल इस्लाम एवं दारुल हर्ब में उस समय तक संघर्ष जारी रहेगा, जब तक सब दारुल हर्ब दारुल इस्लाम में परिणत नही हो जाते। यह पुण्य कार्य ईश्वर का कार्य माना जाता है। अतएव उन मुसलमानों, उन सुल्तानों, उन शासको को कैसे दोष दे सकते है, जिन्होंने गैर मुसलिम देशो को अपने मिल्लत, अपने सम्प्रदाय में एन-केन-प्रकारेण सम्मिलित करने का प्रयास किया था ?

मुस्लिम राजशास्त्र जजिया अदा करने के लिये एक और वर्गीकरण करता है। दारुल इस्लाम, दारुल हर्ब तथा दारुल सुलह के साथ एक वर्गीकरण किताबियों और गैर किताबियों का है। यहूदी एवं ईसाई किताबियाँ है। गैर किताबियों के लिये इस्लाम और मौत के अतिरिक्त और कोई विकल्प नही रखा गया है। परन्तु किताबियों को जीने का अधिकार जजिया ( जिज्य ) देने के पश्चात होता है। उनके देशों पर विजय पश्चात, वयस्कों से जजिया वसूल पूर्वकाल में किया जाता था। यह धर्मकर था। भारत में तीन से बारह रुपया प्रतिवर्ष गैर मुसलिम वयस्कों से लिया जाता था। विजित देशों में किताबियों को रहने के लिये यह धर्मकर देना पड़ता था। मिस्र में जजिया देने पर, गले में सीसा की एक मुहर लटकाना पड़ता था। इस बात का प्रमाण होता था कि, व्यक्ति ने जजिया दे दिया है और गैर मुसलिम है। उसे सल्तनत में रहने का सीमित अधिकार है।

फारस में जजिया कर था। यह कर केवल ऐसे व्यक्तियों से लिया जाता था जो २० से २५ वर्ष

की आयु के थे। बीस वर्ष से कम तथा २५ वर्ष से ऊपर की आयु से कर नहीं लिया जाता था। इसका तीन वर्गों में वर्गीकरण किया गया था। सबसे श्रेष्ठ वर्ग से १८ दिरहम, मध्यम वर्ग से आठ या ६ दिरहम तथा निम्न वर्ग से चार दिरहम लिया जाता था। कर राजकीय कोष में प्रति तीसरे मास जमा किया जाता था। धनी, सैनिक, पुजारी, कातिब, राजकीय कर्मचारी आदि इस कर से मुक्त थे। मुसलिम शासन में धार्मिक कर रूप में गैर मुसलमानों से वसूल किया जाता था। भारत जैसे विशाल देश को तत्काल दारुल इसलाम में परिणत करना सम्भव नहीं था। उन्हें मौत की घाट उतारना कठिन था। कालान्तर में हिन्दुओं को किताबिया मानकर, उनपर जजिया लगा दिया गया। प्रारम्भ में जजिया से ईसाई पादरी तथा यहूदी रबी मुक्त थे। परन्तु बाद में उनपर लगा दिया गया। फिरोज तुगलक ने ब्राह्मणों पर सर्वप्रथम जजिया लगाया था। उसके पूर्व जिज्यः से ब्राह्मण मुक्त थे। काश्मीर में ब्राह्मणों पर जिज्यः लगाया गया, तो राजतरंगिणी-कारों ने उसकी खुलकर निन्दा की।

इस प्रकार एक ही राज्य में दो प्रकार के नागरिक, दो प्रकार की विधि, कानून एवं राज्य व्यवस्था हो गयी। एक मुसलमानों के लिए तथा दूसरा गैर मुसलिमों के लिए थी। मूर्तिपूजक एवं मूर्ति-विध्वंसक का मार्ग अलग था। उनकी दिशा अलग थी। उनका परिधान अलग था। काश्मीर में सिकन्दर बुतशिकन, अलीशाह सुल्तानों के समय हिन्दू, मुसलमानों के समान कपड़ा नहीं पहन सकते थे, घोड़ों की सवारी नहीं कर सकते थे, और न हथियार रख सकते थे।

दारुल सुलह की संख्या निश्चित कर दी गयी थी। वह बढ़ायी और घटायी नहीं जा सकती थी। ये सब मान्यतायें सर्वसाधारण मुसलमानों में घर कर गयी थीं और उनके जीवन-दर्शन की अंग थीं।

धर्म के लिए विरोधियों से युद्ध करना जिहाद था। जिहाद का नारा, जब एक मुसलिम देश किसी गैर मुसलिम देश से संघर्ष करता है, तो बुलन्द हो उठता है। अरब देशों का फिलस्तीन के विरुद्ध, पाकिस्तान का हिन्दुस्तान के विरुद्ध, जिहाद का नारा बुलन्द करना फैशन हो गया है। जिहाद प्रत्येक व्यक्ति, सुल्तान एवं शासक का फर्ज माना गया है। यदि कोई मुसलिम देश या वहाँ का शासक, जिहाद का नारा बुलन्द करता है, अथवा नारे के आह्वान पर कार्य करता है, तो इस दर्शन के अनुसार, उसे कैसे दोष दिया जा सकता है?

मुसलमानों के लिए कलमा, जकात, रोजा, नमाज तथा हज पाँच फर्ज माने गये हैं। जिहाद की गणना पाँच फर्जों में नहीं है। किन्तु उसकी मान्यता मुसलिम जगत में छठवें फर्ज से दी गयी है। उसे फर्ज अलकिफाय कहते हैं। यह सभी वयस्क पुरुषों का फर्ज है। जिहाद का उद्देश्य दारुल हर्ब को दारुल इसलाम बनाना है। दारुल इस्लाम मुसलिमों का निवासस्थान, शान्ति का देश, तथा दारुल हर्ब संघर्ष एवं युद्ध का स्थान है। यदि मुसलिम देश दारुल हर्ब हो जाय तो मुसलिमों का कर्तव्य है कि वे उसका त्याग कर दें। जो स्त्रियाँ इस परिस्थिति में साथ नहीं जा सकती थी, उनको तलाक देना आवश्यक माना है। दारुल सुलह केवल नादिरान तथा नुबिया है। मुसलिम देशों की सुलह इन्हीं दोनों देशों से हो सकती है।

सिद्धान्त एवं दर्शन परिस्थितियों के मुखापेक्षी है। जिहाद का नारा उस समय सफल हुआ या होता है, जब तलवार के जोर से अपनी इच्छा या बात दूसरों पर लादी जा सकती है। इसराइल के खिलाफ, अरब देशों तथा पाकिस्तान का जिहाद का नारा भारत के खिलाफ इसलिये बेकार हुआ कि उनकी सैनिक शक्ति असफल हो गयी थी। यह नारा आधुनिक जगत में आकर्षणहीन हो गया है। मुसलिम जगत और गैर मुसलिम जगत से युद्ध की स्थिति, संघर्ष की स्थिति समाप्त हो चुकी थी।

पुरानी मान्यतायें आधुनिक वैज्ञानिक युग में आकर्षण खो चुकी है। ईसाई जगत किताबिया है। मुसलिम जगत किताबिया है। यहूदी जगत किताबिया है। मुसलमान किताबियो के देश में निवास कर सकते है, यह केवल किताबी दर्शन होकर रह गया है। कोई मुसलमान आज इसराइल में जाकर रहने के लिये तैयार नही है। भारत से कट्टरपन्थी विभाजनवादी सब मुसलमान पाकिस्तान में जाकर आबाद नही हो सके। अर्थ का स्थान भी राजनीति में होता है। आर्थिक समस्यायें आज राजनीति को धर्म एव सम्प्रदाय से अधिक प्रभावित करती है। वर्तमान जगत सातवी और आठवी शताब्दी का नही रह गया है और न रह गया है, मध्ययुग का।

भारत विभाजन के पश्चात् भारत में जम्मईत इस्लामी आदि कट्टरपन्थी दल बने। भारत के बाहर आर्थिक कठिनाइयों के कारण आबाद होना कठिन था। हकूमते इलाही का नारा बुलन्द किया। भारतीय राज्य की निष्ठा में उनका विश्वास नही था। यहाँ तक कि राशन का अनाज भी वे इसलिये नही खरीदते थे कि वह दुकान सरकारी थी। यदि उनकी चलती तो दारुल हर्ब हिन्दुस्तान को दारुल इस्लाम में परिणत कर देते। इस लोकतन्त्रीय काल में सामन्तवादी, सम्प्रदायवादी, उपनिवेशवादी, साम्राज्यवादी, देवाधितन्त्रवादी विचारधारायें चल नही सकती और लादी नहीं जा सकती। पूर्वी पाकिस्तान अलग बंगलादेश बना। बिहारी मुसलमानों को बगलादेश लेने के लिये तैयार नही है। उनकी मुसलिम एकता का नारा, निरर्थक प्रमाणित हुआ है। पश्चिमी पाकिस्तान द्वारा इस्लाम के नाम पर इस्लाम मानने वाले दस लाख से ऊपर मुसलमान बगलादेश में मारे गये। महिलाओं पर अत्याचार किया गया। परन्तु पाकिस्तानी जगत की मुसलिम जनता, अन्ध बनी, इन अत्याचारो की मूकद्रष्टा थी। उसे पाकिस्तान का विघटन इसलिये अच्छा नही लग रहा था कि मुसलिम प्रतिक्रियावादी शक्तियाँ क्षीण होती और दारुल हर्ब हिन्दुस्तान की शक्ति बढेगी।

काश्मीर मुसलिम-बहुल प्रदेश है। वहाँ धार्मिक, जेहाद, स्वतन्त्र काश्मीर, आत्म-निर्णय आदि के साम्प्रदायिक सुहावने नारे बहुत लगते है। काश्मीर में विभाजन के पश्चात जेहाद के नारे पर, काश्मीर में प्रवेश कर, पाकिस्तान की सेना ने मुसलिम जनता पर अत्याचार किया था। मुसलमानों को लूटा था। मुसलमान स्त्रियों की इज्जत लूटी थी। मुसलमानों का घर फूंका गया था। मारे गये हम-जातीय। साम्प्रदायिकता का नारा, मिल्लते इसलाम का नारा, आक्रमकों, आततायियों को सन्तुलित नही रख सका। इसलिये जब कभी साम्प्रदायिक दर्शन पर, आधारित देवाधिराज, अलौकिक राज्य की स्थापना होगी, रक्तपात होगा, उलझनें पैदा होंगी, अराजकता फैलेगी, विकास एव प्रगति कुण्ठित हो जायेगी। यदि बौद्ध, ईसाई एव हिन्दू जगत में इस दर्शन का अनुकरण किया जाय, तो वहाँ के निवासी मुसलमानों की क्या अवस्था होगी ?

यह बातें केवल मुस्लिम दर्शन पर लागू नही होती। ईसाई तथा यहूदी भी इस वर्ग में आते हैं। द्वितीय महायुद्ध के पश्चात फिलस्तीन राष्ट्र का निर्माण हुआ है। वहाँ शतप्रतिशत उन यहूदियों की आबादी है, जो विदेशों से आकर आबाद हुये है। निसन्देह पूर्वकाल में यह यहूदियों का देश था। वहाँ से वे सहस्त्रो वर्ष पूर्व उद्वासित किये गये थे। उनका मन्दिर एव देवस्थान नष्ट किया गया था। वे विश्व में बिखर गये। पुन एकत्रित हुये। एक राष्ट्र बने। उन्हें अपना देश मिला। वे एक दर्शन, एक धर्म, एक जाति के नारा पर मिले। इसराइल राष्ट्र की नीव जातीयता पर रखी गयी। इसराइल में गैर यहूदी अथवा अन्य धर्मावलम्बी पनप नही सकता। राष्ट्र का ढाँचा एकांगी दर्शन पर आधारित है। लौकिक किंवा धर्मनिरपेक्ष राज्य का विकास वहाँ हो नहीं सकता। जिस दर्शन के कारण यहूदियों को उनके मूल-

जन्म-स्थान से भाग कर, अथवा ईसाई एवं मुसलमानों से उद्वासित होकर, विश्व के कोने-कोने में आवाद होना पड़ा है, उन्हीं कारणों से दूसरे दर्शन वाले, इसराइल में आज आवाद नहीं हो सकते। वहाँ के मूल-निवासी अरबों की वही दशा हुई, जो पश्चिमी पाकिस्तान में, वहाँ के मूल-निवासी हिन्दुओं की हुई है। इसराइल अरबों अथवा अन्य धर्मावलम्बी को अपने देवाधिराज में फोड़े की तरह नहीं पालना चाहता, जो किसी दिन फूट सकता था। जैसा काश्मीर में, शाहमीर के समय, यह फोड़ा फूटकर, समस्त काश्मीर का रूप वदल दिया।

हिटलर को यहूदियों की निष्ठा पर अविश्वास था। स्पष्ट घोषित करता था। यहूदी जिस देश में रहते हैं, उसे अपना राष्ट्र नहीं मानते। धर्म एवं राष्ट्र समय पड़ने पर किसे वरीयता दी जाय, वह समस्या उपस्थित होने पर, वे राष्ट्र की निष्ठा त्याग कर, धर्म की निष्ठा का निर्वाह करते हैं। वे अन्तर्राष्ट्रीय जाति के रूप में सर्वत्र, निवास एवं व्यापार करते हैं। हिटलर तर्क देता है, जो अन्तर्राष्ट्रीयता में विश्वास करता है, वह राष्ट्रीयता में कैसे विश्वास कर सकता है ? उसका विश्वास, उसकी निष्ठा दो स्थानों पर नहीं हो सकती। हिटलर की निष्ठा जर्मनी के प्रति थी। राष्ट्र के प्रति थी। वह आर्यजाति का प्रभुत्व चाहता था। वह आर्य रक्त एवं नील नेत्र का समर्थक था। उसने ईसाई होते भी राज्य का प्रतीक आर्यों का चिह्न स्वस्तिक रखा। आर्य विरोधी परम्परा एवं सेमेटिक जाति का विरोधी था। उसने यहूदियों को जर्मनी से उद्वासित किया। जो नहीं जा सके, उनकी जीवन-लीला समाप्त की गयी। अनुमान लगाया गया है। आठ लाख यहूदी हिटलर द्वारा नष्ट किये गये। अपना देश, अपना राष्ट्र वनने पर, यहूदी गैर यहूदियों के साथ यही करने लगे, उनके ऊपर जो वीती थी, उसे दूसरे पर विताने लगे।

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जब मानव, चन्द्रमा एवं मंगल पर पहुँच रहा है, क्षितिज की सीमा पार कर रहा है, उस समय भी इस जगत में इस दर्शन की सीमा से वाहर निकल कर, मुक्त विचार का प्रयास नहीं किया गया है। यदि काश्मीर में आज से पाँच शताब्दी पूर्व इस तरह की वातें की गयीं तो क्या आश्चर्य है ? इतिहास अपनी पुनरावृत्ति करने से नहीं चूकता।

अपने प्रारम्भिक काल में ईसाई जगत इसी प्रकार के दर्शन से प्रभावित था। ईसाइयों ने चार चरणों की कल्पना की थी। प्रथम चरण में आदम का पतन हुआ। आदम के पाप, उसके पतन का प्रायश्चित्त, अभी तक उसकी सन्तानें कर रही हैं। इस प्रायश्चित्त का काल कव समाप्त होगा कहना कठिन है।

दूसरा चरण इस जगत को ईसाई धर्म में दीक्षित करना है। विना ईसा पर, वाइविल पर, ईमान लाये, मुक्ति असम्भव है। ईश्वर की कृपा किंवा आशीर्वाद पाना असम्भव है। जव तक समस्त जगत ईसा एवं उनके दर्शन पर विश्वास नहीं करता, तव तक जगत का कल्याण असम्भव है। तीसरा चरण मानव के कल्याणार्थ ईसा का क्रास पर चढ़ना एवं उनका आत्मोसर्ग है। मानव के लिये क्रास पर चढ़ने के कारण क्रास वलिदान का प्रतीक हो गया है। ईसाई जगत का प्रतीक हो गया है। प्रत्येक ईसाई के कण्ठ में क्रास झूलता है। अथवा शरीर पर क्रास का चिन्ह बना दिया जाता है। ताकि मृत्यु के पश्चात भी, क्रास उनके शरीर के साथ लगा रहे।

चौथा तथा अन्तिम चरण-पुनरुत्थान है। ईसा के कारण इस जगत का कल्याण होगा। इसी दर्शन के कारण ईसाई प्रवर्तक धर्म हो गया। उसने भी राष्ट्र की कल्पना नहीं की। जिस देश में ईसाई थे, वहाँ के लिये ईसा ने स्पष्ट कहा, जो सीजर अर्थात् राजा का अंश है, उसे राजा को दिया जाय। ईसाइयों ने

जन्मभूमि की, राष्ट्र की, कल्पना नही की। यूनान तथा रोमन साम्राज्य में जब ईसाइयो के सम्मुख देश एव धर्म में चुनने का प्रश्न उठा। उन्होने धर्म को चुना। धर्म के प्रति निष्ठा प्रकट की। इस प्रकार एक ही देश में दो प्रकार की निष्ठायें थी। प्राथमिकता धार्मिक निष्ठा को मिली। धर्म की निष्ठा, देश, राजा, शासन को प्रभावित करने लगी।

धर्म के प्रति निष्ठा भी स्थायी नही रह सकी। उसका भी विभाजन हुआ। यह निष्ठा रोमन कैथोलिक, प्रोटेस्टेण्ट, इस्टर्न, सिरीयन तथा ग्रीक अर्थोडाक्स चर्च मे विभाजित हो गयी। धर्मनिष्ठा क्षीण होती गयी। राष्ट्र के प्रति निष्ठा बढती गयी। देश के प्रति निष्ठा सुदृढ हो गयी। समस्त यूरोप, अमेरिका, आस्ट्रेलिया के ईसाई हो जाने के पश्चात धर्म परिवर्तन का प्रश्न नही रह गया था। प्रश्न हो गया, किस चर्च का कौन अनुयायी है? विज्ञान की प्रगति, ग्रीक स्वतन्त्र विचारको के दर्शनों का अध्ययन, लोकतान्त्रिक प्रवृत्ति के कारण, यह निष्ठा अधिकाधिक राष्ट्र में केन्द्रित होने लगी। भाषा ने उसमें योगदान दिया।

नूतन बाइबिल इबरानी भाषा मे नही लिखी गयी थी। प्रभु ईसा मशीह की कथित भाषा में नही लिखी गयी थी। ईसाई जगत के लिये कोई एक भाषा पवित्र एव धार्मिक नही थी।

बाइबिल ग्रीक और लैटिन में लिपिबद्ध की गयी थी। प्रयास हो रहा है। नवीन बाइबिल का अनुवाद मूल इबरानी भाषा में कर दिया जाय। मुसलमानो ने अरबी तथा यहूदियो ने इबरानी भाषा को पवित्र मान लिया है। उनका ग्रन्थ तुरात इबरानी तथा कुरान शरीफ अरबी में लिखी गयी है। भाषा की यह एकता यहूदी तथा मुसलमानो को एक साथ रखने में सफल हुई है।

ईसाइयो के लिये बात भिन्न थी। लैटिन भाषा यूरोप की भाषाओ की जननी मानी जाती है। भाषा देश एव जाति को एक सूत्र में बाँध रखने में सहायक होती हैं। यूरोप में अनेक भाषायें, ग्रीक, लैटिन, स्पेनिश, फ्रेंच, रूसी, आयरिश, इगलिश, गाथिक, कैन्ट, अवेस्ता, लिथुयानी, जर्मन, साल्व, अल्वानी आदि हैं। भाषा के कारण प्रत्येक भाषाभाषी देश मे एक भावात्मक एकता का उदय हुआ है। रहन-सहन एव प्राकृतिक वातावरण के कारण वे एक हो गये है। प्रकृति का प्रभाव उन्हें एक बना दिया है, उनकी सस्कृति, उनकी परम्परा तथा उनकी सभ्यता को जन्म दिया है। उनके साहित्य में स्थानीय प्रकृति वर्णन, स्थानीय गाथा एव स्थानीय गीतो का प्राचुर्य होने लगा। वे अपने देश, अपने प्राकृतिक वातावरण में रहकर सहस्त्रो मील दूर स्थित, किसी परम्परा, किसी गाथा, किसी इतिहास अथवा किसी वश-परम्परा से सम्बन्ध स्थापित कर, अपने साहित्य पर विदेशी रग चढाना पसन्द नही किये। उनकी प्रवृत्ति के यह अनुकूल नही था।

भारत के मुसलमानों ने फारसी लिपि में लिखना, फारसी में बोलना तथा फारसी में रचना का प्रयास किया। काश्मीर में पीर हसन ने सन् १८६० में काश्मीर का इतिहास फारसी में लिखा किन्तु वह साहित्यिक कृति नही हो सकी। आज कौन फारसी भाषा जानता और लिखता है? विदेशी भाषा में कवि अपना भाव व्यक्त नही कर पाता, उसमें मौलिकता नही आती। भाषा भी जैसे किसी दर्शन की सम्पत्ति हो गयी। उर्दू को मुसलमान अपनी भाषा और हिन्दी को हिन्दू राष्ट्रभाषा मानने लगे।

इन कट्टरपन्थी दर्शनो से जरा हटकर, जिसने विचार किया, वह स्वतन्त्रता की सास लेने लगा। बंगलादेश में यही प्रक्रिया हुई। उनका साहित्य, उनका इतिहास, बगला में था। उर्दू जबर्दस्ती उन पर लादी गयी थी। समय आते ही उन्होंने उर्दू को उठाकर, फेंक दिया।

काश्मीर में फारसी राजभाषा बनायी गयी। सुल्तानों का राज्य समाप्त हुआ। फारसी लोप हो गयी। भाषा लादने का यह कृत्रिम प्रयास था। राजशक्ति द्वारा लादा गया था। मुगलों ने तीन शताब्दियों तक भारत में फारसी को राजभाषा मानकर प्रश्रय दिया। उनके साम्राज्य लोप के साथ, फारसी का भी लोप हो गया। उसके स्थान पर अंग्रेजों ने अंग्रेजी चलाई।

मैंने वकालत आरम्भ किया। उत्तर प्रदेश, पंजाब, राजस्थान आदि स्थानों पर अदालतों में उर्दू चलती थी। दस्तावेज, अर्जीदावा, बयान तहरीरी उर्दू में लिखे जाते थे। उत्तर प्रदेश की अस्सी प्रतिशत जनता उर्दू नहीं जानती थी। काशी में ९८ प्रतिशत व्यक्ति न तो उर्दू पढ़ सकते थे और न लिख। हम पर सन् १९४७ ई० तक उर्दू लदी थी। हम लोग दो मुहर्रिर रखते थे। एक का काम उर्दू से नागरी लिपि में कागजों का लिखना था। जनता, मुन्सिफ, कर्मचारी, वकील आदि हिन्दू अधिक थे। परन्तु ऐसी भाषा में हम कार्य करते थे। जिसे कोई समझता नहीं था।

अंग्रेज आजादी के पूर्व मुस्लिमों को प्रसन्न करने की नीति का अनुकरण करते थे। आजादी आन्दोलन के कारण अंग्रेज हिन्दू विरोधी हो गये थे। आजादी मिलते ही बात बदल गयी। सब काम हिन्दी में होने लगा। जनता, जज, वकील सबको सरलता हो गयी। उर्दू जैसे बीते युग की भाषा बिहार, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, हिमांचल तथा हरियाना में हो गयी।

अंग्रेजी की भी यही गति हुयी। अंग्रेजी तथा हिन्दी को आज समान स्तर दिया गया है। स्कूलों एवं कालेजों में स्थानीय भाषाओं के शिक्षा का माध्यम होने के कारण अंग्रेजी लोप हो रही है। कृत्रिम प्रभाव, शक्ति किंवा राज्य के बल पर, जब धर्म के समान भाषा लादी जाती है, तो उसका परिणाम अच्छा नहीं होता। पाकिस्तान में उर्दू के विरुद्ध सिन्धी, बलूची आदि भाषाओं का आन्दोलन आरम्भ हो गया है।

यूरोप में सभी ईसाई थे। किन्तु भाषा एवं भौगोलिक एकता के कारण भिन्नता आती गयी। ईसाई होते हुए भी वे भाषा, भूगोल एवं ऐतिहासिक परम्पराओं के कारण एक दूसरे से भिन्न हो गये। एक वर्ग का स्वार्थ दूसरे वर्ग से टकराया। संघर्ष हुआ। संघर्षों के कारण इतिहास की नवीन परम्परायें बनने लगीं। नवीन गाथायें, स्थानीय, प्रादेशिक एवं दैशिक घटनाओं को लेकर बनने लगीं। संघर्ष ईसाई एवं ईसाई के बीच था। ईसाई दर्शन संघर्षों से उन्हें बचा नहीं सका। परिणाम हुआ—दर्शन के प्रति निष्ठा कम होकर, राष्ट्र किंवा देश के प्रति बढ़ती गयी। देश एवं राज्य सुरक्षा, विकास एवं न्यायिक प्रशासन का विश्वास देता था। दर्शन इस दिशा में असफल था। मानव का भौतिक उपकार नहीं कर सका। उन्हें सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक न्याय नहीं दिला सका।

देश एवं राष्ट्र के प्रति निष्ठा बढ़ती गयी। संकीर्ण राष्ट्रीयता का उदय हुआ। इस निष्ठा के कारण एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र से लड़ने लगे. संघर्ष करने लगे। यद्यपि सभी देश ईसाई धर्मावलम्बी थे। मरने और मारनेवाले दोनों ईसाई थे। तथापि दर्शन युद्धों को, संघर्षों को रोक नहीं सका। शान्ति स्थापित नहीं कर सका। धर्म संकीर्णता का बन्धन स्वतः शिथिल हो गया। व्यक्ति मुक्त विचार करने लगा। चर्च तथा मन्दिर में जानेवालों की संख्या कम हो गयी।

अमेरिका, कनाडा, फ्रान्स तथा इटली आदि देशों के ईसाई धर्म प्रचारक गैर ईसाई देशों में फैलने लगे। कहावत प्रसिद्ध हो गयी। राजपताका के पीछे धर्म चलता है। ईसाई देशों ने जहाँ उपनिवेश बनाया, वहाँ चर्चों की शृंखलायें खड़ी की। धर्म प्रचार, मत परिवर्तन के, हथकण्डे अपनाये जाने लगे। मिशनरियों के अस्पताल, स्कूल, शैक्षणिक संस्थायें, अनाथालय, धर्म प्रचार के केन्द्र बन गये।

यूरोपीय साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद जिन देशो में गया वहाँ की जनता ईसाई नही थी। वहाँ शासन स्थापित कर, विरोधी वर्ग से, शोषित वर्ग से, वेतनभोगी वर्ग से, अपने समर्थकों की सख्या बढाने लगे। इसका माध्यम धर्म परिवर्तन हुआ। इस धर्म परिवर्तन के कारण, राज धर्म ग्रहण करने के कारण, प्रत्येक उपनिवेश एव राज्य में समर्थक वर्ग पैदा हो गया।

भारत में आग्ल भारतीय एव ईसाइयों को राजप्रश्रय मिल गया। राज-सेवायें सरलता से सुलभ हो गयी। पदोन्नति में वरीयता दी जाने लगी। इस नीति के कारण प्रत्येक प्रदेश में समर्थक एव विरोधी दल स्वत वित्त दासत्व में जकड गये। साम्राज्यवाद एव उपनिवेशवाद को मजबूत करने के लिये, धर्म परिवर्तन पर जोर दिया जाने लगा। आज भी केरल के मुस्लिम एव ईसाई चाय बागानो के मालिक उन्हें सेवा में तुरन्त रख लेते है, जो उनके धर्म म सम्मिलित हो जाते हैं। मुसलिमों की धर्म-परिवर्तन प्रक्रिया पुरानी तथा असस्कृत थी। ईसाइयों ने धर्म-परिवर्तन किया, सुसस्कृत, सुधार एवं आर्थिक विकास के साधनों को सम्मुख रखकर, शक्ति से नही, अनुनय, विनय, शिष्टता एव शिक्षा के द्वारा।

ईसाई स्वतन्त्र राष्ट्रों में मिशनरी सेवा के माध्यम से प्रवेश किये। चीन, जापान तथा दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों में चर्च, अस्पताल, स्कूल, शैक्षणिक एव तकनीकी सस्थाओं के नाम पर पहुँचे। विकास एव लोकतन्त्र का सुनहरा नाम धर्म का साधन बन गया। चीन में राज्यक्रान्ति हुई। सत्ता रोमन के-कैथोलिक डाक्टर सनयात सेन, तत्पश्चात रोमन कैथोलिक चाग काई शेक के हाथों में आयी। पुरातन चीनी सभ्यता, सस्कृति के स्थान पर विदेशी सभ्यता, सस्कृति एव धर्म का प्रचार जोर पकडने लगा। राज्यपद ईसाइयो को मिलने लगा। ईसाई होने का अर्थ चाग काई शेक का कृपापात्र होना था। चाग काई शेक तथा डाक्टर सनयात सेन के सहयोगी ईसाई अधिक थे, अमेरिकी प्रसारवादियों ने उन्हें सहायता दी। समय बीता। जनता जागी। चाग काई शेक को ताइवान भागना पडा। मैं ताइवान अथवा फार्मूसा गया हूँ। मुझे देखकर आश्चर्य हुआ। जनता ९० प्रतिशत गैर-ईसाई थी। परन्तु चाग काई शेक के मन्त्रिमण्डल में ९० प्रतिशत ईसाई थे। मन्त्रिमण्डल में एक भी मन्त्रिमण्डल स्तरीय गैर-ईसाई मन्त्री नही था। कुछ कन्फ्यूसस या बौद्ध उपमन्त्री किंवा राज्यमन्त्री थे। उनकी गणना द्वितीय श्रेणी के नागरिकों तुल्य थी। बडे पैमाने पर ईसाइयत का प्रचार किया जा रहा था। राजसेवा में, राजप्रतिष्ठानों एव कार्यपालिकाओं में ईसाइयों को प्राथमिकता दी जाती थी। ईसाई होना योग्यता तथा गुण माना जाता था। नवधर्म परिवर्तित ईसाई गर्व से अपने ईसाई होने का घोष करते थे।

मैं वहाँ की सरकार के निमन्त्रण पर ताइवान गया था। वहाँ उपनिवेश उपमन्त्री श्री सैम्पसन सी शेन ने काशी विश्वविद्यालय में पी०-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की थी। कन्फ्यूसस थे। उन्होने मुझे भोजन के लिये आमन्त्रित किया। चीनी प्रथा के अनुसार एक गोल टेबुल के चारों तरफ कुछ लोग भोजन करने बैठे। टेबुल पर ही एक घूमते दूसरे टेबुल पर खाना सजा था। उसे घुमा देने पर पकवान सामने आ जाता था। इस प्रकार परोसने तथा मागने की समस्या का निराकरण हो गया था। मेरे वामपार्श्व में एक चीनी महिला बैठी थी। बात-बात में वह कह उठती थी। रोमन कैथोलिक थी। ईसाई थी। इसका उन्हें बडा गर्व था। वह चारो ओर अभिमान से देखती थी। अपनी ईसाइयतका ढिढोरा पीट रही थी। मैंने पूछा—आपकी माता क्या थी? वे बोली बौद्ध थी। कहते-कहते उनका मुख लज्जा से जैसे उदास हो गया। मुझे उन पर दया आयी। उन्हें गम्भीरतापूर्वक देखते हुये मैंने कहा—मैं हिन्दू हूँ। हिन्दू रहना चाहता हूँ। बौद्ध धर्म भी हिन्दू धर्म है। दो बौद्ध भी खाने पर बैठे थे। उनका मुख खिल उठा। वे अपना भाव छिपाने की चेष्टा करने लगे। महिला को धक्का लगा। उसने अपने मुख के पास लगे हुये चम्मच को

नीचा करते हुये मेरी तरफ तेज निगाहों से देखा। मैं मुसकुरा उठा। पुनः खाने लगा। महिला की तरफ देखा नहीं। सभी लोग इस सम्वाद से बैठे विरक्त हो गये थे। वहाँ उपस्थित सभी के पूर्व पुरुष कभी बौद्ध थे। उनमें से कुछ ने इस जीवन में ईसाई धर्म स्वीकार कर, राजसम्मान एवं पद प्राप्त किया था।

ताइवान से लौटकर भारत आया। श्रीमती इन्दिरा गांधी प्रधान मन्त्री से वहाँ की बातें बतायीं। उन्होंने स्मरण कर कहा—चांग काई शेक भारत आये थे, तो बारम्बार पिता जी ( पं० जवाहर लाल नेहरू ) से यही पूछते थे। भारत में ईसाई कितने हैं? उनकी क्या स्थिति है?

वीतनाम (चम्पा) उत्तरी तथा दक्षिणी भागों में बँट गया। कारण धर्म का विकृत रूप था। दक्षिण वीतनाम में ९० प्रतिशत बौद्ध थे। अमेरिका नियन्त्रित वहाँ के मन्त्रिमण्डल में ९० प्रतिशत ईसाई मन्त्री थे। प्रतिक्रिया हुई। बौद्ध भिक्षु ईसाइयों के अत्याचार से ऊब कर, स्वयं अपने शरीरों में आग लगा कर, भस्म होने लगे। भयंकर युद्ध हुआ। लाखों लोग मरे। अन्त में दोनों वीतनाम एक हुए।

समाजवादी विचारधारा इस प्रकार के दर्शन में विश्वास नहीं करती। रूस में सोवियत तन्त्र के उदय के पश्चात् ईसाई जगत लोकतन्त्रीय तथा कम्यूनिस्ट गुटों में बट गया है। कम्युनिस्ट दर्शन, धर्म में, ईश्वर में, विश्वास नहीं करता। वहाँ साम्प्रदायिक विचारधारा स्थान नहीं पा सकी। वहाँ के ईसाई भी संकीर्ण सम्प्रदायवाद की सीमा लाँघ गये हैं। मानव जगत के अंग हो गये हैं। धर्म एवं दर्शन शोषकों, पूँजीपतियों तथा प्रतिक्रियावादियों के स्वार्थ सिद्धि का साधन मान लिया गया है। एशियाई सोवियत संघ में अनेक बहुसंख्यक मुसलिम राज्य हैं। धर्म का नारा जोर नहीं पकड़ सका। धर्म निरपेक्ष राज्य में धर्म का नारा महत्वहीन था। वे ठगे रह गये।

उग्र यहूदी कम्यूनिस्ट देशों में नहीं रह सके। वे अपनी मातृभूमि त्याग कर इसराइल में आबाद हो गये। उन्हें नास्तिकों के देशों में रहना पसन्द नहीं आया। यद्यपि कम्यूनिज्म का प्रवर्तक स्वयं मार्क्स भी यहूदी था।

मुसलमान उन देशों से भागे नहीं। उनकी नीति है। जहाँ वे बहुसंख्यक होते हैं, वहाँ वे देवाधितन्त्र और जहाँ अल्पसंख्यक होते हैं, वहाँ धर्म निरपेक्षवाद का नारा बुलन्द करते हैं। हकूमत के विरुद्ध आवाज नहीं उठाते। उनसे मिल जाते हैं। वक्ते हकूमत को अपना बादशाह किंवा शासक मान लेते हैं।

बंगला देश इसका अपवाद है। वह चारों ओर गैर मुस्लिम आबादी से घिरा है। उसकी राजनीति को गैर-मुस्लिम प्रभावित कर सकते हैं, न कि हजारों मील दूर स्थित पाकिस्तान अथवा इण्डोनेशिया एवं मलेशिया के मुसलमान। यही कारण है कि जगत के मुस्लिम राष्ट्रों ने अपना आदर्श इस्लामिक राज्य घोषित किया है। वे सब इस्लामी राज्य एवं इस्लामी राज दर्शन में विश्वास करते हैं। बंगला देश ने धर्मनिरपेक्ष राज्य अपना आदर्श घोषित किया है। यह विशेष परिस्थितियों का परिणाम है। उनकी भाषा अलग है। उनका रहन-सहन अलग है। उन पर घोर अत्याचार स्वयं उग्र कट्टर पन्थी मुसलमानों ने किया है।

इसी प्रकार काश्मीर में जब तक हिन्दू राजा तथा राज्य था, तब तक वह कुफ्र का गढ़ था। जब काश्मीर मुसलमान हो गया, दारुल हर्ब से, दारुल इस्लाम हुआ, तो पवित्र बन गया। इसी प्रकार होली रोमन साम्राज्य की कल्पना की गयी। जैसे खलीफा मुसलमानों का सर्व सत्ता सम्पन्न व्यक्ति था, उसी प्रकार पोप बन गया। मुसलिम जगत के खलीफाओं के समान, ईसाई राजागण रोम के पोप से, मान्यता लेने लगे। धर्म एवं राजनीति एक में मिल गयी। राजाओं तथा जनता में पोप के निरंकुश व्यवहार की प्रतिक्रिया

होने लगी। प्रोटेस्टेण्ट सम्प्रदाय का उदय हुआ। ईसाई समाज दो वर्गों में विभाजित हो गया। दोनों वर्गों के भयंकर सघर्षो का इतिहास अति रक्त रजित है।

प्रारम्भिक युग के ईसाई लोग में जब धर्म एव राष्ट्र विवाद खडा होता था, निष्ठा का प्रश्न उपस्थित होता था तो वे धर्म को चुनते थे। उसी के प्रति निष्ठा प्रकट करते थे। धार्मिक नेताओं का आदेश पालन करते थे। यह स्थिति उस समय तक रही, जब तक समस्त यूरोप ईसाई नही हो गया। यही अवस्था काश्मीर की हुयी। हिन्दू राज्य में मुसलमान निवास करते थे। किन्तु उनकी निष्ठा राज्य के प्रति न होकर, धर्म के प्रति थी। कोटा रानी की हत्या एव शाहमीर के सत्ता मिलने पर, मुस्लिम जगत ने सुख की नीद ली थी। वे अपने धर्मावलम्बी के अन्तर्गत आ गये थे। उनकी निष्ठा सुल्तानो में निहित हो गयी।

लाहौर से मोरक्को तक का विशाल भूखण्ड फारसी भाषा, फारसी लिपि, तत्पश्चात् अरबी भाषा एव अरबी लिपि से प्रभावित है। उनमें तथा ईसाई और हिन्दुओं में कुछ साम्य नही है। इस विशाल भूखण्ड के नागरिक वैज्ञानिक उन्नति नही कर सके। विकासशील नही हो सके। प्रगतिशील नही हो सके। उनमें राष्ट्रीयता का उदय नही हुआ। परन्तु पश्चिमी देशों की राष्ट्रीयता का प्रभाव उन पर पडने लगा। उनमें भी राष्ट्रीयता अकुरित तथा कुण्ठित होने लगी है। उनका अधिक झुकाव अपने दर्शन की ओर रहता है। राष्ट्र उनके लिये गौण हो जाता है। वे जहाँ जाते थे, अपने समाज, अपने दर्शन के कारण, अपने धर्मावलम्बियो में मिल जाते थे। इसलिये उनमें राष्ट्रीयता का उदय नही हुआ। वे मिल्लत की भावना से ओत-प्रोत है। उनकी जीवनचर्या, नीति एव व्यवहार मिल्लत के चारो ओर घूमती है।

ईसाई एव मुस्लिम दर्शनों का अन्तर, उनके धर्म प्रवर्तक महात्मा ईसा मसीह तथा पैगम्बर साहब के जीवन चरित्र के अध्ययन से स्पष्ट हो जायगा। ईसा महात्मा थे। ब्रह्मचारी थे। असग्रही थे। अपने लिये घर नही बनाया, कुटुम्ब नही बनाया, गृहस्थी नही बनाया। बिगडे समाज को देखा। धर्म के नाम पर चलते व्यवसाय और उनके करने वाले वर्ग को देखा। धर्म के कथित ठीकेदारों को देखा। उन्होने सुधार के लिये आवाज उठायी। भक्ति मार्ग का वरण किया। किसी के ऊपर अपने विचार, अपने मत को लादने का प्रयास नही किया। किसी के उपासना स्थान, देव स्थान को नष्ट करने का प्रयास नही किया। उसके लिये प्रेरणा दिया। मत परिवर्तन के लिये न सघर्ष किया और न करने का सलाह दिया। उन्होने किसी को मारने, किसी को कष्ट देने की कल्पना नही किया। उनका मत अहिसक है, उसमें प्राणियो के बलिदान का स्थान नही है। उसमें करुणा है। वह दूसरो के मत का परिवर्तन उत्सर्ग, बलिदान, आचरण एव नैतिक प्रभाव के कारण करना चाहा। वे स्वय क्रास को अपने कन्धो पर ढो कर लायें और उस पर चढे। उन्होने सूली चढाने वाले को, दण्ड दाता को, शाप नही दिया। ईश्वर से प्रेम करने की बात कहा, न कि भय। मानव में बैठी मानवता में विश्वास किया, उसे जगाया। उन्होने मानव सेवा द्वारा, मानव प्रेम द्वारा, भगवान तक पहुँचने की कल्पना की। कालान्तर में उनके अनुयाइयो ने धर्म को प्रवर्तक रूप दे दिया। एक नवीन प्रवर्तक दर्शन का आश्रय लिया। वह दर्शन था अपनी सख्या अपना गोत्र बढाने वाला।

सन्त आगस्टाइन ( सन् ३२४–४३० ई० ) ने दो जगत की कल्पना किया—लौकिक तथा अलौकिक, धर्म निरपेक्ष एव सापेक्ष जगत की। उसमें रोम को राक्षस नगर एव यरूशलम को देव नगर की सज्ञा दी गयी। यरूशलम में ईसाई थे अतएव वह देव और रोम में गैर ईसाई थे अतएव उसे राक्षस नगर कहा गया। ईसाई कामन वेल्थ की कल्पना की गयी। रोम का धर्म ईसाई तथा राजा ईसाई हो गया, तो उसे पवित्र नगर मान लिया गया।

यहूदी, ईसाई एवं मुस्लिम शाही परम्परा के देश, लौकिक सिद्धान्त वादी देश, ग्रीस, मिश्र, बेबलोन

एवं रोम साम्राज्य के पड़ोसी थे। तथापि उनका दृष्टिकोण अलौकिक बना रहा। यहूदी भगवान की चुनी जात बन गये। उन्होंने अपनी श्रेष्ठता का दावा किया। आज भी करते हैं। इस श्रेष्ठता के विरुद्ध प्रतिक्रिया हुई। उन्हीं से निकले ईसाई तथा मुसलमान उनसे अलग हो गये। उनसे संघर्ष करना पड़ा। पहले धर्म एवं राज्य को सम स्तर पर रखने का प्रयास किया गया। परन्तु समभाव उत्पन्न होते ही, धर्म की राज्य पर मान्यता ईसाई तथा मुसलिम देशों में दे दी गयी।

इनके विरुद्ध आर्य एवं मंगोलीय जाति लौकिक सिद्धान्त में विश्वास करती थी। आर्य भूमि यूरोप के ईसाई होते ही, स्थिति बदल गयी। परन्तु भारत एवं चीन लौकिक सिद्धान्तों पर अडिग रहा।

पैगम्बर साहब का ग्राहंस्थ्य जीवन था। वे विरागी नहीं थे। विरक्त नहीं थे। घर गृहस्थी से नहीं भागे थे। दुनियाँ से विरक्त नहीं हुए थे। उन्हें अपने ही गोत्रीय एवं अरबों से लड़ना पड़ा। हथियार उठाना पड़ा। विवाह करना पड़ा। घर गृहस्थी जमाना पड़ा। अपने लिए स्थान बनाना पड़ा। स्नेही पिता हुए, पति हुए, अपने विश्वास एवं विचार के पक्के हुए। उन्हें मध्य मार्ग पसन्द नहीं था। वह प्रत्येक मुसलमान से ईश्वर के प्रति पूर्ण आत्म-समर्पण की आकांक्षा रखते थे। पूर्ण विश्वास की आकांक्षा करते थे। सिद्धान्तों एवं आदर्शों के समझौते में, साझे में, विश्वास नहीं करते थे। प्रतिमा पूजन के कट्टर विरोधी थे। ईश्वर एवं मनुष्य के मध्य किसी पुरोहित वर्ग की कल्पना नहीं की थी। काबा से मूर्तियाँ उनके समय हटायी गयी थी। प्रतिमायें उनके सामने भंग हुई थी। तायफ स्थित लात की मूर्ति उनके आदेश से भंग की गयी थी। मनात की मूर्ति तोड़ी गयी। इसी प्रकार अन्य मूर्तियाँ टुकड़े-टुकड़े कर दी गयी। एक बार उनके धर्म में प्रवेश पाने के पश्चात, निकलने की गुंजाइश नहीं थी। उसका दण्ड मृत्यु था। शिर्क की सजा मौत थी। उनके धर्म में गुलाम-स्वामी, गरीब-अमीर राजा एवं प्रजा सब समान थे। सब अल्लाह के बन्दे थे। आर्थिक एवं सामाजिक विषमतायें, उनमें भेद उत्पन्न नहीं कर सकती थी। मसजिद में सब एक साथ, एक कतार में अल्लाह की इबादत करते थे।

यही कारण है कि मुसलमान अपने मत का प्रचार तलवार की नोक पर करने में नहीं संकोच करता था। उन सभी साधनों को माध्यम बनाने की कल्पना करते थे, जिससे अधिक से अधिक लोग ईमान लाने वाले बने। वह संख्या इतनी बढ़ जाय कि समस्त जगत में केवल एक इस दर्शन के अनुयायी रह जाय। किन्तु यह सब पुरानी बातें थी। पुरानी मान्यतायें हैं। उनका समय बीत चुका है। लौट कर पीछे देखने की अपेक्षा आगे देखना उचित है।

ईसाई प्रवर्तक धर्म होकर भी उग्र नहीं हो सका। शस्त्र के स्थान पर धर्म प्रचार का माध्यम सेवा बनाया। ईसाई पादरी गण जन-जीवन में प्रवेश किये। जनता में हिल-मिल गये। उनके सुख-दुःख में काम आये। परन्तु इसलाम ने विजय एवं शक्ति का आश्रय लिया था। जिसने इसलाम क़बूल नहीं किया, उसके लिए स्थान नहीं था। सहिष्णुता की जगह नहीं थी।

परिस्थितियों से बाध्य होकर, मुसलिम बहुसंख्यक देश में, मुसलिम राज्य में, जहाँ भी कहीं हिन्दू थे, अपने घरों में पूजा करते थे। काबुल में मैंने घरों के अन्दर देवस्थान बने देखा है। काबुल शहर में हिन्दू तथा सिखों के कई गुरुद्वारे हैं। परन्तु वे मकानों के अन्दर है। मैंने इस प्रकार के ठाकुर तथा गुरुद्वारों की यात्रा की है। मुझे स्मरण है कि काबुल में आठ या दस देवस्थान सिखों तथा हिन्दुओं के थे। वहाँ रागभोग लगता था। पूजा होती थी।

मुझे अच्छी तरह स्मरण है। आजादी के पूर्व मसजिदों के सामने बाजा बजाना कठिन था। सार्व-

जनिक रूप से गाय की कुर्बानी की जाती थी। उनके कारण हिन्दू-मुसलमानो के दंगे हुये थे। भारत की आजादी के पश्चात् वाजा की समस्या समाप्त हो गयी। गोहत्या समस्त भारत में वर्जित कर दी गयी। किन्तु आज भी मुसलमान जिन स्थानो पर बहुसख्यक हैं, वहाँ अपनी वात मनवाते हैं। सन् १९७२ ई० में एक चुनाव सभा में मैं भाषण करने गया। नमाज का वक्त हो गया। मुझसे कहा गया। नमाज के पश्चात ही लाउडस्पीकर से भाषण हो सकेगा। चुनाव में हमारे पक्ष का उम्मीदवार भी मुसलमान था। मुझे वात पसन्द नही आयी। मैंने भाषण नही किया। वहाँ से दूसरी आयोजित सभा में चला गया।

आजादी पूर्व साम्राज्यवादी अंग्रेजो तथा उनके गुर्गो के कारण यह सव होता था। राज प्रश्रय समाप्त होते ही गाय की कुर्बानी समाप्त हो गयी। मसजिदों के सामने बाजा वजने लगा। लोग एक दूसरे, के धर्म भावना का आदर करने लगे। इतिहास पढने लगे। कुछ आततायी अत्यन्त उग्र थे। हुकूमते इलाही में विश्वास करते थे। भारतीय गणतन्त्र में विश्वास नही करते थे। उन पर अकुश लगा। राजशक्ति के सम्मुख वे चाहकर भी उठ नही सके। बाध्य होकर, लोक कल्याणकारी, उदार लौकिक राज्य के स्तित्व को मानना पडा। अन्यथा दर्शन ने दोनो के मध्य गहरी खायी खोद दी थी, जिसका पटना कठिन हो गया था।

यह दर्शन चाहे झगडालू रेगिस्तान अरबो को नियन्त्रित करने में, चाहे अनेक सुधार करने में सफल रहा है परन्तु आ रहन-सहन रेगिस्तान के लिए उपयोगी हो सकता हैं, वह हिमालय में नही हो सकता। यह दर्शन उन क्षेत्रों में शीघ्रतापूर्वक फैला, जो रेगिस्तान थे, उजाड थे, जहाँ घुमन्तू जातियाँ थी। सामाजिक ढाँचे की इकाइयाँ कवीला होते थे। जहाँ कारवाँ लूटे जाते थे। कबीले लडते थे। लूट-पाट होती थी। इसलाम उन देशो में व्यापक नही हो सका, जहाँ समाज सुसस्कृत था। सभ्य था। कला-कौशल विकसित थी। जहाँ का जीवन आनन्दमय था, सुखमय था। उल्लासमय था।

जिन देशों की ऐतिहासिक परम्परा थी। जहाँ देशभक्ति प्रौढ थी। वहाँ इसलाम प्रगति नही कर सका। उसे पश्चिम में रोमन तथा यूनानी सभ्यता से सामना करना पडा। उनकी बाढ रुक गयी। ब्रिटेन, स्पेन, फ्रास, जर्मनी एव रूस में वे नही बढ सके। इसी प्रकार पूर्व में भारत तथा चीन पहुँच कर, उनकी बाढ रुक गयी। इस दर्शन का प्रभाव उसके आरम्भ से दो शताब्दियों पश्चात जहाँ था, वही तक सकुचित रह गया। उत्तरी अफ्रीका, तुर्की, तुर्किस्तान, सीरिया, ईरान, अफगानिस्तान तक पहुँचा था, वही सीमित रह गया। भारत में इस दर्शन को निरन्तर सघर्ष करना पडा। चीन में विकसित नही हो सका। प्रश्न उपस्थित होता है। मलेशिया तथा इण्डोनेशिया में इस दर्शन का कैसे प्रसार हुआ। इसका उत्तर मैंने अपनी पुस्तक 'दक्षिण पूर्व एशिया' में दिया है।

ईसाई, बौद्ध एव हिन्दू जगत जागरूक हुआ, तो अरव के रेगिस्तान से उठी, आवाज आप से आप शान्त हो गयी। यह भूखण्ड आज विश्व का सबसे पिछडा भाग है। वहाँ न तो लोकतन्त्र है और न जनहित, न जीवन सम्बन्धी कार्य विस्तार। प्राचीन काल के समान एक सुल्तान या एक नेता दूसरे को हटाकर सत्ता प्राप्त कर लेता हैं। सैनिक कूपों द्वारा सत्ता उलटी जाती है। वात वही है। प्रवृत्ति वही है। वस्तुस्थिति के परिवर्तन के कारण उनके प्रकार में, उनकी प्रक्रिया में, केवल अन्तर हो गया है।

सुसस्कृत, पुरातन, विकसित सभ्यता ईरान के सम्पर्क में अरव आये। ईरानियों ने उन्हें अपने साँचे में ढाल लिया। वे तलवार का सामना करने में असमर्थ थे। मुसलमान होने पर भी, शिया सम्प्रदाय ग्रहण कर, शेष मुसलिम जगत से अपनी स्थिति भिन्न बना ली। ईरान की पुरानी दार्शनिक परम्परा सूफी मत मे प्रवाहित हो गयी।

इण्डोनेशिया में महाभारत, रामायण तथा पुरानी परम्परायें पूर्ववत् चलती रहीं। भाषा नहीं बदली। दक्षिण पूर्व एशिया तथा तुर्की में अरबी तथा फारसी लिपि का प्रचार किया गया। उन पर लादा गया। परन्तु समय आया। रोमन लिपि प्रचलित हो गयी। जिस देश का अपना साहित्य था, अपनी परम्परा एवं इतिहास था, वहाँ भी मुसलिम वृद्धि रुक गयी। अपनी क्रूर सैनिक शक्ति के आधार पर इसने अपना पैर अवश्य जमा लिया। परन्तु जहाँ भी साहित्य, भाषा एवं समाज विकसित था, वहाँ लोग मुसलिम धर्मावलम्बी होते हुए भी, इस दर्शन के मुखापेक्षी नहीं हुए। अन्ध अनुकरण नहीं कर सके। उन्होंने दोनों का समन्वय किया। उन्हें अपने देश-प्रदेश के अनुरूप बनाया। इसका ज्वलन्त उदाहरण बँगला देश है। वहाँ उर्दू भाषा एवं लिपि के स्थान पर बँगला भाषा एवं लिपि पूर्ववत् कायम रही। इस्लामिक राज्य के स्थान पर धर्म निरपेक्ष राज्य घोषित किया गया।

काश्मीर का अपना संस्कृत साहित्य था। पुरातन परम्परा से ओत-प्रोत था। मुसलिम शासन के पश्चात काश्मीरी भाषा केवल बोल-चाल की भाषा रह गयी। उनका साहित्य विकसित नहीं हो सका। विदेशी फारसी भाषा साहित्यिक भाषा बनायी गयी। परिणाम हुआ। मौलिकता नष्ट हो गयी। उनका अपनापन नष्ट हो गया। नकल मात्र रह गये। इसलिए छः शताब्दियों तक काश्मीर उठ नहीं सका। वह झुकता ही गया। शाहमीर वंश के पश्चात, चक, मुगल, पठान, सिख, डोगरा एक के पश्चात दूसरे आते रहे। शासन करते रहे। काश्मीर सहन करता रहा। आज भी वह जिस आजादी का भोग कर रहा है, उसमें उसका कोई योगदान नहीं है। वह भारतीय स्वातन्त्र्य विस्तार का एक रूप है।

भारतीय तथा विश्व के अन्य धर्मों में सबसे बड़ा अन्तर कर्म सिद्धान्त का है। पश्चिम में कर्म सिद्धान्त के स्थान पर भाग्य तथा विश्वास ने स्थान प्राप्त किया। हिन्दू, बौद्ध, जैन आदि भारतीय धर्म कर्म में विश्वास करते हैं। वे मुक्ति, ईश्वर के आशीर्वाद, कृपा, अनुग्रह स्वर्ग प्राप्ति, पाप से निवृत्ति का कारण, किसी अव्यक्त शक्ति को नहीं मानते। भारतीय दर्शन के अनुसार कर्म मानव के लोक एवं परलोक दोनों को नियन्त्रित करता है। वे विश्वास करते हैं। कोई फल किसी कर्म का ही परिणाम होता है।

मृत्यु नहीं होती। काया परिवर्तित होती है। वे जो कुछ हैं, या होंगे, वह सब कर्म का परिणाम है। इस जीवन की सीमा केवल इसी जीवन तक सीमित नहीं है। वह एक चक्र है, चलता रहता है, कभी शिथिल नहीं होता। किसी पर दया नहीं करता, अनुग्रह नहीं करता, कर्मानुसार प्राणी स्वयं फल पाता है।

ईसाई, यहूदी एवं मुसलिम विश्वास करते हैं—उनका जन्म एवं मृत्यु अन्तिम है। मृत्युपरान्त कयामत के दिन, ईश्वरीय न्याय के दिन उठेंगे। तब तक वे चिर निद्रा में, लाखों-लाखों वर्ष सुप्तावस्था में पड़े रहेंगे। उनका पुनरुत्थान ईश्वर की कृपा पर है। इस विचार के कारण ईसाई एवं मुसलिम दृष्टिकोण संकुचित हो जाता है। वे अपनी सीमा बना लेते हैं। किन्तु कर्मवादी आत्मा के अमरत्व में विश्वास करते हैं। वे विश्वास करते हैं। उनका कर्म, उनका संस्कार, उनका साथ नहीं त्याग सकेगा। उनका जन्म एवं मृत्यु अन्तिम नहीं हैं। अनेक जन्म-जन्मान्तरों एवं योनियों की शृंखला में एक कड़ी मात्र है। वे जहाँ तक पहुँच गये हैं, उसके पश्चात, पुनर्जन्म के पश्चात और आगे बढ़ते जायेंगे। वे उस समय तक बढ़ते जायेंगे, जब तक उन्हें निर्वाण या मुक्ति नहीं प्राप्त हो जाती। अतएव भोग की, धर्म की सीमा इस जन्म तक सीमित नहीं है। मुसलिम दर्शन विश्वास करता है—मानव का केवल एक बार जन्म एवं मृत्यु होती है। पुनर्जन्म में विश्वास न होने के कारण, इस दर्शन के मतानुयायी इस सांसारिक जीवन में सब-

कुछ भोग लेना चाहते हैं। मृत्यु पश्चात उनका दर्शन विश्राम दिलाता है। स्वर्गीय सुख प्रसाधन केवल ईमान लाने वालो तक सीमित हैं।

भोग लीप्सा की सीमा नही रहती। भोग प्रवृत्ति के कारण हरम बढता है। भौतिक प्रसाधन बढने हैं। सुख के लिये वह किसी गैर मुसलिम को लूटता-पाटता है, उनसे धर्म के नाम पर युद्ध करता हैं, उनका दमन करता हैं, तो इस विश्वास के साथ करता है कि कोई पाप नही कर रहा हैं। ईमान लाने के कारण उसका स्वर्ग सुरक्षित है, अतएव इस जीवन में निरकुश हो जाता है। प्रगतिशील नही होता। वह अन्ध-विश्वास करता है, अपने धर्म पर। अपनी बुद्धि एव अपने कर्म पर, विश्वास नही करता। वह बँधे जल के समान हो जाता है, स्थिर जल के समान हो जाता हैं, उसमें गति नही होती। कर्मवादी आत्म-विश्वास करता है, अपने विवेक पर विश्वास करता हैं। अतएव वह गतिशील जल तुल्य सर्वदा जीवन-प्रद नवीन बना रहता हैं।

कर्मवादी स्वतन्त्र विचार करता है। भाग्यवादी स्थिर होता हैं। सब कुछ भाग्य पर छोडकर, बैठा रहता है, गतिहीन हो जाता है। गतिहीन जल, वन्धा जल, निश्चल जल, जीवन शक्ति खो देता है। कर्मवादी सरिता जल तुल्य है। वह जल स्वत आता है, बहता है, नदियो में मिलता है, महानदी में मिलता हैं। वहते-बहते ओर छोर हीन, विशाल समुद्र में मिल जाता हैं।

कर्मवादी अपनी बुद्धि अपने विवेक से काम लेता है। विश्वास में भी तर्क ढूँढता है। परिस्थितियों के अनुसार ढलता चलता है। कोई भी मत, कोई भी सम्प्रदाय अपने समय का सुधारवादी आन्दोलन होता है। जडता, रूढवादिता, कुसस्कार एव परम्परा बद्ध व्यक्तियो को, मुक्त करता है। तत्कालीन कुरीतियों, विकृत दर्शनो, पथभ्रष्ट धर्मों से हटाकर, व्यक्ति को समाजोपयोगी, देशोपयोगी बनाने का प्रयास करता है। मूल धर्म, मौलिक धर्म, जब विकृत हो जाता हैं, तो जनता का उपकार नही कर पाता। परिणाम होता है कि धर्म के अन्तर्गत अनेक मत-मतान्तर एव सम्प्रदायों का उदय होता है। धर्म उपयोगिता खोकर केवल कर्मकाण्ड रह जाता हैं। कुसस्कार उस पर अपना रग चढा देता है—जडता उसे लेकर बैठ जाती हैं।

धर्मों में स्वर्ग, जन्नत एव विहिस्त की कल्पना की गयी है। परलोक में ससार के ही समान बल्कि उससे कुछ अधिक भौतिक सुख मिलते हैं। यह भी दर्शनों की सकीर्णता में योगदान करता है। भारतीय दर्शनों का लक्ष्य निर्वाण है। वेद में स्वर्ग-नर्क की कल्पना नही की गयी है। स्वर्ग-नर्क की कल्पना पौराणिक युगों की देन हैं।

मुस्लिम दर्शन जन्नत की कल्पना करता है। जहन्नुम की कल्पना करता है, दोजख की कल्पना करता हैं। ईसाई जगत होवेन अर्थात् स्वर्ग की कल्पना करता है। ईसाई विश्वास करते है, महात्मन ईसा स्वर्ग से आये थे, वही गये। भगवान् की उपस्थिति में अपने अनुयाइयों की ओर से पैरवी करेंगे। स्वर्ग में उन पर विश्वास करने वाले जायेंगे। प्रभु ईसा मसीह उनके विषय में भगवान से सस्तुति करेंगे। बाइविल म, कुरान शरीफ के समान स्वर्गीय सुखो की कल्पना नही की गयी है। उसमें पैरेडाइज शब्द का प्रयोग किया गया है। उसका अर्थ कुलीनों का उद्यान होता है। यह मूलत फारसी शब्द है।

ईसाइयों ने नर्क अर्थात् हेल की कल्पना की है। उसका आधार यहूदी शब्द शियोल है। मृत्यो-परान्त पाप का दण्ड दिया जाता है। चरम दु:ख का स्थान है। दैत्यों तथा उनके गण वहाँ रहते है। निरन्तर भयकर अग्नि जलती रहती है। स्कण्डेनेवियन दर्शों में विश्वास है कि हेल में सर्प, पापियों को

काटते रहते हैं। पुरातन वाइवल में नर्क की कल्पना नहीं की गयी है। पुरातन फारसी जगत में अहिरमन नर्क की कल्पना की गयी थी। यूनानी नर्क को तरतास कहते थे।

मुस्लिम जगत स्वर्ग एवं नर्क की कल्पना करता है—'पवित्र मुसलमानों को अल्लाह ने जन्नत का सुख बख्शा है। वहाँ वे सरितायें होंगी जो कभी दूषित नहीं होती, वहाँ दूध की नदियाँ वहती हैं, जिनका स्वाद कभी वदलता नहीं। वहाँ सुरा सरिता वहती है, जिसे पीकर प्राणी प्रसन्न होता है। शुद्ध मधु की नदी भी होती है, वहाँ सव प्रकार के फल होते हैं। पाप क्षमा किया जाता है। स्वर्ग आगत व्यक्ति, सुखद आसन एवं शय्या पर आराम करेगा। अक्षत योनि वालाएँ होंगी। उनका न तो मानव में और न दैवी जीवों ने स्पर्श किया होगा। स्वर्ग में चिरयुवा होंगे। वे स्वर्ग स्थित व्यक्तियों को सुरा पिलायेंगे। वहाँ लोगों को को उनकी रुचि के अनुसार फल मिलेगा। पशुओं तथा पक्षियों का मन चाहा मांस मिलेगा। वृक्षों की शीतल छाया होगी।' रेगिस्तान के रहने वाले किसी व्यक्ति के लिए, इससे सुन्दर भौतिक सुख की और क्या कल्पना हो सकती है?

नर्क अर्थात जहन्नुम की कल्पना की गयी है। ईश्वर, जव दुष्टों को दण्ड देना चाहता है, तो जहन्नुम को वुलाता है। वह चार पैरों पर आता है। प्रत्येक पैर में ७०,००० मुद्रिकायें होती हैं। प्रत्येक मुद्रिका में ७०,००० दैत्य होते हैं। वे इतने ताकतवर होते हैं कि पहाड़ को धूल कर सकते हैं। जव जहन्नुम आता है, तो भयंकर गर्जन होता है, भयंकर आर्तनाद होता है, भयंकर क्वण होता है, भीषण आवाज होती है, जहन्नुम से धुआँ तथा ज्वालाएँ निकलती है। क्षितिज अन्धकार पूर्ण हो जाता है।

जहन्नुम के सात दरवाजे होते हैं। पापी प्रज्वलित अग्नि में झोंक दिये जायेंगे। वे तव तक जलते रहेंगे, जव तक पृथ्वी तथा आकाश का अस्तित्व रहेगा। ईश्वर की कृपा से ही, वे उस अग्नि, उस जहन्नुम से निकल सकेंगे।

वाल्यकाल से जहन्नुम का भय, जन्नत का सुख याद करता, दुर्वल प्रकृति मानव, मृत्योपरान्त की कल्पना, व्याकुल हो उठता हैं। भयभीत मन विश्वास करने लगता है। जो कुछ जहन्नुम और जन्नत के विषय में कहा गया हैं, उसके विषय में इस दर्शन तथा धर्म के कारण में किंचित मात्र सन्देह नहीं करता। वह जानता है। सन्देह का फल पाप होगा। जहन्नुम की आग में झोंक दिया जायगा। यदि वह विश्वास करता है। निर्देशित फर्जो की अदायगी, ग्रन्थों में वर्णित पुण्य कर्मों का यदि सम्पादन करता रहेगा, तो उसे स्वर्ग, जन्नत मिलेगा। जीवन सुखमय होगा। स्वर्ग एवं नर्क की कल्पना, आशा एवं निराशा की भावना, मानव को उसके दर्शन का दास, अन्ध भक्त, वना देती है। वह जन्नत के लोभ और जहन्नुम के भय से, सव कुछ करने के लिए तत्पर हो जाता है। अन्य दर्शन तर्क, विवेक, न्याय, नैतिकता को एक तरफ रखकर, वह करता है, जिसका आदेश धर्मग्रन्थों में दिया गया है। दुर्वल मनुष्य, भयभीत प्राणी, अपने ऊपर, अपने कर्म पर, विश्वास खो वैठता है। विश्वास करता है, जो कहा गया है, जो लिखा गया है।

मानव की यह मानसिक गुलामी, मानव से, वह सव कुछ दास की तरह कराने लगती है, जिसे वह साधारण अवस्था में करने के लिए उद्यत नहीं होता। वह समझता है। काफिर का नष्ट होना या ईमान लाना पुण्य है। यदि मानव काफिर मरता है या अपने कुफ्र के कारण मारा जाता है, तो पाप नहीं है। पुण्य है। स्वर्ग की कल्पना मनुष्यों को आशा, सुख का स्वप्न दिखाता है। जन्नत में भौतिक सुख मिलता है। जिसके लिए इस लोक में व्यक्ति निरन्तर प्रयास करता रहता है। यदि उसे यह सुख इस जीवन में किसी कारण से न भी मिल सका, तो परलोक में ईश्वर के आदेशों का पालन करने के कारण मिलेगा। वहाँ उसका सुख रक्षित है। वह अपने ईमान के कारण उसे प्राप्त कर लेगा।

इस दर्शन से प्रभावित व्यक्ति, इस जीवन में इन सुखों को यथा साध्य भोग कर, पुन उन्हें स्वर्ग में प्राप्त करना चाहता है। उसका आदर्श भौतिक सुख होता है। वह इसी सुख की कामना करता है। अतएव जगत को इन सुखों द्वारा विहिस्त के अनुरूप बनाना चाहता है। आगरे तथा दिल्ली के लाल किला निर्माण में जन्नत की कल्पना की गयी है। वहाँ नहरें बनायी गयी है। उनमें निर्मल जल भरा जाता था। सुल्तान तथा उसके सामन्त वहाँ भोग-विलास करते थे। यही कारण है कि सुरा, कामिनी, बालक का सग्रह सुख कामना से की गयी थी।

भारतीय दर्शन इसके विपरीत है। वह भौतिक सुखों को क्षणिक मानता है, माया मानता है। यह सब उसी समय तक मिलते हैं, जब तक शरीर साथ देता है। भारतीय दर्शन ने त्याग में सुख माना है। त्याग शरीर के साथ नही, मन के साथ चलता है। वह न कभी युवा होता है न वृद्ध। उसका सम्बन्ध आत्मा से है। आत्मा में जब संकल्प एवं कल्पना का उदय होता है, तो उसकी सज्ञा मन से दी जाती है। स्वर्ग एव मृत्युलोक हाड-मास की काया सर्वदा एक-सी नहीं होगी। किन्तु आत्मा शाश्वत है। उसका स्वरूप, भाव नही बदलता।

कश्मीरी शैव दर्शन एक कदम और आगे जाता है। शंकराचार्य आदि आचार्यों ने आत्मा को निष्क्रिय माना है। वह निरपेक्ष रहती है। शरीर माया प्रेरित कर्म करता है। माया के नाश से मुक्ति मिलती है। काश्मीरी प्रतिभा दर्शन आत्मा को सक्रिय मानता है। वह मूक, बधिर, निर्विकार, जड़वत नही है, जो कुछ न लेती है न देती।

बौद्ध दर्शन कहता है—प्रिय से मिलन दु खद है। क्योंकि वियोग होता है। दु ख भी मिलता है। मृत्यु भी दु ख है। त्याग में सुख है। भौतिक सुख अर्थ का, शक्ति, मुखापेक्षी है। शक्तिहीन होते ही, अर्थहीन होते ही, सुख त्याग देता है। भौतिक सुख अस्थायी है। सुख लिप्सा का अन्त नही है। भारतीय दर्शन ने, त्याग उत्सर्ग, बलिदान, जगत से दूर, दुनिया से दूर, एकान्त वन में, गिरि कन्दरा में, असग्रही, विदेह ब्रह्मचारी बन कर, रतिसुख, राजसुख से दूर, भोग, वासना, लिप्सा से विरत, सासारिक बन्धनों के तोडने में सुख माना है। भारतीय दर्शन ने इसीलिये चार आश्रमों की कल्पना की है। सुख का काल ग्राहस्थ्य जीवन है। बाणप्रस्थ में त्याग क्रिया आरम्भ होती है। सन्यासाश्रम में मानव जगत का पूर्ण त्याग किया जाता है। उसकी सामाजिक मृत्यु हो जाती है, वह सस्कार विहीन हो जाता है। धातु एव अग्नि स्पर्श नही करता। उसके कर-पल्लव भोजन-पात्र बनते है। प्रवृत्ति पश्चात निवृत्ति मार्ग का अनुकरण करता, मुक्त होता है। वह कल्पना नही करता। मनुष्य जन्म से मृत्युकाल और मृत्यु के पश्चात भौतिक सुखों में आसक्त होगा। आदर्श सुख नही है। आत्म दर्शन है। परमात्मा का सान्निध्य है, निर्वाण है। जन्म-मरण सुख-दु ख से छुट्टी है।

ईसाई दर्शन ने लोक एव परलोक दोनों में सुख की कल्पना की। भारतीय दर्शन इस लोक को तपो भूमि, योग भूमि, त्याग भूमि एवं कर्म भूमि मानता है। एक ने सुन्दर वस्त्रों, भव्य आवासों, सुस्वादु पदार्थों में सुख देखा। दूसरे ने दिगम्बर जीवन, केवल जीवित रहने के लिए, शरीर चलाने के लिए, भोजन की कल्पना की। भारतीय दर्शन का आदर्श भौतिक सुख नही है। अध्यात्म है। मानव विकास है। इन दोनों दर्शनों की कल्पनाओं ने मानव दृष्टिकोणों में अन्तर कर दिया है। एक तरफ जहाँ हिन्दू राजा का आदर्श स्वत राज त्यागकर, वनगमन करना होता था, वही दूसरी तरफ सुल्तान अन्तिम दम तक राजलिप्सा एव राजसुख में पडे रहते थे। सुख के लिए सघर्ष करते थे। वासना का त्याग नही कर पाते थे। विषय-वासना में उन्हें सुख मिलता था।

राजा विश्वास करता था। त्याग का, कर्म का, फल कर्मानुसार अवश्य मिलेगा। वासना, स्वार्थ एवं राग भोग के त्याग से, आत्मिक विकास होगा। उत्थान होगा। अतएव ब्रह्मचर्य, असंग्रह, त्याग की भावना उसकी पाशविक प्रवृत्तियों पर, उसमें बैठे असुर पर, हावी हो जाती थी। मानव से अमानव बनना उसके लिए असम्भव कर देती थी।

दूसरी तरफ सुन्दरी स्त्रियों से हरम भरना, ऐश्वर्यमय जीवन बिताना, स्वादिष्ट भोजन करना, उत्तम कीमती परिधान पहनना, आदर्श माना गया। मसजिद में, गिरजा में, परिधान में सजकर, उपस्थित होना अच्छा माना गया। भारतीय धर्मावलम्बियों की दिशा इससे भिन्न है। वह अधिक से अधिक त्याग-कर, नग्न पाद, केवल उत्तरीय एवं धोती में भगवान की प्रतिमा के सम्मुख पुष्प, अक्षत, नैवेद्य के साथ उपस्थित होता है। वह परमात्मा से भयभीत नहीं होता है। उसके सान्निध्य में बैठता है। पाठ करता है। विश्व कल्याण, मानव कल्याण एवं प्राणीमात्र के सुख की कल्पना करता है।

इन दृष्टि कोणों ने राजनीति को, राजनीति शास्त्र को, समाज को, प्रभावित किया है। कर्मवाद सरिता का कुल्या में प्रवाहित नियन्त्रित जल है। वह खेतों को सींचता है। पुष्पों को सुरभित करता है। मंजरियों में पराग भरता है। हरियाली का सृजन करता है। आतप हरता है। शीतल बनाता है। धन-धान्य से देश को पूर्ण करता है। अपनी उपयोगिता सिद्ध करता है। वह नदी में, सरिता में, अनियन्त्रित रूप से बहते-बहते खारे समुद्र में मिलकर स्वयं खारा नहीं हो जाता। वह बहते-बहते, खेतों को हरित करता धनधान्य पूर्ण, फलप्रद पूर्ण करता, उद्यानों की क्यारियों में प्रसन्न होता, प्रसन्न करता, विलीन हो जाता है।

भारतीय धर्म ने अपनी सीमा नहीं बनायी है। भारतीय धर्म का कोई प्रवर्तक नहीं है। वह किसी महान पुरुष का आदेश नहीं है। लोकतन्त्रीय है, सनातन है, युगों-युगों का विकास है, जीवन-दर्शन है। उसका यह दर्शन, उसकी यह उदारता, उसकी यह सहिष्णुता, उसकी यह ग्राहिणी शक्ति, उसे जीवित रखने में समर्थ हुई है। उसमें ईश्वरवादी-अनीश्वरवादी, शैव-वैष्णव, बौद्ध-जैन, द्वैत-अद्वैत, बहु-देववादी-एकेश्वरवादी, शाक्त-भक्त, तन्त्र-मन्त्र सबके लिए स्थान है। किसी भी विचार-धारा, किसी भी दर्शन का व्यक्ति इस प्रवाह में गतिशील हो सकता है। उसे न तो अपने से, न पराये से, और न मरने से भय होता है। अमरत्व का प्रतिपादन करता है। विश्व धर्म के मौलिक सिद्धान्तों तुल्य है। परिवर्तन एवं अन्तर केवल आचरण का मानता है। यह दर्शन सीमित नहीं है। संकीर्ण नहीं है। इसमें सब कुछ समा सकता है। वह रत्नाकार है। क्षार को अपने पास रखकर, सुस्वादु मधुर जल से, सरोवर, कूप, कुल्या, सरिता, महानद, वह सबको आदर के साथ पूर्ण करता है।

परिस्थितियों के अनुसार, जनता एवं समाज के लिये, उपयोगी बनता है। जीता रहा है, अन्य को जीने देता है। इस दर्शन के विरुद्ध, जहाँ भी जिसने चलने का प्रयास किया है, तो देश, जाति एवं समाज के लिये समस्या उत्पन्न कर दिया है, उलझन पैदा कर दिया है, अशान्ति पैदा कर दिया है। उनसे मानव क्षुब्ध होता है, जलने लगता है। कश्मीर ने यह सब देखा है।

पारसी धर्म प्रवर्तक धर्म नहीं है। धर्म परिवर्तन द्वारा संख्या बढ़ाने में विश्वास नहीं करता। उसने मुक्त विचार एवं कर्म पर विश्वास किया है। शुद्ध आचरण एवं कर्म पर विश्वास किया है। मानव को प्रलो-भित नहीं किया है। विश्वास लाने पर स्वर्ग मिलेगा। सुहावना प्रलोभन का नक्शा नहीं खींचा है। ईसाई तथा मुस्लिम धर्म ने ईमान लाने वालों को बिहिस्त, स्वर्ग, हीवेन किंवा परेडाइज का प्रलोभन दिया

है। ईश्वर की कृपा से मानव सब कुछ प्राप्त कर सकता है। इस अनुग्रह के बदले में उस पर ईमान लाने की, विश्वास करने की, आवश्यकता है।

भारतीय धर्म ने मुक्ति को क्रय-विक्रय की सामग्री नही समझा। उसका मूल्य विश्वास के स्थान पर कर्म माना। कर्म एवं आचार पर जोर दिया। हिन्दू, पारसी, यहूदी आदि प्रवर्तक धर्म न बनकर, संख्या बढाने पर जोर न देकर, संख्या के स्थान पर, गुण को प्राथमिकता दिये है।

प्रवर्तक धर्मों को हिन्दू, यहूदी तथा पारसी धर्मों का विरोधी नही होना चाहिए। क्योंकि अन्य धर्मावलम्बियों को वे अपने धर्म में दीक्षित नही करते बल्कि विरोध करते हैं। दूसरे भी अपने-अपने धर्म के अनुसार अपने विश्वास के अनुसार विकसित होंगे। उनके लिये विश्व एक ही शक्ति का प्रतीक है। समस्त शक्तियों के उदय एवं अस्त का केन्द्र एक ही है। किसी का किसी धर्म में रहना, उनके लिये उसी प्रकार महत्वहीन है, जैसे अनेक लोगों का अनेक घरों में निवास करना। अपने मत-पोत पर आरूढ होकर स्वतः गन्तव्य स्थान पर उसी प्रकार पहुँच सकता है, जिस प्रकार कोई भी पहुँचने में विश्वास करता है। उन्होंने इच्छा होने पर भी लोगों को अपने धर्मों में दीक्षित नहीं किया। अपने धर्म, अपने शुद्ध आचरण एवं व्यवहार द्वारा निश्रेयस की सिद्धि हो सकती है। यह एक ऐसा अटूट सिद्धान्त था, विश्वास था, जो दार्शनिक एवं धार्मिक विवादों को एक तरफ हटाता था, विकास-मार्ग प्रशस्त करता था।

ईसाइयों एवं मुसलमानों को हिन्दुओं से भय नही होना चाहिये था। उनके वे विरोधी नही थे। उन्हें अपना ही जैसा समझा। राजा रणवीर सिंह के समय काश्मीर के मुसलमानों ने प्रस्ताव किया। वे हिन्दू धर्म में, अपने पुराने धर्म में, स्वीकार कर लिये जाय। काशी के पण्डितों से राजा ने व्यवस्था माँगी और पण्डितों ने स्पष्ट शब्दों में व्यवस्था दी कि विजातीय हिन्दू धर्म में प्रवेश नही पा सकेंगे। इसी प्रकार स्वामी श्रद्धानन्द ने शुद्धी का आन्दोलन आरम्भ किया। पश्चिम उत्तर प्रदेश के मुस्लिम हुये, राजपूतों ने इच्छा प्रकट की कि यदि उनका खान-पान विवाह सम्बन्धादि राजपूत स्वीकार करें, तो वे एक समूह में पुन शुद्ध होकर, अपने पुरातन धर्म में लौट आ सकते थे। परन्तु हिन्दुओं ने उनकी माँग ठुकरा दी, धर्म परिवर्तन नही होने दिया।

किन्तु ईसाई तथा मुसलमानों का दृष्टिकोण इसके सर्वथा भिन्न होता है। वे हिन्दुओं को धर्म विरोधी समझते थे। ईश्वर विरोधी समझते थे। उन्हें अपने धर्म में दीक्षित कर, उन्हें पवित्र एवं ईश्वर के समीप पहुँचने योग्य बनाना चाहते हैं। उन्हें अपने भक्ति-समाज का अंग बनाना चाहते हैं। इसके लिये प्रलोभन, शक्ति संघर्ष सबका आश्रय ग्राह्य है, उचित है। यही कारण है कि फारस में मुसल्मानों ने जब अपना धर्म शक्ति द्वारा बढाना चाहा तो पारसी स्वदेश त्यागकर भारत में चले आये। ईसाई तथा यहूदी अपने स्थानों से उद्वासित किये गये। यूरोप में शरण लेने के लिये बाध्य हो गये। यूरोप में यहूदियों तथा भारत में पारसियों के आगमन का कारण धर्म प्रचार के नाम पर होना दमन था।

हिन्दुओं ने भारत में आगत सभी धर्मावलम्बियों का स्वागत किया। उन्हे सुख एवं शान्तिपूर्वक अपने ही जैसी सुविधा दी। वे दूसरों से भी इसी की अपेक्षा करते थे। इस उदार नीति के कारण, इस सहिष्णुता के कारण, इस मुक्त विचार एवं कर्म पर विश्वास के कारण, उनमें कट्टरता का उदय नही हुआ। किन्तु प्रवर्तक धर्म इस दर्शन में विश्वास नही करते थे। वे बाहर आँख उठाकर, झाँकना भी पाप एवं ईश्वर के प्रति अविश्वास मानते थे।

मुस्लिम स्वयं अपने संकीर्ण विचार के कारण आपत्ति में पड गये। मुस्लिम देशों से स्वयं मुसलमान

उद्वासित होने लगे। उन्हें भी अपने आवास स्थानों से भागना पड़ा। तैमूर लंग के भय से जीवन रक्षा हेतु सैय्यिद वर्ग काश्मीर आये। सीमान्त स्थिति कबीलों तथा शिया-सुन्नी एवं ताड़ित मुसलिम मतानुयायी स्वरक्षार्थ अफगानिस्तान, ईरान, तुर्किस्तान त्याग कर काश्मीर तथा भारत में शरण लिये। कश्मीर ने उन्हें शरण दिया। आदर किया। वित्त दिया। उन्हें अपने धर्म में सम्मिलित नहीं किया। इस प्रकार विदेशियों का एक समाज, एक गोत्र, काश्मीर में बनता रहा, पनपता रहा। जब किसी का उसके समाज में आदर नहीं होता, तो वह समाज से विद्रोह करता है। समाज को अपने अनुरूप बनाने अथवा नष्ट करने का प्रयास करता है। यह प्रक्रिया काश्मीर में बड़े पैमाने पर हुयी।

काश्मीर के मन्दिर एवं देवस्थान, नृत्य, संगीत, नाटक, कथा-वार्ता, विद्यानुराग, अध्ययन-अध्यापन एव पठन-पाठन के केन्द्र थे। सामाजिक जीवन के केन्द्र थे। उल्लास, मय, आनन्दमय, कला मय जीवन के केन्द्र थे। वहाँ राजनीति के लिये स्थान नहीं था। राजनीति का स्थान राज सभा थी। हिन्दू समाज में राजनीति एवं धर्म के क्षेत्र अलग-अलग थे। राजनीति सर्वदा धर्म निरपेक्ष थी। लौकिक थी।

धर्म निरपेक्ष किंवा सेकुलर शब्द से अर्थ प्रकट नहीं होता। रिलीजन के लिये हिन्दी भाषा में कोई पर्याय नहीं है। मैंने सेकुलर शब्द के लिये लौकिक शब्द का प्रयोग किया है। पश्चिम में सेकुलरिज्म आधुनिक विचार है। परन्तु भारत के लिये वह नया नहीं है।

भारत धर्म निरपेक्ष शब्द से अनभिज्ञ था। अतएव धर्म निरपेक्ष, के विपरीत आचरण के लिये कोई संज्ञा नहीं बनी थी। आचरण एवं समाज पर बन्धन था। वर्णाश्रम का अंकुश था। भारत में सेकुलर किंवा लौकिक राज्य सर्वदा से था। भारत में आवाद विदेशी अन्य धर्मावलम्वी अपने विधि, परंपरा एवं व्यवहार का अनुकरण करते थे। राज्य कभी हस्तक्षेप नहीं करता था। भारत में किसी जाति को किसी सम्प्रदाय को, उसके मत एवं जाति के कारण राज सेवा से वंचित नहीं रखा गया है। कौन किस पथ का अनुगामी है, किसकी उपासना करता है, यह पूछने किंवा जानने का रिवाज नहीं था। प्रत्येक कुल में गृह देवता, प्रत्येक ग्राम में ग्राम देवता थे। उसी प्रकार विजातियों का यदि अपना कोई धर्म था, देवता था, तो उसका स्थान, उसके अनुयाइयों के गृह में, ग्राम में था। उनके कारण हिन्दू धर्म, व्यवहार, परम्परा एवं सदाचार में कोई अन्तर नहीं पड़ता था। धर्म, दर्शन एवं मत का सम्बन्ध मानव के व्यक्तिगत जीवन से था।

धर्म निरपेक्ष किंवा लौकिक राज्य का केन्द्र विन्दु दूसरे धर्म के प्रति आदर है। समत्व है। सहनशीलता है। उदारता है। भारत में राजा राजनीति एवं धर्म दोनों का नियन्त्रण नहीं करता था। दोनों का स्रोत नहीं था। राजा से ऊपर एक साधारण विप्र का स्थान था। सन्त का स्थान था। साधू का स्थान था। विप्र के आते ही राजा खड़ा हो जाता था। नमन करता था। आदर करता था। विप्रगण राजनीति से अलग थे। उनका कर्म पठन पाठन था। धर्म की बागडौर पुराहितों के हाथों में नहीं थी। धर्माचार्यो के हाथों में नहीं थी। राजा के हाथों में राजनीति थी। शासन था। राजा न्याय करता था। ब्राह्मणों को न्याय करने का अधिकार नहीं था। ब्राह्मण शस्त्र नहीं धारण कर सकता था। दण्ड नहीं दे सकता था। असंग्रही था। उसका स्थान आश्रम था। गुरुकुल था। देव स्थान था। काश्मीरी ब्राह्मण इस परम्परा में पला था। उसने कल्पना नहीं किया था। राजा धर्म में हस्तक्षेप करेगा, धर्म का नियन्त्रण करेगा!

यदि धर्म या सम्प्रदाय के आधार पर राष्ट्रीयता मान ली जाय तो, हिन्दू, ईसाई, मुस्लिम, बौद्ध पारसी आदि नाम की राष्ट्रीयता होगी। धर्म एवं सम्प्रदाय आधारित राष्ट्रीयता मानने का अर्थ होगा कि

राष्ट्र का एक विशेष धर्म है। उसमें अन्य धर्मावलम्बियों के लिये स्थान नही है। राष्ट्र धर्म के अनुसार कर्म विधि तथा व्यवहार का संचालन होगा। व्यक्तिगत विधियों का स्थान नही होगा। इस सिद्धान्त को मानना मध्ययुगीय जगत की ओर लौटना है। सकीर्णता की ओर मुख मोडना है। ब्रिटेन जैसा प्रगतिशील राष्ट्र भी इस सकीर्णता का त्याग नही कर सका। वहाँ के सविधान के अनुसार ब्रिटेन का राजा या रानी केवल प्रोटेस्टेण्ट मतानुयायी हो सकते है। रोमन कैथोलिक, ग्रीक अर्थोडाक्स चर्च तथा अन्य सम्प्रदाय किवा मत वादी नही हो सकते। मानव जीवन को जिनसे सकीर्णता प्राप्त होती है, वे अच्छे नही होते। भारत में धर्म शब्द अत्यन्त व्यापक था। आचार,-विचार, विधि-व्यवहार, रीति-रिवाज सबका समावेश धर्म में हो जाता था।

मुस्लिम परम्परा इसके सर्वथा विपरीत थी। खलीफा राज्य एव सम्प्रदाय दोनो शक्तियो का स्रोत था। वह न्याय कर्ता था, हर्ता था, दण्ड दाता था। मुस्लिम समाज मे धर्म एव राजनीति मिश्री और पानी की तरह घुलकर एक हो गये थे। इमाम एवं खलीफा लौकिक एव अलौकिक शक्तियो का निदेशक था, प्रतीक था। अतएव उसके प्रभाव क्षेत्र म मत, मतान्तर एव सम्प्रदाय स्वतन्त्रतापूर्वक विकसित नही हो सकते थे। खलीफा का आदेश मुस्लिम जगत के लिये मान्य था। उसकी कही अपील नही थी, वह निरकुश था, सर्वे सर्वा था।

हिन्दू एव मुस्लिम दर्शनो के उपासना पद्धति में इन दृष्टिकोणो के कारण मौलिक अन्तर हो गया। देव स्थान हिन्दूओ के लिये उपासना, दर्शन, एव उत्सव का केन्द्र था। राजनीति से अलग था। मसजिद में केवल एक ही मतावलम्बी का प्रवेश था। मसजिद का कार्य सीमित था। वह केवल नमाज पढने, अल्लाह के सामने खडे होकर, सिजदा करने का स्थान था। मुअज्जिन की आवाज पर केवल मुसलमान ही एकत्रित हो सकते थे। मसजिद में, खुदा के दरबार में विनम्रता पूर्वक खडे होते थे। उसके बन्दो के रूप में सिजदा करते थे। मुख काबा की तरफ होता था। एक तरफ होता था। प्रार्थना की एक भाषा होती थी। नमाज का एक प्रकार होता था। अल्लाह का सन्देश अरबी भाषा में पैगम्बर पर नाजिल हुआ था। अतएव अरबी ईश्वरीय भाषा समझी गयी। यह बात इसाइयो के सम्बन्ध में नही कही जायगी। क्योकि ईश्वरीय सन्देश प्रभु ईसा मसीह की भाषा में बाईबिल में लिपि बद्ध नही है।

अरबी भाषा, काबा की दिशा में मुख कर सामूहिक नमाज, मुस्लिम जगत को एक सूत्र में बाँध रखे है। मसजिद में खडा हुआ व्यक्ति किसी देश एव जाति का व्यक्ति न होकर, एक अन्तर्राष्ट्रीय मुस्लिम जगत का, मिल्लत का अविभाज्य अग बन जाता है। नमाज अल्लाह के प्रति विश्वास एव भक्ति प्रकट करने का एक प्रकार है। उपस्थित होने का एक माध्यम है। वह मुसलमानों मे दृढता एकता एव धैर्यता का अभ्यास डालता है।

दिन में पाँच बार, फजर, जुहर, अस्र, मगरिब तथा ईशा की नमाज पढी जाती है। पाँच बार नमाज पढने वाला स्मरण करता है। वह मिल्लत का अग है। अल्लाह का उपासक है। पैगम्बर मुहम्मद अल्लाह के रसूल है। अल्लाह के अतिरिक्त और कोई ईश्वर नही है। अपनी प्रतिज्ञा के साथ दिन में पाँच बार एक ही विचार के लोग मिलते है। ईद तथा बकरीद की नमाज में समस्त नगर के लोग मिलते है। हज में समस्त विश्व। इस प्रकार एक गोत्र, एक जाति के लोग, प्रतिदिन, प्रति सप्ताह मिलते है। धार्मिक चर्चा होती है। राजनीतिक चर्चा होती है। साथ ही सुल्तान, खलीफा, बादशाह तथा शासक के नामो का खुतबा मसजिदो में पढा जाता है, उनके प्रति निष्ठा प्रकट की जाती है।

खुतबा अरबी शब्द है। शाब्दिक अर्थ धार्मिक व्याख्यान है। जुमा के नमाज में प्रति सप्ताह तथा ईद और बकरीद की नमाज में पढा जाता है। उसमें मुस्लिम समाज, धार्मिक एवं राजनीतिक विषयों पर

खातिव भाषण देता है। खुतवा पहले अरवी भाषा में दिया जाता था। परन्तु सुधारवादी आन्दोलन के फलस्वरूप तुर्की भाषा में दिया जाने लगा। पूर्वकाल में खुतवा द्वारा वक्ते सुल्तान के लिये दुआ माँगी जाती थी। उसमें नाम देना आवश्यक नहीं था। सन्देह दूर करने के लिये खातिव मध्ययुग से सुल्तानों किंवा शासकों का नाम लेना आरम्भ कर दिये। इसने परम्परा का रूप ले लिया है। खुतवा में शासक के नाम का पढ़ा जाना, उसकी प्रभु शक्ति की परिचायक है। वह इस वात का परिचायक है कि मुस्लिम समाज किसी को सुल्तान या शासक स्वीकार कर, उसके लिये दुआ माँगता है। उसे अपने शासक रूप में मान्यता देता है। काश्मीर में मुसलमान लोग हिन्दू, सिक्ख तथा राजाओं के नाम का खुतवा नहीं पढ़ते थे। क्योंकि वे मुसलमान नहीं थे। भारत के राष्ट्रपति के नाम का भी खुतवा नहीं पढ़ा जाता। भारत तथा विश्व में जहाँ कहीं भी राजा मुसलमान होता था या है—वहाँ उसके नाम का खुतवा पढ़ा जाता है। भारत में खुतवा ऊर्दू में पढ़ा जाता है, ताकि सव लोग समझ सकें। दिल्ली के प्रसिद्ध सन्तशाह फखरुद्दीन ( सन् १७८४ ई० ) ने खुतवा हिन्दीवी में पढ़ने का समर्थन किया परन्तु वह सफल न हो सका।

नमाज में केवल मुसलमानों का आह्वान किया जाता है। रसूल पर विश्वास करने वालों को वुलाया जाता है। चर्च में गैर ईसाई भी जा सकता है। प्रार्थना में सम्मिलित हो सकता है। हिन्दू मन्दिरों में भी गैर हिन्दू जा सकते हैं। कुछ मन्दिरों में गैर हिन्दुओं का प्रवेश इस समय वर्जित है। मुस्लिम तथा ईसाई स्वतः किसी मन्दिर में जाना पसन्द नहीं करते। यह वुत परस्ती का समर्थन माना जाता है। वौद्ध विहार तथा मन्दिरों का प्रवेश कभी भी वर्जित नहीं था। मन्दिरों में आरती के समय, चर्च में प्रार्थना के समय घण्टा वजता है। किसी वर्ग विशेष का नाम लेकर आमन्त्रित नहीं किया जाता।

नमाज पाँच वक्त होती है जिसमें ४२ रकअत नमाज पढ़ी जाती है। एक रकअत एक वार खड़े होने से वैठने तक होती है। उसमें दो सिजदे और एक रकूअ होता है।

नमाज एक दर्शन का प्रतीक है। मुअज्जन आवाज देता है—अल्लाहो अकवर, अल्लाहो अकवर, अशहदो अल्लाह इलाहा इल्लिलाह, अशहदो अन्ना मुहम्मद रसूल लूल्लाह, हय्या अलफलाह, हय्या अलफलाह, अल्लाहो अकवर, अल्लाहो अकवर। फजिल की नमाज में 'असलातो खैरुम्मिन, नौम' और पढ़ा जाता है। नमाज का अर्थ होता है—'अल्लाह वड़ा है, अल्लाह वड़ा है, मैं गवाही देता हूँ कि केवल अल्लाह ही मावूद है, उसके सिवाय कोई दूसरा मावूद नहीं है। मैं गवाही देता हूँ कि मुहम्मद अल्लाह के रसूल हैं। ( दाहिने तरफ मुँह कर कहा जाता है ) आओ नमाज की तरफ ( वायें तरफ मुँह करके कहा जाता है ) आओ वेहवूदी की तरफ। अल्लाह वड़ा है, अल्लाह वड़ा है।' फजिल की नमाज में कावा की तरफ मुँह कर पढ़ा जाता है—'नमाज वेहतर है सोने से।' जमाअत मसजिद में पश्चिम की ओर कावा की तरफ मुख कर खड़ी होती है। खड़ा होने वाला समझता है वह खुदा के सम्मुख खड़ा है और खुदा उसे देख रहा है। नमाजे जनाजा भी पढ़ी जाती है। मृतक का जनाजा मसजिद के पास ले जाते हैं। इमाम जनाजा के पीछे खड़ा हो जाता है। उसके पीछे नमाज पढ़ने वाले पंक्ति वद्ध खड़े होते हैं। इस नमाज में न कोई झुकता है और न सिजदा करता है। केवल हाँथ वाँध कर खड़ा रहकर दुआ मागते हैं। ईद की नमाज केवल दो रकअत की होती है। ग्रहण के समय भी नमाजे कुसूफ और खुसूफ पढ़ी जाती है। नमाजे इस्तस्का अकाल के दिनों में वर्षा के लिये पढ़ी जाती है। नमाज का महत्व समष्टिवादी है।

यह एक ऐसा रूप है, जिससे प्रति सप्ताह मुस्लिम जनता को स्मरण दिलाया जाता है। उसकी शक्ति समष्टि में है। उसका शासक कौन है ? उसका ईश्वर कौन है ? उसका रसूल कौन है ? उसका देव-स्थान कौन है ? मुसलमानों में इस दर्शन ने समष्टि तथा भाईचारा का भाव कूट-कूट कर भर दिया। उसके

लिये मसजिद राजनीति और धर्म दोनो का केन्द्र है। जहाँ केवल एक ही जाति, एक ही विचार के लोगो का प्रवेश होता है। यह जाति सघटित है। नित्य के नमाज के कारण उसका सघटन शिथिल नही होता है। अन्य धर्मो में इस कठोर अनुशासन का न तो भाव उत्पन्न हुआ और न अभ्यास। भावात्मक एकता के साथ एक साथ उठने-बैठने, सिजदा करने, पढने से लाखों व्यक्ति एक समष्टि में एक आवाज में कार्य करने में अभ्यस्त हो जाते हैं। उन्हें सैनिक शिक्षा देने की आवश्यकता नही है। उन्हें अनुशासन के लिये शिक्षा देने की आवश्यकता नही होती।

मसजिद सूचना देने का, गुप्त मन्त्रणा का, गुप्त कार्य करने का, सबसे सरल माध्यम है। मसजिद में जो निश्चय होता है। उसे मान्यता दी जाती है। हिन्दू यदि कोई कार्य, कोई निश्चय करना चाहता है तो उसे समाज को एकत्रित करना पडता है। सूचना देनी पडती है। बात खुल जाती है। गोपनीयता नष्ट हो जाती है। परन्तु मसजिद में प्रति दिन लोग एकत्रित होते हैं। वहाँ किसी निश्चय, किसी कार्य करने की सूचना देते ही, अविलम्ब, चुपचाप सब तक बात पहुँच जाती है। समस्त मुस्लिम समाज एक प्रश्न पर, एक साथ कार्य करने के लिये तत्पर, हो जाता है।

मैंने इसका स्वय अनुभव किया है। मुसलिम मतदाता चुनाव के एक दिन पहले ईशा की नमाज के समय अपना मत निश्चय करता है। उसकी सूचना रातो रात सब तक पहुँच जाती है। प्रातःकाल निश्चय कार्यान्वित हो जाता है। किसी को कानों कान खबर नही होती है।

काश्मीर के राजा, वहाँ की हिन्दू जनता, इस दर्शन से अनभिज्ञ थी। शाहमीर के पूर्वकाल से ही विदेशी मुसलिम मसजिदों में एकत्रित होते थे। मन्त्रणा करते थे। अपना उपनिवेश बना चुके थे। हिन्दू राज्य उलटने की बात होती थी। यह सब होता था, धर्म स्थान में धर्म के नाम पर।

यदि मनुष्य उन्माद की अवस्था में हत्या करता है, अपराध करता है, तो न्यायालय उस पर दया करती है, उसे क्षमा करती है। वह फाँसी के तख्ते पर नही झूलता। इसी प्रकार धर्मोन्माद में कोई अपराध करता है, तो उसे भी क्षम्य मानना चाहिए। जो व्यक्ति धर्मोन्माद में हत्या करता है, नैतिकता का ध्यान नही करता, वही सामान्य स्थिति में, करुणार्द्र होकर, सब कुछ त्याग करने के लिये सनद्ध हो जाता है। पशु-पक्षी पर दया करता है। प्राणियो के उपकार के लिये कटिबद्ध हो जाता है। जान पर खेल कर, दूसरे की जान बचाता है।

हम हिन्दू मुसलमान किंवा ईसाई इसीलिये हैं कि हमारे माता पिता, हिन्दू, ईसाई या मुसलमान थे। शिशु नही जानता कि कौन हिन्दू और कौन मुसलमान है? वह नही जानता स्पृश्यापृश्य क्या बला है? वह नही जानता—गायत्री और कलमा क्या है? अबोध शिशु सबके लिये प्रिय होता है। उससे सर्प, हिंस्र पशु भी स्नेह करते है, दया करते हैं। उसपर किसी दर्शन का रग नही होता। छल-कपट रहित होता है। किन्तु ज्यों-ज्यो कुल के, वातावरण के, सस्कार के, दर्शन के, कुसस्कारों में रग जाता है, त्यो-त्यों वह सकीर्ण होता है, सीमित होता जाता है। अपनी सीमा की सुदृढ स्थिति बना लेता है। उस घेरे के अन्दर निवास करने का अभ्यस्त हो जाता है। अपनी सीमा उसे अच्छी लगती है। दूसरे की सीमा, दूसरे का घेरा उसे बुरा लगता है। यह स्वाभाविक है। अपनी टूटी झोपडी, टपकती कुटिया, खडहर बनते मकान में जिस सुख का अनुभव होता है, वह पराये भव्य भवन में अप्राप्य है।

चिडिया उकठे वृक्ष, टूटे पेड, कटीली झाडी में, अपने बनाये घोंसले में, जिस सुख का अनुभव करती है, वह नवपल्लवित सुरभित पादप की शीतल छाया में नही मिलती। उत्तुंग वृक्षों की उपेक्षा कर, बसेरा लेने

जाती है, उत्तुंग वृक्षों की उपेक्षा कर धूप, वर्षा, शीत से ठिठुरते तिनकों के नीड़ों में, स्वर्ण पिंजड़ों, प्रासादों के सुन्दर वातायनों, झरोखों से अधिक, उन्हें सुख मिलता है, धूप से जलते घोंसलों में।

किन्तु पक्षियों की उपेक्षा के कारण हरित पादप, सुरभित पाव्यावली, फले वृक्ष, फूले कुंज, मंजरी युक्त क्यारियां, सुन्दर भवन बुरे नहीं हो जाते। अच्छी और बुरी होती है—भावना, अपनी प्रवृत्ति, अपनी दृष्टि। यदि व्यक्ति उज्ज्वल चश्मे से देखता है, तो विश्व उज्ज्वल और काले से देखता है, तो काला दिखायी पड़ता है। रंगीन चश्मा के हटने पर शुद्ध स्वरूप, वास्तविक रूप का दर्शन होता है। इसी प्रकार जिस दर्शन की दृष्टि से जगत को देखा जाता है उसका वही रूप दिखायी देता है। दृष्टि भ्रम को वास्तविक समझ लेते है। कुसंस्कार एवं सापेक्षवादी दर्शन का चश्मा उतरने पर, जगत का वास्तविक दर्शन होता है। तथ्य का दर्शन होता है—शुद्ध विवेक, शुद्ध तर्क एवं शुद्ध चेतन के जागृत होने पर, शुद्ध चेतना मानव को देवता एवं अशुद्ध चेतना पशु बना देती है। मानव प्राणी पशु भी बनता है, मनुष्य भी। उदारता एवं सहिष्णुता, निरपेक्ष दृष्टि जागृत करता है-मानव की। यदि लौकिक दृष्टि स्वीकार की जाती है, तो जगत बढ़ता है, समृद्ध की ओर। स्वर्ग जगत बनता है, अन्यथा बन जाता है नर्क।

अपनी परिस्थितियों से मानव हो जाता है उद्विग्न। बेचैन हो जाता है। उसकी बेचैनी रक्तपात, विप्लव, षड्यन्त्र, विश्वासघात, मिथ्याचरण, क्रूरता, हिंसा एवं हत्याओं में प्रकट होती है। उसे अपनी छाया से भी भय लगता है। वह अविश्वास के वातावरण में विश्वास के लिये व्याकुल हो जाता है। वह घबड़ाकर, आकुल होकर, मूढ़ सदृश आचरण करता है। मूढ़ता उसे सुपथ से कुपथ की ओर ले जाती है। सन्निपात ग्रस्त व्यक्ति तुल्य वह पथ्य को कुपथ्य और कुपथ्य को पथ्य मान बैठता है। क्षीण होता जाता है। कुछ खोता जाता है। अन्त में खो बैठता है, अपना सब कुछ, जिसे मानवता कहते हैं, जिसे जीवन कहते हैं। वह मुक्त मानव न होकर अपनी परिस्थितियों का दास बन जाता है। उसके पास से निकल नहीं पाता। अपने ही कुसंस्कारों में, अपने ही कर्मों में, फँस जाता है। उस मकड़ी की तरह, जो स्वयं जाला बनाती है। स्वयं अपने जाले में फँसती है, और अपने ही बनाये जाले में फँस कर मर जाती है।

इस दर्शन की झलक मध्य युग के प्रारम्भिक काल से मिलती है। आज भी मिल रही है। सम्प्रदाय वादी पाकिस्तान भारत के युद्ध को साम्प्रदायिकता का रंग देता है। उसे हिन्दू मुसलमान का संघर्ष बनाता है। बंगला देश निर्माण को दूसरी दृष्टि से देखता है।

हिन्दुस्तान-पाकिस्तान का विभाजन कृत्रिम है। मानव कृत है। भारत वर्ष की एक भौगोलिक सीमा है। प्रकृति ने उसे एक बनाया है। प्रकृति के कार्यों में मनुष्य दखल देता है। प्रकृति विरुद्ध कार्य करता है परन्तु समय आते ही प्रकृति अपना पूर्व रूप ले लेती है।

इंग्लैण्ड की प्राकृतिक सीमा एक है। आयरलैण्ड की प्राकृतिक सीमा एक है। आयरलैण्ड का विभाजन कर, अलस्टर एक पाकेट राज्य बना दिया गया है। क्योंकि आयरलैण्ड के निवासी रोमन कैथोलिक और अलस्टर के प्रोटेस्टेण्ट है। दोनों एक साथ नहीं रह सकते। यह कृत्रिम विश्वास है, कृत्रिम दर्शन है। जर्मनी की सीमा एक है। उसका कितनी ही बार विभाजन हुआ है. एकीकरण हुआ है। यही बात इटली तथा फ्रान्स के विषय में कही जायगी। काश्मीर का विभाजन भी कृत्रिम है। भगवान ने, प्रकृति ने उसे एक भौगोलिक सीमा दी है, वह रहेगी।

दर्शन, धर्म एवं राजनीति के कारण जो भी विभाजन किया जाता है, वह स्थायी नहीं रहता। दर्शन, धर्म, सम्प्रदाय एवं राजनीति स्वयं स्थायी नहीं होती। यूनान कभी आर्य धर्मावलम्बी था, तत्पश्चात

ईसाई मतावलम्बी और ईसाई मत में भी ग्रीक अर्थोडाक्स चर्च सम्प्रदाय वादी हो गया। वहाँ प्रारम्भ में सामन्तवाद था तत्पश्चात लोकतन्त्र, रोम साम्राज्यन्तर्गत अन्त में मुसलिमों द्वारा विजय किया गया। पुन स्वतन्त्र होकर, लोकतन्त्र स्थापित हुआ, लोकतन्त्र के पश्चात राजतन्त्र, पुन लोकतन्त्र एव अधिनायक तन्त्र स्थापित हुआ है। इन सब परिस्थितियों में यूनान की भौगोलिक एव प्राकृतिक सीमा में परिवर्तन नही हुआ। भूकम्प न तो उसके सीमान्त पर्वत को नष्ट और न समुद्र डुबा सका। इटली, जर्मनी, फ्रान्स के सन्दर्भ में भी यही बात कही जायगी।

पाकिस्तान युद्ध के समय प्रचार किया गया कि चन्द्रगुप्त मौर्य के पश्चात, प्रथम बार भारतीय सेना विदेशो में जाकर युद्ध की है। बगाल, पजाब, सिन्ध, काश्मीर को जैसे विदेश मान लिया था। बाबर, हुमायूँ, अकबर शाहजहाँ, औरगजेब के समय अफगानिस्तान भारत के अन्तर्गत था। बलख तक भारतीय सेना पहुँच गयी थी। मुगल तुर्किस्तान भी विजय करना चाहते थे। हिन्दू इस विजय को एक सम्प्रदाय, एक जाति का काय मानते है। वे नही सोचते। विजय में हिन्दू-मुसलमान दोनो का सहयोग था। दोनों का बलिदान था। राजपूत सेना ने अफगानिस्तान विजय की थी। मानसिंह, जयसिंह आदि अफगानिस्तान के राज्यपाल थे। हिन्दू इस विजय को भारत की विजय न मानकर, मुसलमानो की विजय मानते है। मुसलमानों की भावना को ठेस लगती है। वह समझता है। भारत मे रहने पर, उसकी स्थिति विदेशी जैसी है।

गजनी, गौरी, गुलाम, पठान, सैय्यिद, खिलजी, तुगलक, लोदी, एव मुगल भारत के बाहर से आये थे। भारत मे आबाद हो गये थे। उन्होने इसे अपना देश बना लिया। भारत के सीमान्तवर्ती, पठानो, तुर्कों ने मुगलों की सेना से लडकर, भारत की स्वतन्त्रता की रक्षा की थी। तैमूर लग, नादिरशाह, अहमदशाह अब्दाली का सामना मुसलिम सुल्तानो ने किया था। बाबर का युद्ध लोदियों से हुआ था। शेरशाह सूरी का युद्ध मुगलो से हुआ था। इसी प्रकार मुसलिम सुल्तानो ने भारत में कायम हुए अनेक मुसलिम सुल्तानो और नवाबो से युद्ध किये थे। बगाल, अवध, बदायूँ, जौनपुर, बीदर, गोलकुण्डा, मालवा, गुजरात के सुल्तान एव नवाब परस्पर युद्ध करते थे। साथ ही साथ दिल्ली के सुल्तानो से युद्ध करते थे। इसी प्रकार हिन्दू राजा परस्पर युद्ध करते थे, साथ ही साथ दिल्ली के सुल्तानों से भी लडते थे।

मुसलमानो ने भारत की दौलत भारत के बाहर नही भेजी। उन्होने भारत को अफगानिस्तान, तुर्किस्तान, ईरान अथवा अरब का उपनिवेश नही बनाया। बाहर की सम्पत्ति से भारत का भण्डार भरा था। भारत की कीर्ति विदेशों में फैलायी थी। किन्तु हिन्दू दिमाग उन्हें अपना, भारत का, सात सौ वर्षों से भारत मे रहने के बावजूद नही मान सका। आर्य, शक, हूण, पल्हव भोट्ट आदि भारत के बाहर से आये थे। भारत में राज्य स्थापित किये। यहाँ वे रह गये। भारतीय समाज में मिल गये। भारतीय परम्परा, भारतीय इतिहास, भारतीय धर्म, इनका धर्म हो गया था। भारतीय इतिहास को गौरवशाली बनाया। भारतीय उनके निष्पत्ति के लिये गर्व का अनुभव करता है। उन्हें आत्मसात कर गया। उनका दर्शन, उनके मार्ग मे बाधक नही था। मुसलमान भारतीय समाज में मिल नही सके। इस देश के इतिहास को, इस देश की सस्कृति को, स्वीकार नही कर सके। उनका मुख सर्वदा पश्चिम की ओर उठता था। हिन्दुओं का दर्शन भी समन्वय प्रक्रिया में बाधक था। शको, हूणो के समान विदेशी मुसलमानो को मिलाकर समाज की रचना नही कर सके। मुसलिम इकाई उनके दर्शन की कट्टरता के कारण कायम रही।

मनुष्य को धर्म एक विचार दे सकता है। एक जीवन सहिता दे सकता है। किन्तु मनुष्य कुछ चाहता है। उसके साथ उसका पेट है। काम है। वह दाम्पत्य जीवन चाहता है। सन्तान चाहता है। घर-बार चाहता है। खेती-बारी चाहता है। बाबर की सेना में बौद्ध मुगल थे। हिन्दुओ ने मुगलो को अपने

समाज में सम्मिलित नहीं किया। परिणाम हुआ। मुसलमानों ने उन्हें अपनी गोद में ले लिया। उनसे विवाह सम्बन्ध किया। उनकी संख्या बढ़ी।

काश्मीर के मुसलमान होने का भी यही कारण है। रिंचन बौद्ध को हिन्दुओं ने शैवधर्म में सम्मिलित नहीं किया। कथा है रिंचन मुसलमान हो गया। कोटारानी से विवाह किया। काश्मीर में पहली मसजिद बनी। रिंचन प्रथम सुल्तान बना।

मनुष्यों का इसमें क्या दोष। यह दोष है, उन दर्शनों का है, जो अपना पृथक् क्षेत्र बना लेते हैं। धर्म-परिवर्तन पर बन्धन लगा देते हैं। जात-पात की ऊँची दीवार अपने चारों ओर खड़ी कर लेते हैं। यहीं से भारत विभाजन की, दो राष्ट्र की, बुनियाद पड़ी। यदि हमारे पूर्व पुरुषों ने कोई गलती की है, तो उसके लिये हमें, हमारी भविष्य की सन्तानों को, भूत के लिये, वर्तमान को, भविष्य को, दण्ड देना नहीं चाहिये।

राजाओं की सेना में मुसलमान तथा सुल्तानों की सेना में हिन्दू सैनिक होते थे। काश्मीर में ललिता दित्य के समय से ही यवन सैनिक काश्मीरी सेना में भरती होने लगे थे। सुल्तानों की सेना में खश, राजपूत एवं ठाकुर काम करते थे। वे पेशेवर थे। वेतन भोगी थे। जहाँ वेतन मिलता था। काम करते थे। कुछ चाँदी के टुकड़ों के लिए, कन्धों पर बन्दूक रखकर, लड़ते थे, कटते थे, काटते थे, मरते थे। शिवाजी की सेना में मुसलमान थे। औरंगजेब की सेना में राजपूत थे। औरंगजेब के कुशल सेनापति यसवन्त एवं जयसिंह ने राजसिंह और शिवाजी का सामना किया था। आजकल भी सेना में वेतन भोगी सैनिक सभी वर्गों, जातियों एवं धर्म के हैं। मध्ययुग में भारत तथा काश्मीर में भी सामन्त, जागीरदार, नवाब होते थे। वे हिन्दू तथा मुस्लिम दोनों राज्यों में होते थे। वे सेना रखते थे। समय आने पर स्वामी के पक्ष से युद्ध में भाग लेते थे। उनकी निष्ठा किसी देश अथवा जाति के साथ न होकर, अपने स्वामी तक सीमित रहती थी। उसमें दर्शन बाधक नहीं होता था। मुगलों के सेनापति हिन्दू राजा हुए हैं। भारत से बाहर जाकर मुगलों के साम्राज्य की सीमा विस्तृत की थी। स्वामी की नीति का अनुकरण, आधीनस्थ सामन्त, जागीरदार, सूबेदार, नवाब आदि करते थे।

यदि प्रवर्तक धर्मवादी मुस्लिम दर्शन का अनुकरण भारत में हिन्दू अथवा यूरोप में ईसाई करते, तो क्या मुसलमान भारत अथवा यूरोप में पैर जमा सकते थे? रह सकते थे?

मुसलिम देशों में वतन की अपील हृदय तक नहीं पहुँचती। धर्म की अपील सीधे घर कर लेती है। वतन की मुहब्बत मुसलमानों के लिए नवीन दर्शन है। यह विचार विकसित नहीं हुआ है। मुसलिम जाति एक है, उनका अल्लाह एक है, उनका रसूल एक है, उनकी किताब एक है, उनका विश्व एक है, जाति एक है, इस एकत्व की भावना के कारण, वे राष्ट्र की कल्पना नहीं कर सके। बहुदेववाद के समान, बहु राष्ट्रवाद, मुस्लिम दर्शन की सनातनी विचारों, भावनाओं के, प्रतिकूल है।

मुसलमानों का वतन समस्त मुस्लिम जगत है। मुस्लिम जगत राष्ट्रों में विभाजित हो जाय, तो उसके एकत्व दर्शन को ठेस लगेगी। एकता को ठेस लगेगी। हज के समय विश्व के सभी मुसलमान, एक मिल्लत, एक कुल, एक धर्म एवं दर्शन के अनुयायी रूप में, एक परिधान में, एकत्रित होते हैं। एक साथ लब्बैक कहते हैं। वहाँ वतन की, राष्ट्र की, देश की, प्रदेश की सीमाएँ टूटती है। उनका कोई महत्व नहीं रहता। उनके लिये राष्ट्र की सीमाएँ कृत्रिम है, मानव कृत है। किन्तु मिल्लत, विश्व मुस्लिम राष्ट्र ओर छोरहीन है। राजनीतिक एवं धार्मिक दोनों जीवनों का स्रोत एक ही है। एकेश्वरवाद के समान एक मिल्लत का नारा है। वह नारा राष्ट्रों की सीमा नहीं जानता।